卐 अनुक्रमणिका 卐

प्रथमश्रुतस्कन्ध

द्वितीय श्रुतस्कन्ध धर्मकथा

❀ प्रस्तावना ❀

यह 'ज्ञाता-धर्म-कथा' नाम का आगम है। जैन आगमों का प्रसिद्ध आख्यासूत्र है। जैनधर्म के विशाल प्रागण में साहित्य का क्षेत्र बहुत बड़ा विस्तृत है। परन्तु यहाँ आगमों को ही सर्वतोऽधिक उच्च आसन दिया गया है। जैनधर्मावलम्बियों के अन्तर्हृदय में अपने आगमों के प्रति अगाध आस्था बनी हुई है। अगर कहीं पर कुछ भी चर्चा का विषय उपस्थित हो जाता है और वहाँ पर किसी विषय पर चर्चा चल पड़ती है तो वादी-प्रतिवादी दोनों अपनी-अपनी बात को आगम-सम्मत होने की दुहाई देने में ही लगे रहते हैं।

जैन-न्याय में दो प्रमाण माने गये हैं। प्रत्यक्ष और परोक्ष। परोक्ष-प्रमाण के पाँच भेद हैं। स्मृति, प्रत्यभिज्ञान, तर्क, अनुमान और आगम। यहाँ पर भी अन्तिम प्रमाण आगम ही माना गया है। कहने का आशय यह है कि जिस बात का निर्णय आगम में आ जाता है, वहाँ फिर तर्क आदि को कुछ भी स्थान नहीं है।

ज्ञान के पाँच भेद हैं—मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यय और केवल। यहाँ द्वितीय ज्ञान श्रुतज्ञान है। आगमिक ज्ञान को ही श्रुतज्ञान कहते हैं।

यहाँ एक प्रश्न होता है। आगमों को इतना महत्त्व क्यों दिया गया है? इसका समाधान स्पष्ट है। आगमों में वीतराग की वाणी का संकलन किया गया है। जो वीतराग होता है, वही सर्वज्ञ होता है। सर्वज्ञ की वाणी विश्वसनीय होती है। जब कि आगमों में वीतराग की वाणी का अवतरण है, फिर उनके महत्त्व के विषय में शङ्का ही क्या?

एक बात है, जिस प्रकार वैदिक धर्म में वेद एकान्ततया अनादि-निधन शाश्वत सम्पत्ति के रूप में माने गये हैं, वैसी मान्यता जैन धर्म में अपने आगमों के लिए नहीं है। जैनधर्म में आगम अनादि अनन्त और सादि सान्त भी माने गये हैं। वैदिक धर्म में वेद अपौरुषेय भी माने गये हैं। वेदों को अपौरुषेय मानने का कारण यह है कि वेदों को किसी पुरुष-विशेष द्वारा प्रमाणित मान लेने पर उनकी नित्यता में बाधा पहुँचती है। क्योंकि अगर वे किसी पुरुष-विशेष द्वारा कहे गये हों तो, उनके कहने के पहले वे नहीं थे। सम्भवतः उनकी मान्यता के अनुसार यह अनित्यता वेदों को प्रामाणिकता से दूर ले जाती है।

卐 प्रकाशकीय 卐

प्रस्तुत ज्ञातासूत्र श्री नि र. स्था जैन धार्मिक परीक्ष
पाथर्डी की 'श्री जैन सिद्धान्त प्रभाकर' परीक्षा में (शब्दार्थ स
निर्धारित होनेसे परीक्षार्थी गण किसी ऐसे संस्करणकी अपेक्षा रख
जिससे मूल पाठों के शब्दानुलक्षी अर्थ का ज्ञान किया जा सके।

इसके पूर्व अनेक ग्रन्थों के निर्माता शास्त्रोद्धारक बालब्रह्मचा
पूज्यश्री १००८ श्री अमोलकऋषिजी महाराज ने अपने ३२ आगमों
अनुवाद-मालला में श्री ज्ञाताजीका भी अनुवाद कर हिन्दी जगत् क
एक अनूठी भेंट दी थी। यद्यपि वह कार्य बहुत शीघ्रता के साथ होने
से पाठकोंकी अपेक्षा का पर्याप्त पूरक नहीं हो पाया, तथापि उनकी
वह कृति ही वर्तमान अनुवाद में मूल आधार मानी गई है। इस लि
हम परमश्रद्धेय उक्त पूज्य श्री जी के हृदय से- ऋणी हैं। पूज्य श्
अमोलकऋषिजी म. के तत्कालीन पाटानुपाट विराजित (वर्तमान में
श्रमण संघ के आचार्यसम्राट्) परमश्रद्धेय बालब्रह्मचारी प्रसिद्ध वक्त
पूज्य श्री १००८ श्री आनन्दऋषिजी महाराज और शास्त्रोद्धारक पूज्य
श्रीजी के सुशिष्य प रत्न मुनिश्री कल्याणऋषिजी म ने पारस्परिक
विचार-वि र्श ने यह निर्णय किया कि पूज्यश्री द्वारा किये गये हिन्दी
आगमानुवाद के द्वितीय संस्करण और अधिक परिमार्जित भाषा में
निकाले जाएं। इस विचारणा के फल-स्वरूप समाज के लब्धप्रतिष्ठ
विद्वान् ... परमपण्डित श्री शोभाचन्द्रजी भारिल्ल ने उक्त अनुवाद
का ... किया गया। हमें विश्वास है कि प्रस्तुत संस्करण
छात्रों की ... को पूर्ण करने में पर्याप्त सहायक होगा।

... (...) निवासी दानवीर शाह ...जी
... धार्मिक संस्थाओं के सिंचन, संरक्षण और संवर्द्धन
... रहा है। ... आश्रय से अनेक संस्थाओं के

संचालन में महत्त्वपूर्ण सहयोग प्राप्त हुवा है। श्री ति. र. स्था. जैन धार्मिक परीक्षा बोर्ड पाथर्डी की महत्त्वपूर्ण धार्मिक सेवा से आकृष्ट होकर आपने इसके अनेक विभागों में अपना विशिष्ट आर्थिक सहयोग प्रदान किया है। इस व्यापक संस्था द्वारा जो समाज-सेवा हो रही है, उसमें आदरणीय शाह केशवजी का बहुत बडा हाथ मानना चाहिए।

जिस समय परीक्षा बोर्ड के संचालकों का ध्यान श्री ज्ञाताजी जैसे धर्मकथाग के हिन्दी अनुवाद के प्रकाशन की ओर आकृष्ट हुआ, उस समय सहज ही श्री केशवजी भाई की तरफ दृष्टि गई। लिखते हुए हर्ष हो रहा है कि श्री केशवजी भाई ने इस कार्य की महत्ता और पवित्रता को समझकर पुस्तक-प्रकाशन ध्रुवफंड में एतदर्थ एक मुश्त ५००० पाँच हजार रुपये प्रदानकर संस्था-संचालकों के उत्साह को संवर्द्धित किया। उनकी इस सहायता का आधार लेकर प्रस्तुत प्रकाशन का निर्णय कर लिया गया। इस महत्वपूर्ण सहयोग के लिये श्री केशवजीभाई के हम अत्यन्त आभारी हैं।

पाथर्डी बोर्ड की तरफ से आगम-प्रकाशन का यह पहला ही अवसर था और संस्था के पास उस समय निजी मुद्रणालय भी नहीं था, अतः इसके प्रकाशन का कार्य श्री जैनोदय प्रिंटिंग प्रेस रतलाम के विद्वान् व्यवस्थापक पं. श्री बसन्तीलालजी नलवाया को सुपुर्द किया गया।

पं. नलवाया जी ने प्रूफ संशोधन के साथ मुद्रण का कार्य किया। यद्यपि बोर्ड संचालकों की अपेक्षानुसार मुद्रण का कार्य किसी दृष्टि से समाधानकारक नहीं हो पाया, अर्थात् कागज और स्याही के बडे दोष इस मुद्रण में स्पष्ट रूप से आ गये। तथापि भाषा-शुद्धि का हेतु बहुतांश साध्य होने से संचालकों ने प्रस्तुत संस्करण की प्रतियाँ छात्रों एवं सामान्य जिज्ञासुओं के करकमलों में पहुँचाने का निर्णय किया। उक्त दोष के कारण ही पुस्तक का मूल्य कम रखना पड़ा है। यहाँ यह स्पष्ट कर देना आवश्यक प्रतीत हो रहा है कि इसका द्वितीय संस्करण सुन्दर बनाने के लिए हमारा प्रयास होगा।

इस पुस्तक की प्रस्तावना प्रकाशकीय आदि एवं परिशिष्ट तथा आवरण पृष्ठ का मुद्रण श्री सुधर्मा मुद्रणालय, पाथर्डी में हुआ है। पुस्तक की बाइंडिग भी उक्त मुद्रणालय में ही हुई है। इसके लिये दोनों ही मुद्रणालयों के व्यवस्थापक धन्यवाद के पात्र हैं।

प्रस्तुत शास्त्र की प्रस्तावना श्रमण संघ के मरुधर मंत्री प. मुनि श्री मिश्रीलाल जी म० "मधुकर" ने लिखकर हमारे उत्साह की अभिवृद्धि के साथ पाठकों को प्रस्तुत पुस्तक की विशेषता बताने की कृपा की है। अतः उक्त महाराजश्री के हम हृदय से आभारी है।

प्रस्तुत संस्करण का संपादन श्रमण संघ के श्रद्धेय आचार्य बाल-ब्रह्मचारी पं. रत्न पूज्यश्री १००८ श्री आनन्दऋषिजी म० श्री के तत्त्वावधान में प. भारिल्लजी ने संपन्न करके जो एक महती आवश्यकता की पूर्ति की है, इसके लिए परमश्रद्धेय पूज्यश्रीजी के आभार के साथ प. जी को शतशः धन्यवाद देते हैं।

बदरीनारायण शुक्ल
श्री तिलोक रत्न स्थानकवासी जैन धार्मिक परीक्षा बोर्ड,
पाथर्डी. (अहमदनगर)

॥ श्रीमद् ज्ञाताधर्मकथांगम् ॥

उत्क्षिप्त नामक प्रथम अध्ययन ।

ते णं काले णं ते णं समएणं चम्पा नामं नयरी होत्था, वण्णओ ॥१॥

उस काल में अर्थात् इस अवसर्पिणी काल के चौथे आरे में और उस समय में अर्थात् कूणिक राजा के समय में चम्पा नामक नगरी थी। उसका वर्णन उववाई सूत्र के अनुसार जान लेना चाहिए ॥१॥

तीसे णं चम्पाए णयरीए बहिया उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए पुण्णभद्दे नामं चेइए होत्था, वण्णओ ॥२॥

उस चम्पा नगरी के बाहर, उत्तरपूर्व दिक्कोण में अर्थात् ईशान कोण में पूर्णभद्र नामक चैत्य था। उसका भी वर्णन उववाई सूत्र के अनुसार जान लेना चाहिए ॥२॥

तत्थ णं चम्पाए णयरीए कोणिओ नामं राया होत्था, वण्णओ ॥३॥

उस चम्पा नगरी में कूणिक नामक राजा था। उसका भी वर्णन उववाई सूत्र से जान लेना चाहिए ॥३॥

ते णं काले णं ते णं समए णं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतेवासी अज्जसुहम्मे नामं थेरे जाइसंपन्ने, कुलसंपन्ने, बल-रूव-विणय-णाण-दंसण-चरित्त-लाघव-संपन्ने, ओयंसी, तेयंसी, वच्चंसी जसंसी जिय-कोहे, जियमाणे, जियमाए, जियलोहे, जियइंदिए, जियनिद्दे, जियप-रिसहे, जीवियासमरणभयविप्पमुक्के, तवप्पहाणे, गुणप्पहाणे, एवं करण-चरण-निग्गह-णिच्छय-अज्जव-मद्दव-लाघव-खंति-गुत्ति-मुत्ति-विज्जा-मंत बंभ-वेय नय-नियम-सच्च सोय णाण-दंसण चरित्तप्पहाणे, ओराले, घोरे, घोरव्वए घोरतवस्सी, घोरबंभचेरवासी, उच्छूढसरीरे, संखित्त-विउलतेउलेस्से चोद्दसपुव्वी, चउनाणोवगए, पंचहिं अणगारसएहिं सद्धिं संपरिवुडे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे, सुहं-सुहेणं विहरमाणे, जेणेव चम्पा नयरी, जेणेव पुण्णभद्दे चेइए, तेणामेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता अहापडिरूवं उग्गहं ओगिण्हइ; ओगिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति ॥४॥

उस काल और उस समय में श्रमण भगवान् महावीर के शिष्य आर्य सुधर्मा नामक स्थविर थे। वे जातिसम्पन्न-उत्तम मातृपक्ष वाले थे, कुलसम्पन्न-उत्तम पितृपक्ष वाले थे, उत्तम संहनन से उत्पन्न बल से युक्त थे, अनुत्तर विमान-वासी देवों की अपेक्षा भी अधिक रूपवान थे, विनयवान्, चार ज्ञानवान्, क्षायिक सम्यक्त्ववान, लाघववान्, (द्रव्य से अल्प उपधि वाले और भाव से ऋद्धि रस एवं साता रूप तीन गारवों से रहित) थे, ओजस्वी अर्थात् मानसिक तेज से सम्पन्न या चढ़ते परिणाम वाले, तेजस्वी अर्थात् शारीरिक कान्ति से देदीप्यमान, वचस्वी-सगुण वचन वाले, यशस्वी, क्रोध को जीतने वाले, मान को जीतने वाले, माया को जीतने वाले, लोभ को जीतने वाले, पाँचों इन्द्रियों को जीतने वाले, निद्रा को जीतने वाले, परीषहों को जीतने वाले, जीवित रहने की कामना और मृत्यु के भय से रहित, तपःप्रधान अर्थात् अन्य मुनियों की अपेक्षा अधिक तप करने वाले या उत्कृष्ट तप करने वाले, गुण प्रधान अर्थात् गुणों के कारण उत्कृष्ट या उत्कृष्ट संयम-गुण वाले, करणप्रधान-पिण्ड-[illegible] आदि करणसत्तरी में प्रधान, चरणप्रधान-महाव्रत आदि चरणसत्तरी में प्रधान, निग्रहप्रधान-अनाचार में प्रवृत्ति न करने के कारण उत्तम, तत्त्व का

निश्चय करने में प्रधान, इसी प्रकार आर्जवप्रधान, मार्दवप्रधान, लाघवप्रधान अर्थात् क्रिया करने के कौशल में प्रधान, क्षमाप्रधान, गुप्तिप्रधान, मुक्ति (निर्लोभता) में प्रधान, देवता-अधिष्ठित प्रज्ञप्ति आदि विद्याओं में प्रधान, मंत्रप्रधान† अर्थात् हरिणगमेषी आदि देवों से अधिष्ठित विद्याओं में प्रधान, ब्रह्मचर्य अथवा समस्त कुशल अनुष्ठानों में प्रधान, वेदप्रधान अर्थात् लौकिक एवं लोकोत्तर आगमों में निष्णात, नयप्रधान, नियमप्रधान-भाँति-भाँति के अभिग्रह धारण करने में कुशल, सत्यप्रधान, शौचप्रधान, ज्ञानप्रधान, दर्शनप्रधान, चारित्रप्रधान, उदार अर्थात् अपनी उग्र तपश्चर्या से समीपवर्ती अल्पसत्व वाले मनुष्यों को भय उत्पन्न करने वाले, घोर अर्थात् परीषहों, इन्द्रियों और कषायों आदि आन्तरिक शत्रुओं का निग्रह करने में कठोर, घोरव्रती अर्थात् महाव्रतों को अनन्य सामान्य पालन करने वाले, घोर तपस्वी, उत्कृष्ट ब्रह्मचर्य का पालन करने वाले, शरीरसंस्कार के त्यागी, विपुल तेजोलेश्या को अपने शरीर में ही समाविष्ट करके रखने वाले, चौदह पूर्वों के ज्ञाता, चार ज्ञानों के धनी, पाँच सौ साधुओं के साथ परिवृत, अनुक्रम से चलते हुए, एक ग्राम से दूसरे ग्राम में विचरण करते हुए, सुखे-सुखे विहार करते हुए जहाँ चम्पा नगरी थी और जहाँ पूर्णभद्र चैत्य था, उसी जगह आये। आकर यथोचित अवग्रह को ग्रहण किया, अर्थात् उपाश्रय की याचना करके उसमें स्थित हुए। अवग्रह को ग्रहण करके संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे ॥४॥

तए णं चंपाए नयरीए परिसा निग्गया। कोणिओ निग्गओ। धम्मो कहिओ। परिसा जामेव दिसं पाउब्भूआ, तामेव दिसिं पडिगया।

तत्पश्चात् चम्पा नगरी से परिषद् निकली। कूणिक राजा भी (वन्दना करने के लिए) निकला। सुधर्मा स्वामी ने धर्म का उपदेश दिया। उपदेश सुन कर परिषद् जिस दिशा से आई थी, उसी दिशा में लौट गई।

ते णं काले णं ते णं समए णं अज्जसुहम्मस्स अणगारस्स जेट्ठे अंतेवासी अज्जजंबूणामं अणगारे कासवगोत्तेणं सत्तुस्सेहे जाव अज्जसुहम्मस्स थेरस्स अदूरसामंते उड्ढंजाणू अहोसिरे झाणकोट्ठोवगए संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति।

---

† विद्या और मन्त्र का अन्तर इस प्रकार भी बतलाया गया है—जो साधना से सिद्ध हो, वह विद्या कहलाती है और जो [illegible] के बिना केवल पाठ करने से सिद्ध हो जाय वह मन्त्र है।

जात का अर्थ सामान्य रूप से होना; संजात का अर्थ विशेष रूप से होना, उत्पन्न का अर्थ सामान्य रूप से उत्पन्न होना और समुत्पन्न का अर्थ विशेष रूप से उत्पन्न होना है।

जइ णं भंते ! समणेणं भगवया महावीरेणं आइगरेणं, तित्थयरेणं, सयंसंबुद्धेणं, पुरिसुत्तमेणं, पुरिससीहेणं, पुरिसवरपुंडरीएणं, पुरिसवर-गंधहत्थिणा, लोगुत्तमेणं लोगनाहेणं, लोगहिएणं, लोगपईवेणं, लोग-पज्जोयगरेणं, अभयदएणं, सरणदएणं, चक्खुदएणं, मग्गदएणं, बोहि-दएणं, धम्मदएणं, धम्मदेसएणं, धम्मनायगेणं, धम्मसारहिणा, धम्म-वरचाउरंतचक्कवट्टिणा, अप्पडिहयवरनाणदंसणधरेणं, वियट्टछउमेणं, जिणेणं, जावएणं, तिन्नेणं तारएणं, बुद्धेणं, बोहएणं, मुत्तेणं, मोअ-गेणं, सव्वन्नेणं, सव्वदरिसणेणं सिवमयलमरुअमणंतमक्खयमव्वाबाह-मपुणरावित्तिअं सासयं ठाणमुवगएणं, पंचमस्स अंगस्स अयमट्ठे पण्णत्ते, छट्ठस्स णं अंगस्स णं भंते ! णायाधम्मकहाणं के अट्ठे पन्नत्ते ?।

श्रीजम्बू स्वामी ने श्रीसुधर्मा स्वामी से प्रश्न किया—भगवन् ! यदि श्रुतधर्म की आदि करने वाले, गुरूपदेश के बिना स्वयं ही बोध को प्राप्त, पुरुषों में उत्तम, कर्म-शत्रु का विनाश करने में पराक्रमी होने के कारण पुरुषों में सिंह के समान, पुरुषों में श्रेष्ठ कमल के समान, पुरुषों में गंधहस्ती के समान, अर्थात् जैसे गंधहस्ती की गंध से ही अन्य हस्ती भाग जाते हैं, उसी प्रकार जिनके पुण्य प्रभाव से ही ईति, भीति आदि का विनाश हो जाता है, लोक में उत्तम, लोक के नाथ, लोक का हित करने वाले, लोक में प्रदीप के समान, लोक में विशेष उद्योत करने वाले, अभय देने वाले, शरणदाता, श्रद्धा रूप नेत्र के दाता, धर्ममार्ग के दाता, बोधिदाता, देशविरति और सर्वविरति रूप धर्म के दाता, धर्म के उपदेशक, धर्म के नायक, धर्म के सारथि, चारों गतियों का अन्त करने वाले धर्म के चक्रवर्ती, कहीं भी प्रतिहत न होने वाले केवलज्ञान दर्शन के धारक, घातिकर्म रूप छद्म के नाशक, रागादि को जीतने वाले और उपदेश द्वारा अन्य प्राणियों को जिताने वाले, संसार सागर से स्वयं तिरे हुए और दूसरों को तारने वाले, स्वयं बोध प्राप्त और दूसरों को बोध देने वाले, स्वयं कर्म बन्धन से मुक्त और उपदेश द्वारा दूसरों को मुक्त करने वाले, सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, शिव उपद्रवरहित, अचल-चलन आदि क्रिया से रहित, अरुज-शारी-

रिक मानसिक व्याधि की वेदना से रहित, अनन्त, अपार, अव्याबाध
अपुनरावृत्ति–पुनरागमन से रहित सिद्धिगति नामक शाश्वत स्थान को प्रा
श्रमण भगवान महावीर ने पांचवें अंग का यह (जो आपने कहा) अर्थ कहा
है, तो भगवन् ! छठे अंग ज्ञाताधर्मकथा का क्या अर्थ कहा है ?

जंबू त्ति, तए णं अज्जसुहम्मे थेरे अज्जजंबूणामं अणगारं एवं
वयासी—एवं खलु जंबू ! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं
छट्ठस्स अंगस्स दो सुयक्खंधा पण्णत्ता, तंजहा—णायाणि य धम्म-
कहाओ य ।

'हे जम्बू !' इस प्रकार संबोधन करके आर्य सुधर्मा स्थविर ने आर्य
जम्बू नामक अनगार से इस प्रकार कहा—जम्बू ! श्रमण भगवान महावीर
यावत् सिद्धिस्थान को प्राप्त ने छठे अंग ज्ञाताधर्मकथांग के दो श्रुतस्कन्ध प्ररूपण
किये हैं । वे इस प्रकार—ज्ञात (उदाहरण) और धर्मकथा ।

जइ णं भंते ! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं छट्ठस्स
अंगस्स दो सुयक्खंधा पण्णत्ता, तंजहा—णायाणि य धम्मकहाओ य,
पढमस्स णं भंते ! सुयक्खंधस्स समणेणं जाव संपत्तेणं णायाणं कइ
अज्झयणा पण्णत्ता ?

जम्बू स्वामी पुनः प्रश्न करते हैं—भगवन् ! यदि श्रमण भगवान् महा-
वीर यावत् सिद्धिस्थान को प्राप्त ने छठे अंग के दो श्रुतस्कन्ध प्ररूपित किये हैं,
यह इस प्रकार ज्ञात और धर्मकथा, तो भगवन् ! ज्ञात नामक प्रथम श्रुतस्कन्ध
के श्रमण भगवान् यावत् सिद्धिस्थान को प्राप्त ने कितने अध्ययन कहे हैं ?

एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं णायाणं एगूणवीसं
अज्झयणा पण्णत्ता, तंजहा—उक्खित्तणाए, संघाडे, अंडे, कुम्मे य,
सेलगे, तुंबे य, रोहिणी, मल्ली, मायंदी, चंदिमाइ य, दावद्दवे, उदग-
णाए, मंडुक्के, तेयली, विय णंदिफले, अवरकंका, आइण्णे, सुसमाइ
य, अवरे य पुंडरीए, णामा एगूणवीसइमे ।

हे जम्बू ! श्रमण यावत् सिद्धिस्थान को प्राप्त भगवान् महावीर ने
नामक श्रुतस्कन्ध के उन्नीस अध्ययन कहे हैं । यह इस

त्तियाए, वेणइयाए, कम्मइयाए, पारिणामियाए चउव्विहाए बुद्धीए उववेए, सेणियस्स रण्णो बहुसु कज्जेसु य, कुडुंबेसु य, मंतेसु य, गुज्झेसु य, रहस्सेसु य, णिच्छएसु य, आपुच्छणिज्जे, पडिपुच्छणिज्जे, मेढी, पमाणं, आहारे, आलंबणभूए, पमाणभूए, आहारभूए, चक्खुभूए, सव्वकज्जेसु य, सव्वभूमियासु य लद्धपच्चए, विइण्णवियारे, रज्जधुरचिंतए यावि होत्था। सेणियस्स रण्णो रज्जं च, रट्ठं य, कोसं च, कोट्ठागारं च, वाहणं च, पुरं च, अंतेउरं च, सयमेव समुपेक्खमाणे-समुपेक्खमाणे विहरइ

उस श्रेणिक राजा का पुत्र और नन्दा देवी का आत्मज अभय नामक कुमार था। वह हीनतारहित परिपूर्ण इन्द्रियों वाला यावत् सुरूप था। शाम, दंड, भेद एवं उपप्रदान नीति में तथा व्यापार नीति की विधि का ज्ञाता था। ईहा, अपोह, मार्गणा, गवेषणा तथा अर्थशास्त्र में कुशल था। औत्पत्तिकी, वैनयिकी, कार्मिकी तथा पारिणामिकी इन चार प्रकार की बुद्धियों से युक्त था। वह श्रेणिक राजा के लिए बहुत-से कार्यों में, कौटुम्बिक कार्यों में, मंत्रणा में, गुह्य कार्यों में, रहस्यमय मामलों में, निश्चय करने में एक बार और बार-बार पूछने योग्य था, अर्थात् श्रेणिक राजा इन सब विषयों में अभयकुमार की सलाह लिया करता था। वह सब के लिए मेढ़ी (खलिहान में गाड़ा हुआ स्तंभ, जिसके चारों ओर घूम-घूम कर बैल धान्य को कुचलते हैं) के समान था, प्रमाण था, आधार था, आलम्बन रूप था, प्रमाणभूत था, आधारभूत था, चक्षुभूत था, सब कार्यों और सब स्थानों में प्रतिष्ठा प्राप्त करने वाला था, सब को विचार देने वाला था तथा राज्य की धुरा को धारण करने वाला था। वह स्वयं ही राज्य (शासन) राष्ट्र (देश), कोश, कोठार (अन्नभाण्डार), बल (सेना) और वाहन (सवारी के योग्य हाथी, अश्व आदि), पुर (नगर) और अन्तःपुर की देखभाल करता रहता था।

तस्स णं सेणियस्स रण्णो धारिणीणामं देवी होत्था, सेणियस्स रण्णो इट्ठा जाव विहरइ।

उस श्रेणिक राजा की धारिणी नामक देवी (रानी) थी, वह श्रेणिक राजा की वल्लभा थी, यावत् सुख भोगती हुई रहती थी।

तए णं सा धारिणी देवी अन्नया कयाइ तंसि तारिसगंसि

छक्कट्ठगलट्ठमट्ठसंठियखंभुग्गयपवरसालभंजियउज्जलमणिकणगरयण---थूभियविडंगजालद्धचंदणिज्जूहकंतरकणयालिचंदसालियाविभत्तिकलिए, सरसच्छधाऊवलवण्णरइए, बाहिरओ दूमियघट्ठमट्ठे, अब्भिंतरओ पसत्तसुइलिहियचित्तकम्मे, णाणाविहपंचवण्णमणिरयणकोट्टिमतले, पउमलयाफुल्लवल्लिवरपुप्फजाइउल्लोयचित्तियतले, वंदणवरकणगकलस-

[illegible]

[illegible]

निव्वुइकरे, कप्पूरलवंगमलयचंदणकालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कधूव-डज्झंतसुरभिमघमघंतगंधुद्धुयाभिरामे, सुगंधवरगंधिए, गंधवट्टिभूए, मणिकिरणपणासियंधयारे, किं बहुणा? जुइगुणेहिं सुरवरविमाण-वेलंबियवरघरए, तंसि तारिसगंसि सयणिज्जंसि, सालिंगणवट्टिए उभओ बिब्बोयणे, दुहओ उण्णए, मज्झेण य गंभीरे, गंगापुलिणवालुयाउद्दाल-सालिसए, उवचियखोमदुगुल्लपट्टपडिच्छन्ने, अत्थरयमलयनवतय-कुसत्तलिंबसीहकेसरपच्चुत्थए, सुविरइयरयत्ताणे रत्तंसुयसंवुए, सुरम्मे, आइणगरूयबूरणवणीयतूलफासे; पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि सुत्त-जागरा ओहीरमाणी ओहीरमाणी एगं, महं, सत्तुस्सेहं, रययकूडसन्निहं, नहयलंसि सोमं सोमाकारं लीलायंतं जंभायमाणं मुहमइगयं गयं पासित्ता णं पडिबुद्धा।

वह धारिणी देवी किसी समय अपने उत्तम भवन में शय्या पर सो रही थी। वह भवन कैसा था? उसके बाह्य आलन्दक या द्वार पर तथा मनोज्ञ, चिकने, सुन्दर आकार वाले और ऊँचे खंभों पर अतीव उत्तम पुतलियाँ बनी हुई थीं। उज्ज्वल मणियों, कनक और कर्केतन आदि रत्नों के शिखर, कपोत-पाली, गवाक्ष, अर्ध चंद्राकार सोपान, निर्यूहक (दरवाजे के दोनों ओर निकले हुए काष्ठ), अंतर या निर्यूहकों के बीच का भाग, कनकाली तथा चन्द्रमालिका (घर के ऊपर की शाला), आदि घर के विभागों की सुन्दर रचना से युक्त था। स्वच्छ गेरू से उसमें उत्तम रंग किया हुआ था। बाहर से उसमें सफेदी की गई थी, कोमल पाषाण से घिसाई की गई थी, अतएव वह चिकना था। उसके भीतरी भाग में उत्तम और शुचि चित्रों का आलेखन किया गया था। उसका फर्श तरह-तरह की पंचरंगी मणियों और रत्नों से जड़ा हुआ था।

मस्तक के चारों ओर घूमती हुई अंजलि को मस्तक पर धारण करके श्रेणिक राजा से इस प्रकार कहती है।

एवं खलु अहं देवाणुप्पिया ! अज्ज तंसि तारिसगंसि सयणिज्जंसि सालिंगणवट्टिए जाव नियगवयणमइवयंतं गयं सुमिणे पासित्ता णं पडिबुद्धा। त एयस्स णं देवाणुप्पिया ! उरालस्स जाव सुमिणस्स के मन्ने कल्लाणे फलवित्तिविसेसे भविस्सइ ?।

अर्थ—देवानुप्रिय ! आज मैं उस पूर्ववर्णित शरीरप्रमाण तकिया वाली शय्या में सो रही थी, तब यावत् अपने मुख में प्रवेश करते हुए हाथी को स्वप्न में देख कर जागी हूँ। हे देवानुप्रिय ! इस उदार यावत् स्वप्न का क्या फल-विशेष होगा ?

तए णं सेणिए राया धारिणीए देवीए अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठ जाव हियए धाराहयनीवसुरभिकुसुमचंचुमालइयतणू उमसियरोमकूवे तं सुमिणं उग्गिण्हइ। उग्गिण्हित्ता ईहं पविसति, पविसित्ता अप्पणो सामाविएणं मइपुव्वएणं बुद्धिविन्नाणेणं तस्स सुमिणस्स अत्थोग्गहं करेइ। करित्ता धारिणिं देविं ताहिं जाव हियय-पल्हायणिज्जाहिं मिउमहुररिभियगंभीरसस्सिरियाहिं वग्गूहिं अणुवूहे-माणे एवं वयासी।

अर्थ—तत्पश्चात् श्रेणिक राजा धारिणी देवी से इस अर्थ को सुन कर तथा हृदय में धारण करके हर्षित हृदय हुआ, मेघ की धाराओं से आहत कदंब वृक्ष के सुगंधित पुष्प के समान उसका शरीर पुलकित हो उठा। उसे रोमांच हो आया। उसने स्वप्न का अवग्रहण किया—सामान्य रूप से विचार किया। अवग्रहण करके विशेष अर्थ के विचार रूप ईहा में प्रवेश किया। ईहा में प्रवेश करके अपने स्वाभाविक मतिपूर्वक बुद्धिविज्ञान से अर्थात् औत्पत्तिकी आदि बुद्धियों से उस स्वप्न के फल का निश्चय किया। निश्चय करके धारिणी देवी से हृदय को आह्लाद उत्पन्न करने वाली मृदु, मधुर, रिभित, गंभीर और सश्रीक वाणी से प्रशंसा करते हुए इस प्रकार कहा।

उराले णं तुमे देवाणुप्पिए ! सुमिणे दिट्ठे, कल्लाणे णं तुमे देवाणुप्पिए सुमिणे दिट्ठे, सिवे धन्ने मंगल्ले सस्सिरीए णं तुमे देवाणुप्पिए !

सुमिणे दिट्ठे, आरोग्गतुट्ठिदीहाउयकल्लाणमंगल्लकारए णं तुमे देवी सुमिणे दिट्ठे। अत्थलाभो ते देवाणुप्पिए, पुत्तलाभो ते देवाणुप्पिए रज्जलाभो भोगसोक्खलाभो ते देवाणुप्पिए, एवं खलु तुमं देवाणुप्पिए नवण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं अद्धट्ठमाण य राइंदियाण विइक्कंताणं अम्हं कुलकेउं कुलदीवं कुलपव्वयं कुलवडिंसयं कुलतिलकं कुलकित्तिकरं, कुलवित्तिकरं कुलणंदिकरं कुलजसकरं कुलाधारं कुलपायवं कुलविवद्धणकरं सुकुमालपाणिपायं जाव दारयं पयाहिसि।

अर्थ—हे देवानुप्रिये! तुमने उदार—प्रधान स्वप्न देखा है, हे देवानुप्रिये! तुमने कल्याणकर स्वप्न देखा है, हे देवानुप्रिये! तुमने शिव—उपद्रवविनाशक, धन्य—धन की प्राप्ति कराने वाला, मंगलमय—सुखकारी और सश्रीक—सुशोभन स्वप्न देखा है। देवी! आरोग्य, तुष्टि, दीर्घायु, कल्याण और मंगल करने वाला स्वप्न तुमने देखा है। देवानुप्रिये! इस स्वप्न को देखने से तुम्हें अर्थ का लाभ होगा, देवानुप्रिये! तुम्हें पुत्र का लाभ होगा, देवानुप्रिये! तुम्हें राज्य का लाभ होगा, भोग का तथा सुख का लाभ होगा। निश्चय ही, देवानुप्रिये! तुम पूरे नव मास और साढ़े सात रात्रि—दिन व्यतीत होने पर हमारे कुल की ध्वजा के समान, कुल के लिए दीपक के सामन, कुल में पर्वत के समान किसी से पराभूत न होने वाला, कुल का भूषण, कुल का तिलक, कुल की कीर्त्ति बढ़ाने वाला, कुल की आजीविका बढ़ाने वाला, कुल को आनन्द प्रदान करने वाला, कुल का यश बढ़ाने वाला, कुल का आधार, कुल में वृक्ष के समान आश्रयणीय, और कुल की वृद्धि करने वाला तथा सुकोमल हाथ—पैर वाला पुत्र यावत् प्रसव करोगी।

से वि य णं दारए उम्मुक्कबालभावे विन्नायपरिणयमेत्ते जोव्वणगमणुपत्ते सूरे वीरे विक्कंते विच्छिन्नविपुलबलवाहणे रज्जवती राया भविस्सइ। तं उराले णं तुमे देवीए सुमिणे दिट्ठे, जाव आरोग्गतुट्ठिदीहाउकल्लाणकारए णं तुमे देवी! सुमिणे दिट्ठे त्ति कट्टु भुज्जो भुज्जो अणुवूहेइ।

वह बालक बाल्यावस्था को पार करके, कला आदि के ज्ञान में परिपक्व होकर, यौवन को प्राप्त होकर शूर, वीर और पराक्रमी होगा। वह विस्तीर्ण और विपुल सेना वाला तथा वाहनों वाला होगा। राज्य का अधिपति रा-

शय्या से उठ कर राजा श्रेणिक जहाँ व्यायामशाला थी, वहाँ आता है। आकर व्यायामशाला में प्रवेश करता है, प्रवेश करके अनेक प्रकार के व्यायाम, योग्य (भारी पदार्थों को उठाना), वल्गन (कूदना), व्यामर्दन (भुजा आदि अङ्गों को परस्पर मरोड़ना), कुश्ती तथा करण (बाहुओं को विशेष प्रकार से मोड़ना), रूप कसरत में श्रेणिक राजा ने श्रम किया और खूब श्रम किया, अर्थात् सामान्यतः शरीर का और विशेषतः प्रत्येक अङ्गोपाङ्ग का व्यायाम किया। तत्पश्चात् शतपाक तथा सहस्रपाक आदि श्रेष्ठ सुगंधित तेल आदि अभ्यंगनों से जो प्रीति उत्पन्न करने वाले अर्थात् रुधिर आदि धातुओं में सम करने वाले, जठराग्नि को दीप्त करने वाले, दर्पणीय अर्थात् शरीर का बल बढ़ाने वाले, मदनीय (कामवर्धक) बृंहणीय (मांसवर्धक) तथा समस्त इन्द्रियों को एवं शरीर को आह्लादित करने वाले थे, राजा श्रेणिक ने अभ्यंगन कराया। फिर मालिश किये शरीर के चर्म को, परिपूर्ण हाथ-पैर वाले तथा कोमल तल वाले, छेक (अवसर के ज्ञाता), दक्ष (चटपट कार्य करने वाले), पट्ठे, कुशल (मर्दन करने में चतुर), मेधावी (नवीन कला को ग्रहण करने में समर्थ), निपुण (क्रीड़ा करने में कुशल), निपुण (मर्दन के सूक्ष्म रहस्यों के ज्ञाता), परिश्रम को जीतने वाले, अभ्यंगन मर्दन और उद्वर्त्तन करने के गुण से पूर्ण पुरुषों द्वारा अस्थियों को सुखकारी, मांस को सुखकारी, त्वचा को सुखकारी तथा रोमों को सुखकारी-इस प्रकार चार तरह की संबाधना से (मर्दन से) श्रेणिक के शरीर का मर्दन किया गया। इस मालिश और मर्दन से राजा का परिश्रम दूर हो गया-थकावट मिट गई। वह व्यायामशाला से बाहर निकला।

पडिणिक्खमित्ता जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता मज्जणघरं अणुपविसइ। अणुपविसित्ता समंतजालाभिरामे विचित्तमणिरयणकोट्टिमतले रमणिज्जे ण्हाणमंडवंसि णाणामणिरयणभत्तिचित्तंसि ण्हाणपीढंसि सुहनिसन्ने, सुहोदगेहिं पुप्फोदगेहिं गंधोदएहिं, सुद्धोदएहिं य पुणो पुणो कल्लाणगपवरमज्जणविहीए मज्जिए, तत्थ कोउयसएहिं बहुविहेहिं कल्लाणगपवरमज्जणावसाणे पम्हलसुकुमालगंधकासाइयलूहियंगे अहतसुमहग्घदूसरयणसुसंवुए सरससुरभिगोसीसचंदणाणुलित्तगत्ते सुइमालावन्नगविलेवणे आविद्धमणिसुवण्णे कप्पियहारद्धहारतिसरयपालंबपलंबमाणकडिसुत्तसुकयसोहे पिणद्धगेविज्जे अंगुलेज्जगललियंगललियकयाभरणे णाणामणिकडगतुडियथंभियभुए अहियरूवसस्सिरीए कुंडलुज्जोइयाणणे मउडदित्तसिरए १।

हैं ऐसे आठ भद्रासन रखवाता है। रखवा करके नाना मणियों और रत्नों से मंडित, अतिशय दर्शनीय, बहुमूल्य और श्रेष्ठ नगर में बनी हुई, कोमल एवं सैकड़ों प्रकार की रचना वाले चित्रों का स्थानभूत, ईहामृग (भेड़िया), वृषभ, अश्व, नर, मगर, पक्षी, सर्प, किन्नर, रुरु जाति के मृग, अष्टापद, चमरी गाय, हाथी, वनलता और पद्मलता आदि के चित्रों से युक्त, श्रेष्ठ स्वर्ण के तारों से भरे हुए सुशोभित किनारों वाली जवनिका (पर्दा) सभा के भीतरी भाग में बँधवाई। जवनिका बँधवा कर उसके भीतरी भाग में धारिणी देवी के लिए एक भद्रासन रखवाया। वह भद्रासन आस्तरक (खोली) और कोमल तकिया से ढँका था। श्वेत वस्त्र उस पर बिछा हुआ था। सुन्दर था। स्पर्श से अंगों को सुख उत्पन्न करने वाला था और अतिशय मृदु था। इस प्रकार आसन बिछवा कर राजा ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलवाया। बुलवा कर इस प्रकार कहा—

देवानुप्रियो! अष्टांग महानिमित्त-ज्योतिष के सूत्र और अर्थ के पाठक तथा विविध शास्त्रों में कुशल स्वप्न पाठकों को शीघ्र ही बुलाओ, और बुला कर शीघ्र ही इस आज्ञा को वापिस लौटाओ।

तए णं ते कोडुंबियपुरिसा सेणिएणं रन्ना एवं वुत्ता समाणा हट्ठ जाव हियया करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं देवो तह त्ति आणाए विणएणं वयणं पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता सेणियस्स रण्णो अंतियाओ पडिनिक्खमंति। पडिनिक्खमित्ता राय-गिहस्स नगरस्स मज्झंमज्झेणं जेणेव सुमिणपाढगगिहाणि तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता सुमिणपाढए सद्दावेंति।

तत्पश्चात् वे कौटुम्बिक पुरुष श्रेणिक राजा द्वारा इस प्रकार कहे जाने पर हर्षित यावत् आनन्दित-हृदय हुए। दोनों हाथ जोड़ कर दसों नखों को इकट्ठा करके मस्तक पर घुमा कर अंजलि जोड़ कर 'हे देव! ऐसा ही हो' इस प्रकार कर विनय के साथ आज्ञा के वचनों को स्वीकार करते हैं और स्वीकार करके श्रेणिक राजा के पास से निकलते हैं। निकल कर राजगृह के बीचोंबीच होकर जहाँ स्वप्नपाठकों के घर थे, वहाँ पहुँचते हैं और पहुँच कर स्वप्नपाठकों को बुलाते हैं।

तए णं ते सुमिणपाढगा सेणियस्स रन्नो कोडुंबियपुरिसेहिं सद्दाविया समाणा हट्ठतुट्ठ जाव हियया ण्हाया कयबलिकम्मा जाव पाय-च्छित्ता अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरा हरियालियसिद्धत्थयकयमुद्धाणा

सएहिं सएहिं गिहेहिंतो पडिनिक्खमंति, पडिनिक्खमित्ता रायगिहस्स मज्झंमज्झेणं जेणेव सेणियस्स रण्णो भवणवडेंसगदुवारे तेणेव उवागच्छंति। उवागच्छित्ता एगयओ मिलयन्ति। मिलित्ता सेणियस्स रण्णो भवणवडेंसगदुवारेणं अणुपविसंति। अणुपविसित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव सेणिए राया तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता सेणियं रायं जएणं विजएणं वद्धावेंति। सेणिएणं रन्ना अच्चिय वंदिय पूइय माणिय सक्कारिया सम्माणिया समाणा पत्तेयं पत्तेयं पुव्वन्नत्थेसु भद्दासणेसु निसीयंति।

तत्पश्चात् वे स्वप्नपाठक श्रेणिक राजा के कौटुम्बिक पुरुषों द्वारा बुलाये जाने पर हृष्ट तुष्ट यावत् आनन्दितहृदय हुए। उन्होंने स्नान किया, कुल देवता का पूजन किया, यावत् कौतुक (मषी तिलक आदि) और मंगल प्रायश्चित (सरसों, दही चावल आदि का प्रयोग) किया। अल्प किन्तु बहुमूल्य आभरणों से शरीर को अलंकृत किया, मस्तक पर दूर्वा तथा सरसों मंगलनिमित्त धारण किये। फिर अपने-अपने घरों से निकले। निकल कर राजगृह के बीचोंबीच होकर जहाँ श्रेणिक राजा के मुख्य महल का द्वार था, वहाँ आये। आकर सब एक साथ मिले। एक साथ मिल कर श्रेणिक राजा के मुख्य महल के द्वार से भीतर प्रवेश किया। प्रवेश करके जहाँ बाहरी उपस्थानशाला थी और जहाँ श्रेणिक राजा था, वहाँ आये। आकर श्रेणिक राजा को जय और विजय शब्दों से बधाया। श्रेणिक राजा ने चन्दनादि से उनकी अर्चना की, गुणों की प्रशंसा करके वन्दन किया, पुष्पों द्वारा पूजा की, आदरपूर्ण दृष्टि से देख कर एवं नमस्कार करके मान किया, फल-वस्त्र आदि देकर सत्कार किया और अनेक प्रकार की भक्ति करके सम्मान किया। फिर वे स्वप्नपाठक पहले से बिछाए हुए भद्रासनों पर अलग-अलग बैठे।

तए णं सेणिए राया जवणियंतरियं धारिणिं देविं ठवेइ, ठवेत्ता पुप्फफलपडिपुण्णहत्थे परेणं विणएणं ते सुमिणपाढए एवं वयासी — एवं खलु देवाणुप्पिया! धारिणी देवी अज्ज तंसि तारिसगंसि सयणिज्जंसि जाव महासुमिणं पासित्ता णं पडिबुद्धा। तं एयस्स णं देवाणुप्पिया! उरालस्स जाव सस्सिरीयस्स महासुमिणस्स के मन्ने कल्लाणे फलवित्तिविसेसे भविस्सइ?

तत्पश्चात् श्रेणिक राजा ने जवनिका के पीछे धारिणी देवी को बिठलाया। फिर हाथों में पुष्प और फल लेकर अत्यन्त विनय के साथ उन स्वप्नपाठकों से इस प्रकार कहा—देवानुप्रियो! आज उस प्रकार की उस (पूर्ववर्णित) शय्या पर सोई हुई धारिणी देवी यावत् महास्वप्न देख कर जागी है। तो देवानुप्रियो! इस उदार यावत् सश्रीक महास्वप्न का क्या कल्याणकारी फल-विशेष होगा?

तए णं ते सुमिणपाढगा सेणियस्स रण्णो अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठ जाव हियया तं सुमिणं सम्मं ओगिण्हंति। ओगिण्हित्ता ईहं अणुपविसंति, अणुपविसित्ता अन्नमन्नेणं सद्धिं संचालेंति, सं-लित्ता तस्स सुमिणस्स लद्धट्ठा गहियट्ठा पुच्छियट्ठा विणिच्छियट्ठा अभिगयट्ठा सेणियस्स रण्णो पुरओ सुमिणसत्थाइं उच्चारेमाणा उच्चारेमाणा एवं वयासी—

तत्पश्चात् वे स्वप्नपाठक श्रेणिक राजा से इस अर्थ को सुन कर और हृदय में धारण करके हृष्ट, तुष्ट आनन्दितहृदय हुए। उन्होंने उस स्वप्न का सम्यक् प्रकार से अवग्रहण किया, अवग्रहण करके ईहा (विचारणा) में प्रवेश किया; प्रवेश करके परस्पर एक-दूसरे के साथ विचार-विमर्श किया। विचार-विमर्श करके स्वप्न का अपने आपसे अर्थ समझा, दूसरों का अभिप्राय जान कर विशेष अर्थ समझा, आपस में उस अर्थ को पूछा, अर्थ का निश्चय किया और फिर तथ्य अर्थ का निश्चय किया वे स्वप्नपाठक श्रेणिक राजा के सामने स्वप्नशास्त्रों का बार-बार उच्चारण करते हुए इस प्रकार बोले—

एवं खलु अम्हं सामी! सुमिणसत्थंसि बायालीसं सुमिणा, तीस महासुमिणा बावत्तरिं सव्वसुमिणा दिट्ठा। तत्थ णं सामी! अरहंत-मायरो वा, चक्कवट्टिमायरो वा अरहंतंसि वा चक्कवट्टिंसि वा ग-ब्भं वक्कममाणंसि एएसिं तीसाए महासुमिणाणं इमे चोद्दस महासुमिणे पासित्ता णं पडिबुज्झन्ति:—

तंजहा—गयउसभसीहअभिसेय-दामससिदिणयरं झयं कुंभं।
पउमसरसागरविमाण-भवणरयणुच्चयसिहिं च ॥

हे स्वामिन्! इस प्रकार हमारे स्वप्नशास्त्र में बयालीस स्वप्न और तीस महास्वप्न-कुल मिलाकर ७२ स्वप्न हमने देखे हैं। अरिहंत की माता और

चक्रवर्ती की माता अरिहन्त और चक्रवर्ती के गर्भ में आने पर इन तीस महास्वप्नों में से चौदह स्वप्न देख कर जागती हैं। वे इस प्रकार हैं—

(१) हाथी (२) वृषभ (३) सिंह (४) अभिषेक (५) पुष्पों की माला (६) चन्द्र (७) सूर्य (८) ध्वजा (९) पूर्ण कुंभ (१०) पद्मयुक्त सरोवर (११) क्षीरसागर (१२) विमान अथवा भवन* (१३) रत्नों की राशि और (१४) अग्नि।

वासुदेवमायरो वा वासुदेवंसि गब्भं वक्कममाणंसि एएसिं चोद्दसण्हं महासुमिणाणं अन्नतरे सत्त महासुमिणे पासित्ता णं पडिबुज्झन्ति। बलदेवमायरो वा बलदेवंसि गब्भं वक्कममाणंसि एएसिं चोद्दसण्हं महासुमिणाणं अण्णयरे चत्तारि महासुमिणे पासित्ता णं पडिबुज्झन्ति। मंडलियमायरो वा मंडलियंसि गब्भं वक्कममाणंसि एएसिं चोद्दसण्हं महासुमिणाणं अन्नयरं एगं महासुमिणं पासित्ता णं पडिबुज्झन्ति।

जब वासुदेव गर्भ में आते हैं तो वासुदेव की माता इन चौदह महास्वप्नों में से किन्हीं भी सात महास्वप्नों को देखकर जागृत होती हैं। जब बलदेव गर्भ में आते हैं तो बलदेव की माता इन चौदह स्वप्नों में से किन्हीं चार स्वप्नों को देखकर जागृत होती है। जब मांडलिक राजा गर्भ में आता है तो मांडलिक राजा की माता इन चौदह स्वप्नों में से कोई एक महास्वप्न देख कर जागृत होती है।

इमे य णं सामी! धारिणीए देवीए एगे महासुमिणे दिट्ठे। तं उराले णं स्वामी! धारिणीए देवीए सुमिणे दिट्ठे, जाव आरोग्गतुट्ठि-दीहाउकल्लाणमंगल्लकारए णं स्वामी! धारिणीए देवीए सुमिणे दिट्ठे। अत्थलाभो सामी! सोक्खलाभो सामी! भोगलाभो सामी! पुत्तलाभो रज्जलाभो, एवं खलु सामी! धारिणी देवी नवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं जाव दारगं पयाहिसि। से वि य णं दारए उम्मुक्कबाल-भावे विन्नायपरिणयमित्ते जोव्वणगमणुपत्ते सूरे वीरे विक्कंते विच्छिन्न-विउलबलवाहणे रज्जवती राया भविस्सइ, अणगारे वा भावियप्पा। तं उराले णं सामी! धारिणीए देवीए सुमिणे दिट्ठे जाव आरोग्ग-तुट्ठि जाव दिट्ठे त्ति कट्टु भुज्जो भुज्जो अणुवूहेंति।

*देवलोक से च्युत होकर आवें तो विमान और नरक से उद्वर्त्तन करके आवें तो भवन स्वप्न में दिखाई देता है।

स्वामिन् ! धारिणी देवी ने इन महास्वप्नों में से एक महास्वप्न देखा है। अतएव स्वामिन् ! धारिणी देवी ने उदार स्वप्न देखा है, यावत् आरोग्य, तुष्टि, दीर्घायु, कल्याण और मंगलकारी, स्वामिन् ! धारिणी देवी ने स्वप्न देखा है। स्वामिन् ! इससे आपको अर्थ का लाभ होगा। स्वामिन् ! सुख का लाभ होगा। स्वामिन् ! भोग का लाभ होगा, पुत्र का लाभ होगा। स्वामिन् ! इस प्रकार स्वामिन् ! धारिणी देवी पूरे नौ मास व्यतीत होने पर यावत् पुत्र को जन्म देगी वह पुत्र भी बाल-वय को पार करके, गुरु की साक्षी मात्र से अपने ही बुद्धिवैभव से समस्त कलाओं का ज्ञाता होकर, युवावस्था को प्राप्त करके संग्राम में शूर, आक्रमण करने में वीर और पराक्रमी होगा। विस्तीर्ण और विपुल बल-वाहन वाला होगा। राज्य का अधिपति राजा होगा अथवा अपनी आत्मा को भावित करने वाला अनगार होगा। अतएव हे स्वामिन् ! धारिणी देवी ने उदार स्वप्न देखा है, यावत् आरोग्यकारक, तुष्टिकारक आदि पूर्वोक्त विशेषणों वाला स्वप्न देखा है। इस प्रकार कह कर स्वप्नपाठक बार-बार उस स्वप्न की सराहना करने लगे।

तए णं सेणिए राया तेसिं सुमिणपाढगाणं अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठ जाव हियए करयल जाव एवं वयासी—

तत्पश्चात् श्रेणिक राजा उन स्वप्नपाठकों से इस अर्थ को सुन कर और हृदय में धारण करके हृष्ट तुष्ट एवं आनन्दितहृदय हो गया और हाथ जोड़ कर इस प्रकार बोला—

एवमेयं देवाणुप्पिया ! जाव जन्नं तुब्भे वदह त्ति कट्टु तं सुमिणं सम्मं पडिच्छइ। पडिच्छित्ता ते सुमिणपाढए विपुलेणं असणपाण-खाइमसाइमेणं वत्थगंधमल्लालंकारेण य सक्कारेइ संमाणेइ, सक्कारित्ता सम्माणित्ता विपुलं जीवियारिहं पीतिदाणं दलयइ। दलइत्ता पडिविसज्जेइ।

हे देवानुप्रियो ! जो तुम कहते हो सो वैसा ही है-सत्य है; इस प्रकार कह कर उस स्वप्न के फल को सम्यक् प्रकार से स्वीकार करके उन स्वप्नपाठकों को विपुल अशन, पान, खाद्य, स्वाद्य, और वस्त्र, गंध, माला एवं अलंकारों से सत्कार करता है, सन्मान करता है। सत्कार-सन्मान करके [illegible] के योग्य प्रीतिदान देता है और दान देकर विदा करता है।

याओ, दुगुल्लसुकुमालउत्तरिज्जाओ, सव्वोउयसुरभिकुसुमपवरमल्ल- [सो]भितसिराओ, कालागरुधूवधूवियाओ, सिरिसमाणवेसाओ, सेयणग-[गंध]हत्थिरयणं दुरूढाओ समाणीओ, सकोरिंटमल्लदामेणं छत्तेणं [धरिज्ज]माणेणं चंदप्पभवइरवेरुलियविमलदंडसंखकुंददगरयअमयमहिय-[फेण]पुंजसंनिगासचउचामरवालवीजियंगीओ, सेणिएणं रन्ना सद्धिं [हत्थि]खंधवरगएणं, पिट्ठओ समणुगच्छमाणीओ चउरंगिणीए सेणाए, [महय]ा हयाणीएणं, गयाणीएणं, रहाणीएणं, पायत्ताणीएणं, सव्विड्-[ढी]ए सव्वज्जुइए जाव निग्घोसणादियरवेणं रायगिहं नगरं सिंघाडग-[तिग]चउक्कचच्चरचउम्मुहमहापहपहेसु आसित्तसित्तसुचियसंमज्जिओव-[लि]त्तं जाव सुगंधवरगंधियं गंधवट्टिभूयं अवलोएमाणीओ, नागरजणेणं [अभिनंद]िज्जमाणीओ, गुच्छलया-रुक्ख-गुम्म-वल्लि-गुच्छओच्छाइयं [सु]रम्मं वेभारगिरिकडगपायमूलं सव्वओ समंता आहिंडेमाणीओ [आ]हिंडेमाणीओ दोहलं विणियंति। तं जइ णं अहमवि मेहेसु अब्भुव-[ग]एसु जाव दोहलं विणिज्जामि।

जो माताएँ अपने अकाल-मेघ के दोहद को पूर्ण करती हैं, वे माताएँ [ध]न्य हैं, वे पुण्यवती हैं, वे कृतार्थ हैं, उन्होंने पूर्वजन्म में पुण्य का उपार्जन [कि]या है, वे कृतलक्षण हैं, अर्थात् उनके शरीर के लक्षण सफल हैं, उनका वैभव [स]फल है, उन्हें मनुष्य संबंधी जन्म और जीवन का फल प्राप्त हुआ है, अर्थात् [उ]नका जन्म और जीवन सफल है। आकाश में मेघ उत्पन्न होने पर, क्रमशः [वृ]द्धि को प्राप्त होने पर, उन्नति को प्राप्त होने पर, बरसने की तैयारी में होने पर, [गर्]जना युक्त होने पर, विद्युत् से युक्त होने पर, छोटी-छोटी बरसती हुई बूंदों [से] युक्त होने पर, मंद-मंद ध्वनि से युक्त होने पर, अग्नि जला कर शुद्ध की हुई ... के समान, अंक नामक रत्न, शंख, चन्द्रमा, कुन्दपुष्प और चावल ... समान शुक्ल वर्ण वाले, चिकुर नामक रंग, हरताल के टुकड़े, चम्पा ... फूल (अथवा सुवर्ण), कोरंट-पुष्प, सरसों के फूल और कमल के ... वर्ण वाले, लाख के रस, सरस रक्तवर्ण किंशुक के पुष्प, ... रंग के बंधुजीवक के पुष्प, उत्तम जाति के हिंगलू, सरस ... [इन्द्र]गोप (सावन की डोकरी) के समान ... गुलिक (गोली) तोते के पंख, ... नामक वृक्ष, या प्रियंगुलता,

हियाओ, दुगुल्लसुकुमालउत्तरिज्जाओ, सव्वोउयसुरभिकुसुमपवरमल्ल-सोभियसिराओ, कालागरुधूवधूवियाओ, सिरिसमाणवेसाओ, सेयणग-गंधहत्थिरयणं दुरूढाओ समाणीओ, सकोरिंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं चंदप्पभवइरवेरुलियविमलदंडसंखकुंददगरयअमयमहिय-फेणपुंजसंनिगासचउचामरवालवीजियंगीओ, सेणिएणं रन्ना सद्धिं हत्थिखंधवरगएणं, पिट्ठओ समणुगच्छमाणीओ चउरंगिणीए सेणाए, महया हयाणीएणं, गयाणीएणं, रहाणीएणं, पायत्ताणीएणं, सव्वड्-ढीए सव्वज्जुईए जाव निग्घोसनाइयरवेणं रायगिहं नगरं सिंघाडग-तियचउक्कचच्चरचउम्मुहमहापहपहेसु आसित्तसित्तसुचियसंमज्जिओव-लित्तं जाव सुगंधवरगंधियं गंधवट्टिभूयं अवलोएमाणीओ, नागरजणेणं अभिनंदिज्जमाणीओ, गुच्छलया-रुक्ख-गुम्म-वल्लि-गुच्छओच्छाइयं सुरम्मं वेभारगिरिकडगपायमूलं सव्वओ समंता आहिंडेमाणीओ आहिंडेमाणीओ दोहलं विणिंति। तं जइ णं अहमवि मेहेसु अब्भुद-एसु जाव दोहलं विणिज्जामि।

जो माताएँ अपने अकाल-मेघ के दोहद को पूर्ण करती हैं, वे माताएँ धन्य हैं, वे पुण्यवती हैं, वे कृतार्थ हैं, उन्होंने पूर्वजन्म में पुण्य का उपार्जन किया है, वे कृतलक्षण हैं, अर्थात् उनके शरीर के लक्षण सफल हैं, उनका वैभव सफल है, उन्हें मनुष्य संबंधी जन्म और जीवन का फल प्राप्त हुआ है, अर्थात् उनका जन्म और जीवन सफल है। आकाश में मेघ उत्पन्न होने पर, क्रमशः वृद्धि को प्राप्त होने पर, उन्नति को प्राप्त होने पर, बरसने की तैयारी में होने पर, गर्जना युक्त होने पर, विद्युत् से युक्त होने पर, छोटी-छोटी बरसती हुई बूंदों से युक्त होने पर, मंद-मंद ध्वनि से युक्त होने पर, अग्नि में तपा कर शुद्ध की हुई चांदी के पत्रे के समान, अंक नामक रत्न, शंख, चन्द्रमा, कुन्द-पुष्प और चावल के आटे के समान शुक्ल वर्ण वाले, चिकुर नामक रंग, हरताल के टुकड़े, चम्पा के फूल, सन के फूल (अथवा सुवर्ण), कोरंट-पुष्प, सरसों के फूल और कमल के रज के समान पीत वर्ण वाले, लाख के रस, सरस रक्तवर्ण किंशुक के पुष्प, जासु के पुष्प, लाल रंग के बन्धुजीवक के पुष्प, उत्तम जाति के हिंगलू, सरस कंकु, बकरा और खरगोश के रक्त और इन्द्रगोप (बीरबहूटी) के समान लाल वर्ण वाले, मयूर, नीलम मणि, नीलगुलिका (गोली) तोते के पंख, चास पक्षी के पंख, भ्रमर के पंख, सासक नामक वृक्ष, या प्रियंगुलता,

नील कमलों के समूह, ताजा शिरीष कुसुम और घास के समान नील वर्ण वाले, उत्तम अंजन, काले भ्रमर या कोयला, रिष्टरत्न, भ्रमरसमूह, भैंसे के सींग की गोली और कज्जल के समान काले वर्ण वाले, इस प्रकार पाँचों वर्ण वाले मेघ हों, बिजली चमक रही हो, गर्जना की ध्वनि हो रही हो, विस्तीर्ण आकाश में वायु के कारण चपल बने हुए बादल इधर-उधर चल रहे हों, निर्मल श्रेष्ठ जल धाराओं से गलित, प्रचंड वायु से आहत, पृथ्वीतल को भिगोने वाली वर्षा निरन्तर बरस रही हो, जल धारा के समूह से भूतल शीतल हो गया हो, पृथ्वी रूपी रमणी ने घास रूपी कंचुक को धारण किया हो, वृक्षों का समूह नवीन पल्लवों से सुशोभित हो गया हो, बेलों के समूह विस्तार को प्राप्त हुआ हो, उन्नत भूप्रदेश सौभाग्य को प्राप्त हुए हों, अर्थात् पानी से धुल कर साफ सुथरे हो गये हों, अथवा पर्वत और कुण्ड सौभाग्य को प्राप्त हुए हों, वैभारगिरि के प्रपात तट और कटक से निर्झर निकल कर बह रहे हों, पर्वतीय नदियों में तेज बहाव के कारण उत्पन्न हुए फेनों से युक्त जल बह रहा हो, उद्यान सर्ज, अर्जुन, नीप और कुटज नामक वृक्षों के अंकुरों से और छत्राकार (कुकुरमुत्ता) से युक्त हो गया हो, मेघ की गर्जना के कारण हृष्ट-तुष्ट होकर नाचने की चेष्टा करने वाले मयूर हर्ष के कारण मुक्त कंठ से केकारव कर रहे हों, और वर्षा ऋतु के कारण उत्पन्न हुए मद से तरुण मयूरियाँ नृत्य कर रही हों, उपवन (घर के समीप वर्ती बाग) शिलिंध्र, कुटज, कंदल और कदंब वृक्षों के पुष्पों की नवीन एवं सौरभ युक्त गंध की तृप्ति धारण कर रहे हों अर्थात् उत्कट सुगंध से सम्पन्न हो रहे हों, नगर के बाहर के उद्यान कोकिलाओं के स्वरघोलना वाले शब्दों से व्याप्त हों और रक्तवर्ण इन्द्रगोप नामक कीड़ों से शोभायमान हो रहे हों, उनमें चातक करुण स्वर से बोल रहे हों, वे नमे हुए तृणों (वनस्पति) से सुशोभित हों, उनमें मेंढक उच्च स्वर से आवाज कर रहे हों, मदोन्मत्त भ्रमरों और भ्रमरियों के समूह एकत्र हो रहे हों, तथा उन उद्यानों में पुष्परस के लोलुप एवं मधुर गुंजार करने वाले मदोन्मत्त भ्रमर लीन हो रहे हों, आकाशतल में चन्द्रमा, सूर्य और ग्रहों का समूह मेघों से आच्छादित होने के कारण श्याम वर्ण का दृष्टिगोचर हो रहा हो, इन्द्रधनुष रूपी ध्वजपट फरकता रहा हो, और उसमें रहा हुआ मेघसमूह बगुलों की पंक्तियों से शोभित हो रहा हो, इस भांति कारंडक, चक्रवाक और राजहंस पक्षियों को उत्सुकमना कर रहा हो और जाने के लिए उत्सुक बनाने वाला वर्षाकाल आ गया हो। ऐसे वर्षाकाल में जो माताएँ स्नान करके, बलिकर्म करके, कौतुक मंगल और प्रायश्चित्त करके (वैभारगिरि के प्रदेशों में अपने पति के साथ विचरण करती हैं वे धन्य हैं।)

धारिणी देवी ने इसके पश्चात् क्या विचार किया, सो बतलाते हैं—वे माताएँ धन्य हैं जो पैरों में उत्तम नूपुर धारण करती हैं, कमर में करधनी पहनती हैं, वक्षस्थल पर हार पहरती हैं, हाथों में कड़े तथा उंगलियों में अंगूठियाँ पहनती हैं, अपने बाहुओं को विचित्र और श्रेष्ठ बाजूबन्दों से स्तंभित करती हैं, जिनका मुख कुंडलों से चमक रहा है, अंग रत्नों से भूषित हो रहा है, जिन्होंने ऐसा वस्त्र पहना हो जो नासिका के निश्वास की वायु से भी उड़ जाय अर्थात् अत्यन्त बारीक हो, नेत्रों को हरण करने वाला हो, उत्तम वर्ण और स्पर्श वाला हो, घोड़े के मुख से निकलने वाले फेन से भी कोमल और हल्का हो, उज्ज्वल हो, जिसकी किनारियाँ सुवर्ण के तारों से बुनी गई हो, श्वेत होने के कारण जो आकाश स्फटिक के समान कान्ति वाला हो और श्रेष्ठ हो, जिनका मस्तक समस्त ऋतुओं संबंधी सुगंधी पुष्पों और श्रेष्ठ फूलमालाओं से सुशोभित हो, जो कालागुरु आदि की उत्तम धूप से धूपित हो और जो लक्ष्मी के समान वेष वाली हों। इस प्रकार सजधज करके जो सेचनक नामक गंधहस्ती पर आरूढ़ होकर, कोरंट-पुष्पों की माला से सुशोभित छत्र को धारण करती हैं। चन्द्रप्रभ वज्र और वैडूर्य रत्न के निर्मल दंड वाले एवं शंख, कुन्दपुष्प, जलकण और अमृत का मथन करने से उत्पन्न हुए फेन के समूह के समान उज्ज्वल चार चामर जिनके ऊपर ढोरे जा रहे हैं, जो हाथीरत्न के स्कंध पर (महावत के रूप में) राजा श्रेणिक के साथ बैठी हों। उनके पीछे-पीछे चतुरंगिणी सेना चल रही हो, अर्थात् विशाल अश्वसेना, गजसेना, रथसेना और पैदलसेना हो। छत्र आदि राजचिह्न रूप समस्त ऋद्धि के साथ, आभूषणों आदि की कान्ति के साथ, यावत् वाद्यों के निर्घोषशब्द के साथ, राजगृह नगर के शृंगाटक (सिंघाड़े के आकार के मार्ग), त्रिक (जहाँ तीन मार्ग मिलें), चतुष्क (चौक), चत्वर (चबूतरा), चतुर्मुख (चारों ओर द्वार वाले देवकुल आदि), महापथ (राजमार्ग) तथा सामान्य मार्ग में गंधोदक एक बार छिड़का हो, अनेक बार छिड़का हो, शृङ्गाटक आदि को शुचि किया हो, भाड़ा हो, गोबर आदि से लीपा हो, यावत् उत्तम गंध के चूर्ण से सुगंधित किया हो, और मानों गंध द्रव्य की गुटिका ही हो, ऐसे राजगृह नगर को देखती जा रही हों। नागरिक अभिनन्दन कर रहे हों। गुच्छों, लताओं, वृक्षों, गुल्मों (भाड़ियों) एवं वेलों के समूहों से व्याप्त, मनोहर वैभारपर्वत के निचले भागों के समीप, चारों ओर सर्वत्र भ्रमण करती हुई अपने दोहद को पूर्ण करती हैं। तो मैं भी इसी प्रकार मेघों का उदय आदि होने पर यावत् अपने दोहद को पूर्ण करूं।

तए णं सा धारिणी देवी तंसि दोहलंसि अविणिज्जमाणंसि असंपत्तदोहला असंपुण्णदोहला असंमाणियदोहला सुक्का भुक्खा ...

ओलुग्गा ओलुग्गसरीरा पमइलदुब्बला किलंता ओमंथियवयणनयण-कमला पंडुइयमुही करयलमलिय व्व चंपगमाला णित्तेया दीणविवण्ण-वयणा जहोचियपुप्फगंधमल्लालंकारहारं अणभिलसमाणी कीडारमण-किरियं च परिहावेमाणी दीणा दुम्मणा निराणंदा, भूमिगयदिट्ठीया ओहयमणसंकप्पा जाव झियायइ।

तत्पश्चात् वह धारिणी देवी उस दोहद के दूर (पूर्ण) न होने के कारण दोहद के सम्पन्न न होने के कारण, दोहद के सम्पूर्ण न होने के कारण, मेघ आदि का अनुभव न होने से दोहद के सम्मानित न होने के कारण, मानसिक संताप द्वारा रक्त का शोषण हो जाने से शुष्क हो गई। भूख से व्याप्त हो गई। मांस से रहित हो गई। जीर्ण एवं जीर्ण शरीर वाली, स्नान का त्याग करने से मलिन शरीर वाली, भोजन त्याग देने से दुबली तथा थकी हुई हो गई। उसने मुख और नयन रूपी कमल नीचे कर लिये। उसका मुख फीका पड़ गया। हथेलियों से मसली हुई चम्पक पुष्पों की माला के समान निस्तेज हो गई। उसका मुख दीन और विवर्ण हो गया। यथोचित पुष्प, गंध, माला, अलंकार और हार के विषय में रुचिरहित हो गई, अर्थात् उसने इन सब का त्याग कर दिया। जल आदि की क्रीड़ा और चौपड़ आदि खेलों की क्रिया का परित्याग कर दिया। वह दीन, दुःखी मन वाली, आनन्दहीन एवं भूमि की तरफ दृष्टि किये हुए बैठी। उसके मन का संकल्प नष्ट हो गया। वह यावत् आर्त्तध्यान करने लगी।

तए णं तीसे धारिणीए देवीए अंगपडियारियाओ अब्भिंतरियाओ दासचेडीयाओ धारिणीं देवीं ओलुग्गं जाव झियायमाणिं पासंति, पासित्ता एवं वयासी—'किं णं तुमे देवाणुप्पिये! ओलुग्गा ओलुग्ग-सरीरा जाव झियायसि?'

तत्पश्चात् उस धारिणी देवी की अंगपरिचारिका शरीर की सेवा-शुश्रूषा करने वाली आभ्यंतर दासियां धारिणी देवी को जीर्ण-सी एवं जीर्ण शरीर वाली, यावत् आर्त्तध्यान करती हुई देखती हैं। देखकर इस प्रकार कहती हैं—'हे देवानुप्रिये! तुम जीर्ण जैसी तथा जीर्ण शरीर वाली क्यों हो? यावत् आर्त्तध्यान क्यों कर रही हो?'

तए णं सा धारिणी देवी ताहिं अंगपडियारियाहिं अब्भिंतरियाहिं

याहिं दासचेडियाहिं एवं वुत्ता समाणी नो आढाति, णो य परियाणाति, अणाढायमाणी अपरियाणमाणी तुसिणीया संचिट्ठइ।

तत्पश्चात् धारिणी देवी अंगपरिचारिका आभ्यन्तर दासियों द्वारा इस प्रकार कहने पर (अन्यमनस्क होने से) उनका आदर नहीं करती और उन्हें जानती भी नहीं। नहीं आदर करती और नहीं जानती हुई वह मौन ही रहती है।

तए णं ताओ अंगपडियारियाओ अब्भितरियाओ दासचेडियाओ धारिणीं देविं दोच्चं पि तच्चं पि एवं वयासी—'किं णं तुमे देवाणुप्पिये! ओलुग्गा ओलुग्गसरीरा जाव झियायसि?'

तत्पश्चात् वह अंगपरिचारिका आभ्यन्तर दासियाँ दूसरी बार और तीसरी बार इस प्रकार कहने लगीं—हे देवानुप्रिये! क्यों तुम जीर्ण-सी, जीर्ण शरीर वाली हो रही हो, यावत् आर्त्तध्यान कर रही हो?

तए णं सा धारिणी देवी ताहिं अंगपडियारियाहिं अब्भितरियाहिं दासचेडियाहिं दोच्चं पि तच्चं पि एवं वुत्ता समाणी णो आढाइ, णो परियाणाइ, अणाढायमाणी अपरियाणमाणी तुसिणीया संचिट्ठइ।

तत्पश्चात् धारिणी देवी उन अंगपरिचारिका आभ्यन्तर दासियों द्वारा दूसरी बार और तीसरी बार भी इस प्रकार कहने पर न आदर करती है और न जानती है, अर्थात् उनकी बात पर ध्यान नहीं देती, तथा न आदर करती हुई और न जानती हुई मौन रहती है।

तए णं ताओ अंगपडियारियाओ अब्भितरियाओ दासचेडियाओ धारिणीए देवीए अणाढाइज्जमाणीओ अपरिजाणिज्जमाणीओ (अपरियाणमाणीओ) तहेव संभंताओ समाणीओ धारिणीए देवीए अंतियाओ पडिनिक्खमंति, पडिनिक्खमित्ता जेणेव सेणिए राया तेणेव उवागच्छंति। उवागच्छित्ता करयलपरिग्गहियं जाव कट्टु जएणं विजएणं वद्धावेन्ति। वद्धावइत्ता एवं वयासी—"एवं खलु सामी! किं पि अज्ज धारिणी देवी ओलुग्गा ओलुग्गसरीरा जाव अट्टज्झाणोवगया झियायति।"

तए णं सा धारिणी देवी सेणिएणं रण्णा दोच्चं पि तच्चं पि एवं वुत्ता समाणी णो आढाति, णो परिजाणाति, तुसिणीया संचिट्ठइ।
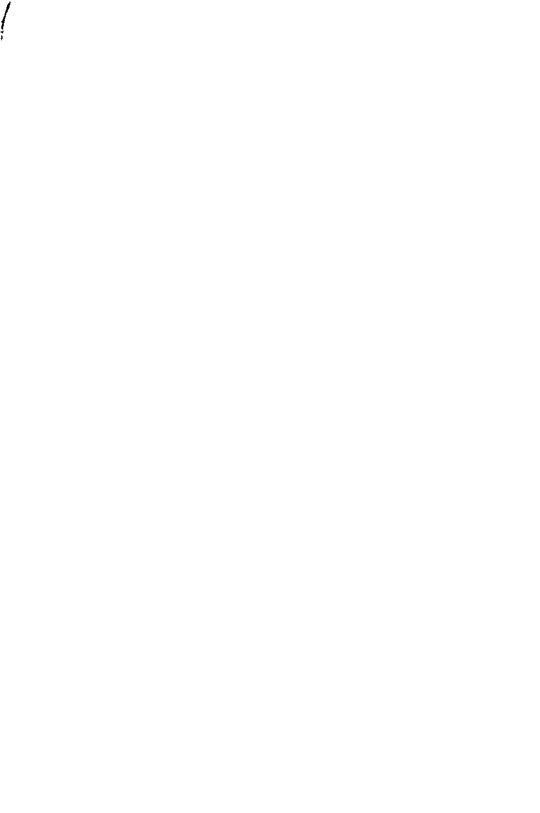
तत्पश्चात धारिणी देवी, श्रेणिक राजा के द्वारा दूसरी बार और तीसरी बार भी इस प्रकार कहने पर आदर नहीं करती और नहीं जानती। मौन रहती है।

तए णं सेणिए राया धारिणीं देविं सवहसावियं करेइ, करित्ता एवं वयासी--किं णं तुमं देवाणुप्पिए! अहमेयस्स अट्ठस्स अणरिहे सवणयाए? ता णं तुमं ममं अयमेयारूवं मणोमाणसियं दुक्खं रहस्सीकरेसि?'

तत्पश्चात् श्रेणिक राजा, धारिणी देवी को शपथ दिलाता है और शपथ दिलाकर कहता है--'देवानुप्रिये! क्या मैं तुम्हारे मन की बात सुनने के लिए अयोग्य हूँ? जिससे तुम अपने मन में रहे हुए इस मानसिक दुःख को छिपाती हो?

तए णं सा धारिणी देवी सेणिएणं रण्णा सवहसाविया समाणी सेणियं रायं एवं वदासी--'एवं खलु सामी! मम तस्स उरालस्स जाव महासुमिणस्स तिण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अयमेयारूवे अकालमेहेसु दोहले पाउब्भूए--'धन्नाओ णं ताओ अम्मयाओ, कयत्थाओ णं ताओ अम्मयाओ, जाव वेभारगिरिपायमूलं आहिंडमाणीओ डोहलं विणिन्ति। तं जइ णं अहमवि जाव डोहलं विणिज्जामि। तए णं हं सामी! अयमेयारूवंसि अकालदोहलंसि अविणिज्जमाणंसि ओलुग्गा जाव अट्ट-ज्झाणोवगया झियायामि। एएणं अहं कारणेणं सामी! ओलुग्गा जाव अट्टज्झाणोवगया झियायामि।

तत्पश्चात् श्रेणिक राजा द्वारा शपथ सुनकर धारिणी देवी ने श्रेणिक राजा से इस प्रकार कहा--स्वामिन्! मुझे वह उदार आदि विशेषणों वाला महास्वप्न आया था। उसे आये तीन मास पूरे हो चुके हैं; अतएव इस प्रकार का अकाल-मेघ संबंधी दोहद उत्पन्न हुआ है कि--वे माताएँ धन्य हैं और वे माताएँ कृतार्थ हैं, यावत् जो वैभार पर्वत की तलहटी में भ्रमण करती हुई अपने दोहद को पूर्ण करती हैं। अगर मैं भी अपने यावत् दोहद को पूर्ण करूँ तो ध-

होऊँ। इस कारण हे स्वामिन ! मैं इस प्रकार के इस दोहद के पूर्ण न होने से जीर्ण जैसी, जीर्ण शरीर वाली हो गई हूं; यावत आर्त्तध्यान करती हुई चिन्तित हो रही हूं। स्वामिन ! जीर्ण-सी यावत् आर्त्तध्यान से युक्त होकर चिन्तामग्न होने का यही कारण है।

तए णं से सेणिए राया धारिणीए देवीए अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म धारिणिं देविं एवं वदासी–'मा णं तुमं देवाणुप्पिए ! ओलुग्गा जाव झियाहि, अहं णं तहा करिस्सामि जहा णं तुब्भं अयमेयारूवस्स अकालदोहलस्स मणोरहसंपत्ती भविस्सइ' त्ति कट्टु धारिणीं देवीं इट्ठाहिं कंताहिं पियाहिं मणुन्नाहिं मणामाहिं वग्गूहिं समासासेइ। समासासित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणामेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता सीहासणवरगए पुरत्थाभिमुहे सन्निसन्ने। धारिणीए देवीए एयं अकालदोहलं बहूहिं आएहि य उवाएहि य उप्पत्तियाहि य वेणइयाहि य कम्मियाहि य परिणामियाहि य चउव्विहाहिं बुद्धीहिं अणुचिंतेमाणे अणुचिंतेमाणे तस्स दोहलस्स आयं वा उवायं वा ठिइं वा उप्पत्तिं वा अविंदमाणे ओहयमणसंकप्पे जाव झियायइ।'

तत्पश्चात् श्रेणिक राजा ने धारिणी देवी से यह बात सुनकर और समझ कर, धारिणी देवी से इस प्रकार कहा–'हे देवानुप्रिये ! तुम जीर्ण शरीर वाली मत होओ, यावत चिन्ता मत करो। मैं वैसा करूँगा अर्थात् कोई ऐसा उपाय करूंगा जिससे तुम्हारे इस प्रकार के इस अकाल-दोहद की पूर्ति हो जायगी।' इस प्रकार कहकर धारिणी देवी को इष्ट (प्रिय) कान्त (इच्छित), प्रिय (प्रीति उत्पन्न करने वाली), मनोज्ञ (मनोहर) और मणाम (मन को प्रिय) वाणी से आश्वासन देता है। आश्वासन देकर जहाँ बाहर की उपस्थान-शाला थी, वहाँ आता है। आकर श्रेष्ठ सिंहासन पर पूर्व दिशा की ओर मुख करके बैठता है। धारिणी देवी के इस अकाल-दोहद की पूर्ति करने के लिए बहुतेरे आयों (लाभों), से, उपायों से, औत्पत्तिकी बुद्धि से, वैनयिक बुद्धि से, कार्मिक बुद्धि से, पारिणामिक बुद्धि से–इस प्रकार चारों तरह की बुद्धि से बार-बार विचार करता है। परन्तु विचार करने पर भी उस दोहद के लाभ को, उपाय को, स्थिति को और उत्पत्ति को समझ नहीं पाता, अर्थात् दोहदपूर्ति का कोई उपाय नहीं सूझता। अतएव श्रेणिक राजा के मन का संकल्प नष्ट हो गया और वह यावत् चिन्तामग्न हो जाता है।

तयाणंतरं अभए कुमारे पहाए कयबलिकम्मे जाव सव्वालंकार-विभूसिए पायवंदए पहारेत्थ गमणाए।

तदनन्तर अभयकुमार स्नान करके, बलिकर्म (गृहदेवता का पूजन) करके, यावत् समस्त अलंकारों से विभूषित होकर श्रेणिक राजा के चरणों में वन्दना करने के लिए जाने का विचार करता है—रवाना होता है।

तए णं से अभयकुमारे जेणेव सेणिए राया तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता सेणियं रायं ओहयमणसंकप्पं जाव पासइ। पासइत्ता अयमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए (पत्थिए) मणोगते संकप्पे समुप्पज्जित्था।

तत्पश्चात् अभयकुमार जहाँ श्रेणिक राजा है, वहाँ आता है। आकर श्रेणिक राजा को देखता है कि इनके मन के संकल्प को आघात पहुँचा है। यह देखकर अभयकुमार के मन में इस प्रकार का यह आध्यात्मिक अर्थात् आत्मा सम्बन्धी, चिन्तित, प्रार्थित (प्राप्त करने को इष्ट) और मनोगत—मन में ही रहा हुआ संकल्प उत्पन्न होता है।

अन्नया य ममं सेणिए राया एज्जमाणं पासति, पासइत्ता आढाति परिजाणाति, सक्कारेइ, सम्माणेइ, आलवति, संलवति, अद्धासणेणं उवणिमंतेति मत्थयंसि अग्घाति। इयाणिं ममं सेणिए राया णो आढाति, णो परियाणइ, णो सक्कारेइ, णो सम्माणेइ, णो इट्ठाहिं कंताहिं पियाहिं मणुन्नाहिं ओरालाहिं वग्गूहिं आलवति, संलवति, नो अद्धासणेणं उवणिमंतेति, णो मत्थयंसि अग्घाति य, किं पि ओहय-मणसंकप्पे झियायति। तं भवियव्वं णं एत्थ कारणेणं। तं सेयं खलु मे सेणियं रायं एयमट्ठं पुच्छित्तए। एवं संपेहेइ, संपेहित्ता जेणामेव सेणिए राया तेणामेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु जएणं विजएणं वद्धावेइ, वद्धावइत्ता एवं वयासी—

अन्य समय श्रेणिक राजा मुझे आता देखते थे तो देखकर आदर करते, जानते, वस्त्रादि से सत्कार करते, आसनादि देकर सम्मान करते तथा संलाप करते थे, आधे आसन पर बैठने के लिए निमंत्रण करते

को सूंघते थे। किन्तु आज श्रेणिक राजा मुझे न आदर दे रहे हैं, न आया जान रहे हैं, न सत्कार करते हैं, न सन्मान करते हैं, न इष्ट कान्त प्रिय मनोज्ञ और उदार वचनों से आलाप-संलाप करते हैं, न अर्ध आसन पर बैठने के लिए निमंत्रित करते हैं और न मस्तक को सूंघते हैं। उनके मन के संकल्प को कुछ आघात पहुंचा है, अतएव चिन्तित हो रहे हैं। अतएव इस विषय में कोई कारण होना चाहिए। मुझे श्रेणिक राजा से यह बात पूछना श्रेय (योग्य) है। अभयकुमार इस प्रकार विचार करता है और विचार कर जहाँ श्रेणिक राजा हैं, वहां आता है। आकर दोनों हाथ जोड़ कर, मस्तक पर आवर्त्त करके, अंजलि करके जय-विजय से वधाता है। वधाकर इस प्रकार कहता है।

तुब्भे णं ताओ! अन्नया ममं एज्जमाणं पासित्ता आढाह, परिजाणह, जाव मत्थयंसि अग्घायह, आसणेणं उवणिमंतेह, इयाणि ताओ! तुब्भे ममं नो आढाह जाव नो आसणेणं उवणिमंतेह। किं पि ओहयमणसंकप्पा जाव झियायह। तं भवियव्वं ताओ! एत्थ कारणेणं। तओ तुब्भे मम ताओ! एयं कारणं अगूहेमाणा असंकेमाणा अनिण्हवेमाणा अपच्छाएमाणा जहाभूतमवितहमसंदिद्धं एयमट्ठमाइक्खह। तए णं हं तस्स कारणस्स अंतगमणं गमिस्सामि।

हे तात! आप अन्य समय मुझे आता देखकर आदर करते, जानते, यावत् मेरे मस्तक को सूंघते थे और आसन पर बैठने के लिए निमन्त्रण करते थे, किन्तु तात! आज आप मुझे आदर नहीं दे रहे हैं, यावत् आसन पर बैठने के लिए निमन्त्रण नहीं कर रहे हैं और मन का संकल्प नष्ट होने के कारण कुछ चिन्ता कर रहे हैं। तो इस विषय में कोई कारण होना चाहिए। तो हे तात! आप इस कारण को छिपाये बिना, इष्ट प्राप्ति में शंका रक्खे बिना, अपलाप किये बिना, दबाये बिना, जैसा का तैसा, सत्य एवं संदेहरहित कहिए। तत्पश्चात् मैं उस कारण का पार पाने का प्रयत्न करूंगा।

तए णं सेणिए राया अभएणं कुमारेणं एवं वुत्ते समाणे अभयकुमारं एवं वयासी-एवं खलु पुत्ता! तव चुल्लमाउयाए धारिणीए देवीए तस्स गब्भस्स दोसु मासेसु अइक्कंतेसु तइयमासे वट्टमाणे दोहलकालसमयंसि अयमेयारूवे दोहले पाउब्भवित्था-धन्नाओ णं ताओ अम्मयाओ तहेव निरवसेसं भाणियव्वं जाव विणिंति। तए णं अहं पुत्ता

धारिणीए देवीए तस्स अकालदोहलस्स बहूहिं आएहि य उवाएहिं जाव उप्पत्तिं अविंदमाणे ओहयमणसंकप्पे जाव झियायामि, तुमं आगयं पि न याणामि। तं एतेणं कारणेणं अहं पुत्ता! ओहयमण-संकप्पा जाव झियामि।

तत्पश्चात् अभयकुमार के द्वारा इस प्रकार कहने पर श्रेणिक राजा ने अभयकुमार से इस प्रकार कहा—पुत्र! तुम्हारी छोटी माता धारिणी देवी को गर्भ स्थित हुए दो मास बीत गये और तीसरा मास चल रहा है। उसमें दोहद-काल के समय उसे इस प्रकार का यह दोहद उत्पन्न हुआ है—वे माताएँ धन्य हैं, इत्यादि सब पहले की भाँति ही कह लेना चाहिए, यावत् अपने दोहद को पूर्ण करती हैं। तब हे पुत्र! मैं धारिणी देवी के उस अकाल दोहद के आयों (लाभ), उपायों एवं उत्पत्ति को अर्थात् उसकी पूर्त्ति के उपायों को नहीं जानता हूँ। इससे मेरे मन का संकल्प नष्ट हो गया है और मैं चिन्ता कर रहा हूँ। इसी से मैंने यह भी नहीं जाना कि तुम आये हो। अतएव पुत्र! मैं इसी कारण नष्ट हुए मनःसंकल्प वाला होकर चिन्ता कर रहा हूँ।

तए णं से अभयकुमारे सेणियस्स रन्नो अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठ जाव हियए सेणियं रायं एवं वयासी—'मा णं तुब्भे ताओ! ओहयमणसंकप्पा जाव झियायह। अहं णं तहा करिस्सामि, जहा णं मम चुल्लमाउयाए धारिणीए देवीए अयमेयारूवस्स अकालदोहलस्स मणोरहसंपत्ती भविस्सइ' त्ति कट्टु सेणियं रायं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं जाव समासासेइ।

तत्पश्चात् वह अभयकुमार, श्रेणिक राजा से यह अर्थ सुन कर और समझ कर हृष्ट-पुष्ट और आनन्दित हृदय हुआ। उसने श्रेणिक राजा से इस भाँति कहा—हे तात! आप भग्न-मनोरथ होकर चिन्ता न करें। मैं वैसा (कोई उपा[illegible]
के इस अ[illegible]
कुमार ने [illegible]

तए णं सेणिए राया अभएणं कुमारेणं एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठे जाव अभयकुमारं सक्कारेति, संमाणेति, सक्कारित्ता संमाणित्ता पडि-विसज्जेति।

तत्पश्चात् श्रेणिक राजा, अभयकुमार के इस प्रकार कहने पर हृष्ट-तुष्ट हुआ। वह अभयकुमार का सत्कार करता है, सन्मान करता है। सत्कार-सन्मान करके विदा करता है।

तए णं से अभयकुमारे सक्कारियसम्माणिए पडिविसज्जिए समाणे सेणियस्स रन्नो अंतियाओ पडिनिक्खमइ। पडिनिक्खमित्ता जेणामेव सए भवणे तेणामेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सीहासणे निसन्ने।

तत्पश्चात (श्रेणिक राजा द्वारा) सत्कारित एवं सन्मानित होकर विदा किया हुआ वह अभयकुमार श्रेणिक राजा के पास से निकलता है। निकल कर जहाँ अपना भवन है, वहाँ आता है। आकर सिंहासन पर बैठता है।

तए णं तस्स अभयकुमारस्स अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था—नो खलु सक्का माणुस्सएणं उवाएणं मम चुल्लमाउयाए धारिणीए देवीए अकालडोहलमणोरहसंपत्तिं करेत्तए, णन्नत्थ दिव्वेणं उवाएणं। अत्थि णं मज्झ सोहम्मकप्पवासी पुव्वसंगतिए देवे महिड्ढीए जाव महासोक्खे। तं सेयं खलु मम पोसहसालाए पोसहियस्स बंभचारिस्स उम्मुक्कमणिसुवण्णस्स ववगयमालावन्नगविलेवणस्स निक्खित्तसत्थमुसलस्स एगस्स अबीयस्स दब्भसंथारोवगयस्स अट्ठमभत्तं परिगिण्हित्ता पुव्वसंगतियं देवं मणसि करेमाणस्स विहरित्तए। तते णं पुव्वसंगतिए देवे मम चुल्लमाउयाए धारिणीए देवीए अयमेयारूवे अकालमेहेसु डोहलं विणिहिइ।

तत्पश्चात् उस अभयकुमार को इस प्रकार का यह आध्यात्मिक (आंतरिक) संकल्प उत्पन्न हुआ—दिव्य अर्थात् देव सम्बन्धी उपाय के बिना, केवल मानवीय उपाय से मेरी छोटी माता धारिणी देवी के अकाल दोहद के मनोरथ की पूर्ति होना शक्य नहीं है। सौधर्म कल्प में रहने वाला देव मेरा पूर्व का मित्र है, जो महान् ऋद्धिधारक यावत महान् सुख भोगने वाला है। तो मेरे लिए यह श्रेयस्कर है कि—मैं पौषधशाला में पौषध ग्रहण करके, ब्रह्मचर्य धारण करके, मणि-सुवर्ण आदि के अलंकारों का त्याग करके, माला वर्णक और विलेपन का त्याग करके, शस्त्र-मूसल आदि अर्थात् समस्त आरम्भ समारम्भ को छोड़ कर एकाकी (राग-द्वेष से रहित) और अद्वितीय (सेवक

आदि की सहायता से रहित) होकर, डाभ के संथारे पर स्थित होकर, तेला की तपस्या ग्रहण करके, पहले के मित्र देव का मन में चिन्तन करता हुआ रहूँ। ऐसा करने से यह पूर्व का मित्र देव (यहाँ आकर) मेरी छोटी माता धारिणी देवी के इस प्रकार के इस अकाल-मेघों सम्बन्धी दोहद को पूर्ण कर देगा।

एवं संपेहेइ, संपेहित्ता जेणेव पोसहसाला तेणामेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पोसहसालं पमज्जति, पमज्जित्ता उच्चारपासवणभूमिं पडिलेहेइ, पडिलेहित्ता दब्भसंथारगं पडिलेहेइ, पडिलेहित्ता दब्भसंथारगं दुरूहइ, दुरुहित्ता अट्ठमभत्तं परिगिण्हइ, परिगिण्हित्ता पोसहसालाए पोसहिए बंभयारी जाव पुव्वसंगतियं देवं मणसि करेमाणे करेमाणे चिट्ठइ।

अभयकुमार इस प्रकार विचार करता है। विचार करके जहाँ पौषधशाला है, वहाँ आता है। आकर पौषधशाला का प्रमार्जन करता है। करके उच्चार-प्रस्रवण की भूमि का प्रतिलेखन करता है। प्रतिलेखन करके डाभ के संथारे का प्रतिलेखन करता है। डाभ के संथारे का प्रतिलेखन करके उस पर आसीन होता है। आसीन होकर अष्टम भक्त तप ग्रहण करता है। ग्रहण करके पौषधशाला में पौषधयुक्त होकर, ब्रह्मचर्य अंगीकार करके यावत् पहले के मित्र देव का मन में पुनः पुनः चिन्तन करता है।

तए णं तस्स अभयकुमारस्स अट्ठमभत्ते परिणममाणे पुव्वसंगतिअस्स देवस्स आसणं चलति। तते णं पुव्वसंगतिए सोहम्मकप्पवासी देवे आसणं चलियं पासति, पासित्ता, ओहिं पउंजति। तते णं तस्स पुव्वसंगतियस्स देवस्स अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था—'एवं खलु मम पुव्वसंगतिए जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे दाहिणड्ढभरहे वासे रायगिहे नयरे पोसहसालाए अभए नामं कुमारे अट्ठमभत्तं परिगिण्हित्ता णं मम मणसि करेमाणे करेमाणे चिट्ठति। तं सेयं खलु मम अभयस्स कुमारस्स अंतिए पाउब्भवित्तए।' एवं संपेहेइ, संपेहित्ता उत्तरपुरच्छिमं दिसीभागं अवक्कमति, अवक्कमित्ता विउव्वियसमुग्घाएणं समोहणति, समोहणित्ता संखेज्जाइं जोयणाइं दंडं निसिरति। तंजहा—

तत्पश्चात् अभयकुमार का अष्टमभक्त तप प्रायः पूर्ण होने आया, तब पूर्वभव के मित्र देव का आसन चलायमान हुआ। तब पूर्वभव का मित्र सौधर्मकल्पवासी देव अपने आसन को चलित हुआ देखता है और देखकर अवधिज्ञान का उपयोग लगाता है। तब पूर्वभव के मित्र देव को इस प्रकार का यह आन्तरिक विचार उत्पन्न होता है—'इस प्रकार मेरा पूर्वभव का मित्र अभयकुमार जम्बूद्वीप नामक द्वीप में, भारतवर्ष में, दक्षिणार्ध भरत में, राजगृह नगर में, पौषधशाला में, अष्टमभक्त ग्रहण करके मन में बार-बार मेरा स्मरण कर रहा है। अतएव मुझे अभयकुमार के समीप प्रकट होना (जाना) योग्य है।' देव इस प्रकार विचार करके उत्तरपूर्व दिग्भाग (ईशान कोण) में जाता है और वैक्रियसमुद्घात से समुद्घात करता है, अर्थात् उत्तरवैक्रिय शरीर बनाने के लिए जीव-प्रदेशों को बाहर निकालता है। जीव-प्रदेशों को बाहर निकाल कर संख्यात योजन का दंड बनाता है। वह इस प्रकार—

रयणाणं १ वइराणं २ वेरुलियाणं ३ लोहियक्खाणं ४ मसारगल्लाणं ५ हंसगब्भाणं ६ पुलगाणं ७ सोगंधियाणं ८ जोइरसाणं ९ अंकाणं १० अंजणाणं ११ रययाणं १२ जायरूवाणं १३ अंजणपुलयाणं १४ फलिहाणं १५ रिट्ठाणं १६ अहाबायरे पोग्गले परिसाडेइ, परिसाडित्ता अहासुहुमे पोग्गले परिगिण्हति, परिगिण्हइत्ता अभयकुमारमणुकंपमाणे देवे पुव्वभवजणियनेहपीइबहुमाणजायसोगे, तओ विमाणवरपुण्डरियाओ रयणुत्तमाओ धरणियलगमणतुरियसंजणितगमणपयारो वाघुणियविमलकणगपयरगवडिंसगमउडुक्कडाडोवदंसणिज्जो, अणेगमणिकणगरयणपहकरपरिमंडितभत्तिचित्तविणिउत्तमणुगुणजणियहरिसे, पेंखोलमाणवरललितकुंडलुज्जलियवयणगुणजनितसोमरूवे, उदितो विव कोमुदीनिसाए सणिच्छरंगारउज्जलियमज्झभागत्थे णयणाणंदो, सरयचंदो, दिव्वोसहिपज्जलुज्जलियदंसणाभिरामो उउलच्छिसमत्तजायसोहे पइट्ठगंधुद्धयाभिरामो मेरुरिव नगवरो, विगुव्वियविचित्तवेसे, दीवसमुद्दाणं असंखपरिमाणनामधेज्जाणं मज्झंकारेणं वीइवयमाणो, उज्जोयंतो पभाए विमलाए जीवलोगं, रायगिहं पुरवरं च अभयस्स य तस्स पासं उवयति दिव्वरूवधारी।

(१) कर्केतन रत्न (२) वज्र रत्न (३) वैडूर्य रत्न (४) लोहिताक्ष रत्न

(४) मसारगल्ल रत्न (६) हंसगर्भ रत्न (७) पुलक रत्न (८) सौगंधिक रत्न (९) ज्योतिरस रत्न (१०) अंक रत्न (११) अंजन रत्न (१२) रजत रत्न (१३) जातरूप रत्न (१४) अंजनपुलक रत्न (१५) स्फटिक रत्न और (१६) रिष्ट रत्न— इन रत्नों के यथाबादर अर्थात् असार पुद्गलों का परित्याग करता है, परित्याग करके यथासूक्ष्म अर्थात् सारभूत पुद्गलों को ग्रहण करता है। ग्रहण करके (उत्तर वैक्रिय शरीर बनाता है।) फिर अभयकुमार पर अनुकम्पा करता हुआ, पूर्वभव में उत्पन्न हुई स्नेह जनित प्रीति के कारण और गुणानुराग के कारण (वियोग का विचार करके) वह खेद करने लगा। फिर उस देव ने अपनी रचना अथवा रत्नों से उत्तम विमान में निकल कर पृथ्वीतल पर जाने के लिए शीघ्र ही गति का प्रचार किया, अर्थात् वह शीघ्रतापूर्वक चल पड़ा। उस समय चलायमान होते हुए, निर्मल स्वर्ण के प्रतर जैसे कर्णपूर और मुकुट के उत्कट आडम्बर से वह दर्शनीय लग रहा था। अनेक मणियों, सुवर्ण और रत्नों के समूह से शोभित और विचित्र रचना वाले पहने हुए कटिसूत्र से उसे हर्ष उत्पन्न हो रहा था। हिलते हुए श्रेष्ठ और मनोहर कुण्डलों से उज्ज्वल मुख की दीप्ति से उसका रूप बड़ा ही सौम्य हो गया। कार्तिकी पूर्णिमा की रात्रि में, शनि और मंगल के मध्य में स्थित और उदय प्राप्त शारद निशाकर के समान, यह देव दर्शकों के नयनों को आनन्द दे रहा था। तात्पर्य यह है कि शनि और मंगल ग्रह के समान चमकते हुए दोनों कुण्डलों के बीच में उसका मुख शरद् ऋतु के चन्द्रमा के समान शोभायमान हो रहा था। दिव्य औषधियों (जड़ी-बूटियों) के प्रकाश के समान मुकुट आदि के तेज से देदीप्यमान रूप से मनोहर, समस्त ऋतुओं की लक्ष्मी से वृद्धिगत शोभा वाले तथा प्रकृष्ट गंध के प्रसार से मनोहर मेरु पर्वत के समान वह देव अभिराम प्रतीत होता था। उस देव ने ऐसे विचित्र वेष की विक्रिया की। वह असंख्य-सख्यक और असंख्य नामों वाले द्वीपों और समुद्रों के मध्य में होकर जाने लगा। अपनी विमल प्रभा से जीव लोक को तथा नगरवर राजगृह को प्रकाशित करता हुआ दिव्य रूपधारी देव अभयकुमार के पास आ पहुँचा।

तए णं से देवे अंतलिक्खपडिवन्ने दसद्धवन्नाइं सखिंखिणियाइं पवरवत्थाइं परिहिए—(एक्को ताव एसो गमो, अण्णो वि गमो—) ताए उक्किट्ठाए तुरियाए चवलाए चंडाए सीहाए उद्धुयाए जइणाए छेयाए दिव्वाए देवगतिए जेणामेव जंबुद्दीवे दीवे, भारहे वासे, जेणामेव दाहिणड्ढभरहे रायगिहे नगरे पोसहसालाए अभयए कुमारे तेणेव उवागच्छति, उवागच्छित्ता अंतरिक्खपडिवन्ने दसद्धवन्नाइं स-

याइं पवरवत्थाइं परिहिए—अभयं कुमारं एवं वयासी।

तत्पश्चात इस के आगे अर्थात पाँच वर्ण वाले तथा घुंघरू वाले उत्तम वस्त्रों को धारण किया हुआ वह देव आकाश में स्थित होकर (अभयकुमार से इस प्रकार बोला—)

यह एक प्रकार का गम-पाठ है। इसके स्थान पर दूसरा भी पाठ है। वह इस प्रकार है–

वह देव उत्कृष्ट, त्वरा वाली, कायिक चपलता वाली, अति उत्कर्ष के कारण चंड–भयानक दृढ़ता कारण सिंह जैसी, गर्व की प्रचुरता के कारण उद्धत, शत्रु को जीतने वाली होने से जय करने वाली, छेक अर्थात् निपुणता वाली और दिव्य देवगति से जहाँ जम्बू द्वीप था, भारत वर्ष था और जहाँ दक्षिणार्ध भरत था, उसमे भी राजगृह नगर था और जहाँ पौषधशाला में अभयकुमार था, वहीं आता है। आकरके आकाश मे स्थित होकर पाँच वर्ण वाले एवं घुंघुरु वाले उत्तम वस्त्रो को धारण किये हुए वह देव अभयकुमार से इस प्रकार कहने लगा।

'अहं णं देवाणुप्पिया! पुव्वसंगतिए सोहम्मकप्पवासी देवे महड्ढिए, जं णं तुमं पोसहसालाए अट्ठमभत्तं पगिण्हित्ता णं ममं मणसि करेमाणे चिट्ठसि, तं एस णं देवाणुप्पिया! अहं इहं हव्वमागए। संदिसाहि णं देवाणुप्पिया! किं करेमि? किं दलामि? किं पयच्छामि? किं वा ते हिय-इच्छिनं?'

हे देवानुप्रिय! मैं तुम्हारा पूर्वभव का मित्र सौधर्मकल्पवासी महान् ऋद्धि का धारक देव हूं। क्योंकि तुम पौषधशाला मे अष्टमभक्त तप ग्रहण करके मुझे मन में रखकर स्थित हो, इसी कारण हे देवानुप्रिय! मैं शीघ्र यहाँ आया हूं। हे देवानुप्रिय! बताओ तुम्हारा क्या इष्ट कार्य करूँ? तुम्हें क्या दूं? तुम्हारे किसी संबंधी को क्या दूं? तुम्हारा मनोवांछित क्या है?

तए णं से अभए कुमारे तं पुव्वसंगतियं देवं अंतलिक्खपडिवन्नं पासइ। पासित्ता हट्ठतुट्ठे पोसहं पारेइ, पारित्ता करयल० अंजलिं कट्टु एवं वयासी—

एवं खलु देवाणुप्पिया! मम चुल्लमाउयाए धारिणीए देवीए अयमेयारूवे अकालडोहले पाउब्भूते—धन्नाओ णं ताओ अम्मयाओ!

तहेव पुव्वगमेणं जाव विणिज्जामि । तं णं तुमं देवाणुप्पिया ! मम चुल्लमाउयाए धारिणीए देवीए अयमेयारूवं अकालदोहलं विणेहि ।

तत्पश्चात् अभयकुमार ने आकाश में स्थित पूर्व भव के मित्र उस देव को देखा है। देखकर वह हृष्ट-तुष्ट हुआ। पौषध को पारा-पूर्ण किया। फिर दोनों हाथ मस्तक पर जोड़ कर इस प्रकार कहा—

'हे देवानुप्रिय! मेरी छोटी माता धारिणी देवी को इस प्रकार का अकाल-दोहद उत्पन्न हुआ है कि वे माताएँ धन्य हैं यावत् मैं भी अपने दोहद को पूर्ण करूँ। इत्यादि पूर्व के समान सब कथन यहाँ समझ लेना चाहिए। सो हे देवानुप्रिय! तुम मेरी छोटी माता धारिणी देवी के इस प्रकार के दोहद को पूर्ण कर दो।

तए णं से देवे अभएणं कुमारेणं एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठ० अभयकुमारं एवं वयासी—'तुमं णं देवाणुप्पिया ! सुणिव्वुयवीसत्थे अच्छाहि। अहं णं तव चुल्लमाउयाए धारिणीए देवीए अयमेयारूवं डोहलं विणेमीति' कट्टु अभयस्स कुमारस्स अंतियाओ पडिणिक्खमति, पडिणिक्खमित्ता उत्तरपुरच्छिमे णं वेभारपव्वए वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहणति, समोहणइत्ता संखेज्जाइं जोयणाइं दंडं निसिरति, जाव दोच्चं पि वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहणति, समोहणित्ता खिप्पामेव सगज्जियं सविज्जुयं सफुसियं तं पंचवण्णमेहणिणाओवसोहियं दिव्वं पाउससिरिं विउव्वेइ । विउव्वेइत्ता जेणेव अभए कुमारे तेणामेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अभयं कुमारं एवं वयासी ।

तत्पश्चात् वह देव अभयकुमार के ऐसा कहने पर हृष्ट-तुष्ट होकर अभयकुमार से बोला—देवानुप्रिय! तुम निश्चिन्त रहो और विश्वास रक्खो। मैं तुम्हारी लघु माता धारिणी देवी के इस प्रकार के इस दोहद की पूर्त्ति किये देता हूं। ऐसा कह कर देव अभयकुमार के पास से निकलता है। निकल कर उत्तरपूर्व दिशा में, वैभार गिरि पर जाकर वैक्रिय समुद्घात करता है। समुद्घात करके संख्यात योजन प्रमाण वाला दंड निकालता है, यावत् दूसरी बार भी वैक्रियसमुद्घात करता है और गर्जना से युक्त, बिजली से युक्त और जल-बिन्दुओं से युक्त पाँच वर्ण वाले मेघों की ध्वनि से शोभित दिव्य वर्षा ऋतु की लक्ष्मी की विक्रिया करता है। विक्रिया करके जहाँ अभयकुमार था, वहाँ आता है। आकर अभयकुमार से इस प्रकार कहता है—

एवं खलु देवाणुप्पिया ! मए तव पियट्ठयाए सगज्जिया सफुसिया सविज्जुया दिव्वा पाउससिरी विउव्विया। तं विणेउ णं देवाणुप्पिया ! तव चुल्लमाउया धारिणी देवी अयमेयारूवं अकालडोहलं।

हे देवानुप्रिय ! इस प्रकार मैं ने तुम्हारी प्रीति के लिए गर्जनायुक्त, बिन्दुयुक्त और विद्युतयुक्त दिव्य वर्षालक्ष्मी की विक्रिया की है। अतः हे देवानुप्रिय ! तुम्हारी छोटी माता धारिणी देवी इस प्रकार के इस दोहद की पूर्ति करें।

तए णं से अभयकुमारे तस्स पुव्वसंगतियस्स देवस्स सोहम्मकप्पवासिस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठे सयाओ भवणाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता जेणामेव सेणिए राया तेणामेव उवागच्छति उवागच्छित्ता करयल० अंजलिं कट्टु एवं वयासी।

तत्पश्चात् अभयकुमार उस सौधर्मकल्पवासी पूर्व के मित्र देव से यह बात सुन-समझ कर हृष्ट-तुष्ट होकर अपने भवन से बाहर निकलता है। निकल कर जहाँ श्रेणिक राजा बैठा था, वहाँ आता है। आकर मस्तक पर दोनों हाथ जोड़ कर इस प्रकार कहता है।

'एवं खलु ताओ ! मम पुव्वसंगतिएणं सोहम्मकप्पवासिणा देवेणं खिप्पामेव सगज्जिया सविज्जुया (सफुसिया) पंचवन्नमेहनिनाओव-सोहिआ दिव्वा पाउससिरी विउव्विया। तं विणेउ णं मम चुल्लमाउया धारिणी देवी अकालदोहलं।'

हे तात ! इस प्रकार मेरे पूर्वभव के मित्र सौधर्म कल्पवासी देव ने शीघ्र ही गर्जनायुक्त, बिजली से युक्त और (बूँदों सहित) पाँच रंगों के मेघों की ध्वनि से सुशोभित दिव्य वर्षा ऋतु की शोभा की विक्रिया की है। अतः मेरी लघु माता धारिणी देवी अपने अकालदोहद को पूर्ण करें।

तए णं से सेणिए राया अभयस्स कुमारस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव कोडुंबियपुरिसे सद्दावेति, सद्दावित्ता एवं वयासी-'खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! रायगिहं नयरं सिंघाडगतियचउक्कचच्चर० आसित्तसित्त जाव सुगंधवरगंधियं गंधवट्टिभूयं करेह। करित्ता य मम एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह।' तते णं ते कोडुंबियपुरिसा जाव पच्चप्पि-णंति।

तत्पश्चात् श्रेणिक राजा, अभयकुमार से यह बात सुन कर और हृदय में धारण करके हर्षित और संतुष्ट हुआ। यावत् उसने कौटुम्बिक पुरुषों (सेवकों) को बुलवाया। बुलवा कर इस भाँति कहा—हे देवानुप्रियो! शीघ्र ही राजगृह नगर में शृंगाटक (सिंघाड़े की आकृति के मार्ग), त्रिक (जहाँ तीन रास्ते मिलें वह मार्ग), चतुष्क (चौक) और चबूतरे आदि को सींच कर, यावत् उत्तम सुगंध से सुगंधित करके और गंध की बट्टी के समान करो। ऐसा करके मेरी आज्ञा वापिस सौंपो। तत्पश्चात् वे कौटुम्बिक पुरुष आज्ञा का पालन करके यावत् उस आज्ञा को वापिस सौंपते हैं, अर्थात् आज्ञापूर्त्ति की सूचना देते हैं।

तए णं से सेणिए राया दोच्चं पि कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दाविता एवं वयासी–'खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! हयगयरहजोहपवर-कलितं चाउरंगिणिं सेन्नं सन्नाहेह, सेयणयं च गंधहत्थिं परिकप्पेह।' ते वि तहेव जाव पचप्पिणंति।

तत्पश्चात् श्रेणिक राजा दूसरी बार कौटुम्बिक पुरुषों को बुलवाता है और बुलवा कर इस प्रकार कहता है–हे देवानुप्रियो! शीघ्र ही उत्तम अश्व, गज, रथ तथा योद्धाओं (पदातियों) सहित चतुरंगी सेना को तैयार करो और सेचनक नामक गंधहस्ती को भी तैयार करो।' वे कौटुम्बिक पुरुष भी आज्ञा-पालन करके यावत् आज्ञा वापिस सौंपते हैं।

तए णं से सेणिए राया जेणेव धारिणी देवी तेणामेव उवागच्छति। उवागच्छित्ता धारिणीं देवीं एवं वयासी—'एवं खलु देवाणुप्पिए! सगज्जिया जाव पाउससिरी पाउब्भूता, तं णं तुमं देवाणुप्पिए! एयं अकालदोहलं विणेहि।

तत्पश्चात् वह श्रेणिक राजा जहाँ धारिणी देवी थी, वहीं आया। आकर धारिणी देवी से इस प्रकार बोला—हे देवानुप्रिये! इस प्रकार गर्जना की ध्वनि से युक्त यावत् वर्षा की सुषमा प्रादुर्भूत हुई है। अतएव हे देवानुप्रिये! तुम अपने अकाल-दोहद की निवृत्ति करो।

तए णं सा धारिणी देवी सेणिएणं रण्णा एवं वुत्ता समाणी हट्ठतुट्ठा, जेणामेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता मज्जणघरं अणुपविसइ। अणुपविसित्ता अंतो अंतेउरंसि ण्हाया

कयकोउयमंगलपायच्छित्ता किं ते वरपायपत्तणेउरा जाव आगासफालि-यसमप्पभं अंसुयं नियत्था, सेयणयं गंधहत्थिं दुरूढा समाणी अमय-महियफेणपुंजसण्णिगासाहिं सेयचामरवालवीयणीहिं वीइज्जमाणी वीइज्ज-माणी संपत्थिया।

तत्पश्चात् वह धारिणी देवी श्रेणिक राजा के इस प्रकार कहने पर हृष्ट-तुष्ट हुई और जहाँ स्नानगृह था, उसी ओर आई। आकर स्नानगृह में प्रवेश किया। प्रवेश करके अन्तःपुर के अन्दर स्नान किया, बलिकर्म किया, कौतुक मंगल और प्रायश्चित्त किया। फिर क्या किया? सो कहते हैं—पैरों में उत्तम नूपुर पहन कर यावत् आकाश स्फटिक मणि के समान प्रभा वाले वस्त्रों को धारण किया। वस्त्र धारण करके सेचनक नामक गंधहस्ती पर आरूढ होकर अमृतमन्थन से उत्पन्न हुए फेन के समूह के समान श्वेत चामर के बालों के बीजने से विंजाती हुई रवाना हुई।

तए णं से सेणिए राया ण्हाए कयबलिकम्मे जाव सस्सिरी हत्थिखंधवरगए सकोरंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं चउचामरा वीइज्जमाणे धारिणीं देवीं पिट्ठओ अणुगच्छइ।

तत्पश्चात् श्रेणिक राजा ने स्नान किया, बलिकर्म किया, यावत् सुसज्जित होकर, श्रेष्ठ गंधहस्ती के स्कंध पर आरूढ होकर, कोरंट वृक्ष के फूलों की मा वाले छत्र को मस्तक पर धारण करके, चार चामरों से विंजाते हुए धारि देवी का अनुगमन किया।

तए णं सा धारिणी देवी सेणिएणं रण्णा हत्थिखंधवरगए पिट्ठतो पिट्ठतो समणुगम्ममाणमग्गा, हयगयरहजोहकलियाए चाउरं णीए सेणाए सद्धिं संपरिवुडा (ए) महया भडचडगरवंदपरिक्खि सव्विड्ढीए सव्वजुइए जाव दुंदुभिनिग्घोसनादितरवेणं रायगिहे न भिघाडगतिगचउक्कचच्चर जाव महापहेसु नागरजणेणं अभिनंदिज्जमा अभिनंदिज्जमाणा जेणामेव वेभारगिरिपव्वए तेणामेव उवागच्छ उवागच्छित्ता वेभारगिरिकडगतडपायमूले आरामेसु य, उज्जाणेसु काणणेसु य, वणेसु य, वणसंडेसु य, रुक्खेसु य, गुच्छेसु य, गु य, लयासु य, वल्लीसु य, कंदरासु य, दरीसु य, चुंढीसु य, दहेसु

कच्छेसु य, नदीसु य, संगमेसु य, विवरएसु य, अच्छमाणी य, पेच्छ-माणी य, मज्जमाणी य, पत्ताणि य, पुप्फाणि य, फलाणि य, पल्ल-वाणि य, गिण्हमाणी य, माणेमाणी य, अग्घायमाणी य, परिभुंज-माणी य, परिभाएमाणी य, वेब्भारगिरिपायमूले दोहलं विणेमाणी सव्वओ समंता आहिंडति । तए णं धारिणी देवी विणीतदोहला संपुन्नदोहला संपन्नदोहला जाया यावि होत्था ।

श्रेष्ठ हाथी के स्कंध पर बैठे हुए श्रेणिक राजा धारिणी देवी के पीछे-पीछे चले। धारिणी देवी अश्व हाथी रथ और योद्धाओं रूप चतुरंगी सेना से परिवृत थी। उसके चारों ओर महान् सुभटों का समूह घिरा हुआ था। इस प्रकार सम्पूर्ण समृद्धि के साथ, सम्पूर्ण द्युति के साथ, यावत् दुंदुभि के निर्घोष के साथ राजगृह नगर के शृंगाटक, त्रिक, चतुष्क और चत्वर आदि में होकर यावत् राजमार्ग में होकर निकली। नागरिक लोगों ने पुनः पुनः उसका अभि-नन्दन किया। तत्पश्चात् वह जहाँ वैभारगिरि पर्वत था, उसी ओर आई। आकर वैभारगिरि के कटकतट में और तलहटी में, दम्पतियों के क्रीडास्थान आरामों में, पुष्प-फल से सम्पन्न उद्यानों में, सामान्य वृक्षों से युक्त काननों में, नगर से दूरवर्त्ती वनों में, एक जाति के वृक्षों के समूह वाले वनखंडों में, वृक्षों में, वृन्ताकी आदि के गुच्छाओं में, बांस की झाड़ी आदि गुल्मों में, आम्र आदि की लताओं अर्थात् पौधों में, नागरवेल आदि की वल्लियों में, गुफाओं में, दरी (शृगाल आदि के रहने के गड्हों में,) चुण्ढी (बिना खोदे आप ही बने हुए जल की तलैया) में, द्रहों-तालावों में, अल्प जल वाले कच्छों में,नदियों में, नदियों के संगमों में और अन्य जलाशयों में, अर्थात् इन सब के आसपास खड़ी होती हुई, वहाँ के दृश्यों को देखती हुई, स्नान करती हुई, पत्रों पुष्पों फलों और पल्लवों (कोंपलों) को ग्रहण करती हुई, स्पर्श करके उनका मान करती हुई, पुष्पादिक को सूंघती हुई, फल आदि का भक्षण करती हुई और दूसरों को बाँटती हुई, वैभारगिरि के समीप की भूमि में अपना दोहद पूर्ण करती हुई चारों ओर परि-भ्रमण करने लगी। तत्पश्चात् धारिणी देवी ने दोहद को दूर किया, दोहद को पूर्ण किया और दोहद को सम्पन्न किया।

तए णं सा धारिणी देवी सेयणगगंधहत्थिं दुरूढा समाणी सेणि-एणं हत्थिखंधवरगएणं पिट्ठओ पिट्ठओ समणुगम्ममाणमग्गा हयगय जाव रहेणं जेणेव रायगिहे नगरे तेणेव उवागच्छइ । [illegible]

रायगिहं नगरं मज्झं मज्झेणं जेणामेव सए भवणे तेणामेव उवागच्छति। उवागच्छित्ता विउलाइं माणुस्साइं भोगभोगाइं जाव विहरति।

तत्पश्चात् धारिणी देवी सेचनक नामक गंधहस्ती पर आरूढ़ हुई। श्रेणिक राजा श्रेष्ठ हाथी के स्कंध पर बैठ कर उसके पीछे-पीछे चलने लगे। अश्व हस्ती आदि से घिरी हुई वह जहाँ राजगृह नगर है, वहाँ आती है। राजगृह नगर के बीचो-बीच होकर जहाँ अपना भवन है, वहाँ आती है। वहाँ आकर मनुष्य संबंधी विपुल भोग भोगती हुई विचरती है।

तए णं से अभयकुमारे जेणामेव पोसहसाला तेणामेव उवागच्छइ। उवागच्छइत्ता पुव्वसंगतियं देवं सक्कारेइ, सम्माणेइ। सक्कारित्ता सम्माणित्ता पडिविसज्जेति।

तत्पश्चात् वह अभयकुमार जहाँ पौषधशाला है, वहीं आता है। आकर पूर्व के मित्र देव का सत्कार-सन्मान करता है। सत्कार-सन्मान करके उसे विदा करता है।

तए णं से देवे सगज्जियं पंचवण्णं मेहोवसोहियं दिव्वं पाउससिरिं पडिसाहरति, पडिसाहरित्ता जामेव दिसिं पाउब्भूए, तामेव दिसिं पडिगए।

तत्पश्चात् अभयकुमार द्वारा विदा किया हुआ वह देव गर्जना से युक्त पंचरंगी मेघों से सुशोभित दिव्य वर्षा-लक्ष्मी का प्रतिसंहरण करता है, अर्थात् उसे समेट लेता है और प्रतिसंहरण करके जिस दिशा से प्रकट हुआ था, उसी दिशा में चला गया, अर्थात् अपने स्थान पर गया।

तए णं सा धारिणी देवी तंसि अकालदोहलंसि विणीयंसि संमाणियडोहला तस्स गब्भस्स अणुकंपणट्ठाए जयं चिट्ठति, जयं आसयति, जयं सुवति, आहारं पि य णं आहारेमाणी णाइतित्तं णाति-कडुयं णातिकसायं णातिअंबिलं णातिमहुरं जं तस्स गब्भस्स हियं मियं पत्थयं देसे य काले य आहारं आहारेमाणी णाइचिंतं, णाइसोगं, णाइदेण्णं, णाइमोहं, णाइभयं, णाइपरित्तासं, ववगयचिंता-सोय-मोह-भय-परित्तासा उदुभयमाणसुहेहिं भोयणच्छायणगंधमल्लालंकारेहिं तं गब्भं सुहंसुहेणं परिवहति।

तत्पश्चात् धारिणी देवी ने अपने उस अकाल दोहद के पूर्ण होने पर दोहद को सम्मानित किया। वह उस गर्भ की अनुकम्पा के लिए, गर्भ को बाधा न पहुँचे इस प्रकार यतना-सावधानी से खड़ी होती, यतना से बैठती और यतना से शयन करती। आहार करती हुई ऐसा आहार करती जो अधिक तीखा न हो, अधिक कटुक न हो, अधिक कसैला न हो, अधिक खट्टा न हो, और अधिक मीठा भी न हो। देश और काल के अनुसार जो उस गर्भ के लिए हितकारक (बुद्धि-आयुष्य आदि का कारण) हो, मित (परिमित एवं इन्द्रियों को अनुकूल) हो, पथ्य (आरोग्यजनक) हो। वह अति चिन्ता न करती, अति शोक न करती, अति दैन्य न करती, अति मोह न करती, अति भय न करती और अति त्रास न करती। अर्थात् चिन्ता, शोक, मोह, भय और त्रास से रहित होकर सब ऋतुओं में सुखप्रद भोजन, वस्त्र, गंध, माला और अलंकार आदि से सुखपूर्वक उस गर्भ को वहन करती है।

तए णं सा धारिणी देवी नवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अद्ध-[ट्ठ]माण राइंदियाणं वीइक्कंताणं अद्धरत्तकालसमयंसि सुकुमालपाणिपायं [ज]ाव सव्वंगसुंदरंगं दारयं पयाया।

तत्पश्चात् धारिणी देवी ने नौ मास परिपूर्ण होने पर और साढ़े सात [रा]त्रि-दिवस बीत जाने पर, अर्द्ध रात्रि के समय, अत्यन्त कोमल हाथ-पैर वाले [य]ावत् सर्वांगसुन्दर शिशु का प्रसव किया।

तए णं ताओ अंगपडियारियाओ धारिणीं देवीं नवण्हं मासाणं जाव दारयं पयायं पासंति। पासित्ता सिग्घं तुरियं चवलं वेइयं, जेणेव [स]ेणिए राया तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता सेणियं रायं जएणं विजएणं वद्धावेंति। वद्धावित्ता करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी।

तत्पश्चात् दासियाँ धारिणी देवी को नौ मास पूर्ण हुए यावत् पुत्र उत्पन्न [ह]ुआ देखती हैं। देख कर हर्ष के कारण शीघ्र, मन से त्वरा वाली, काय से [च]पल एवं वेग वाली वे दासियाँ जहाँ श्रेणिक राजा है, वहाँ आती हैं। आकर [श्र]ेणिक राजा को जय-विजय शब्द कह कर बधाई देती हैं। बधाई देकर, दोनों [ह]ाथ जोड़ कर, मस्तक पर आवर्त्तन करके अंजलि करके इस प्रकार कहती हैं।

एवं खलु देवाणुप्पिया! धारिणी देवी णवण्हं मासाणं जाव

दारगं पयाया। तं णं अम्हे देवाणुप्पियाणं पियं णिवेएमो, पियं भे भवउ।

तए णं से सेणिए राया तासिं अंगपडियारियाणं अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्टतुट्ठ० ताओ अंगपडियारियाओ महुरेहिं वयणेहिं विउलेण य पुप्फगंधमल्लालंकारेणं सक्कारेति, सम्माणेति, सक्कारित्ता सम्माणित्ता मत्थयधोयाओ करेति, पुत्ताणुपुत्तियं वित्तिं कप्पित्ता पडिविसज्जेति।

इस प्रकार हे देवानुप्रिय ! धारिणी देवी ने नौ मास पूर्ण होने पर पुत्र का प्रसव किया है। सो हम देवानुप्रिय को प्रिय (समाचार) निवेदन करती हैं। आपको प्रिय हो।

तत्पश्चात् श्रेणिक राजा उन दासियों के पास से यह अर्थ सुन कर हृदय में धारण करके हृष्ट-तुष्ट हुआ। उसने उन दासियों का मधुर वचनों से तथा विपुल पुष्पों गंधों मालाओं और आभूषणों से सत्कार-सन्मान किया। सत्कार-सन्मान करके उन्हें मस्तकधौत किया दासीपन से मुक्त कर दिया। और ऐसी आजीविका कर दी कि उनके पुत्र पौत्र आदि तक चलती रहे। इस प्रकार आजीविका करके विपुल द्रव्य देकर विदा किया।

तए णं से सेणिए राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेति। सद्दावित्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! रायगिहं नगरं आसित्त० परिगीयं करेह। करित्ता चारगपरिसोहणं करेह। करित्ता माणुम्माणवद्धणं करेह। करित्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह। जाव पच्चप्पिणंति।

तत्पश्चात् श्रेणिक राजा कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाता है। बुला कर इस प्रकार आदेश देता है-हे देवानुप्रियो ! शीघ्र ही राजगृह नगर में सुगंधित जल छिड़को, यावत् सर्वत्र (मंगल) गान कराओ। कारागार से कैदियों को मुक्त करो। तोल और नाप की वृद्धि करो। यह सब करके यह आज्ञा वापिस सौंपो। यावत् कौटुम्बिक पुरुष राजाज्ञा के अनुसार कार्य करके आज्ञा वापिस देते हैं।

तए णं से सेणिए राया अट्ठारससेणीप्पसेणीओ सद्दावेति सद्दावित्ता एवं वदासी—'गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया ! रायगिहे नगरे अब्भिंतरबाहिरिए उस्सुक्कं उक्करं अभडप्पवेसं अदंडिमकुडंडिमं

अधरिमं अधारणिज्जं अणुद्धुयमुइंगं अमिलायमल्लदामं गणियावरणाड-इज्जकलियं अणेगतालायराणुचरितं पमुइयपक्कीलियाभिरामं जहारिहं ठिइवडियं दसदिवसियं करेह । करित्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह ।'

ते वि करेन्ति, करित्ता तहेव पच्चप्पिणंति ।

तत्पश्चात् श्रेणिक राजा कुंभकार आदि जाति रूप अठारह श्रेणियों को और उनके उपविभाग रूप अठारह प्रश्रेणियों को बुलाता है। बुला कर इस प्रकार कहता है—हे देवानुप्रियो ! तुम जाओ और राजगृह नगर के भीतर और बाहर दस दिन की स्थितिपतिका (कुलमर्यादा के अनुसार होने वाली पुत्र जन्मोत्सव की विशिष्ट रीति) कराओ। वह इस प्रकार दस दिनों तक शुल्क (चुंगी) बंद किया जाय, गायों वगैरह का प्रतिवर्ष लगने वाला कर माफ किया जाय, कुटुंबियों-किसानों आदि के घर में बेगार लेने आदि के लिए राजपुरुषों का प्रवेश निषिद्ध किया जाय, दंड (अपराध के अनुसार लिया जाने वाला द्रव्य) और कुदंड (अल्पदंड बड़ा अपराध करने पर भी लिया जाने वाला थोड़ा द्रव्य) न लिया जाय, किसी को ऋणी न रहने दिया जाय, अर्थात् राजा की तरफ से सब का ऋण चुका दिया जाय, किसी देनदार को पकड़ा न जाय, ऐसी घोषणा कर दो। तथा सर्वत्र मृदंग आदि बाजे बजवाओ। चारों ओर विकसित ताजा फूलों की मालाएँ लटकाओ। गणिकाएँ जिनमें प्रधान हैं ऐसे पात्रों से नाटक करवाओ। अनेक तालाचरों (प्रेक्षाकारियों) से नाटक करवाओ। ऐसा करो कि लोग हर्षित होकर क्रीड़ा करें। इस प्रकार यथा योग्य दस दिन की स्थितिपतिका करो-कराओ और मेरी यह आज्ञा मुझे वापिस सौंपो।

राजा श्रेणिक का यह आदेश सुन कर वे इसी प्रकार करते हैं और राजाज्ञा वापिस करते हैं।

तए णं से सेणिए राया बाहिरियाए उवट्ठाणसालाए सीहासणवरगए पुरत्थाभिमुहे सन्निसन्ने सइएहि य साहस्सिएहि य सयसाहस्सिएहि य जाएहिं दाएहिं भागेहिं दलयमाणे दलयमाणे पडिच्छेमाणे पडिच्छेमाणे एवं च णं विहरति ।

तत्पश्चात् श्रेणिक राजा बाहर की उपस्थान शाला (सभा) में, पूर्व की ओर मुख करके, श्रेष्ठ सिंहासन पर बैठा और सैकड़ों, हजारों और लाखों के द्रव्य से याग (पूजन) एवं दान दिया। आय में से अमुक भाग दिया। और प्राप्त होने वाले द्रव्य को ग्रहण करता हुआ विचरने लगा।

तए णं तस्स अम्मापियरो पढमे दिवसे जातकम्मं करेन्ति, करित्ता बितियदिवसे जागरियं करेन्ति, करित्ता ततियदिवसे चंदसूरदंसणियं करेन्ति, करित्ता एवामेव निव्वत्ते असुइजातकम्मकरणे संपत्ते बारसाहदिवसे विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेन्ति, उवक्खडावित्ता मित्त-णाइ-णियग-सयण संबंधि-परिजणं बलं च बहवे गणणायग-दंडणायग जाव आमंतेति।

तत्पश्चात् उस बालक के माता-पिता ने पहले दिन जातकर्म (नाल काटना आदि) किया। दूसरे दिन जागरिका (रात्रि जागरण) किया। तीसरे दिन चन्द्र-सूर्य का दर्शन कराया। इस प्रकार अशुचि* जात कर्म की क्रिया सम्पन्न हुई। फिर बारहवाँ दिन आया तो विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम वस्तुएँ तैयार करवाईं। तैयार करवा कर मित्र, बन्धु आदि ज्ञाति, पुत्र आदि निजक जन, काका आदि स्वजन, श्वसुर आदि संबंधी जन, दास आदि परिजन, सेना, और बहुत से गणनायक, दण्डनायक आदि को आमंत्रण दिया।

तओ पच्छा ण्हाया कयबलिकम्मा कयकोउय० जाव सव्वालंकारविभूसिया महइमहालयंसि भोयणमंडवंसि तं विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं मित्तणाइ० गणणायग जाव सद्धिं आसाएमाणा विसाएमाणा परिभाएमाणा परिभुंजेमाणा एवं च णं विहरइ।

इसके पश्चात् स्नान किया, बलिकर्म किया, मषितिलक आदि कौतुक किया, यावत् समस्त अलंकारों से विभूषित हुए। फिर बहुत विशाल भोजन-मण्डप में उस अशन पान खादिम और स्वादिम भोजन का मित्र, ज्ञाति आदि तथा गणनायक आदि के साथ आस्वादन, विस्वादन, परस्पर विभाजन और परिभोग करते हुए विचरने लगे।

जिमियभुत्तुत्तरागया वि य णं समाणा आयंता चोक्खा परमसुइभूया तं मित्तणाइणियगसयणसंबंधिपरिजणं० गणणायग० विपुलेणं पुप्फवत्थगंधमल्लालंकारेणं सक्कारेंति, संमाणेंति, सक्कारित्ता सम्माणित्ता एवं वयासी—'जम्हा णं अम्हं इमस्स दारगस्स गब्भत्थस्स

* [illegible] है। इसका अर्थ है—शुचि करना [illegible]

समायस्स अकालमेहेसु डोहले पाउब्भूए, तं होउ णं अम्हं दारए मेहे नामेणं मेहकुमारे।' तस्स दारगस्स अम्मापियरो अयमेयारूवं गोएणं गुणनिप्फन्नं नामधेज्जं करेन्ति।

इस प्रकार भोजन करने के पश्चात् बैठने के स्थान पर आये। शुद्ध जल से आचमन (कुल्ला) किया। हाथ-मुख धोकर स्वच्छ हुए, परम शुचि हुए। फिर उन मित्र, ज्ञाति निजक, स्वजन, संबंधीजन, परिजन आदि तथा गणनायक आदि का विपुल वस्त्र, गंध, माला और अलंकार से सत्कार किया, सन्मान किया। सत्कार-सन्मान करके इस प्रकार कहा—क्योंकि हमारा यह पुत्र जब गर्भ में स्थित था, तब इसे (इसकी माता को) अकाल-मेघ संबंधी दोहद प्रकट हुआ था। अतएव हमारे इस पुत्र का नाम 'मेघकुमार' होना चाहिए। इस प्रकार माता-पिता ने इस प्रकार का गौण अर्थात् गुणनिष्पन्न नाम रक्खा।

तए णं से मेहकुमारे पंचधाईपरिग्गहिए। तंजहा-खीरधाईए, मंडण-[illegible] कीलावणधाईए, अंकधाईए। अन्नाहि य बहूहिं [illegible] खुज्जाहिं चिलाइयाहिं वामणिवडभिबब्बरिबउसिजोणियाहिं पल्हविय-सिरियपोरगिणिलासियलउसियदमिलिसिंहलिआरबिपुलिंदिपक्कणि-बहलिमुरुंडिसबरिपारसीहिं णाणादेसीहिं विदेसपरिमंडियाहिं इंगित-चिंतिय-पत्थिय-वियाणियाहिं सदेसनेवत्थगहियवेसाहिं निउणकुसलाहिं विणीयाहिं चेडियाचक्कवाल-वरिसधर-कंचुइज्ज-महयरगवंदपरिक्खित्ते हत्थाओ हत्थं संहरिज्जमाणे, अंकाओ अंकं परिभुज्जमाणे, परिगिज्जमाणे, चालिज्जमाणे, उवलालिज्जमाणे, रम्मंसि मणिकोट्टिमतलंसि परिमिज्ज-माणे परिमिज्जमाणे णिव्वायणिव्वाघायंसि गिरिकन्दरमल्लीणे व चंपग-पायवे सुहंसुहेणं वड्ढइ।

तत्पश्चात् मेघकुमार पाँच धायों द्वारा ग्रहण किया गया-पाँच धाएँ उसका पालन-पोषण करने लगीं। वे इस प्रकार थीं-(१) क्षीरधात्री-दूध पिलाने वाली धाय, (२) मंडनधात्री-वस्त्राभूषण पहनाने वाली धाय (३) मज्जनधात्री-स्नान कराने वाली धाय, (४) क्रीडापनधात्री-खेल खिलाने वाली धाय और (५) अंकधात्री-गोद में लेने वाली धाय। इनके अतिरिक्त वह मेघकुमार अन्यान्य कुब्जा (कुबड़ी) चिलातिका (चिलात-किरात नामक अनार्य देश में उत्पन्न), वामन (बौनी), वडभी (बड़े पेट वाली), बर्बरी (बर्बर देश में उत्पन्न),

देश की, योनक देश की, पल्हविक देश की, ईसिनिक, धोरुकिन ल्हासक देश की, लकुस देश की, द्रविड देश की, सिंहल देश की, अरब देश की, पुलिंद देश की, पक्कण देश की, बहल देश की, मुरुंड देश की, शबर देश की, पारस देश की, इस प्रकार नाना देशों की, परदेश-अपने देश से भिन्न राजगृह, को सुशोभित करने वाली, इंगित (मुख आदि की चेष्टा), चिन्तित (मानसिक विचार) और प्रार्थित (अभिलषित) को जानने वाली, अपने-अपने देश के वेष को धारण करने वाली, निपुणों में भी अतिनिपुण, विनययुक्त दासियों के द्वारा तथा स्वदेशीय दासियों द्वारा और वर्षधरों (प्रयोग द्वारा नपुंसक बनाये हुए पुरुषों), कंचुकियों और महत्तरकों (अन्तःपुर के कार्य की चिन्ता रखने वालों) के समुदाय से घिरा रहने लगा। वह एक के हाथ से दूसरे के हाथ में जाता, एक की गोद से दूसरे की गोद में जाता, गा-गा कर बहलाया जाता, उंगली पकड़ कर चलाया जाता, क्रीड़ा आदि से लालन-पालन किया जाता एवं रमणीय मणि-जटित फर्श पर चलाया जाता हुआ वायुरहित और व्याघातरहित गिरिगुफा में स्थित चम्पक वृक्ष के समान सुखपूर्वक बढ़ने लगा।

तए णं तस्स मेहस्स कुमारस्स अम्मापियरो अणुपुव्वेणं नामकरणं च पज्जेमणं च एवं चंकम्मणगं च चोलोवणयं च महया महया इड्ढी-सक्कारसमुदएणं करिंसु।

तत्पश्चात् उस मेघकुमार के माता-पिता अनुक्रम से नामकरण, पालने में सुलाना, पैरों से चलाना, चोटी रखना, आदि संस्कार बड़ी-बड़ी ऋद्धि और सत्कार पूर्वक मानवसमूह के साथ करते हैं।

तए णं तं मेहकुमारं अम्मापियरो सातिरेगट्ठवासजायगं चेव गब्भट्ठमे वासे सोहणंसि तिहिकरणमुहुत्तंसि कलायरियस्स उवणेन्ति। तते णं से कलायरिए मेहं कुमारं लेहाइयाओ गणितप्पहाणाओ सउणरुयपज्जवसाणाओ बावत्तरिं कलाओ सुत्तओ य अत्थओ य करणओ य सेहावेति, सिक्खावेति।

तत्पश्चात् कुछ अधिक आठ वर्ष के हुए, अर्थात् गर्भ से आठ वर्ष के हुए मेघकुमार को माता-पिता ने शुभ तिथि, करण और मुहूर्त में कलाचार्य के पास भेजा। तत्पश्चात् कलाचार्य ने मेघकुमार को गणित जिनमें प्रधान है ऐसी लेख आदि शकुनिरुत (पक्षियों के शब्द) तक की बहत्तर कलाएँ सूत्र से, अर्थ से और प्रयोग से सिद्ध करवाईं तथा सिखलाईं।

तंजहा-(१) लेहं (२) गणियं (३) रूवं (४) नट्टं (५) गीयं (६) वाइयं (७) सरगयं (८) पोक्खरगयं (९) समतालं (१०) जूयं (११) जणवायं (१२) पासयं (१३) अट्ठावयं (१४) पोरेकच्चं (१५) दग-मट्टियं (१६) अन्नविहिं (१७) पाणविहिं (१८) वत्थविहिं (१९) विले-वणविहिं (२०) सयणविहिं (२१) अज्जं (२२) पहेलियं (२३) माग-हियं (२४) गाहं (२५) गीइयं (२६) सिलोयं (२७) हिरण्णजुत्ति (२८) सुवन्नजुत्ति (२९) चुन्नजुत्ति (३०) आभरणविहिं (३१) तरुणी-पडिकम्मं (३२) इत्थिलक्खणं (३३) पुरिसलक्खणं (३४) हयलक्खणं (३५) गयलक्खणं (३६) गोणलक्खणं (३७) कुक्कुडलक्खणं (३८) छत्तलक्खणं (३९) डंडलक्खणं (४०) असिलक्खणं (४१) मणिल-क्खणं (४२) कागणिलक्खणं (४३) वत्थुविज्जं (४४) खंधारमाणं (४५ नगरमाणं (४६) वूहं (४७) पडिवूहं (४८) चारं (४९) पडिचारं (५०) चक्कवूहं (५१) गरुलवूहं (५२) सगडवूहं (५३) जुद्धं (५४) निजुद्धं (५५) जुद्धातिजुद्धं (५६) अट्ठिजुद्धं (५७) मुट्ठिजुद्धं (५८) बाहुजुद्धं (५९) लयाजुद्धं (६०) ईसत्थं (६१) छरुप्पवायं (६२) धणु-व्वेयं (६३) हिरन्नपागं (६४) सुवन्नपागं (६५) सुत्तखेडं (६६) वट्ट-खेडं (६७ नालियाखेडं (६८) पत्तच्छेज्जं (६९) कडगच्छेज्जं (७०) सज्जीवं (७१) निज्जीवं (७२) सउणरुयमिति।

वह कलाएँ इस प्रकार हैं—(१) लेखन (२) गणित (३) रूप बदलना (४) नाटक (५) गायन (६) वाद्य बजाना (७) स्वर जानना (८) वाद्य सुधारना (९) समान ताल जानना (१०) जुआ खेलना (११) लोगों के साथ वादविवाद करना (१२) पासों से खेलना (१३) चौपड़ खेलना (१४) नगर की रक्षा करना (१५) जल और मिट्टी के संयोग से वस्तु का निर्माण करना (१६) धान्य निप-जाना (१७) नया पानी उत्पन्न करना, पानी को संस्कार करके शुद्ध करना एवं उष्ण करना (१८) नवीन वस्त्र बनाना, रंगना, सीना और पहनना (१९) विले-पन की वस्तु को पहचानना, तैयार करना, लेपन करना आदि (२०) शय्या बनाना, शयन करने की विधि जानना आदि (२१) आर्या छंद को पहचानना और बनाना (२२) पहेलियाँ बनाना और बूझना (२३) मागधिका अर्थात् मगध देश की भाषा में गाथा आदि बनाना (२४) प्राकृत भाषा में गाथा आदि

तत्पश्चात् वह कलाचार्य, मेघकुमार को गणित प्रधान, लेखन से लेकर शकुनिरुत पर्यन्त बहत्तर कलाएँ सूत्र (मूल पाठ) से, अर्थ से और प्रयोग से सिद्ध कराता है तथा सिखलाता है। सिद्ध करवा कर और सिखला कर माता-पिता के पास ले जाता है।

तब मेघकुमार के माता-पिता ने कलाचार्य का मधुर वचनों से तथा विपुल वस्त्र, गंध, माला और अलंकारों से सत्कार किया, सन्मान किया। सत्कार-सन्मान करके जीविका के योग्य विपुल प्रीतिदान दिया। प्रीतिदान देकर उसे विदा किया।

तए णं से मेहे कुमारे बावत्तरिकलापंडिए णवंगसुत्तपडिबोहिए अट्ठारसविहिप्पगारदेसीभासाविसारए गीइरई गंधव्वनट्टकुसले हयजोही गयजोही रहजोही बाहुजोही बाहुप्पमद्दी अलं भोगसमत्थे साहसिए वियालचारी जाए यावि होत्था।

तब मेघकुमार बहत्तर कलाओं में पंडित हो गया। उसके नौ अंग-दो कान, दो नेत्र, दो नासिका, जिह्वा, त्वचा और मन बाल्यावस्था के कारण जो सोये-से थे-अव्यक्त चेतना वाले थे, वे जागृत से हो गये। वह अठारह प्रकार की देशी भाषाओं में कुशल हो गया। वह गीति में प्रीति वाला, गीत और नृत्य में कुशल हो गया। वह अश्वयुद्ध, गजयुद्ध, रथयुद्ध और बाहुयुद्ध करने वाला बन गया। अपनी बाहुओं से विपक्षी का मर्दन करने में समर्थ हो गया। भोग भोगने का सामर्थ्य उसमें आ गया। साहसी होने के कारण विकालचारी-आधी रात में भी चल पड़ने वाला बन गया।

तए णं तस्स मेहकुमारस्स अम्मापियरो मेहं कुमारं बावत्तरिकला-पंडितं जाव वियालचारीजायं पासंति। पासित्ता अट्ठ पासायवडिंसए करेन्ति अब्भुग्गयमुसियपहसिए विव मणिकणगरयणभत्तिचित्ते, वाउद्धुतविजयवेजयंतीपडागाछत्ताइच्छत्तकलिए, तुंगे, गगणतलमभि-लंघमाणसिहरे, जालंतररयणपंजरुम्मिल्लियव्व मणिकणगथूभियाए, वियसियसयपत्तपुंडरीए, तिलयरयणद्धयचंदच्चिए नानामणिमयदामालं-किए, अंतो बहिं च सण्हे तवणिज्जरुइलवालुयापत्थरे, सुहफासे सस्सि-रीयरूवे पासादीए जाव पडिरूवे।

तत्पश्चात् मेघकुमार के माता-पिता ने मेघकुमार को बहत्तर कलाओं में पंडित यावत् विकालचारी हुआ देखा। देख कर आठ उत्तम प्रासाद बनवाये। वे प्रासाद बहुत ऊँचे उठे हुए थे। अपनी उज्ज्वल कान्ति के समूह से हँसते हुए से प्रतीत होते थे। मणि, सुवर्ण और रत्नों की रचना से विचित्र थे। वायु से फहराती हुई और विजय की सूचना करने वाली वैजयन्ती-पताकाओं से तथा छत्रातिछत्रों (एक दूसरे के ऊपर रहे हुए छत्रों) से युक्त थे। वे इतने ऊँचे थे कि उनके शिखर आकाशतल को उल्लंघन करते थे। उनकी जालियों के मध्य में रत्नों के पंजर ऐसे प्रतीत होते थे, मानो उनके नेत्र हों। उनमें मणियों और कनक की थूभिकाएँ (स्तूपिकाएँ) थीं। उनमें साक्षात् अथवा चित्रित किये हुए शतपत्र और पुण्डरीक कमल विकसित हो रहे थे। वे तिलक रत्नों एवं अर्द्ध-चन्द्रों—एक प्रकार के सोपानों से युक्त थे, अथवा भित्तियों में चन्दन आदि के आलेख (हाथे) से चर्चित थे। नाना प्रकार की मणिमय मालाओं से अलंकृत थे। भीतर और बाहर से चिकने थे। उनके आंगन में सुवर्ण की रुचिर वालुका बिछी थी। उनका स्पर्श सुखप्रद था। रूप बड़ा ही शोभन था। उन्हें देखते ही चित्त में प्रसन्नता होती थी। यावत् वे महल प्रतिरूप थे—अत्यन्त मनोहर थे।

एगं च णं महं भवणं करेंति—अणेगखंभसयसंनिविट्ठं लीलट्ठियसालभंजियागं अब्भुग्गयसुकयवइरवेइयातोरणवररइयसालभंजियासुसिलिट्ठविसिट्ठलट्ठसंठियपसत्थवेरुलियखंभनाणामणिकणगरयणखचियउज्जलं बहुसमसुविभत्तनिचियरमणिज्जभूमिभागं ईहामिय० जाव भत्तिचित्तं खंभुग्गयवइरवेइयापरिगयाभिरामं विज्जाहरजमलजुयलजंतजुत्तं पिव अच्चीसहस्समालणीयं रूवगसहस्सकलियं भिसमाणं भिब्भिसमाणं चक्खुल्लोयणलेसं सुहफासं सस्सिरीयरूवं कंचणरयणथूभियागं नाणाविहपंचवन्नघंटापडागपरिमंडियग्गसिहरं धवलमरीचिकवयं विणिम्मुयंतं लाउल्लोइयमहियं जाव गंधवट्टिभूयं पासादीयं दरिसणिज्जं अभिरूवं पडिरूवं।

और एक महान् भवन* (मेघकुमार के लिए) बनवाया। वह अनेक सैकड़ों स्तंभों से बना हुआ था। उसमें लीलायुक्त अनेक पुतलियाँ स्थापित की हुई थीं। उसमें ऊँची और सुनिर्मित वज्ररत्न की वेदिका थी और तोरण थे। मनोहर निर्मित पुतलियों सहित उत्तम, मोटे एवं प्रशस्त वैडूर्य रत्न के स्तंभ थे,

* लम्बाई की अपेक्षा ऊँचाई कुछ कम हो तो वह महल भवन कहलाता है। ...ई से ऊँचाई दुगुनी हो तो प्रासाद कहलाता है।

वे विविध प्रकार के मणियों सुवर्ण तथा रत्नों से खचित होने के कारण उज्ज्वल दिखाई देते थे। उनका भूमिभाग बिलकुल सम, विशाल, पक्का और रमणीय था। उस भवन में ईहामृग, वृषभ, तुरग, मनुष्य, मकर आदि के चित्र चित्रित किये हुए थे। स्तंभों पर बनी वज्ररत्न की वेदिका से युक्त होने के कारण रमणीय दिखाई पड़ता था। समान श्रेणी में स्थित विद्याधरों के युगल यंत्र द्वारा चलते दीख पड़ते थे। वह भवन हजारों किरणों से व्याप्त और हजारों चित्रों से युक्त होने से देदीप्यमान और अतीव देदीप्यमान था। उसे देखते ही दर्शक के नयन [illegible] भासम्पन्न था। [illegible] प्रधान शिखर [illegible] मों से सुशोभित था। वह चहुँ और देदीप्यमान किरणों के समूह को फैला रहा था। वह लिपा था, धुला था और चंदोवे से युक्त था। यावत् वह भवन गंध की वर्त्ती जैसा जान पड़ता था। वह चित्त को प्रसन्न करने वाला, दर्शनीय, अभिरूप और प्रतिरूप था-अतीव मनोहर था।

तए णं तस्स मेहकुमारस्स अम्मापियरो मेहं कुमारं सोहणंसि तिहिकरणनक्खत्तमुहुत्तंसि सरिसियाणं सरिसव्वयाणं सरिसत्तयाणं सरिसलावन्नरूवजोव्वणगुणोववेयाणं सरिसएहिन्तो रायकुलेहिन्तो आणि-अल्लियाणं पसाहणट्ठंगअविहवबहुओवयणमंगलसुजंपियाहिं अट्ठहिं राय-वरकरणाहिं सद्धिं एगदिवसेणं पाणिं गिण्हाविंसु।

तत्पश्चात् मेघकुमार के माता-पिता ने मेघकुमार का शुभ तिथि करण नक्षत्र और मुहूर्त्त में, शरीर-परिमाण से सदृश, समान उम्र वाली, समान त्वचा (कान्ति) वाली, समान लावण्य वाली, समान रूप (आकृति) वाली, समान यौवन और गुणों वाली तथा अपने कुल के समान राजकुलों से लाई हुई आठ श्रेष्ठ राजकन्याओं के साथ, एक ही दिन-एक ही साथ, आठों अंगों में अलंकार धारण करने वाली सुहागिन स्त्रियों द्वारा किये हुए मंगलगान एवं दधि अक्षत आदि मांगलिक पदार्थों के प्रयोग द्वारा पाणिग्रहण करवाया।

तए णं तस्स मेहस्स अम्मापियरो इमं एयारूवं पीइदाणं दलयइ-अट्ठहिरण्णकोडीओ, अट्ठ सुवण्णकोडीओ, गाहानुसारेण भाणियव्वं जाव पेसणकारियाओ, अन्नं च विपुलं धणकणगरयणमणिमोत्तिय-संखसिलप्पवालरत्तरयणसंतसारसावतेज्जं अलाहि जाव आसत्तमाओ कुलवंसाओ पकामं दाउं पकामं भोत्तुं पकामं परिभाएउं।

गमणपविचीए मेहं कुमारं एवं वयासी—नो खलु देवाणुप्पिया ! अज्ज रायगिहे नयरे इंदमहेतिवा जाव गिरिजत्ताओ वा, जं णं एए उग्ग जाव एगदिसिं एगाभिमुहा निग्गच्छंति, एवं खलु देवाणुप्पिया ! समणे भगवं महावीरे आइगरे तित्थयरे इहमागते, इह संपत्ते, इह समोसढे इह चेव रायगिहे नयरे गुणसिलए चेइए अहापडि० जाव विहरति।

तत्पश्चात् उस कंचुकी पुरुष ने श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के आगमन का वृत्तान्त जान कर मेघकुमार को इस प्रकार कहा—'हे देवानुप्रिय ! आज राजगृह नगर में इन्द्र महोत्सव या यावत् गिरियात्रा आदि नहीं है कि जिसके निमित्त यह उग्रकुल के, भोगकुल के तथा अन्य सब लोग एक ही दिशा में, एकाभिमुख होकर जा रहे हैं। परन्तु देवानुप्रिय ! श्रमण भगवान् महावीर धर्म तीर्थ की आदि करने वाले, तीर्थ की स्थापना करने वाले यहाँ आये हैं, पधार चुके हैं, समवसृत हुए हैं और इसी राजगृह नगर में, गुणशील चैत्य में यथायोग्य अवग्रह की याचना करके यावत् विचर रहे हैं।

तए णं से मेहे कंचुइज्जपुरिसस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठे कोडुंबियपुरिसे सद्दावेति, सद्दावित्ता एवं वयासी—'खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! चाउग्घंटं आसरहं जुत्तामेव उवट्ठवेह ।' तह त्ति उवणेंति ।

तत्पश्चात् मेघकुमार कंचुकी पुरुष से यह बात सुन कर एवं हृदय में धारण करके, हृष्ट-तुष्ट होता हुआ कौटुम्बिक पुरुषों को बुलवाता है और बुला कर इस प्रकार कहता है—हे देवानुप्रियो ! शीघ्र ही चार घंटाओं वाले अश्वरथ को जोत कर उपस्थित करो। वे कौटुम्बिक पुरुष 'बहुत अच्छा' कह कर रथ जोत लाते हैं।

तए णं से मेहे ण्हाए जाव सव्वालंकारविभूसिए चाउग्घंटं आसरहं दुरूढे समाणे सकोरंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं महया भडचडगरविंदपरियालसंपरिवुडे रायगिहस्स नगरस्स मज्झंमज्झेणं निग्गच्छति। निग्गच्छित्ता जेणामेव गुणसिलए चेइए तेणामेव उवागच्छति । उवागच्छित्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स छत्तातिछत्तं पडागातिपडागं विज्जाहरचारणे जंभए य देवे ओवयमाणे उप्पयमाणे पासति । पासित्ता

चाउग्घंटाओ आसरहाओ पच्चोरुहति। पच्चोरुहित्ता समणं भगवं महा-
वीरं पंचविहेणं अभिगमेणं अभिगच्छति। तंजहा–(१) सचित्ताणं
दव्वाणं विउसरणयाए (२) अचित्ताणं दव्वाणं अविउसरणयाए (३)
एगसाडियउत्तरासंगकरणेणं (४) चक्खुप्फासे अंजलिपग्गहेणं (५)
मणसो एगत्तीकरणेणं। जेणामेव समणे भगवं महावीरे तेणामेव उवा-
गच्छति। उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं
पयाहिणं करेति। करित्ता वंदइ, णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता समणस्स
भगवओ महावीरस्स णच्चासन्ने णाइदूरे सुस्सूसमाणे नमंसमाणे अंजलि-
यउडे अभिमुहे विणएणं पज्जुवासइ।

तत्पश्चात् मेघकुमार ने स्नान किया। सर्व अलंकारों से विभूषित हुआ।
फिर चार घंटा वाले अश्वरथ पर आरूढ़ हुआ। कोरंट वृक्ष के फूलों की माला
वाले छत्र को धारण किया। सुभटों के विपुल समूह वाले परिवार से घिरा
हुआ, राजगृह नगर के बीचों बीच होकर निकला। निकल कर जहाँ गुणशील
नामक चैत्य था, वहाँ आया। आकर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के छत्र
पर छत्र और पताकाओं पर पताका आदि अतिशयों को देखा तथा विद्याधरों,
चारण मुनियों और जृंभक देवों को नीचे उतरते एवं ऊपर उठते देखा। यह
सब देखकर चार घण्टा वाले अश्वरथ से नीचे उतरा। उतर कर पाँच प्रकार
के अभिगम करके श्रमण भगवान् महावीर के सन्मुख चला। वह पाँच अभि-
गम इस प्रकार हैं–(१) पुष्प पान आदि सचित्त द्रव्यों का त्याग (२) वस्त्र,
आभूषण आदि अचित्त द्रव्यों का अत्याग (३) एक शाटिका (दुपट्टे) का
उत्तरासंग (४) भगवान् पर दृष्टि पड़ते ही दोनों हाथ जोड़ना और (५) मन
को एकाग्र करना। यह अभिग्रह करके जहाँ श्रमण भगवान् महावीर थे, वहाँ
आया। आकर श्रमण भगवान् महावीर को दक्षिण दिशा से आरम्भ करके
(तीन बार) प्रदक्षिणा की। प्रदक्षिणा करके भगवान् को स्तुति रूप वन्दन
किया और काय से नमस्कार किया। वन्दन नमस्कार करके श्रमण भगवान्
महावीर के अत्यन्त समीप नहीं और अत्यन्त दूर भी नहीं ऐसे समुचित स्थान
पर बैठ कर, धर्मोपदेश सुनने की इच्छा करता हुआ, नमस्कार करता हुआ,
दोनों हाथ जोड़े, सन्मुख रह कर, प्रभु की उपासना करने लगा।

तए णं समणे भगवं महावीरे [illegible]
परिसाए मज्झगए विचित्तं धम्ममाइक्खइ, जहा जीवा बज्झंति,

भगवान् ने कहा—'हे देवानुप्रिय ! जिससे तुझे सुख उपजे वह कर, तु उसमें विलम्ब न करना।'

तए णं से मेहे कुमारे समणं भगवं महावीरं वंदति, नमंसति, दित्ता नमंसित्ता जेणामेव चाउग्घंटे आसरहे तेणामेव उवागच्छइ। ागच्छित्ता चाउग्घंटं आसरहं दुरूहइ, दुरूहित्ता महया भडचडगरपह- णं रायगिहस्स नगरस्स मज्झंमज्झेणं जेणेव सए भवणे तेणामेव ागच्छइ, उवागच्छित्ता चाउग्घंटाओ आसरहाओ पच्चोरुहइ। पच्चो- हित्ता जेणामेव अम्मापियरो तेणामेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता म्मापिऊणं पायवडणं करेइ। करित्ता एवं वयासी-'एवं खलु अम्म- ओ ! मए समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मे णिसंते, से य मे धम्मे इच्छिए पडिच्छिए अभिरुइए।'

तत्पश्चात् मेघकुमार ने श्रमण भगवान् महावीर को वन्दन किया, ान् उनकी स्तुति की, नमस्कार किया, स्तुति-नमस्कार करके जहाँ चार— ओं वाला अश्व-रथ था, वहाँ आया। आकर चार घंटाओं वाले अश्व- पर आरूढ़ हुआ। आरूढ़ होकर महान् सुभटों और विपुल समूह वाले वार के साथ राजगृह के बीचों-बीच होकर जहाँ अपना घर था, वहाँ या। आकर चार घंटाओं वाले अश्व-रथ से उतरा। उतर कर जहाँ उसके ता-पिता थे, वहीं आया। आकर माता-पिता के पैरों में प्रणाम किया। णाम करके इस प्रकार कहा—हे माता-पिता ! मैंने श्रमण भगवान् महावीर मीप इस प्रकार धर्म श्रवण किया है और मैंने उस धर्म को इच्छा की है, र-बार इच्छा की है। वह मुझे रुचा है।

तए णं तस्स मेहस्स अम्मापियरो एवं वयासी—'धन्नो सि तुमं या ! संपुन्नो सि तुमं जाया ! कयत्थो सि तुमं जाया ! जं णं तुमे मणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मे णिसंते, से वि य ते धम्मे च्छिए पडिच्छिए अभिरुइए।'

तत्पश्चात् मेघकुमार के माता-पिता इस प्रकार बोले—पुत्र ! तुम धन्य , पुत्र ! तुम पूरे पुण्यवान् हो, हे पुत्र ! तुम कृतार्थ हो, कि तुमने गवान् महावीर के निकट धर्म श्रवण किया है और वह धर्म भी तः पुनः इष्ट और रुचिकर हुआ है।

लावण्यरहित हो गई, कान्तिहीन हो गई, श्रीविहीन हो गई, शरीर दुर्बल होने से उसके पहने हुए अलंकार अत्यन्त ढीले हो गये, हाथों में पहने हुए उत्तम वलय खिसक कर भूमि पर जा पड़े और चूर-चूर हो गये। उसका उत्तरीय वस्त्र खिसक गया। सुकुमार केशपाश बिखर गया। मूर्च्छा के वश होने से चित्त नष्ट होने के कारण शरीर भारी हो गया। परशु से काटी हुई चंपकलता के समान तथा महोत्सव सम्पन्न हो जाने के पश्चात् इन्द्रध्वज के समान (शोभा-हीन) प्रतीत होने लगी। उसके शरीर के जोड़ ढीले पड़ गये। ऐसी वह धारिणी देवी सर्व अंगों से धम्-धड़ाम से पृथ्वीतल (फर्श) पर गिर पड़ी।

तए णं सा धारिणी देवी ससंभमोवत्तियाए तुरियं कंचणभिंगार-मुहविणिग्गयसीयलजलविमलधाराए परिसिंचमाणा निव्वावियगायलट्ठी उक्खेवयतालविंटवीयणगजणियवाएणं सफुसिएणं अंतेउरपरिजणेणं आसासिया समाणी मुत्तावलिसन्निगासपवडंतअंसुधाराहिं सिंचमाणी पओहरे कलुणविमणदीना रोयमाणी कंदमाणी तिप्पमाणी सोयमाणी विलवमाणी मेहं कुमारं एवं वयासी।

तत्पश्चात् वह धारिणी देवी, संभ्रम के साथ शीघ्रता से, सुवर्णकलश के मुख से निकली हुई शीतल जल की निर्मल धारा से सिंचन की गई। अत-एव उसका शरीर शीतल हो गया। उत्क्षेपक (एक प्रकार के बांस के पंखे) से, तालवृन्त (ताड़ के पत्ते के पंखे) से तथा वीजनक (जिसकी डंडी अंदर से पकड़ी जाय, ऐसे बांस के पंखे) से उत्पन्न हुए तथा जलकणों से युक्त वायु से अन्तःपुर के परिजनों द्वारा उसे आश्वासन दिया गया। तब धारिणी देवी मोतियों की लड़ी के समान अश्रुधारा से अपने स्तनों को सींचने-भिगोने लगी। वह दयनीय, विमनस्क और दीन हो गई। वह रुदन करती हुई, क्रन्दन करती हुई, पसीना एवं लार टपकाती हुई हृदय में शोक करती हुई और विलाप करती हुई मेघकुमार से इस प्रकार कहने लगी।

तुमं सि णं जाया! अम्हं एगे पुत्ते इट्ठे कंते पिए मणुन्ने मणामे थेज्जे वेसासिए सम्मए बहुमए अणुमए भंडकरंडगसमाणे रयणे रयण-भूए जीवियउस्सासए, हिययाणंदजणणे उंबरपुप्फं व दुल्लभे सवणयाए किमंग पुण पासणयाए? णो खलु जाया! अम्हे इच्छामो खणमवि विप्पओगं सहित्तए। तं भुंजाहि ताव जाया! विपुले कामभोगे जाव ताव वयं जीवामो। तओ पच्छा अम्हेहिं

तए णं से मेहे कुमारे अम्मापियरो दोच्चं पि तच्चं पि एवं वयासी- एवं खलु अम्मयाओ ! मए समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मे निसंते। से वि य णं मे धम्मे इच्छिए, पडिच्छिए, अभिरुइए। तं इच्छामि णं अम्मयाओ ! तुब्भेहिं अब्भणुन्नाए समाणे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए मुंडे भवित्ता णं आगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए।

तत्पश्चात् वह मेघकुमार माता-पिता से दूसरी बार और तीसरी बार इस प्रकार कहने लगा—हे माता-पिता ! मैंने श्रमण भगवान् महावीर से धर्म श्रवण किया है। उस धर्म की मैंने इच्छा की है, बार-बार इच्छा की है, वह मुझे रुचिकर हुआ है। अतएव हे माता-पिता ! मैं तुम्हारी अनुमति पाकर श्रमण भगवान् महावीर के समीप मुण्डित होकर, गृहवास त्याग कर अनगारिता की प्रव्रज्या अंगीकार करना चाहता हूँ।

तए णं सा धारिणी देवी तमणिट्ठं अकंतं अप्पियं अमणुन्नं अमणामं असुयपुव्वं फरुसं गिरं सोच्चा णिसम्म इमेणं एयारूवेणं मणोमाणसिएणं महया पुत्तदुक्खेणं अभिभूता समाणी सेयागयरोमकूवपगलंतविलीणगाया सोयभरपवेवियंगी णित्तेया दीणविमणवयणा करयलमलिय व्व कमलमाला तक्खणओलुग्गदुब्बलसरीरा लावन्नसुन्ननिच्छायगयसिरीया पसिढिलभूसणपडंतखुम्मियसंचुन्नियधवलवलयपब्भट्ठउत्तरिज्जा सूमालविकिन्नकेसहत्था मुच्छावसणट्ठचेयगरुई परसुनियत्त व्व चंपगलया निव्वत्तमहिम व्व इंदलट्ठी विमुक्कसंधिबंधणा कोट्टिमतलंसि सव्वंगेहिं धसत्ति पडिया।

तत्पश्चात् धारिणी देवी उस अनिष्ट (अनिच्छित) अप्रिय, अमनोज्ञ (अमनगम्य) और अमणाम (मन को न रुचने वाली) पहले कभी न सुनी हुई, कठोर वाणी को सुनकर और हृदय में धारण करके, इस प्रकार के मन ही मन में रहे हुए महान् पुत्र वियोग के दुःख से पीड़ित हुई। उसके रोमकूपों में पसीना आने से अंगों से पसीना झरने लगा। शोक की अधिकता से उसके अंग कांपने लगे। वह निस्तेज हो गई। दीन और विमनस्क हो गई। हथेली से मली हुई कमल की माला के समान हो गई। 'मैं प्रव्रज्या अंगीकार करना चाहता हूँ' यह शब्द सुनने के क्षण में ही वह दुखी और दुर्बल हो गई। वह-

लावण्यरहित हो गई, कान्तिहीन हो गई, श्रीविहीन हो गई, शरीर दुर्बल होने से उसके पहने हुए अलंकार अत्यन्त ढीले हो गये, हाथों में पहने हुए उत्तम वलय खिसक कर भूमि पर जा पड़े और चूर-चूर हो गये। उसका उत्तरीय वस्त्र खिसक गया। सुकुमार केशपाश बिखर गया। मूर्च्छा के वश होने से चित्त नष्ट होने के कारण शरीर भारी हो गया। परशु से काटी हुई चंपकलता के समान तथा महोत्सव सम्पन्न हो जाने के पश्चात् इन्द्रध्वज के समान (शोभाहीन) प्रतीत होने लगी। उसके शरीर के जोड़ ढीले पड़ गये। ऐसी वह धारिणी देवी सर्व अंगों से धस्-धड़ाम से पृथ्वीतल (फर्श) पर गिर पड़ी।

तए णं सा धारिणी देवी ससंभमोवत्तियाए तुरियं कंचणभिंगार-मुहविणिग्गयसीयलजलविमलधाराए परिसिंचमाणा निव्वावियगायलट्ठी उक्खेवणतालविंटवीयणगजणियवाएणं सफुसिएणं अंतेउरपरिजणेणं आसासिया समाणी मुत्तावलिसन्निगासपवडंतअंसुधाराहिं सिंचमाणी पओहरे कलुणविमणदीणा रोयमाणी कंदमाणी तिप्पमाणी सोयमाणी विलवमाणी मेहं कुमारं एवं वयासी।

तत्पश्चात् वह धारिणी देवी, संभ्रम के साथ शीघ्रता से, सुवर्णकलश के मुख से निकली हुई शीतल जल की निर्मल धारा से सिंचन की गई। अतएव उसका शरीर शीतल हो गया। उत्क्षेपक (एक प्रकार के बांस के पंखे) से, तालवृन्त (ताड़ के पत्ते के पंखे) से तथा वीजनक (जिसकी डंडी अंदर से पकड़ी जाय, ऐसे बांस के पंखे) से उत्पन्न हुए तथा जलकणों से युक्त वायु से अन्तःपुर के परिजनों द्वारा उसे आश्वासन दिया गया। तब धारिणी देवी मोतियों की लड़ी के समान अश्रुधारा से अपने स्तनों को सींचने-भिगोने लगीं। वह दयनीय, विमनस्क और दीन हो गई। वह रुदन करती हुई, क्रन्दन करती हुई, पसीना एवं लार टपकाती हुई हृदय में शोक करती हुई और विलाप करती हुई मेघकुमार से इस प्रकार कहने लगी।

तुमं सि णं जाया! अम्हं एगे पुत्ते इट्ठे कंते पिए मणुन्ने मणामे थेज्जे वेसासिए सम्मए बहुमए अणुमए भंडकरंडगसमाणे रयणे रयणभूए जीवियउस्सासए, हिययाणंदजणणे उंबरपुप्फं व दुल्लभे सवणयाए किमंग पुण पासणयाए? णो खलु जाया! अम्हे इच्छामो खणमवि विप्पओगं सहित्तए। तं भुंजाहि ताव जाया! विपुले माणुस्सए कामभोगे जाव ताव वयं जीवामो। तओ पच्छा अम्हेहिं

परिणयवए वड्ढियकुलवंसतंतुकज्जम्मि निरावयक्खे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइस्ससि।

हे पुत्र! तू हमारा इकलौता बेटा है। तू हमें इष्ट है, कान्त है, प्रिय है, मनोज्ञ है, मणाम है तथा धैर्य और विश्राम का स्थान है। कार्य करने में सम्मत (माना हुआ) है, बहुत कार्यों में बहुत माना हुआ है और कार्य करने के पश्चात् भी अनुमत है। आभूषणों की पेटी के समान है। मनुष्य जाति में उत्तम होने के कारण रत्न है। रत्न रूप है। जीवन के उच्छ्वास के समान है। हमारे हृदय में आनन्द उत्पन्न करने वाला है। गूलर के फूल के समान तेरा नाम श्रवण करना भी दुर्लभ है तो फिर दर्शन की तो बात ही क्या है। हे पुत्र! हम क्षण भर के लिए भी तेरा वियोग नहीं सहन करना चाहते। अतएव हे पुत्र! प्रथम तो जब तक हम जीवित हैं, तब तक मनुष्य सम्बन्धी विपुल काम-भोगों को भोग। फिर जब हम कालगत हो जाएँ और तू परिपक्व उम्र का हो जाय—तेरी युवावस्था पूर्ण हो जाय, कुल-वंश (पुत्र-पौत्र आदि) रूप तंतु का कार्य वृद्धि को प्राप्त हो जाय, जब सांसारिक कार्य की अपेक्षा न रहे, उस समय तू श्रमण भगवान् महावीर के पास मुण्डित होकर, गृहस्थी का त्याग करके प्रव्रज्या अंगीकार कर लेना।

तए णं से मेहे कुमारे अम्मापिऊहिं एवं वुत्ते समाणे अम्मापियरो एवं वयासी—'तहेव णं तं अम्मयाओ! जहेव णं तुम्हे ममं एवं वदह-तुमं सि णं जाया! अम्हं एगे पुत्ते, तं चेव जाव निरावयक्खे समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव पव्वइस्ससि—एवं खलु अम्मयाओ माणुस्सए भवे अधुवे अणियए असासए वसणसउवद्दवाभिभूते विज्जुलया-चंचले अणिच्चे जलबुब्बुयसमाणे कुसग्गजलबिन्दुसन्निभे संझब्भराग-सरिसे सुविणदंसणोवमे सडणपडणविद्धंसणधम्मे पच्छा पुरं च णं अवस्स विप्पजहणिज्जे से के णं जाणइ अम्मयाओ! के पुव्विं गमणाए? के पच्छा गमणाए? तं इच्छामि णं अम्मयाओ! तुब्भेहिं अब्भणुन्नाए समाणे समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव पव्वइत्तए।

तत्पश्चात् माता-पिता के द्वारा इस प्रकार कहने पर मेघकुमार ने माता-पिता से इस प्रकार कहा—'हे माता-पिता! आप मुझ से यह जो कहते हैं कि हे पुत्र! तुम हमारे इकलौते पुत्र हो, इत्यादि सब पूर्ववत् कहना चाहिए, यावत् सांसारिक कार्य से निरपेक्ष होकर श्रमण भगवान महावीर के समीप प्रव्रजित

होना—सो ठीक है, परन्तु हे माता-पिता ! यह मनुष्यभव ध्रुव नहीं है अर्थात् सूर्योदय के समान नियमित समय पर पुनः पुनः प्राप्त होने वाला नहीं है, नियत नहीं है अर्थात् इस जीवन में उलट-फेर होते रहते हैं, अशाश्वत है अर्थात् क्षण-विनश्वर है, सैकड़ों व्यसनों एवं उपद्रवों से व्याप्त है, बिजली की चमक के समान चंचल है, अनित्य है, जल के बुलबुले के समान है, दूब की नौंक पर लटकने वाले जल बिन्दु के समान है, सन्ध्यासमय के बादलों के सदृश है, स्वप्न दर्शन के समान है—अभी है और अभी नहीं है, कुष्ठ आदि से सड़ने, तलवार आदि से कटने और क्षीण होने के स्वभाव वाला है तथा आगे या पीछे अवश्य ही त्याग करने योग्य है, हे माता-पिता ! कौन जानता है कि कौन पहले जाएगा (मरेगा) और कौन पीछे जाएगा ? अतएव हे माता-पिता ! मैं आपकी आज्ञा प्राप्त करके श्रमण भगवान् महावीर के निकट यावत् प्रव्रज्या अंगीकार करना चाहता हूँ।'

तए णं तं मेहं कुमारं अम्मापियरो एवं वयासी—'इमाओ ते जाया ! सरिसियाओ सरिसत्तयाओ सरिसव्वयाओ सरिसलावन्नरूव-जोव्वणगुणोववेयाओ सरिसेहिन्तो रायकुलेहिन्तो आणियल्लियाओ भारियाओ, तं भुंजाहि णं जाया ! एताहिं सद्धिं विपुले माणुस्सए कामभोगे, तओ पच्छा भुत्तभोगे समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव पव्वइस्ससि।'

तत्पश्चात् माता-पिता ने मेघकुमार से इस प्रकार कहा—हे पुत्र ! यह तुम्हारी भार्याएँ समान शरीर वाली, समान त्वचा वाली, समान वय वाली, समान लावण्य, रूप, यौवन और गुणों से युक्त तथा समान राजकुलों से लाई हुई हैं। अतएव हे पुत्र ! इनके साथ विपुल मनुष्य सबंधी कामभोगों को भोगो। तदनन्तर भुक्त-भोगी होकर श्रमण भगवान् महावीर के समीप यावत् दीक्षा ले लेना ।

तए णं से मेहे कुमारे अम्मापियरं एवं वयासी—'तहेव णं अम्म-याओ ! जं णं तुब्भे ममं एवं वयह—'इमाओ ते जाया ! सरिसियाओ जाव समणस्स भगवओ महावीरस्स पव्वइस्ससि'—एवं खलु अम्मयाओ ! माणुस्सगा कामभोगा असुई असासया वंतासवा पित्तासवा खेलासवा सुक्कासवा सोणियासवा दुरुस्सासनीसासा दुरूयमुत्तपुरीसपूय-बहुपडिपुन्ना उच्चारपासवणखेलजल्लसिंघाणगवंतपित्तसुक्कसोणित-भव

अनुकूल आख्यापना (सामान्य रूप से प्रतिपादन करने वाली वाणी) से, प्रज्ञापना (विशेष रूप से प्रतिपादन करने वाली वाणी) से, संज्ञापना (संबोधन करने वाली वाणी) से, विज्ञापना (अनुनय-विनय करने वाली वाणी) से समझाने बुझाने, संबोधन करने और अनुनय करने में समर्थ न हुए, तब विषयों के प्रतिकूल तथा संयम के प्रति भय और उद्वेग उत्पन्न करने वाली प्रज्ञापना से इस प्रकार कहने लगे।

एस णं जाया! निग्गंथे पावयणे सच्चे अणुत्तरे केवलिए पडिपुन्ने णेयाउए संसुद्धे सल्लगत्तणे सिद्धिमग्गे मुत्तिमग्गे निजाणमग्गे निव्वाणमग्गे सव्वदुक्खप्पहीणमग्गे, अहीव एगंतदिट्ठीए, खुरो इव एगंतधाराए, लोहमया इव जवा चावेयव्वा, वालुयाकवले इव निरस्साए, गंगा इव महानदी पडिसोयगमणाए, महासमुद्दो इव भुयाहिं दुत्तरे, तिक्खं चंकमियव्वं, गरुअं लंबेयव्वं, असिधारं व्व संचरियव्वं

णो य खलु कप्पइ जाया! समणाणं निग्गंथाणं आहाकम्मिए वा, उद्देसिए वा, कीयगडे वा, ठवियए वा, रइयए वा, दुब्भिक्खभत्ते वा, कंतारभत्ते वा, वद्दलियाभत्ते वा, गिलाणभत्ते वा, मूलभोयणे वा, कंदभोयणे वा, फलभोयणे वा, बीयभोयणे वा, हरियभोयणे वा भोत्तए वा पायए वा। तुमं च णं जाया! सुहसमुचिए णो चेव णं दुहसमुचिए। णालं सीयं, णालं उण्हं, णालं खुहं, णालं पिवासं, णालं वाइयपित्तियसिंभियसन्निवाइयविविहे रोगायंके उच्चावए गामकंटए बावीसं परीसहोवसग्गे उदिन्ने सम्मं अहियासित्तए। भुंजाहि ताव जाया! माणुस्सए कामभोगे, तओ पच्छा भुत्तभोगी समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव पव्वइस्ससि।

हे पुत्र! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन सत्य (सत्पुरुषों के लिए हितकारी) है, अनुत्तर (सर्वोत्तम) है, कैवलिक सर्वज्ञकथित अथवा अद्वितीय है, प्रतिपूर्ण अर्थात् मोक्ष प्राप्त कराने वाले गुणों से परिपूर्ण है, नैयायिक अर्थात् न्याययुक्त या मोक्ष की ओर ले जाने वाला है, संशुद्ध अर्थात् सर्वथा निर्दोष है, शल्यकर्तन अर्थात् माया आदि शल्यों का नाश करने वाला है, सिद्धि का मार्ग है, मुक्ति (... के नाश का उपाय) है, निर्याण का (सिद्धि क्षेत्र का) मार्ग है,

निर्वाण का मार्ग है और समस्त दुःखों को पूर्ण रूपेण नष्ट करने का मार्ग है। जैसे सर्प अपने भक्ष्य को ग्रहण करने में निश्चल दृष्टि रखता है, उसी प्रकार इस प्रवचन में दृष्टि निश्चल रखनी पड़ती है। यह छुरे के समान एक धार वाला है, अर्थात् इसमें दूसरी धार के समान अपवाद रूप क्रियाओं का अभाव है। इस प्रवचन के अनुसार चलना लोहे के जौ चबाना है। यह रेत के कवल के समान स्वादहीन है-विषयसुख से रहित है। इसका पालन करना गंगा नामक महानदी के सामने पूर में तिरने के समान कठिन है, भुजाओं से महासमुद्र को पार करना है, तीखी तलवार पर आक्रमण करने के समान है। महाशिला जैसी भारी वस्तुओं को गले में बांधने के समान है। तलवार की धार पर चलने के समान है।

हे पुत्र! निर्ग्रन्थ श्रमणों को आधाकर्मी, औद्देशिक, क्रीतकृत (खरीद कर बनाया हुआ), स्थापित (साधु के लिए रख छोड़ा हुआ), रचित (मोदक आदि के चूर्ण को पुनः साधु के लिए मोदक रूप में तैयार किया हुआ), दुर्भिक्ष-भक्त (साधु के लिए दुर्भिक्ष के समय बनाया हुआ भोजन), कान्तारभक्त (साधु के निमित्त अरण्य में बनाया आहार), वर्दलिकाभक्त (वर्षा के समय उपाश्रय में आकर बनाया भोजन), ग्लानभक्त (रुग्ण गृहस्थ नीरोग होने की कामना से दे वह भोजन), आदि दूषित आहार ग्रहण करना नहीं कल्पता है।

इसी प्रकार मूल का भोजन, कंद का भोजन, फल का भोजन, शालि आदि बीजों का भोजन अथवा हरित का भोजन करना भी नहीं कल्पता है।

इसके अतिरिक्त हे पुत्र! तू सुख भोगने योग्य है, दुःख सहने योग्य नहीं है। तू शीत सहने में समर्थ नहीं है, उष्ण सहने में समर्थ नहीं है, भूख नहीं सह सकता, प्यास नहीं सह सकता, वात पित्त कफ और सन्निपात से होने वाले विविध रोगों (कोढ़ आदि को) तथा आतंकों (अचानक मरण उत्पन्न करने वाले शूल आदि) को, ऊँचे-नीचे इन्द्रिय-प्रतिकूल वचनों को, उत्पन्न हुए बाईस परीषहों और उपसर्गों को सम्यक् प्रकार सहन नहीं कर सकता। अतएव हे लाल! तू मनुष्य संबंधी कामभोगों को भोग। बाद में भुक्तभोगी होकर श्रमण भगवान् महावीर के निकट प्रव्रज्या अंगीकार करना।

तए णं से मेहे कुमारे अम्मापिऊहिं एवं वुत्ते समाणे अम्मापियरं एवं वयासी—'तहेव णं तं अम्मयाओ! जं णं तुब्भे ममं एवं वयह—'एस णं जाया! निग्गंथे पावयणे सच्चे अणुत्तरे० पुणरवि तं चेव जाव तओ पच्छा भुत्तभोगी समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव

समि ।' एवं खलु अम्मयाओ ! निग्गंथे पावयणे कीवाणं कायराणं, कापुरिसाणं इहलोगपडिबद्धाणं परलोगनिप्पिवासाणं दुरणुचरे पागयजणस्स, णो चेव णं धीरस्स निच्छियववसियस्स एत्थ किं दुक्करं करणयाए ? तं इच्छामि णं अम्मयाओ ! तुब्भेहिं अब्भणुन्नाए समाणे, समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव पव्वइत्तए ।

तत्पश्चात् माता-पिता के इस प्रकार कहने पर मेघ कुमार ने माता-पिता से इस प्रकार कहा-हे माता-पिता ! आप मुझे यह जो कहते हैं सो ठीक है कि-'हे पुत्र ! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन सत्य है, सर्वोत्तम है, आदि पूर्वोक्त कथन यहाँ दोहरा लेना चाहिए; यावत् बाद में भुक्तभोगी होकर प्रव्रज्या अंगीकार कर लेना ।' परन्तु हे माता-पिता ! इस प्रकार यह निर्ग्रन्थ प्रवचन क्लीव-हीन संहनन वाले, कायर-चित्त की स्थिरता से रहित, कुत्सित, इस लोक संबंधी विषयसुख की अभिलाषा करने वाले, परलोक के सुख की इच्छा न करने वाले सामान्य जन के लिए ही दुष्कर है । धीर एवं दृढ़ संकल्प वाले पुरुष को इसका पालन करना कठिन नहीं है । इसका पालन करने में कठिनाई क्या है ! अतएव हे माता-पिता ! आपकी अनुमति पाकर मैं श्रमण भगवान् महावीर के समीप प्रव्रज्या ग्रहण करना चाहता हूं ।

तए णं तं मेहं कुमारं अम्मापियरो जाहे नो संचाइंति बहूहिं विसयाणुलोमाहि य विसयपडिकूलाहि य आघवणाहि य पन्नवणाहि य सन्नवणाहि य विन्नवणाहि य आघवित्तए वा, पन्नवित्तए वा, सन्नवित्तए वा विन्नवित्तए वा, ताहे अकामए चेव मेहं कुमारं एवं वयासी-'इच्छामो ताव जाया ! एगदिवसमवि ते रायसिरिं पासित्तए ।'

तत्पश्चात् जब माता-पिता मेघकुमार को विषयों के अनुकूल और विषयों के प्रतिकूल बहुत-सी आख्यापना, प्रज्ञापना, संज्ञापना और विज्ञापना से समझाने, बुझाने, संबोधन करने और विज्ञप्ति करने में समर्थ न हुए, तब इच्छा के बिना भी मेघ कुमार से इस प्रकार बोले-हे पुत्र ! हम एक दिन भी तुम्हारी राज्यलक्ष्मी देखना चाहते हैं, अर्थात् हमारी इच्छा है कि तुम एक दिन के लिए भी राजा बन जाओ ।

तए णं से मेहे कुमारे अम्मापियरमणुवत्तमाणे तुसिणीए संचिट्ठइ ।

तत्पश्चात् मेघकुमार माता-पिता (की इच्छा) का अनुसरण करता मौन रह गया ।

तए णं सेणिए राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी—खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! मेहस्स कुमारस्स महत्थं महग्घं महरिहं विउलं रायाभिसेयं उवट्ठवेह। तए णं ते कोडुंबियपुरिसा जाव ते वि तहेव उवट्ठवेन्ति।

तत्पश्चात् श्रेणिक राजा ने कौटुम्बिक पुरुषों (सेवकों) को बुलवाया और बुलवा कर कहा-'हे देवानुप्रियो ! मेघकुमार का महान् अर्थ वाले, बहुमूल्य एवं महान् पुरुषों के योग्य राज्याभिषेक (के योग्य सामग्री) तैयार करो।' तत्पश्चात् उन कौटुम्बिक पुरुषों ने यावत् उसी प्रकार सब सामग्री तैयार की।

तए णं सेणिए राया बहूहिं गणणायगदंडणायगेहि य जाव संपरिवुडे मेहं कुमारं, अट्ठसएणं सोवन्नियाणं कलसाणं, एवं रुप्पमयाणं कलसाणं सुवण्णरुप्पमयाणं कलसाणं मणिमयाणं कलसाणं, सुवन्नमणिमयाणं कलसाणं, रुप्पमणिमयाणं कलसाणं, सुवन्नरुप्पमणिमयाणं कलसाणं भोमेज्जाणं कलसाणं, सव्वोदएहिं सव्वमट्टियाहिं सव्वपुप्फेहिं सव्वगंधेहिं सव्वमल्लेहिं सव्वोसहिहि य, सिद्धत्थएहि य, सव्विड्ढीए सव्वजुईए सव्वबलेणं जाव दुंदुभिनिग्घोसणादियरवेणं महया महया रायाभिसेएणं अभिसिंचइ, अभिसिंचित्ता करयल जाव कट्टु एवं वायसी।

तत्पश्चात् श्रेणिक राजा ने बहुत-से गणनायकों एवं दंडनायकों आदि से परिवृत होकर मेघकुमार को, एक सौ आठ सुवर्ण-कलशों, इसी प्रकार एक सौ आठ चाँदी के कलशों, एक सौ आठ स्वर्ण-रजत के कलशों, एक सौ आठ मणिमय कलशों, एक सौ आठ स्वर्ण-मणि के कलशों. एक सौ आठ रजत-मणि के कलशों, एक सौ आठ स्वर्ण-रजत-मणि के कलशों और एक सौ आठ मिट्टी के कलशों-इस प्रकार आठ सौ चौंसठ कलशों में सब प्रकार का जल भर कर तथा सब प्रकार की मृत्तिका से, सब प्रकार के पुष्पों से, सब प्रकार के गंधों से, सब प्रकार की मालाओं से, सब प्रकार की औषधियों से तथा सरसों से उन्हें परिपूर्ण करके, सर्वसमृद्धि, द्युति तथा सर्व सैन्य के साथ, दुंदुभि के निर्घोष की प्रतिध्वनि के शब्दों के साथ उच्चकोटि के राज्याभिषेक से अभिषिक्त किया। अभिषेक करके श्रेणिक राजा ने दोनों हाथ जोड़ कर यावत् इस प्रकार कहा।

'जय जय णंदा ! जय जय भद्दा ! जय णंदा ! भद्दं ते,

जिणेहि, जियं पालयाहि, जियमज्झे वसाहि, अजियं जिणेहि सत्तु-पक्खं, जियं च पालेहि मित्तपक्खं, जाव भरहो इव मणुयाणं राय-गिहस्स नगरस्स अन्नेसिं च बहूणं गामागरनगर जाव संनिवेसाणं आहेवच्चं जाव विहराहि' त्ति कट्टु जयजयसद्दं पउंजंति ।

तए णं से मेहे राया जाए महया जाव विहरइ ।

हे नन्द ! तुम्हारी जय हो, जय हो । हे भद्र ! तुम्हारी जय हो, जय हो । हे जगन्नन्द (जगत् को आनन्द देने वाले) ! तुम्हारा भद्र (कल्याण) हो । तुम न जीते हुए को जीतो और जीते हुए का पालन करो । जित-आचारवान् के मध्य में निवास करो । नहीं जीते हुए शत्रुपक्ष को जीतो । जीते हुए मित्रपक्ष का पालन करो । यावत् मनुष्यों में भरत चक्री की भाँति राजगृह नगर का तथा दूसरे बहुतेरे ग्रामों, आकरों, नगरों यावत् सन्निवेशों का आधिपत्य करते हुए यावत् विचरण करो । इस प्रकार कह कर श्रेणिक राजा ने जय-जय शब्द किया ।

तत्पश्चात् वह मेघ राजा हो गया और पर्वतों में महाहिमवन्त की तरह शोभा पाता हुआ विचरने लगा ।

तए णं तस्स मेहस्स रण्णो अम्मापियरो एवं वयासी—'भण जाया ! किं दलयामो ? किं पयच्छामो ? किं वा ते हियइच्छिए सामत्थे (मंते) ?

तत्पश्चात् माता-पिता ने राजा मेघ से इस प्रकार कहा—'हे पुत्र ! बताओ, तुम्हारे किस अनिष्ट को दूर करें अथवा तुम्हारे इष्ट जनों को क्या दें ? तुम्हें क्या दें ? तुम्हारे चित्त में क्या चाह-विचार है ?

तए णं से मेहे राया अम्मापियरो एवं वयासी—'इच्छामि णं अम्मयाओ ! कुत्तियावणाओ रयहरणं पडिग्गहं च उवणेह, कासवयं च सद्दावेह ।'

तत्पश्चात् राजा मेघ ने माता-पिता से इस प्रकार कहा—'हे माता-पिता ! मैं चाहता हूँ कि कुत्रिकापण (जिसमें सब जगत् की सब वस्तुएँ मिलती हैं, उस दुकान) से रजोहरण और पात्र मँगवा दो और काश्यप-नापित को बुलवा दो ।

णं से सेणिए राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ । सद्दावित्ता एवं

वयासी—'गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया ! सिरिघराओ तिन्नि सय-सहस्साइं गहाय दोहिं सयसहस्सेहिं कुत्तियावणाओ रयहरणं पडिग्गहगं च उवणेह, सयसहस्सेणं कासवयं सद्दावेह।'

तए णं ते कोडुंबियपुरिसा सेणिएणं रण्णा एवं वुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठा सिरिघराओ तिन्नि सयसहस्साइं गहाय कुत्तियावणाओ दोहिं सयसहस्सेहिं रयहरणं पडिग्गहं च उवणेन्ति, सयसहस्सेणं कासवयं सद्दावेन्ति।

तत्पश्चात् श्रेणिक राजा ने अपने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया। बुला कर इस प्रकार कहा-हे देवानुप्रियो ! तुम जाओ, श्रीगृह (खजाने) से तीन लाख स्वर्णमोहरें लेकर दो लाख से, कुत्रिकापण से रजोहरण और पात्र ले आओ तथा एक लाख देकर नाई को बुला लाओ।

तत्पश्चात् वे कौटुम्बिक पुरुष, राजा श्रेणिक के ऐसा कहने पर हृष्ट-तुष्ट होकर श्रीगृह से तीन लाख मोहरें लेकर कुत्रिकापण से, दो लाख से रजोहरण और पात्र लाये और एक लाख मोहरों से उन्होंने नाई को बुलाया।

तए णं से कासवए तेहिं कोडुंबियपुरिसेहिं सद्दाविए समाणे हट्ठे जाव हयहियए ण्हाए कयबलिकम्मे कयकोउयमंगलपायच्छित्ते सुद्ध-प्पावेसाइं वत्थाइं मंगलाइं पवरपरिहिए अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरे जेणेव सेणिए राया तेणामेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता सेणियं रायं करयलमंजलिं कट्टु एवं वयासी—'संदिसह णं देवाणुप्पिया ! जं मए करणिज्जं।'

तए णं से सेणिए राया कासवयं एवं वयासी—'गच्छाहि णं तुमं देवाणुप्पिया ! सुरभिणा गंधोदएणं णिक्के हत्थपाए पक्खालेह। सेयाए चउप्फलाए पोत्तीए मुहं बंधेत्ता मेहस्स कुमारस्स चउरंगुल-वज्जे णिक्खमणपाउग्गे अग्गकेसे कप्पेहि।'

तत्पश्चात् कौटुम्बिक पुरुषों द्वारा बुलाया गया वह नाई हृष्ट तुष्ट यावत् आनन्दित हृदय हुआ। उसने स्नान किया, बलिकर्म (गृहदेवता का पूजन) किया, मषी-तिलक आदि कौतुक, दही दूर्वा आदि मंगल एवं दुःस्वप्न का निवा-

रण रूप प्रायश्चित किया। साफ और राजसभा में प्रवेश करने योग्य मांगलिक और श्रेष्ठ वस्त्र धारण किये। थोड़े और बहुमूल्य आभूषणों से शरीर को विभूषित किया। फिर जहाँ श्रेणिक राजा था वहाँ आया। आकर, दोनों हाथ जोड़ कर श्रेणिक राजा से इस प्रकार कहा—'हे देवानुप्रिय! मुझे जो करना है उसकी आज्ञा दीजिए।'

तब श्रेणिक राजा ने नाई से इस प्रकार कहा—देवानुप्रिय! तुम जाओ और सुगंधित गंधोदक से अच्छी तरह हाथ-पैर धो लो। फिर चार तह वाले श्वेत वस्त्र से मुँह बाँध कर मेघकुमार के बाल दीक्षा के योग्य चार अंगुल छोड़ कर काट दो।

तए णं से कासवए सेणिएणं रण्णा एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठ जाव हियए जाव पडिसुणेइ, पडिसुणेत्ता सुरभिणा गंधोदएणं हत्थपाए पक्खालेइ, पक्खालित्ता सुद्धवत्थेणं मुहं बंधति, बंधित्ता परेणं जत्तेणं मेहस्स कुमारस्स चउरंगुलवज्जे णिक्खमणपाउग्गे अग्गकेसे कप्पइ।

तत्पश्चात् वह नापित श्रेणिक राजा के ऐसा कहने पर हृष्ट तुष्ट और आनन्दितहृदय हुआ। उसने यावत् श्रेणिक राजा का आदेश स्वीकार किया। स्वीकार करके सुगंधित गंधोदक से हाथ-पैर धोए। हाथ-पैर धोकर शुद्ध वस्त्र से मुँह बाँधा। बाँध कर बड़ी सावधानी से मेघकुमार के चार अंगुल छोड़ कर दीक्षा के योग्य केश काटे।

तए णं तस्स मेहस्स कुमारस्स माया महरिहेणं हंसलक्खणेणं पडसाडएणं अग्गकेसे पडिच्छइ। पडिच्छित्ता सुरभिणा गंधोदएणं पक्खालेति, पक्खालित्ता सरसेणं गोसीसचंदणेणं चच्चाओ दलयति, दलइत्ता सेयाए पोत्तीए बंधेइ, बंधित्ता रयणसमुग्गयंसि पक्खिवइ, पक्खिवित्ता मंजूसाए पक्खिवइ, पक्खिवित्ता हारवारिधारसिंदुवारछिन्नमुत्तावलिप्पगासाइं अंसूइं विणिम्मुयमाणी विणिम्मुयमाणी रोयमाणी रोयमाणी कंदमाणी कंदमाणी विलवमाणी विलवमाणी एवं वयासी—'एस णं अम्हं मेहस्स कुमारस्स अब्भुदएसु य उस्सवेसु य पसवेसु य तिहीसु य छणेसु य जन्नेसु य पव्वणीसु य अपच्छिमे दरिसणे भविस्सइ त्ति कट्टु उस्सीसामूले ठवेइ।

तत्पश्चात् मेघकुमार की माता ने उन केशों को बहुमूल्य और हंस के चित्र वाले उज्ज्वल वस्त्र में ग्रहण किया ग्रहण करके उन्हें सुगंधित गंधोदक से धोया। धो कर सरस गोशीर्ष चन्दन उन पर छिड़का। छिड़क कर उन्हें श्वेत वस्त्र में बाँधा। बाँध कर रत्न की डिबिया में रक्खा। रख कर उस डिबिया को मंजूषा (पेटी) में रक्खा। फिर जल की धार, निर्गुंडी के फूल एवं टूटे हुए मोतियों के हार के समान अश्रु त्याग करती-करती रोती-रोती आक्रन्दन करती-करती और विलाप करती-करती इस प्रकार कहने लगी-'मेघकुमार के केशों का यह दर्शन राज्यप्राप्ति आदि अभ्युदय के अवसर पर, उत्सव (प्रियसमागम) अवसर पर, प्रसव (पुत्रजन्म आदि) के अवसर पर, तिथियों के अवसर पर, इन्द्रमहोत्सव आदि के अवसर पर, नागपूजा आदि के अवसर पर तथा कार्तिकी पूर्णिमा आदि पर्वों के अवसर पर हमें अन्तिम दर्शन रूप होगा। तात्पर्य यह है कि इन केशों का दर्शन, केशरहित मेघकुमार का अन्तिम दर्शन रूप होगा। इस प्रकार कह कर माता धारिणी ने वह पेटी अपने सिरहाने के नीचे रख ली।

तए णं तस्स मेहस्स कुमारस्स अम्मापियरो उत्तरावक्कमणं सीहासणं रयावेन्ति। मेहं कुमारं दोच्चं पि तच्चं पि सेयपीयएहिं कलसेहिं एहावेन्ति, एहावेत्ता पम्हलसुकुमालाए गंधकासाइयाए गायाइं लूहेन्ति, लूहित्ता सरसेणं गोसीसचंदणेणं गायाइं अणुलिंपंति, अणुलिंपित्ता नासानीसासवायवोज्झं जाव हंसलक्खणं पडगसाडगं नियंसेन्ति, नियंसित्ता हारं पिणद्धंति, पिणद्धित्ता अद्धहारं पिणद्धंति, पिणद्धित्ता एगावलिं मुत्तावलिं कणगावलिं रयणावलिं पालंबं पायपलंबं कडगाइं तुडिगाइं केऊराइं अंगयाइं दसमुद्दियाणंतयं कडिसुत्तयं कुंडलाइं चूडामणिं रयणुक्कडं मउडं पिणद्धंति, पिणद्धित्ता दिव्वं सुमणदामं पिणद्धंति, पिणद्धित्ता दद्दरमलयसुगंधिए गंधे पिणद्धंति।

तत्पश्चात् मेघकुमार के माता-पिता ने उत्तराभिमुख सिंहासन रखवाया। फिर मेघकुमार को दो तीन बार श्वेत और पीत अर्थात् चाँदी और सोने के कलशों से नहलाया। नहला कर रुएँदार और अत्यन्त कोमल गंधकाषाय (सुगंधित कषायले रंग से रंगे) वस्त्र से उसके अंग पोंछे। पोंछ कर सरस गोशीर्ष चन्दन से शरीर पर विलेपन किया। विलेपन करके नासिका के निःश्वास की वायु से भी उड़ने योग्य-अति बारीक तथा हंस-लक्षण वाला (हंस के चिह्न वाला अथवा हंस के सदृश श्वेत) वस्त्र पहनाया। पहना कर अठारह

का हार पहनाया, नौ लड़ों का अर्द्धहार पहनाया, फिर एकावली, मुक्तावली, कनकावली, रत्नावली, प्रालंब (कंठी) पादप्रलंब (पैरों तक लटकने वाला आभूषण), कड़े, त्रुटिक (भुजा का आभूषण), केयूर, अंगद, दसों उंगलियों में दस मुद्रिकाएँ, कंदोरा, कुंडल, चूड़ामणि तथा रत्नजटित मुकुट पहनाये। यह सब अलंकार पहना कर पुष्पमाला पहनाई। फिर दर्दर में पकाये हुए चंदन के सुगंधित तेल की गंध शरीर पर लगाई।*

तए णं तं मेहं कुमारं गंठिमवेढिमपूरिमसंघाइमेणं चउव्विहेणं मल्लेणं कप्परुक्खगं पिव अलंकियविभूसियं करेंति।

तत्पश्चात् मेघकुमार को सूत से गूंथी हुई, पुष्प आदि से वेढ़ी हुई, बांस की सलाई आदि से पूरित की गई तथा वस्त्र के योग से परस्पर संघात रूप की हुई-इस तरह पाँच प्रकार की पुष्पमालाओं से कल्पवृक्ष के समान अलंकृत और विभूषित किया।

तए णं से सेणिए राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी—'खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! अणेगखंभसयसन्निविट्ठं लीलट्ठियसालभंजियागं ईहामिग-उसभ-तुरय-नर-मगर-विहग-वालग-किन्नर-रुरु-सरभ-चमर-कुंजर-वणलय-पउमलय-भत्तिचित्तं घंटावलि-महुरमणहरसरं सुभकंतदरिसणिज्जं निउणोवियमिसिमिसिंतमणिरयण-घंटियाजालपरिक्खित्तं खंभुग्गयवइरवेइयापरिगयाभिरामं विज्जाहरजमल-जंतजुत्तं पिव अच्चीसहस्समालणीयं, रूवगसहस्सकलियं भिसमाणं भिब्भिसमाणं चक्खुलोयणलेस्सं सुहफासं सस्सिरीयरूवं सिग्घं तुरियं चवलं वेइयं पुरिससहस्सवाहिणिं सीयं उवट्ठवेह।'

तत्पश्चात् श्रेणिक राजा ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया और बुलाकर कहा—हे देवानुप्रियो ! तुम शीघ्र ही एक शिबिका तैयार करो जो अनेक सैकड़ों स्तंभों से बनी हो, जिसमें क्रीड़ा करती हुई पुतलियाँ बनी हों, जो ईहामृग (भेड़िया), वृषभ, तुरग, नर, मगर, विहग, सर्प, किन्नर, रुरु (काले मृग), सरभ (अष्टापद), चमरी गाय, कुञ्जर, वनलता और पद्मलता आदि के चित्रों की रचना से युक्त हो, जिससे घंटा के समूह के मधुर और मनोहर शब्द हो

---

*मिट्टी के घड़े का मुँह कपड़े से बाँध कर अग्नि की आँच से तपा कर तैयार किया गया तेल।

रहे हो, जो शुभ, मनोहर और दर्शनीय हो, जो कुशल कारीगरों द्वारा निर्मित देदीप्यमान मणियों और रत्नों की घुघुरुओं के समूह से व्याप्त हो, स्तंभ पर बनी हुई वेदिका से युक्त होने के कारण जो मनोहर दिखाई देती हो, जो चित्रित विद्याधर-युगलों से युक्त हो, चित्रित सूर्य की हजार किरणों से शोभित हो, इस प्रकार हजारों रूपों वाली, देदीप्यमान, अतिशय देदीप्यमान, जिसे देखते नेत्रों को तृप्ति न हो, जो सुखद स्पर्श वाली हो, सश्रीक स्वरूप वाली हो, शीघ्र त्वरित चपल और अतिशय चपल हो, अर्थात् जिसे शीघ्रतापूर्वक ले जाया जाय और जो एक हजार पुरुषों द्वारा वहन की जाती हो।

तए णं ते कोडुंबियपुरिसा हट्ठतुट्ठा जाव उवट्ठवेन्ति। तए णं से मेहे कुमारे सीयं दुरूहइ, दुरूहित्ता सीहासणवरगए पुरत्थाभिमुहे सन्निसन्ने।

तत्पश्चात् वे कौटुम्बिक पुरुष हृष्ट-तुष्ट होकर यावत् शिविका (पालकी) उपस्थित करते हैं। तत्पश्चात् मेघकुमार शिविका पर आरूढ़ हुआ और सिंहासन के पास पहुँच कर पूर्वदिशा की ओर मुख करके बैठ गया।

तए णं तस्स मेहस्स कुमारस्स माया ण्हाया कयबलिकम्मा जाव अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरा सीयं दुरूहति। दुरूहित्ता मेहस्स कुमारस्स दाहिणे पासे भद्दासणंसि निसीयति।

तए णं तस्स मेहस्स कुमारस्स अंबधाई रयहरणं च पडिग्गहं च गहाय सीयं दुरुहइ, दुरूहित्ता मेहस्स कुमारस्स वामे पासे भद्दासणंसि निसीयति।

तत्पश्चात जो स्नान कर चुकी है, बलिकर्म कर चुकी है यावत् अल्प और बहुमूल्य आभरणों से शरीर को अलंकृत कर चुकी है, ऐसी मेघकुमार की माता उस शिविका पर आरूढ़ हुई। आरूढ़ होकर मेघकुमार के दाहिने पार्श्व में, भद्रासन पर बैठ गई।

तत्पश्चात् मेघकुमार की धायमाता रजोहरण और पात्र लेकर शिविका पर आरूढ़ होकर मेघकुमार के बायें पार्श्व में भद्रासन पर बैठ गई।

तए णं तस्स मेहस्स कुमारस्स पिट्ठओ एगा वरतरुणी सिंगारागारचारुवेसा संगय-गय-हसिय-भणिय-चेट्ठिय-विलास-संलावुल्लाव-

निउणजुत्तोवयारकुसला, आमेलग-जमल-जुयल-वट्टिय-अब्भुन्नय-पी
रइय-सठियपओहरा, हिम-रयय-कुन्देन्दुपगासं सकोरंटमल्लदामधवल
आयवत्तं गहाय सलीलं ओहारेमाणी चिट्ठइ।

तत्पश्चात् मेघकुमार के पीछे शृङ्गार के आगार रूप, मनोहर वेष व
सुन्दर गति हास्य वचन चेष्टा विलास संलाप (पारस्परिक वार्त्तालाप) उल्ला
(वर्णन) करने में कुशल, योग्य उपचार करने में कुशल, परस्पर मिले हु
समश्रेणी में स्थित गोल ऊँचे पुष्ट प्रीतिजनक और उत्तम आकार के स्तन वाली
एक उत्तम तरुणा, हिम (बर्फ) चाँदी कुन्दपुष्प और चन्द्रमा के समान प्रकाश
वाले, कारंट के पुष्पों की माला से युक्त धवल छत्र को धारण करती हुई लीला-
पूर्वक खड़ी हुई थी।

तए णं तस्स मेहस्स कुमारस्स दुवे वरतरुणीओ सिंगारागारचारु-
वेसाओ जाव कुसलाओ सीयं दुरूहंति, दुरूहित्ता मेहस्स कुमारस्स
उभओ पासं नाणामणिकणगरयणमहरिहतवणिज्जुज्जलविचित्तदंडाओ
चिल्लियाओ सुहुमवरदीहवालाओ संख-कुंद-दग-रयअ-महियफेणपुंज-
सन्निगासाओ चामराओ गहाय सलीलं ओहारेमाणीओ ओहारे-
माणीओ चिट्ठंति।

तत्पश्चात् मेघकुमार के समीप शृङ्गार के आगार के समान, सुन्दर वे
वाली, यावत् उचित उपचार करने में कुशल दो श्रेष्ठ तरुणियाँ शिविका पर
आरूढ़ हुई। आरूढ़ होकर मेघकुमार के दोनों पार्श्वों में, विविध प्रकार के मणि
सुवर्ण रत्न और महान् जनों के योग्य अथवा बहुमूल्य तपनीयमय (रक्त वर्ण
सुवर्ण, वाले) उज्ज्वल एवं विचित्र दंडी वाले, चमचमाते हुए, पतले उत्तम
और लम्बे बालों वाले, शंख कुन्दपुष्प जलकण रजत एवं मथन किये
अमृत के फेन के समूह सरीखे (श्वेत वर्ण वाले) दो चामर धारण
लीलापूर्वक वीजनी-वीजनी हुई खड़ी हुई।

तए णं तस्स मेह कुमारस्स एगा वरतरुणी सिंगारा० जाव कुसल
सीयं जाव दूरूहइ। दूरूहित्ता मेहस्स कुमारस्स पुरतो पुरत्थिमेण
...-वइर-वेरुलिय विमलदंडं तालविंटं गहाय चिट्ठइ।

तत्पश्चात् मेघकुमार के समीप शृंगार के आगार रूप यावत् उचि
...ने में कुशल एक उत्तम तरुणी यावत् शिविका पर आरूढ़ हुई।

होकर मेघकुमार के पास पूर्व दिशा के सन्मुख चन्द्रकान्त मणि वज्ररत्न और वैडूर्यमय निर्मल दंडी वाले पंखे को ग्रहण करके खड़ी हुई।

तए णं तस्स मेहस्स कुमारस्स एगा वरतरुणी जाव सुरूवा सीयं दुरूहइ, दुरुहित्ता मेहस्स कुमारस्स पुव्वदक्खिणेणं सेयं रययामयं विमल-सलिलपुन्नं मत्तगयमहामुहाकिइसमाणं भिंगारं गहाय चिट्ठइ।

तत्पश्चात् मेघकुमार के समीप एक उत्तम तरुणी यावत् सुन्दर रूप वाली शिबिका पर आरूढ़ हुई। आरूढ़ होकर मेघकुमार से पूर्वदक्षिण-आग्नेय-दिशा में श्वेत रजतमय निर्मल जल से परिपूर्ण, मदमाते हाथी के बड़े मुख के समान आकृति वाले भृंगार (झारी) को ग्रहण करके खड़ी हुई।

तए णं तस्स मेहस्स कुमारस्स पिया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दा-वित्ता एवं वयासी—'खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! सरिसयाणं सरिस-त्तयाणं सरिसव्वयाणं एगाभरणगहियनिज्जोयाणं कोडुंबियवरतरुणाणं सहस्सं सद्दावेह।' जाव सद्दावेन्ति।

तए णं कोडुंबियवरतरुणपुरिसा सेणियस्स रन्नो कोडुंबियपुरिसेहिं सद्दाविया समाणा हट्ठा ण्हाया जाव एगाभरणगहियनिज्जोया जेणामेव सेणिए राया तेणामेव उवागच्छंति। उवागच्छित्ता सेणियं रायं एवं वयासी—'संदिसह णं देवाणुप्पिया! जं णं अम्हेहिं करणिज्जं।

तत्पश्चात् मेघकुमार के पिता ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया। बुला कर इस प्रकार कहा—'देवानुप्रियो! शीघ्र ही एक सरीखे, एक सरीखी त्वचा (कान्ति) वाले, एक सरीखी उम्र वाले तथा एक सरीखे आभूषणों से समान वेष धारण करने वाले एक हजार उत्तम तरुण कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाओ।' यावत् उन्होंने एक हजार पुरुषों को बुलाया।

तत्पश्चात् श्रेणिक राजा के कौटुम्बिक पुरुषों ने श्रेष्ठ तरुण सेवक पुरुषों को बुलाया। वे हृष्ट-तुष्ट हुए। उन्होंने स्नान किया, यावत् एक-से आभूषण पहन कर समान पोशाक पहनी। फिर जहाँ श्रेणिक राजा था, वहाँ आये। आकर श्रेणिक राजा से इस प्रकार बोले—हे देवानुप्रिय! हमें जो करने योग्य है, उसके लिए आज्ञा दीजिए।

तए णं से सेणिए तं कोडुंबियवरतरुणसहस्सं एवं वयासी—'गच्छह

भविता आगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए। अम्हे णं देवाणुप्पि
सिस्सभिक्खं दलयामो। पडिच्छंतु णं देवाणुप्पिया! सिस्सभिक्खं

तत्पश्चात् मेघकुमार के माता-पिता मेघकुमार को आगे करके श्र
श्रमण भगवान महावीर थे, वहाँ आते हैं। आकर श्रमण भगवान महावीर की
तीन बार दक्षिण तरफ से आरंभ करके प्रदक्षिणा करते हैं। करके वन्दन
है, नमस्कार करते हैं। वन्दना-नमस्कार करके इस प्रकार कहते हैं—

'हे देवानुप्रिय! यह मेघकुमार हमारा इकलौता* पुत्र है। यह हमें
है, कान्त है, प्राण के समान और उच्छ्वास के समान है। हृदय को आनन्द
प्रदान करने वाला है। गूलर के पुष्प के समान इसका नाम श्रवण करना भी
दुर्लभ है तो दर्शन की बात ही क्या है? जैसे उत्पल (नील कमल), पद्म (सूर्य
विकासी कमल) अथवा कुमुद (चन्द्रविकासी कमल) कीच में उत्
और जल में वृद्धि पाता है, फिर भी पंक की रज से अथवा जल के
से लिप्त नहीं होता, इसी प्रकार मेघकुमार कामों में उत्पन्न हुआ और
वृद्धि पाया है, फिर भी काम-रज से लिप्त नहीं हुआ, भोगरज से
हुआ। हे देवानुप्रिय! यह मेघकुमार संसार के भय से उद्विग्न हुआ
जन्म जरा मरण से भयभीत हुआ है। अतः देवानुप्रिय (आप) के
मुंडित होकर, गृहत्याग करके साधुत्व की प्रव्रज्या अंगीकार करना चाह
हम देवानुप्रिय को शिष्यभिक्षा देते हैं। हे देवानुप्रिय! आप शिष्यभिक्षा
कार कीजिए।

तए णं से समणे भगवं महावीरे मेहस्स कुमारस्स अ
एवं वुत्ते समाणे एयमट्ठं सम्मं पडिसुणेइ।

तए णं से मेहे कुमारे समणस्स भगवओ महावीरस्स अं
उत्तरपुरच्छिमं दिसिभागं अवक्कमइ। अवक्कमित्ता सयमेव आ
मल्लालंकारं ओमुयइ।

तत्पश्चात् श्रमण भगवान् महावीर ने मेघकुमार के माता-पिता
इस प्रकार कहे जाने पर इस अर्थ (बात) को सम्यक् प्रकार से स्वीकार कि

तत्पश्चात् मेघकुमार श्रमण भगवान् महावीर के पास से उत्तरपूर्व

---

* यद्यपि अन्य रानियों से श्रेणिक के अनेक पुत्र थे, तथापि धा
समब अकेला मेघकुमार ही था।

ईशान दिशा के भाग में गया। जाकर स्वयं ही आभूषण, माला और अलंकार (वस्त्र) उतार डाले।

तए णं से मेहकुमारस्स माया हंसलक्खणेणं पडसाडएणं आभरण-मल्लालंकारं पडिच्छइ। पडिच्छित्ता हारवारिधार-सिंदुवार-छिन्नमुत्तावलिपगासाइं अंसूणि विणिम्मुयमाणी विणिम्मुयमाणी रोयमाणी रोयमाणी कंदमाणी कंदमाणी विलवमाणी विलवमाणी एवं वयासीः—

'जइयव्वं जाया! घडियव्वं जाया! परक्कमियव्वं जाया! अस्सिं च णं अट्ठे नो पमाएयव्वं। अम्हं पि णं एमेव मग्गे भवउ' त्ति कट्टु मेहस्स कुमारस्स अम्मापियरो समणं भगवं महावीरं वंदंति नमंसंति, वंदित्ता नमंसित्ता जामेव दिसिं पाउब्भूया तामेव दिसिं पडिगया।

तत्पश्चात् मेघकुमार की माता ने हंस के लक्षण वाले अर्थात् धवल और मृदुल वस्त्र में आभूषण, माल्य और अलङ्कार ग्रहण किये। ग्रहण करके जल की धारा, निर्गुंडी के पुष्प और टूटे हुए मुक्तावली-हार के समान अश्रु टपकाती हुई, रोती-रोती, आक्रन्दन करती-करती और विलाप करती-करती इस प्रकार कहने लगी—

'हे लाल! प्राप्त चारित्रयोग में यतना करना, हे पुत्र! अप्राप्त चारित्र-योग के लिए घटना करना-प्राप्त करने का प्रयत्न करना, हे पुत्र! पराक्रम करना। संयम-साधना में प्रमाद न करना हमारे लिए भी यही मार्ग हो! अर्थात् भविष्य में हमें भी संयम अङ्गीकार करने का सुयोग प्राप्त हो!'

इस प्रकार कह कर मेघकुमार के माता-पिता ने श्रमण भगवान् महावीर को वन्दन-नमस्कार किया। वन्दन नमस्कार करके जिस दिशा से आये थे, उसी दिशा में लौट गये।

तए णं से मेहे कुमारे सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं करेइ। करित्ता जेणामेव समणे भगवं महावीरे तेणामेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ। करित्ता वंदइ, नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी—

'आलित्ते णं भंते ! लोए, पलित्ते णं भंते ! लोए, आलित्त
णं भंते ! लोए जराए मरणेण य । से जहानामए केई गा
रंसि झियायमाणंसि जे तत्थ भंडे भवइ अप्पभारे मोल्लगु
आयाए एगंतं अवक्कमइ,-एस मे णित्थारिए समाणे
हियाए सुहाए खमाए णिस्सेसाए आणुगामियत्ताए भविस्
मेव मम वि एगे आयाभंडे इट्ठे कंते पिए मणुन्ने मणामे, एस
रिए समाणे संसारवोच्छेयकरे भविस्सइ । तं इच्छामि णं देवाणु
सयमेव पव्वावियं, सयमेव मुंडावियं, सेहावियं, सिक्खावियं,
आयारगोयरविणयवेणइयचरणकरणजायामायावत्तियं धम्ममाइ

तत्पश्चात् मेघकुमार ने स्वयं ही पंचमुष्टि लोच किया । लोच कर
श्रमण भगवान् महावीर थे, वहाँ आया । आकर श्रमण भगवान् महाव
तीन बार दाहिनी ओर से आरंभ करके प्रदक्षिणा की । फिर वन्दन-नम
किया और कहा—

'भगवन् ! यह संसार जरा और मरण से (जरा-मरण रूप अग्नि
आदीप्त है । हे भगवन्, यह संसार आदीप्त-प्रदीप्त है । जैसे कोई गाथापति
में आग लग जाने पर, उस घर में जो अल्प भार वाली और बहुमूल्य वस्
होती है उसे, ग्रहण करके स्वयं एकान्त में चला जाता है । वह सोचता है
कि-'अग्नि में जलने से बचाया हुआ यह पदार्थ मेरे लिए आगे-पीछे हित के
लिए, सुख के लिए, क्षमा (समर्थता) के लिए, कल्याण के लिए और भविष्य में
उपयोग के लिए होगा । इसी प्रकार मेरा भी यह एक आत्मा रूपी भांड (वस्तु)
है, जो मुझे इष्ट है, कान्त है, प्रिय है, मनोज्ञ है और अतिशय मनोहर है
आत्मा को मैं निकाल लूँगा-जरा-मरण की अग्नि में भस्म होने से बचा लूं
तो यह संसार का उच्छेद करने वाला होगा । अतएव मैं चाहता हूँ कि देव
प्रिय (आप) स्वयं ही मुझे प्रव्रजित करें-मुनिवेष प्रदान करें, स्वयं ही मुझे मुं
करें-मेरा लोच करें, स्वयं ही प्रतिलेखन आदि सिखावें, स्वयं ही सूत्र और
प्रदान करके शिक्षा दें, स्वयं ही ज्ञानादिक आचार, गोचरी, विनय, वैनयि
(विनय का फल), चरणसत्तरी, करणसत्तरी, संयमयात्रा और मात्रा (भोजन का
प्रमाण) आदि रूप धर्म का प्ररूपण करें ।

तए णं समणे भगवं महावीरे सयमेव पव्वावेइ, सयमेव आयार०

१५०—'एवं देवाणुप्पिया ! गंतव्वं चिट्ठियव्वं णिसी-

यव्वं तुयट्टियव्वं भुंजियव्वं भासियव्वं, एवं उट्ठाए उट्ठाय पाणेहिं भूएहिं जीवेहिं सत्तेहिं संजमेणं संजमियव्वं, अस्सिं च णं अट्ठे णो पमाएयव्वं।'

तए णं से मेहे कुमारे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए इमं एयारूवं धम्मियं उवएसं णिसम्म सम्मं पडिवज्जइ। तमाणाए तह गच्छइ, तह चिट्ठइ, जाव उट्ठाए उट्ठाय पाणेहिं भूएहिं जीवेहिं सत्तेहिं संजमइ।

तत्पश्चात् श्रमण भगवान् महावीर ने मेघकुमार को स्वय ही प्रव्रज्या प्रदान की और स्वय ही यावत् आचार-गोचर आदि धर्म की शिक्षा दी कि—हे देवानुप्रिय! इस प्रकार—पृथ्वी पर युग मात्र दृष्टि रख कर चलना चाहिए, इस प्रकार—निर्जीव भूमि पर खड़ा होना चाहिए, इस प्रकार—भूमि का प्रमार्जन करके बैठना चाहिए इस प्रकार सामायिक का उच्चारण करके, शरीर की प्रमार्जना करके शयन करना चाहिए इस प्रकार-वेदना आदि कारणों से निर्दोष आहार करना चाहिए, इस प्रकार-हित मित और मधुर भाषण करना चाहिए। इस प्रकार अप्रमत्त एवं सावधान होकर प्राण (विकलेन्द्रिय), भूत (वनस्पतिकाय), जीव (पचेन्द्रिय) और सत्व (शेष एकेन्द्रिय) की रक्षा करके संयम का पालन करना चाहिए। इस विषय में तनिक भी प्रमाद नहीं करना चाहिए।

तत्पश्चात मेघकुमार ने श्रमण भगवान् महावीर के निकट इस प्रकार का यह धर्म सम्बन्धी उपदेश सुनकर और हृदय में धारण करके सम्यक् प्रकार से उसे अङ्गीकार किया। वह भगवान को आज्ञा के अनुसार गमन करता, उसी प्रकार बैठता, यावत् उठ-उठ कर अर्थात् प्रमाद और निद्रा का त्याग करके प्राणों भूतों जीवों और सत्वों की यतना करके संयम का आराधन करने लगा।

मेघकुमार का उद्वेग

जं दिवसं च णं मेहे कुमारे मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइए, तस्स णं दिवसस्स पच्चावरण्हकालसमयंसि समणाणं निग्गंथाणं अहाराइणियाए सेज्जासंथारएसु विभज्जमाणेसु मेहकुमारस्स दार-मूले सेज्जासंथारए जाए यावि होत्था।

'से णूणं तुमं मेहा! राओ पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि समणेहिं निग्गं-
थेहिं वायणाए पुच्छणाए जाव महालियं च णं राइं णो संचाएसि
मुहुत्तमवि अच्छिं निमिल्लावेत्तए' तए णं तुब्भं मेहा! इमे एयारूवे
अज्झत्थिए समुप्पज्जित्था—'जया णं अहं अगारमज्झे वसामि तया
णं मम समणा निग्गंथा आढायंति जाव परियाणंति, जप्पभिइं च णं मुंडे
भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वयामि, तप्पभिइं च णं मम समणा
णो आढायंति, जाव नो परियाणंति। अदुत्तरं च णं समणा निग्गंथा
राओ अप्पेगइया वायणाए जाव पायरयरेणुगुंडियं करेंति। तं सेयं खलु
मम कल्लं पाउप्पभायाए समणं भगवं महावीरं आपुच्छित्ता पुणरवि
आगारमज्झे आवसित्तए' त्ति कट्टु एवं संपेहेसि। संपेहित्ता अट्ट-
दुहट्टवसट्टमाणसे जाव रयणिं खवेसि। खवित्ता जेणामेव अहं तेणामेव
हव्वमागए। से णूणं मेहा! एस अट्ठे समट्ठे?'
'हंता अट्ठे समट्ठे।'

तत्पश्चात् 'हे मेघ' इस प्रकार सम्बोधन करके श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने मेघकुमार से इस प्रकार कहा—'हे मेघ! तुम रात्रि के पहले और पिछले काल के अवसर पर, श्रमण निर्ग्रन्थों के वाचना पृच्छना आदि के लिए आवागमन करने के कारण, लम्बी रात्रि पर्यन्त थोड़ी देर के लिए भी आँख नहीं मींच सके। मेघ! तब तुम्हारे मन में इस प्रकार का विचार उत्पन्न हुआ—जब मैं गृहवास में निवास करता था, तब श्रमण निर्ग्रन्थ मेरा आदर करते थे यावत् मुझे जानते थे; परन्तु जब से मैंने मुण्डित होकर गृहवास से निकल कर साधुता की दीक्षा ली है, तब से श्रमण निर्ग्रन्थ न मेरा आदर करते हैं, न मुझे जानते हैं। इसके अतिरिक्त श्रमण निर्ग्रन्थ रात्रि में कोई वाचना के लिए यावत् जाते-आते मेरे बिस्तर को लांघते हैं यावत् पैरों की रज से भरते हैं। अतएव मेरे लिए यही श्रेयस्कर है कि कल प्रभात होने पर श्रमण भगवान् महावीर से पूछ कर मैं पुनः गृहवास में बसने लगूँ।' तुमने इस प्रकार विचार किया है। विचार करके आर्त्तध्यान के कारण दुःख से पीड़ित एवं संकल्प-विकल्प से युक्त मानस वाले होकर यावत् रात्रि व्यतीत की है। रात्रि व्यतीत करके जहाँ मैं हूँ, वहाँ शीघ्रतापूर्वक आए हो। हे मेघ! यह अर्थ समर्थ है—मेरा यह कथन सत्य है?

मेघकुमार ने उत्तर दिया—जी हाँ, यह अर्थ समर्थ है—आपका कथन यथार्थ है।

प्रतिबोध

एवं खलु मेहा ! तुमं इओ तच्चे अईए भवग्गहणे वेयड्ढगिरि-पायमूले वणयरेहिं णिव्वत्तियणामधेज्जे सेए संख-दलउज्जलविमलनिम्मल-दहिघण-गोखीरफेण-रययणियर (दगरयरययणियर) प्पयासे सत्तुस्सेहे णवायए दसपरिणाहे सत्तंगपइट्ठिए सोमे समिए सुरूवे पुरतो उदग्गे समूसियसिरे सुहासणे पिट्ठओ वराहे अइयाकुच्छी अलंबकुच्छी पलंब-लंबोदराहरकरे धणुपट्ठागिइविसिट्ठपुट्ठे अल्लीणपमाणजुत्तवट्टियापीवर-गत्तावरे अल्लीणपमाणजुत्तपुच्छे पडिपुन्नसुचारुकुम्मचलणे पंडुरसुविसुद्ध-निद्धणिरुवहयविंसतिनहे छद्दंते सुमेरुप्पभे नामं हत्थिराया होत्था।

भगवान् बोले—हे मेघ ! इससे पहले अतीत तीसरे भव में, वैताढ्य पर्वत के पादमूल में (तलहटी में) तुम गजराज थे। वनचरों ने तुम्हारा नाम 'सुमेरुप्रभ' रक्खा था। उस सुमेरुप्रभ का वर्ण श्वेत था। शंख के दल (चूर्ण) के समान उज्ज्वल, विमल, निर्मल, दही के थक्के के समान, गाय के दूध के फेन के समान (या गाय के दूध और समुद्र के फेन के समान) और चन्द्रमा के समान (या जलकण और चांदी के समूह के समान) रूप था। वह सात हाथ ऊँचा और नौ हाथ लम्बा था। मध्यभाग में दस हाथ का परिमाण वाला था। चार पैर, सूंड, पूंछ और लिंग—यह सात अंग प्रतिष्ठित अर्थात् भूमि को स्पर्श करते थे। सौम्य, प्रमाणोपेत अंगों वाला, सुन्दर रूप वाला, आगे से ऊँचा, ऊँचा मस्तक वाला, शुभ या सुखद आसन (स्कंध आदि) वाला था। उसका पिछला भाग वराह (शूकर) के समान नीचे झुका हुआ था। उसकी कूंख बकरी की कूंख जैसी थी और वह छिद्रहीन थी—उसमें गड़हा नहीं पड़ा था तथा लंबी नहीं थी। वह लम्बा उदर वाला, लंबे होठ वाला और लम्बी सूंड वाला था। उसकी पीठ खींचे हुए धनुष के पृष्ठ जैसी आकृति वाली थी। उसके अन्य अवयव भलीभाँति मिले हुए, प्रमाणयुक्त, गोल एवं पुष्ट थे। पूंछ चिपकी हुई तथा प्रमाणोपेत थी। पैर कछुए जैसे परिपूर्ण और मनोहर थे। बीसों नाखून श्वेत, निर्मल, चिकने और निरुपहत थे। छह दांत थे।

तत्थ णं तुमं मेहा ! बहूहिं हत्थीहि य हत्थिणीहि य लोट्टएहि य लोट्टियाहि य कलभेहि य कलभियाहि य सद्धिं संपरिवुडे हत्थिसहस्स-णायए देसए पागट्ठी पट्ठवए जूहवई वंदपरियट्टए अन्नेसिं च बहूणं एकल्लाणं हत्थिकलभाणं आहेवच्चं जाव विहरसि।

पत्तों और कचरे से तथा वायु के वेग से दीप्त हुई अत्यन्त भयानक अग्नि।
उत्पन्न वन के दावानल की ज्वालाओं से वन का मध्यभाग सुलग उठा। दिशाएँ
धुएँ से व्याप्त हो गईं। प्रचण्ड वायुवेग से अग्नि की ज्वालाएँ टूट जाने लगीं
और चारों ओर गिरने लगीं। पोले वृक्ष भीतर ही भीतर जलने लगे। वनप्रदेशों
के नदी-नालों का जल मृत मृगादिक के शवों से सड़ने लगा, क्षीण हो गया।
उनका कीचड़ कीड़ों वाला हो गया। उनके किनारों का पानी सूख गया। भृं
रक पक्षी दीनतापूर्ण आक्रन्दन करने लगे। उत्तम वृक्षों पर स्थित काक अन्य
कठोर और अनिष्ट शब्द करने लगे। उन वृक्षों के अग्रभाग अग्निकणों के कार
मूंगे के समान लाल दिखाई देने लगे। पक्षियों के समूह प्यास से पीड़ित होक
पंख ढीले करके, जिह्वा एवं तालु को प्रकट करके तथा मुँह फाड़ कर सांसें
लेने लगे। ग्रीष्मकाल की उष्णता, सूर्य के ताप, अत्यन्त कठोर एवं प्रचंड वायु
तथा सूखे घास पत्ते और कचरे से युक्त बवंडर के कारण भाग-दौड़ करने वाले,
मदोन्मत्त तथा संभ्रम वाले सिंह आदि श्वापदों के कारण श्रेष्ठ पर्वत आकुल-
व्याकुल हो उठा। ऐसा प्रतीत होने लगा मानो उन पर्वतों पर मृगतृष्णा
पट्टबंध बँधा हो। त्रास को प्राप्त मृग, अन्य पशु और सरीसृप इधर-उधर
फिरने लगे।

इस भयानक अवसर पर, हे मेघ! तुम्हारा अर्थात् तुम्हारे पूर्वभव
सुमेरुप्रभ नामक हाथी का मुख-विवर फट गया। जिह्वा का अग्रभाग बा
निकल आया। बड़े-बड़े दोनों कान भय से स्तब्ध और व्याकुलता के कार
शब्द ग्रहण करने में तत्पर हुए। बड़ी और मोटी सूँड़ सिकुड़ गई। उसने पूं
ऊँची कर ली। पीना (महुड़ा) के समान विरस अर्राटे के शब्द चीत्कार से ब
आकाशतल को फोड़ता हुआ सा, पैरों के आघात से पृथ्वीतल को कम्पित
करता हुआ सा, सीत्कार करता हुआ, चहुं ओर सर्वत्र वेलों के समूह को
छेदता हुआ, त्रस्त और बहुसंख्यक सहस्रों वृक्षों को उखाड़ता हुआ, राज्य से
भ्रष्ट हुए राजा के समान, वायु से डोलते हुए जहाज के समान और बवण्डर
(वगडूरे) के समान इधर-उधर भ्रमण करता हुआ एवं बार-बार लींड़ी त्यागता
हुआ, बहुत-से हाथियों, हथिनियों आदि के साथ दिशाओं और विदिशाओं में
इधर-उधर भागदौड़ करने लगा।

तत्थ णं तुमं मेहा! जुन्ने जराजज्जरियदेहे आउरे झंझिए पिवा-
सिए दुब्बले किलंते नट्ठसुइए मूढदिसाए सयाओ जूहाओ विप्पहूणे
वणदवजालापरद्धे उण्हेण य, तण्हाए य, छुहाए य परब्भाहए समाणे
भीए तत्थे तसिए उव्विग्गे संजायभए सव्वओ समंता आधावमाणे

परिधावमाणे एगं च णं महं सरं अप्पोदयं पंकबहुलं अतित्थेणं पाणिय-पाए उइन्नो ।

हे मेघ ! तुम वहाँ जीर्ण, जरा से जर्जरित देह वाले, व्याकुल, भूखे, प्यासे, दुर्बल, थके-मांदे, बहिरे तथा दिङ्मूढ़ होकर अपने यूथ (झुंड) से बिछुड़ गये। वन के दावानल की ज्वालाओं से पराभूत हुए। गर्मी से, प्यास से, भूख से पीड़ित होकर भय को प्राप्त हुए, त्रस्त हुए। तुम्हारा आनन्द-रस शुष्क हो गया। इस विपत्ति से कैसे छुटकारा पाऊँ, ऐसा विचार करके उद्विग्न हुए। तुम्हें पूरी तरह भय उत्पन्न हो गया। अतएव तुम इधर-उधर दौड़ने और खूब दौड़ने लगे। इसी समय एक अल्प जल वाला और कीचड़ की अधिकता वाला एक बड़ा सरोवर तुम्हें दिखाई दिया। उसमें पानी पीने के लिए बिना घाट के तुम उतर गये।

तत्थ णं तुमं मेहा ! तीरमइगए पाणियं असंपत्ते अंतरा चेव सेयंसि विसन्ने।

तत्थ णं तुमं मेहा ! पाणियं पाइस्सामि त्ति कट्टु हत्थं पसारेसि, से वि य ते हत्थे उदगं न पावेइ । तए णं तुमं मेहा ! पुणरवि कायं पच्चुद्धरिस्सामि त्ति कट्टु बलियतरायं पंकंसि खुत्ते।

हे मेघ ! वहाँ तुम किनारे से तो दूर चले गये, परन्तु पानी तक न पहुँच पाये और बीच ही में कीचड़ में फँस गये।

हे मेघ ! 'मैं पानी पीऊँ' ऐसा सोचकर वहाँ तुमने अपनी सूंड़ फैलाई, मगर तुम्हारी सूंड़ भी पानी न पा सकी। तब हे मेघ ! तुमने पुनः 'शरीर को बाहर निकालूँ' ऐसा विचार कर जोर मारा तो कीचड़ में और गाढ़े फँस गये।

तए णं तुमं मेहा ! अन्नया कयाइ एगे चिरनिज्जूढे गयवर-जुवाणए सयाओ जूहाओ करचरणदंतमुसलप्पहारेहिं विप्परद्धे समाणे तं चेव महद्दहं पाणीयं पाएउं समोयरेइ ।

तए णं से कलभए तुमं पासति, पासित्ता तं पुव्ववेरं समरइ । समरित्ता आसुरुत्ते रुट्ठे कुविए चंडिक्किए मिसिमिसेमाणे जेणेव तुमं तेणेव उवागच्छइ । उवागच्छित्ता तुमं तिक्खेहिं [illegible]

तत्पश्चात् हे मेघ ! तुम उस उज्ज्वल—बेचैन बना देने वाली यावत् दुस्सह वेदना को सात दिन-रात पर्यन्त भोग कर, एक सौ बीस वर्ष की आयु भोग कर, आर्त्तध्यान के वशीभूत एवं दुःख से पीड़ित हुए, तुम काल मास में (मृत्यु के अवसर पर) काल करके, इसी जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में, दक्षिणार्ध भरत में, गंगा नामक महानदी के दक्षिणी किनारे पर, विंध्याचल के समीप एक मदोन्मत्त श्रेष्ठ गंधहस्ती से, एक श्रेष्ठ हथिनी की कूख में हाथी के बच्चे के रूप में उत्पन्न हुए। तत्पश्चात् उस हथिनी ने नौ मास पूर्ण होने पर वसन्त मास में तुम्हें जन्म दिया।

तए णं तुमं मेहा ! गब्भवासाओ विप्पमुक्के समाणे गयकलभए यावि होत्था, रत्तुप्पलरत्तसूमालए जासुमणारत्तपारिजत्तयलक्खारस-सरसकुंकुमसंझब्भरागवन्ने इट्ठे णियस्स जूहवइणो गणियायारकणेरु-कोत्थहत्थी अणेगहत्थिसयसंपरिवुडे रम्मेसु गिरिकाणणेसु सुहंसुहेणं विहरसि।

तत्पश्चात् हे मेघ ! तुम गर्भावास से मुक्त हो कर गजकलभक (छोटे हाथी) भी हो गये। लाल कमल के समान लाल और सुकुमार हुए। जपा कुसुम, रक्तवर्ण पारिजात नामक वृक्ष, लाख के रस, सरस कुंकुम और सन्ध्या-कालीन बादलों के रंग के समान रक्तवर्ण हुए। अपने यूथपति के प्रिय हुए। गणिकाओं के समान युवती हथिनियों के उदर-प्रदेश में अपनी सूंड डालते हुए कामक्रीड़ा में तत्पर रहने लगे। इस प्रकार सैकड़ों हाथियों से परिवृत होकर तुम पर्वत के रमणीय काननों में सुखपूर्वक विचरने लगे।

तए णं तुमं मेहा ! उम्मुक्कबालभावे जोव्वणगमणुपत्ते जूहवइणा कालधम्मुणा संजुत्तेणं तं जूहं सयमेव पडिवज्जसि।

तत्पश्चात् हे मेघ ! तुम बाल्यावस्था को पार करके यौवन को प्राप्त हुए। फिर यूथपति के कालधर्म को प्राप्त होने पर तुम स्वयं ही उस यूथ को वहन करने लगे, अर्थात् यूथपति हो गये।

तए णं तुमं मेहा ! वणयरेहिं निव्वत्तियनामधेज्जे जाव चउदंते मेरुप्पभे हत्थिरयणे होत्था। तत्थ णं तुमं मेहा ! सत्तंगपइट्ठिए तहेव जाव पडिरूवे। तत्थ णं तुमं मेहा सत्तसइयस्स जूहस्स आहेवच्चं जाव अभिरमेत्था।

तत्पश्चात् हे मेघ ! वनचरों ने तुम्हारा नाम मेरुप्रभ रक्खा। ५५

दांतों वाले हस्तिरत्न हुए। हे मेघ! तुम सातों अंगों से भूमि का स्पर्श करने वाले, आदि पूर्वोक्त विशेषणों से युक्त यावत् सुन्दर रूप वाले हुए। हे मेघ! तुम वहाँ सात सौ हाथियों के यूथ का अधिपतित्व करते हुए अभिरमण करने लगे।

तए णं तुमं अन्नया कयाइ गिम्हकालसमयंसि जेट्ठामूले वणदव-जालापलित्तेसु वणंतेसु सुधूमाउलासु दिसासु जाव मंडलवाए व्व परिब्भमंते भीए तत्थे जाव संजायभए बहूहिं हत्थीहि य जाव कलभि-याहि य सद्धिं संपरिवुडे सव्वओ समंता दिसोदिसिं विप्पलाइत्था। तए णं तव मेहा! तं वणदवं पासित्ता अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था—'कहिं णं मन्ने मए अयमेयारूवे अग्गिसंभवे अणुभूय-पुव्वे।' तए णं तव मेहा! लेस्साहिं विसुज्झमाणीहिं, अज्झवसाणेणं सोहणेणं, सुभेणं परिणामेणं, तयावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमेणं, ईहापोहमग्गणगवेसणं करेमाणस्स सन्निपुव्वे जाइसरणे समुप्पज्जित्था।

तत्पश्चात् अन्यदा कदाचित् ग्रीष्म काल के अवसर पर, ज्येष्ठ मास में, वन के दावानल की ज्वालाओं से वन-प्रदेश जलने लगे। दिशाएँ धूम से भर गईं। उस समय तुम बवण्डर की तरह इधर-उधर भागदौड़ करने लगे। भयभीत हुए, व्याकुल हुए और बहुत डर गये। तब बहुत-से हाथियों यावत् हथनियों के साथ, उनसे परिवृत होकर, चारों ओर एक दिशा से दूसरी दिशा में भागे।

हे मेघ! उस समय उस वन के दावानल को देखकर तुम्हें इस प्रकार का अध्यवसाय यावत् उत्पन्न हुआ—'लगता है जैसे इस प्रकार की अग्नि की उत्पत्ति मैंने कभी पहले अनुभव की है।' तत्पश्चात् हे मेघ! विशुद्ध होती हुई लेश्याओं, शुभ अध्यवसाय, शुभ परिणाम और जातिस्मरण को आवृत करने वाले कर्मों का क्षयोपशम होने से ईहा, अपोह, मार्गणा और गवेषणा करते हुए तुम्हें संज्ञी जीवों को प्राप्त होने वाला जातिस्मरण ज्ञान उत्पन्न हुआ।

तए णं तुमं मेहा! एयमट्ठं सम्मं अभिसमेसि—'एवं खलु मया अईए दोच्चे भवग्गहणे इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे वेयड्ढगिरिपाय-मूले जाव सुहसुहेणं विहरइ, तत्थ णं महया अयमेयारूवे अग्गिसंभवे समणुभूए।' तए णं तुमं मेहा! तस्सेव दिवसस्स पच्चावरण्हकालसमयंसि नियएणं जूहेण सद्धिं समन्नागए यावि होत्था। तए णं तु

मेहा ! सत्तुस्सेहे जाव सन्निजाइस्सरणे चउद्दंते मेरुप्पभे नाम हत्थी होत्था ।

तत्पश्चात् हे मेघ ! तुमने यह अर्थ सम्यक् प्रकार से जाना कि—'निश्चय ही मैं व्यतीत हुए दूसरे भव में, इसी जम्बू द्वीप नामक द्वीप में, भरतक्षेत्र में, वैताढ्य पर्वत की तलहटी में सुखपूर्वक विचरता था । वहाँ इस प्रकार का महान् अग्नि का संभव मैंने अनुभव किया है।' तदन्तर हे मेघ ! तुम उस भव में उसी दिन के अन्तिम प्रहर तक अपने यूथ के साथ विचरण करते थे। हे मेघ ! उसके बाद काल करके दूसरे भव में सात हाथ ऊँचे यावत् जातिस्मरण से युक्त, चार दांत वाले मेरुप्रभ नामक हाथी हुए।

तए णं तुज्झं मेहा ! अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था—' तं सेयं खलु मम इयाणिं गंगाए महानदीए दाहिणिल्लंसि कूलंसि विंझगिरिपायमूले दवग्गिसंजायकारणट्ठा सएणं जूहेणं महालयं मंडलं घाइत्तए ' त्ति कट्टु एवं संपेहेसि । संपेहित्ता सुहंसुहेणं विहरसि ।

तत्पश्चात् हे मेघ ! तुम्हें इस प्रकार का अध्यवसाय उत्पन्न हुआ कि—मेरे लिए यह श्रेयस्कर है कि इस समय गंगा महानदी के दक्षिणी किनारे पर विन्ध्याचल की तलहटी में, दावानल से रक्षा करने के लिए अपने यूथ के साथ एक बड़ा मंडल बनाऊँ।' इस प्रकार विचार करके तुम सुखपूर्वक विचरने लगे।

तए णं तुमं मेहा ! अन्नया कयाइं पढमपाउसंसि महावुट्ठिकायंसि सन्निवइयंसि गंगाए महानदीए अदूरसामंते बहूहिं हत्थीहिं जाव कलभियाहि य सत्तहि य हत्थिसएहिं संपरिवुडे एगं महं जोयणपरिमंडलं महइमहालयं मंडलं घाएसि । जं तत्थ तणं वा पत्तं वा कट्ठं वा कंटए वा लया वा वल्ली वा खाणुं वा रुक्खे वा खुवे वा, तं सव्वं तिक्खुत्तो आहुणिय आहुणिय पाएण उट्ठवेसि, हत्थेणं गेण्हसि, एगंते एडेसि ।

तए णं तुमं मेहा ! तस्सेव मंडलस्स अदूरसामंते गंगाए महानदीए दाहिणिल्ले कूले विंझगिरिपायमूले गिरिसु य जाव विहरसि ।

तत्पश्चात् हे मेघ ! तुमने किसी एक बार प्रथम वर्षाकाल

वर्षा होने पर गंगा महानदी के समीप बहुत-से हाथियों यावत् हथिनियों से अर्थात् सात सौ हाथियों से परिवृत होकर एक योजन परिमित बड़े घेरा वाला अत्यन्त विशाल मंडल बनाया। उस मंडल में जो कुछ भी घास, पत्ते, काठ, कांटे, लता, बेलें, ठूंठ, वृक्ष या पौधे आदि थे, उन सब को तीन बार हिला-हिला कर पैर से उखाड़ा, सूंड से पकड़ा और एक ओर ले जाकर डाल दिया।

हे मेघ! तत्पश्चात् तुम उसी मंडल के समीप गंगा महानदी के दक्षिणी किनारे, विन्ध्याचल के पादमूल में, पर्वत आदि पूर्वोक्त स्थानों में विचरण करने लगे।

तए णं मेहा! अन्नया कयाइ मज्झिमए वरिसारत्तंसि महावुट्ठि-कायंसि संनिवइयंसि जेणेव से मंडले तेणेव उवागच्छसि। उवागच्छित्ता दोच्चं पि मंडलं घाएसि। एवं चरिमे वासारत्तंसि महावुट्ठिकायंसि सन्नि-वइयमाणंसि जेणेव से मंडले तेणेव उवागच्छसि; उवागच्छित्ता तच्चं पि मंडलघायं करेसि। जं तत्थ तणं वा जाव सुहंसुहेण विहरसि।

तत्पश्चात् हे मेघ! किसी अन्य समय मध्य वर्षा ऋतु में खूब वर्षा होने पर तुम उस स्थान पर आए जहाँ मंडल था। वहाँ आकर दूसरी बार उस मंडल को ठीक साफ किया। इसी प्रकार अन्तिम वर्षा-रात्रि में घोर वृष्टि होने पर जहाँ मंडल था, वहाँ आए। आकर तीसरी बार उस मंडल को साफ किया। वहाँ जो भी तृण आदि उगे थे, उन सब को उखाड़ कर सुखपूर्वक विचरण करने लगे।

अह मेहा! तुमं गइंदभावम्मि वट्टमाणो कमेणं नलिणिवणविव-हणगरे हेमंते कुंदलोद्धउद्धततुसारपउरम्मि अइक्कंते, अहिणवे गिम्ह-समयंसि पत्ते, वियट्टमाणो वणेसु वणकरेणुविविहदिण्णकयपसवघाओ तुमं उउयकुसुमकयचामरकन्नपूरपरिमंडियाभिरामो मयवससविगसंतकड-तडकिलिन्नगंधमदवारिणा सुरभिजणियगंधो करेणुपरिवारिओ उउसमत्त-जणियसोभो काले दिणयरकरपयंडे परिसोसियतरुवरसिहरभीमतर-दंसणिज्जे भिंगाररवंतभेरवरवे णाणाविहपत्तकट्ठतणकयवरुद्धतपइमारु-याइद्धनहयलदुमगणे वाउलियादारुणयरे तण्हावसदोसदूसियभमंतविविह-सावयसमाउले भीमदरिसणिज्जे वट्टंते दारुणम्मि गिम्हे मारुयवसपसर-पसरियवियंभिएणं अब्भहियभीमभेरवरवप्पगारेणं महुधारापडियसित्त-

उद्धायमाणवणधगंतसद्दुद्धुएणं दित्ततरसफुलिंगेणं धूममालाउलेणं सावयसयंतकरणेणं अब्भहियवणदवेणं जालालोवियनिरुद्धधूमंधकारभीओ आयवालोयमहंततुंबइयपुन्नकन्नो आकुंचियथोरपीवरकरो भयवसभयंतदित्तनयणो वेगेण महामेहो व्व पवणोल्लियमहल्लरूवो, जेणेव कओ ते पुरा दवग्गिभयभीयहियएणं अवगयतणप्पएसरुक्खो रुक्खोद्देसो दवग्गिसंतावणकारणट्ठाए जेणेव मंडले तेणेव पहारेत्थ गमणाए। एक्को ताव एस गमो।

हे मेघ ! तुम गजेन्द्र पर्याय में वर्त्त रहे थे कि अनुक्रम से कमलिनियों के वन का विनाश करने वाला, कुंद और लोध्र के पुष्पों की समृद्धि से सम्पन्न तथा अत्यन्त हिम वाला हेमन्त ऋतु व्यतीत हो गया और अभिनव ग्रीष्मकाल आ पहुँचा। उस समय तुम वनों में विचरण कर रहे थे। वहाँ क्रीड़ा करते समय वन की हथिनियाँ तुम्हारे ऊपर विविध प्रकार कमलों एवं पुष्पों का प्रहार करती थीं। तुम उस ऋतु में उत्पन्न पुष्पों के बने चामर जैसे कर्ण के आभूषणों से मंडित और मनोहर थे। मद के कारण विकसित गंडस्थलों को आर्द्र करने वाले तथा झरते हुए सुगंधित मदजल से तुम सुगंधमय बन गये थे। हथिनियों से घिरे रहते थे। सब तरह से ऋतुसंबंधी शोभा उत्पन्न हुई थी। उस ग्रीष्मकाल में सूर्य की प्रखर किरणें गिर रही थीं। उस ग्रीष्म ऋतु ने श्रेष्ठ वृक्षों के शिखरों को अत्यन्त शुष्क बना दिया था। वह बड़ा ही भयंकर प्रतीत होता था। शब्द करने वाले भृंगार नामक पक्षी भयानक शब्द करते थे। पत्र काष्ठ तृण और कचरे को उड़ाने वाले प्रतिकूल पवन से आकाशतल और वृक्षों का समूह व्याप्त हो गया था। वह बवण्डरों के कारण भयावह दीख पड़ता था। प्यास के कारण उत्पन्न वेदनादि दोषों से दूषित हुए और इसी कारण इधर-उधर भटकते हुए श्वापदों (शिकारी जंगली पशुओं) से युक्त था। देखने में ऐसा भयानक ग्रीष्म ऋतु उत्पन्न हुए दावानल के कारण और अधिक दारुण हो गया।

वह दावानल, वायु के कारण प्राप्त हुए प्रचार से फैला हुआ और विकसित हुआ था। उसके शब्द का प्रकार अत्यधिक भयंकर था। वृक्षों से गिरने वाले मधु की धाराओं से सिंचित होने के कारण वह अत्यन्त वृद्धि को प्राप्त हुआ था, धधक रहा था और शब्द के कारण उद्धत था। वह अत्यन्त देदीप्यमान, चिनगारियों से युक्त और धूम की कतार से व्याप्त था। सैकड़ों श्वापदों के प्राणों का अन्त करनेवाला था। इस प्रकार तीव्रता को प्राप्त दावानल के कारण वह ग्रीष्मऋतु अत्यन्त भयंकर दिखाई देता था।

हे मेघ ! तुम उस दावानल की ज्वालाओं से आच्छादित हो गये, गये-इच्छानुसार जाने में असमर्थ हो गये। धुएँ के कारण उत्पन्न हुए अंधक में भयभ्रांत हो गये। अग्नि के ताप को देखने से तुम्हारे दोनों कान अस्पष्ट के तु के समान स्तब्ध रह गये। तुम्हारी मोटी और बड़ी सूंड सिकुड़ गई। तुम्हारे चमकते हुए नेत्र भय के कारण इधर-उधर फिरने-देखने लगे। जैसे वायु के कारण महामेघ का विस्तार हो जाता है, उसी प्रकार वेग के कारण तुम्हारा स्वरूप विस्तृत दिखाई देने लगा। पहले दावानल के भय से भीत हृदय होकर दावानल से अपनी रक्षा करने के लिए, जिस दिशा में तृण के प्रदेश (मूल आदि) और वृक्ष हटा कर सफाचट प्रदेश बनाया था और जिधर वह मंडल बनाया था, उधर ही जाने का तुमने विचार किया। वहीं जाने का निश्चय किया।

(यह एक गम है; अर्थात् किसी-किसी आचार्य के मतानुसार इस प्रकार का पाठ है।

तए णं तुमं मेहा ! अन्नया कयाइं कमेणं पंचसु उउसु समइक्कंतेसु गिम्हकालसमयंसि जेट्ठामूले मासे पायवसंघसमुट्ठिएणं जाव संवट्टिएसु मियपसुपक्खिसिरीसिवे दिसोदिसिं विप्पलायमाणेसु तेहिं बहूहिं हत्थीहि य सद्धिं जेणेव मंडले तेणेव पहारेत्थ गमणाए।

हे मेघ ! किसी अन्य समय पाँच ऋतु व्यतीत हो जाने पर, ग्रीष्मकाल के अवसर पर, ज्येष्ठ मास में, वृक्षों की परस्पर की रगड़ से उत्पन्न हुए दावानल के कारण यावत् अग्नि फैल गई और मृग पशु पक्षी तथा सरीसृप आदि भाग-दौड़ करने लगे। तब तुम बहुत-से हाथियों आदि के साथ जहाँ वह मंडल था, वहाँ जाने के लिए दौड़े।

(यह दूसरा गम है, अर्थात् अन्य आचार्य के मतानुसार पूर्वोक्त पाठ के स्थान पर यह पाठ है।)

तत्थ णं अण्णे बहवे सीहा य, वग्घा य, विगया, दीविया, अच्छा य, रिंछतरच्छा य, पारासरा य, सरभा य, सियाला, विराला, सुणहा, कोला, ससा, कोकंतिया, चित्ता, चिल्लला, पुव्वपविट्ठा अग्गिभयविद्दुया एगयाओ बिलधम्मेणं चिट्ठंति।

तए णं तुमं मेहा ! जेणेव से मंडले तेणेव उवागच्छसि, उवागच्छित्ता तेहिं बहूहिं सीहेहिं जाव चिल्ललएहिं य एगयओ बिलधम्मेणं चिट्ठसि।

उस मंडल में अन्य बहुत से सिंह, बाघ, भेड़िया, द्वीपिक (चीते), रीछ, तरच्छ, पारासर, शरभ, शृगाल, बिडाल, श्वान, शूकर, खरगोश, लोमड़ी चित्र और चिल्लल आदि पशु अग्नि के भय से पराभूत होकर पहले ही आ घुसे थे और एक साथ बिलधर्म से रहे हुए थे, अर्थात् जैसे एक बिल में बहुत से मकोड़े ठसाठस भरे रहते हैं, उसी प्रकार उस मंडल में भी पूर्वोक्त जीव ठसाठस भरे थे।

तत्पश्चात् हे मेघ! तुम जहाँ मंडल था, वहाँ आये और आकर उन बहुसंख्यक सिंह यावत् चिल्ललक आदि के साथ एक जगह बिलधर्म से ठहर गये।

तए णं तुमं मेहा ! पाएणं गत्तं कंडुइस्सामि त्ति कट्टु पाए उक्खित्ते, तंसि च णं अंतरंसि अन्नेहिं बलवंतेहिं सत्तेहिं पणोलिज्जमाणे पणोलिज्जमाणे ससए अणुपविट्ठे ।

तए णं तुमं मेहा ! गायं कंडुइत्ता पुणरवि पायं पडिनिक्खमिस्सामि त्ति कट्टु तं ससयं अणुपविट्ठं पाससि, पासित्ता पाणाणुकंपयाए भूयाणुकंपयाए जीवाणुकंपयाए सत्ताणुकंपयाए से पाए अंतरा चेव संधारिए, नो चेव णं णिक्खित्ते।

तए णं तुमं मेहा ! ताए पाणाणुकंपयाए जाव सत्ताणुकंपयाए संसारे परित्तीकए, माणुस्साउए निबद्धे ।

तत्पश्चात् हे मेघ! तुमने "पैर से शरीर खुजाऊँ" ऐसा सोचकर एक पैर ऊपर उठाया। इसी समय उस खाली हुई जगह में, अन्य बलवान् प्राणियों द्वारा प्रेरित-धकियाया हुआ एक शशक प्रविष्ट हो गया।

तत्पश्चात् हे मेघ! तुमने पैर खुजा कर सोचा कि मैं पैर नीचे रक्खूँ, परन्तु शशक को पैर की जगह में घुसा हुआ देखा। देखकर द्वीन्द्रियादि प्राणों की अनुकम्पा से, वनस्पति रूप भूत की अनुकम्पा से, पंचेन्द्रिय जीवों की अनुकम्पा से तथा वनस्पति के सिवाय शेष चार स्थावर सत्वों की अनुकम्पा से वह पैर अधर ही रक्खा, नीचे नहीं रक्खा।

हे मेघ! तब उस प्राणानुकम्पा यावत् सत्वानुकम्पा से तुमने संसार परीत किया और मनुष्यायु का बन्ध किया।

तए णं से वणदवे अड्ढाइज्जाइं राइंदियाइं तं वणं झामेइ, निट्ठिए, उवरए, उवसंते, विज्झाए यावि होत्था ।

तत्पश्चात् वह दावानल अढ़ाई अहोरात्र पर्यन्त उस वन को जला पूर्ण हो गया, उपरत हो गया, उपशान्त हो गया और बुझ गया।

तए णं ते बहवे सीहा य जाव चिल्लला य तं वणदवं निट्ठि जाव विज्झायं पासंति, पासित्ता अग्गिभयविप्पमुक्का तण्हाए य छुहाए य परब्भाहया समाणा तओ मंडलाओ पडिनिक्खमंति। पडि- निक्खमित्ता सव्वओ समंता विप्पसरित्था।

तब उन बहुत से सिंह यावत् चिल्लक आदि प्राणियों ने उस वन- दावानल को पूरा हुआ यावत् बुझा हुआ देखा और देख कर वे अग्नि के भ से मुक्त हुए। वे प्यास एवं भूख से पीड़ित होते हुए उस मंडल से बाहर निक और निकल कर चहुँ ओर फैल गये।

तए णं तुमं मेहा! जुन्ने जराजज्जरियदेहे सिढिलवलियपापिणिद्ध- गत्ते दुब्बले किलंते जुंजिए पिवासिए अत्थामे अबले अपरक्क अचंकमणो वा ठाणुखंडे वेगेण विप्पसरिस्सामि त्ति कट्टु पाए पसारे माणे विज्जुहए विव रययगिरिपब्भारे धरणियलंसि सव्वंगेहि य सन्निवइए।

हे मेघ! उस समय तुम वृद्ध, जरा से जर्जरित शरीर वाले शिथिल एवं सलों वाली चमड़ी से व्याप्त गात्र वाले, दुर्बल, थके हुए, भूखे प्यासे, शारीरिक शक्ति से हीन, सहारा न होने से निर्बल, सामर्थ्य से रहित और चलने-फिरने की शक्ति से रहित एवं ठूंठ की भाँति स्तब्ध रह गये। 'मैं वे चलूँ' ऐसा विचार कर ज्यों ही पैर पसारा कि विद्युत् से आघात पाये रजतगिरि के शिखर के समान सभी अंगों से तुम धड़ाम से धरती पर गिर प

तए णं तव मेहा! सरीरगंसि वेयणा पाउब्भूया उज्जला जाव दाहवक्कंतिए यावि विहरसि। तए णं तुमं मेहा! तं उज्जलं जाव दुरहियासं तिन्नि राइंदियाइं वेयणं वेयमाणे विहरित्ता एगं वाससयं परमाउं पालइत्ता इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे रायगिहे नयरे सेणि- यस्स रन्नो धारिणीए देवीए कुच्छिंसि कुमारत्ताए

तत्पश्चात् हे मेघ! तुम्हारे शरीर में उत्कट
[illegible] उत्पन्न हुआ। [illegible]
रहे। त

यावत् दुस्सह वेदना को तीन रात्रि दिवस पर्यन्त भोगते रहे। अन्त में सौ वर्ष की पूर्ण आयु भोगकर इसी जम्बूद्वीप नामक द्वीप में भरत वर्ष में, राजगृह नगर में, श्रेणिक राजा की धारिणी देवी की कूँख में कुमार के रूप में उत्पन्न हुए।

तए णं तुमं मेहा! आणुपुव्वेणं गब्भवासाओ निक्खंते समाणे उम्मुक्कबालभावे जोव्वणगमणुपत्ते मम अंतिए मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइए। तं जइ जाव तुमे मेहा! तिरिक्खजोणिय-भावमुवागएणं अप्पडिलद्धसम्मत्तरयणलंभेणं से पाए पाणाणुकंपयाए जाव अंतरा चेव संधारिए, नो चेव णं णिक्खित्ते, किमंग पुण तुमं मेहा! इयाणिं विपुलकुलसमुब्भवेणं निरुवहयसरीरदंतलद्धपंचिंदिएणं एवं उट्ठाणबलवीरियपुरिसगारपरक्कमसंजुत्तेणं मम अंतिए मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइए समाणे समणाणं निग्गंथाणं राओ पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि वायणाए जाव धम्माणुओगचिंताए य उच्चारस्स वा पासवणस्स वा अइगच्छमाणाण य निग्गच्छमाणाण य हत्थसंघट्टणाणि य पायसंघट्टणाणि य जाव रयरेणुगुंडणाणि य नो सम्मं सहसि खमसि, तितिक्खसि, अहियासेसि?

तत्पश्चात् हे मेघ! तुम अनुक्रम से गर्भवास से बाहर आये—तुम्हारा जन्म हुआ। बाल्यावस्था से मुक्त हुए और युवावस्था को प्राप्त हुए। तब मेरे निकट मुंडित होकर गृहवास से (मुक्त हो) अनगार हुए। तो हे मेघ! जब तुम तिर्यंचयोनि रूप पर्याय को प्राप्त थे और जब तुम्हें सम्यक्त्व रत्न का लाभ भी प्राप्त नहीं हुआ था, उस समय भी तुमने प्राणियों की अनुकम्पा से प्रेरित होकर यावत् अपना पैर अधर ही रक्खा था, नीचे नहीं टिकाया था. तो फिर हे मेघ! इस जन्म में तो तुम विशाल कुल में जन्मे हो, तुम्हें उपघात से रहित शरीर प्राप्त हुआ है. प्राप्त हुई पाँचों इन्द्रियों का तुमने दमन किया है और उत्थान (विशिष्ट शारीरिक चेष्टा), बल (शारीरिक शक्ति), वीर्य (आत्मबल) पुरुषकार (विशेष प्रकार का अभिमान) और पराक्रम (कार्य को सिद्ध करने वाला पुरुषार्थ) से युक्त हो और मेरे समीप मुंडित होकर गृहवास त्याग कर अनगार बने हो, फिर भी पहली और पिछली रात्रि के समय श्रमण निर्ग्रन्थ वाचना के लिए यावत् धर्मानुयोग के चिन्तन के लिए तथा उच्चार-प्रस्रवण के लिए आते जाते थे, उस समय तुम्हें उनके हाथ का स्पर्श हुआ, पैर का स्पर्श हुआ, यावत् रजकणों से तुम्हारा शरीर भर गया, उसे तुम सम्यक् प्रकार से

सहन न कर सके ! बिना क्षुब्ध हुए सहन न कर सके ! अदीनभाव से तिति-
न कर सके ! और शरीर को निश्चल रख कर सहन न कर सके ।

तए णं तस्स मेहस्स अणगारस्स, समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म सुभेहिं परिणामेहिं, पसत्थेहिं अज्झव-सोहिं, लेस्साहिं विसुज्झमाणीहिं, तयावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे ईहावूहमग्गणगवेसणं करेमाणस्स सन्निपुव्वे जाइसरणे समुप्पन्ने । एय-मट्ठं सम्मं अभिसमेइ ।

तत्पश्चात् मेघकुमार अनगार को श्रमण भगवान् महावीर के पास यह वृत्तान्त सुन-समझ कर, शुभ परिणामों के कारण, प्रशस्त अध्यवसायों के कारण, विशुद्धि होती हुई लेश्याओं के कारण और जातिस्मरण को आ-करने वाले ज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम के कारण ईहा, अपोह, मार्गणा और गवेषणा करते हुए, संज्ञी जीवों को प्राप्त होने वाला जातिस्मरण उत्पन्न हुआ । उससे मेघ मुनि ने अपना पूर्वोक्त वृत्तान्त सम्यक् प्रकार से जान लिया ।

तए णं से मेहे कुमारे समणेणं भगवया महावीरेणं संभारियपुव्व-जाइसरणे दुगुणाणीयसंवेगे आणंदयंसुपुन्नमुहे हरिसवसेणं धाराहयकदं-बकं पिव समुस्ससियरोमकूवे समणं भगवं महावीरं वंदइ, नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी—'अज्जप्पभिइं णं भंते ! मम दो अच्छीणि मोत्तूणं अवसेसे काए समणाणं निग्गंथाणं निसट्ठे' त्ति कट्टु पुणरवि समणं भगवं महावीरं वंदइ, नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी—'इच्छामि णं भंते ! इयाणिं सयमेव दोच्चं पि पव्वावियं, सय-मेव मुंडावियं जाव सयमेव आयारगोयरं जायामायावत्तियं धम्म-माइक्खउ ।'

तत्पश्चात् श्रमण भगवान महावीर के द्वारा मेघकुमार को पूर्ववृत्तान्त स्मरण करा दिया गया, इस कारण उसे दुगुना संवेग प्राप्त हुआ । उसका मुख आनन्द के आँसुओं से परिपूर्ण हो गया । हर्ष के कारण मेघधारा से आहत कदंब पुष्प की भाँति उसके रोमांच विकसित हो गये । उसने श्रमण भगवान महावीर को वन्दन किया, नमस्कार किया । वन्दन नमस्कार करके इस प्रकार कहा—'भंते ! आज से मैंने अपने दोनों नेत्र छोड़ कर शेष समस्त शरीर श्रमण निर्ग्रन्थों के लिए समर्पित किये ।' इस प्रकार कह कर मेघकुमार ने

भगवान् महावीर को वन्दन नमस्कार किया। वन्दन नमस्कार करके इस भाँति कहा—भगवन्! मेरी इच्छा है कि अब आप स्वयं ही दूसरी बार मुझे प्रव्रजित करें, स्वयं ही मुंडित करें, यावत् स्वयं ही ज्ञानादिक आचार, गोचर-गोचरी के लिए भ्रमण, यात्रा—पिण्डविशुद्धि आदि संयमयात्रा तथा मात्रा—प्रमाणयुक्त आहार ग्रहण करना आदि रूप श्रमण धर्म का उपदेश दीजिए।

तए णं समणे भगवं महावीरे मेहं कुमारं सयमेव पव्वावेइ जाव जायामायावत्तियं धम्ममाइक्खइ—'एवं देवाणुप्पिया! गंतव्वं, एवं चिट्ठियव्वं, एवं णिसीयव्वं, एवं तुयट्टियव्वं, एवं भुंजियव्वं, एवं भासियव्वं, उट्ठाय उट्ठाय पाणाणं भूयाणं जीवाणं सत्ताणं संजमेणं संजमियव्वं।'

तत्पश्चात् श्रमण भगवान महावीर ने मेघकुमार को स्वयमेव दीक्षित किया, यावत् स्वयमेव यात्रा-मात्रा रूप धर्म का उपदेश किया कि—'हे देवानुप्रिय! इस प्रकार गमन करना चाहिए अर्थात् युगपरिमित भूमि पर दृष्टि रख कर चलना चाहिए इस प्रकार अर्थात् पृथ्वी का प्रमार्जन करके खड़ा होना चाहिए, इस प्रकार अर्थात् भूमि का प्रमार्जन करके बैठना चाहिए, इस प्रकार अर्थात् शरीर एवं भूमि का प्रमार्जन करके शयन करना चाहिए, इस प्रकार निर्दोष आहार करना चाहिए, और इस प्रकार अर्थात् भाषासमिति पूर्वक बोलना चाहिए। सावधान रह रह कर प्राणों, भूतों, जीवों और सत्त्वों की रक्षा रूप संयम में प्रवृत्त होना चाहिए। तात्पर्य यह है कि मुनि को प्रत्येक क्रिया यतना के साथ करना चाहिए।'

तए णं से मेहे समणस्स भगवओ महावीरस्स अयमेयारूवं धम्मियं उवएसं सम्मं पडिच्छइ, पडिच्छित्ता तह चिट्ठइ जाव संजमेणं संजमइ।

तए णं से मेहे अणगारे जाए इरियासमिए, अणगारवन्नओ भाणियव्वो।

तत्पश्चात् मेघ मुनि ने श्रमण भगवान् महावीर के इस प्रकार के इस धार्मिक उपदेश को सम्यक् प्रकार से अंगीकार किया। अंगीकार करके उसी प्रकार वर्त्ताव करने लगे यावत् संयम में उद्यम करने लगे।

तब मेघ ईर्यासमिति आदि से युक्त अनगार हुए। यहाँ ('औपपातिकसूत्र के अनुसार) अनगार का समस्त वर्णन कहना चाहिए।

तए णं से मेहे अणगारे समणस्स भगवओ महावीरस्स तहारूवाणं थेराणं सामाइयमाइयाणि एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ, अहिज्जित्ता बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठमदसमदुवालसेहिं मासद्धमासखमणेहिं अ भावेमाणे विहरइ।

तत्पश्चात् उन मेघ मुनि ने श्रमण भगवान् महावीर के निकट रह तथा प्रकार के स्थविर मुनियों से सामायिक से प्रारंभ करके ग्यारह अंगशा का अध्ययन किया। अध्ययन करके बहुत से उपवास, बेला, तेला, चौला पंचौला आदि से तथा अर्धमासखमण एवं मासखमण आदि तपस्या से आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे।

विहार और प्रतिमावहन

तए णं समणे भगवं महावीरे रायगिहाओ नगराओ गुणसिलाओ चेइयाओ पडिणिक्खमइ। पडिणिक्खमित्ता बहिया जणवयविहारं विहरइ।

तत्पश्चात् श्रमण भगवान् महावीर राजगृह नगर से, गुणसिलक चैत्य निकले। निकल कर बाहर जनपदों में विहार करने लगे-विचरने लगे।

तए णं से मेहे अणगारे अन्नया कयाइ समणं भगवं महावीरं वंदइ, नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी—इच्छामि णं ... तुब्भेहिं अब्भणुन्नाए समाणे मासियं भिक्खुपडिमं उव विहरित्तए।'

'अहासुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबंधं करेह।'

तत्पश्चात् उन मेघ अनगार ने किसी अन्य समय श्रमण भग वीर को वन्दना की, नमस्कार किया। वन्दना नमस्कार करके इ कहा-'भगवन्! मैं आपकी अनुमति पाकर एक मास की मर्यादा या प्रतिमा को अंगीकार करके विचरने की इच्छा करता हूँ।'

भगवान् ने कहा-'देवानुप्रिय! तुम्हें जैसे सुख उपजे वैसा करो। बन्ध अर्थात् इच्छित कार्य का विघात न करो-विलम्ब न करो।'

तए णं से मेहे समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुन्नाए समाणे मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ता णं विहरइ। मासियं भिक्खुपडिमं अहासुत्तं अहाकप्पं अहामग्गं सम्मं काएणं फासेइ, पालेइ, सोहेइ, तीरेइ, किट्टेइ, सम्मं काएण फासित्ता पालित्ता सोहेत्ता तीरेत्ता किट्टेत्ता पुणरवि समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी—

तत्पश्चात् श्रमण भगवान् महावीर द्वारा अनुमति पाये हुए मेघ अनगार एक मास की भिक्षुप्रतिमा अंगीकार करके विचरने लगे। एक मास की भिक्षु-प्रतिमा को यथासूत्र-सूत्र के अनुसार, कल्प (आचार) के अनुसार, मार्ग (ज्ञानादि मार्ग या क्षायोपशमिक भाव) के अनुसार सम्यक् प्रकार से काय से ग्रहण किया, निरन्तर सावधान रह कर उसका पालन किया, पारणा के दिन गुरु को देकर शेष बचा भोजन करके शोभित किया, अथवा अतिचारों का निवारण करके शोधन किया, प्रतिमा का काल पूर्ण हो जाने पर भी किंचित् काल अधिक प्रतिमा में रहकर तीर्ण किया, पारणा के दिन प्रतिमा संबंधी कार्यों का कथन करके कीर्त्तन किया। इस प्रकार समीचीन रूप से काया से स्पर्श करके, पालन करके, शोभित या शोधित करके, तीर्ण करके एवं कीर्त्तन करके पुनः श्रमण भगवान् महावीर को वन्दन-नमस्कार किया। वन्दना-नमस्कार करके इस प्रकार कहा—

'इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुन्नाए समाणे दोमासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए।'

'अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह।'

जहा पढमाए अभिलावो तहा दोचाए तचाए चउत्थाए पंचमाए छम्मासियाए सत्तमासियाए पढमसत्तराइंदियाए दोच्चं सत्तराइंदियाए तइयं सत्तराइंदियाए अहोराइंदियाए वि एगराइंदियाए वि।

'भगवन्! आपकी अनुमति प्राप्त करके मैं दो मास की दूसरी भिक्षु-प्रतिमा अंगीकार करके विचरना चाहता हूं।'

भगवान् ने कहा—'देवानुप्रिय ! जैसे सुख उपजे वैसा करो। प्रतिबन्ध मत करो।'

जिस प्रकार पहली प्रतिमा में आलापक कहा है, उसी प्रकार दूसरी प्रतिमा दो मास की, तीसरी तीन मास की, चौथी चार मास की, पाँचवीं पाँच मास की, छठी छह मास की, सातवीं सात मास की, फिर पहली आठवीं सात अहोरात्र की, दूसरी अर्थात् नौवीं भी सात अहोरात्र की, तीसरी अर्थात् दसवीं भी सात अहोरात्र की, और ग्यारहवीं तथा बारहवीं अहोरात्र की कहना चाहिए।

तए णं से मेहे अणगारे बारस भिक्खुपडिमाओ सम्मं काएणं फासेत्ता पालेत्ता सोहेत्ता तीरेत्ता किट्टेत्ता पुणरवि वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी—'इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुन्नाए समाणे गुणरयणसंवच्छरं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए।'

'अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह।'

तत्पश्चात् मेघ अनगार ने बारहों भिक्षुप्रतिमाओं का सम्यक् प्रकार काय से स्पर्श करके, पालन करके, शोधन करके, तीर्ण करके और कीर्तन करके पुनः श्रमण भगवान् महावीर को वन्दन-नमस्कार किया। वन्दन-नमस्कार करके इस प्रकार कहा—'भगवन् ! मैं आपकी आज्ञा प्राप्त करके गुणरत्नसंवत्सर नामक तपःकर्म अंगीकार करके विचरना चाहता हूँ।'

भगवान् बोले—'हे देवानुप्रिय ! जैसे सुख उपजे वैसा करो। प्रतिबन्ध मत करो।'

[गुणरत्न संवत्सर नामक तप में तेरह मास और सत्तरह दिन उपवास के होते हैं और तिहत्तर दिन पारणा के। इस प्रकार सोलह मास में इस तप का अनुष्ठान किया जाता है। तपस्या का यंत्र इस प्रकार है:—

मास	तप	तपोदिन	पारणा दिवस	कुल
१	उपवास	१५	१५	३०
२	बेला	२०	१०	३०
३	तेला	२४	८	३२
४	चौला	२४	६	३०
५	पचौला	२५	५	३०
६	छह उपवास	२४	४	
७	सात "	२१	३	
८	आठ "	२४	३	

म	तप	तपोदिन	पारणा दिवस	कुल दिन
	नौ ,,	२७	३	३०
	दस ,,	३०	३	३३
	ग्यारह ,,	३३	३	३६
	बारह ,,	२४	२	२६
	तेरह ,,	२६	२	२८
	चौदह ,,	२८	२	३०
	पन्द्रह ,,	३०	२	३२
	सोलह ,	३२	२	३४
		४०७	७३	४८०

जिस मास में जितने दिन कम हैं, उसमें अगले मास के उतने दिन
म्म लेने चाहिए। इसी प्रकार जिस मास में अधिक हैं, उसके दिन अगले
स में सम्मिलित कर देने चाहिए।]

तए णं से मेहे अणगारे पढमं मासं चउत्थं चउत्थेणं अणिक्खि-
णं तवोकम्मेणं दिया ठाणुक्कुडुए सूराभिमुहे आयावणभूमीए आया-
माणे रत्तिं वीरासणेणं अवाउडएणं।

दोच्चं मासं छट्ठंछट्ठेणं०, तच्चं मासं अट्ठमंअट्ठमेणं०, चउत्थं मासं
समंदसमेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं दिया ठाणुक्कुडुए सूराभिमुहे
आयावणभूमीए आयावेमाणे रत्तिं वीरासणेणं अवाउडएणं। पंचमं
ासं दुवालसमंदुवालसमेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं दिया ठाणुक्कु-
ए सूराभिमुहे आयावणभूमीए आयावेमाणे रत्तिं वीरासणेणं अवा-
डएणं। एवं खलु एएणं अभिलावेणं छट्ठे चोद्दसमंचोद्दसमेणं, सत्तमे
ोलसमंसोलसमेणं, अट्ठमे अट्ठारसमं अट्ठारसमेणं, नवमे वीसतिमंवी-
तिमेणं, दसमे बावीसइमंबावीसइमेणं, एक्कारसमे चउवीसइमंचउ-
ीसइमेणं, बारसमे छव्वीसइमंछव्वीसइमेणं, तेरसमे अट्ठावीसइमंअट्ठा-
ीसइमेणं, चोद्दसमे तीसइमंतीसइमेणं, पंचदसमे बत्तीसइमंबत्तीसइमेणं,
ोलसमे मासे चउत्तीसइमंचउत्तीसइमेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं
दिया ठाणुक्कुडुएणं सूराभिमुहे आयावणभूमीए आयावेमाणे राइं वीरा-
सणेण य अवाउडएण य।

तत्पश्चात् मेघ अनगार पहले महीने में निरन्तर चतुर्थभक्त अर्थात् एकान्तर उपवास की तपस्या के साथ विचरने लगे। दिन में उत्कट (गोदोहन) आसन से रहने और सूर्य के सन्मुख आतापना लेने की भूमि में आतापना लेते। रात्रि में प्रावरण (वस्त्र) से रहित होकर वीरासन* से स्थित रहते थे।

इसी प्रकार दूसरे महीने निरन्तर षष्ठभक्त तप तीसरे महीने अष्टमभक्त तथा चौथे मास में दशमभक्त तप करते हुए विचरने लगे। दिन में उत्कट आसन से स्थित रहते, सूर्य के सामने, आतापना भूमि में आतापना लेते और रात्रि में प्रावरणरहित होकर वीरासन से रहते।

पाँचवें मास में द्वादशम-द्वादशम (पचोले-पचोले) का निरन्तर तप करने लगे। दिन में उत्कट आसन से स्थित होकर, सूर्य के सन्मुख, आतापना भूमि में आतापना लेते और रात्रि में प्रावरणरहित होकर वीरासन से रहते थे।

इस प्रकार इसी आलापक के साथ छठे मास में छह-छह उपवास का, सातवें मास में सात-सात उपवास का, आठवें मास में आठ-आठ उपवास का, नौवें मास में नौ-नौ उपवास का, दसवें मास में दस-दस उपवास का, ग्यारहवें मास में ग्यारह-ग्यारह उपवास का, बारहवें मास में बारह-बारह उपवास का, तेरहवें मास में तेरह-तेरह उपवास का, चौदहवें मास में चौदह-चौदह उपवास का, पन्द्रहवें मास में पन्द्रह-पन्द्रह उपवास का और सोलहवें मास में सोलह-सोलह उपवास का निरन्तर तपकर्म करते हुए विचरने लगे। दिन में उकडू आसन से सूर्य के सन्मुख आतापनाभूमि में आतापना लेते थे और रात्रि में प्रावरणरहित होकर वीरासन से स्थित रहते थे।

तए णं से मेहे अणगारे गुणरयणसंवच्छरं तवोकम्मं अहासुत्तं जाव सम्मं काएण फासेइ, पालेइ, सोहेइ, तीरेइ, किट्टेइ, अहासुत्तं अहाकप्पं जाव किट्टेत्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ, नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता बहूहिं छट्ठट्ठमदसमदुवालसेहिं मासद्धमासखमणेहिं विचित्तेहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे विहरइ।

अर्थ—तत्पश्चात् मेघ अनगार ने गुणरत्नसंवत्सर नामक तपःकर्म का सूत्र के अनुसार यावत् सम्यक् प्रकार से काय द्वारा स्पर्श किया, पालन किया, शोधित या शोभित किया तथा कीर्तित किया। सूत्र के अनुसार और कल्प

*दोनों पैर पृथ्वी पर टेक कर सिंहासन या कुर्सी पर बैठा जाय और बाद में या कुर्सी हटा ली जाय तो जो आसन बनता है वह वीरासन कहलाता है।

अनुसार यावत् कीर्त्तन करके श्रमण भगवान् महावीर को वन्दन किया, नमस्कार किया। वन्दन-नमस्कार करके बहुत-से षष्ठभक्त, अष्टमभक्त, दशमभक्त, द्वादशमभक्त आदि तथा अर्धमासखमण एवं मासखमण आदि विचित्र प्रकार के तपःकर्म करके आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे।

तए णं से मेहे अणगारे तेणं उरालेणं विपुलेणं सस्सिरीएणं पयत्तेणं पग्गहिएणं कल्लाणेणं सिवेणं धन्नेणं मंगल्लेणं उदग्गेणं उदारएणं उत्तमेणं महाणुभावेणं तवोकम्मेणं सुक्के भुक्खे लुक्खे निम्मंसे निस्सोणिए किडिकिडियाभूए अट्ठिचम्मावणद्धे किसे धमणिसंतए जाए यावि होत्था।

जीवंजीवेणं गच्छइ, जीवंजीवेणं चिट्ठइ, भासं भासित्ता गिलायइ, भासं भासमाणे गिलायइ, भासं भासिस्सामि त्ति गिलायइ।

तत्पश्चात् यह मेघ अनगार उस उराल-प्रधान, विपुल दीर्घकालीन होने के कारण विस्तीर्ण, सश्रीक-शोभासम्पन्न, गुरु द्वारा प्रदत्त अथवा प्रयत्न-साध्य, बहुमानपूर्वक गृहीत, कल्याणकारी नीरोगताजनक, शिव-मुक्ति के कारण, धन्यधन प्रदान करने वाले, मांगल्य-पापविनाशक, उदग्र-तीव्र, उदार-निष्काम होने के कारण औदार्य वाले, उत्तम अज्ञानान्धकार से रहित और [illegible]

वह अपने जीव के बल से ही चलते एवं जीव के बल से ही खड़े रहते। भाषा बोलकर थक जाते, बात करते-करते थक जाते, यहाँ तक कि 'मैं बोलूंगा' ऐसा विचार करते ही थक जाते थे। तात्पर्य यह है कि पूर्वोक्त उग्र तपस्या के कारण उनका शरीर अत्यन्त ही दुर्बल हो गया था।

से जहानामए इंगालसगडियाइ वा, कट्ठसगडियाइ वा, पत्तसगडियाइ वा, तिलसगडियाइ वा, एरंडकट्ठसगडियाइ वा, उण्हे दिण्णा सुक्का समाणी ससद्दं गच्छइ, ससद्दं चिट्ठइ, एवामेव मेहे अणगारे ससद्दं गच्छइ, ससद्दं चिट्ठइ, उवचिए तवेणं, अवचिए मंससोणिएणं, हुयासणे इव भासरासिपरिच्छन्ने, तवेणं तेएणं तवतेयसिरीए अईव अईव उवसोभेमाणे उवसोभेमाणे चिट्ठइ।

मेघ मुनि ने इस प्रकार विचार किया। विचार करके दूसरे दिन रात्रि के प्रभात रूप में परिणत होने पर यावत सूर्य के जाज्वल्यमान होने पर जहाँ श्रमण भगवान महावीर थे, वहाँ पहुँचे। पहुँच कर श्रमण भगवान् महावीर को तीन वार दाहिनी ओर से आरंभ करके प्रदक्षिणा की। प्रदक्षिणा करके वंदना की नमस्कार किया। वन्दना-नमस्कार करके न बहुत समीप और न बहुत दूर योग्य-स्थान पर रह कर भगवान की सेवा करते हुए नमस्कार करते हुए, सन्मुख विनय के साथ दोनों हाथ जोड़ कर उपासना करने लगे अर्थात् बैठ गए।

मेहे त्ति समणे भगवं महावीरे मेहं अणगारं एवं वयासी–'से णूणं तव मेहा! राओ पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि धम्मजागरियं जागरमाणस्स अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–एवं खलु अहं इमेणं ओरालेणं जाव जेणेव अहं तेणेव हव्वमागए। से णूणं मेहा! अट्ठे समट्ठे?'

'हंता अत्थि।'

'अहासुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबंधं करेह।'

'हे मेघ!' इस प्रकार संबोधन करके श्रमण भगवान् महावीर ने मेघ अनगार से इस भाँति कहा—'निश्चय ही हे मेघ! रात्रि में, मध्य रात्रि के समय धर्मजागरणा जागते हुए तुम्हें इस प्रकार का विचार उत्पन्न हुआ है कि इस प्रकार निश्चय ही मैं इस प्रधान तप के कारण, इत्यादि यावत् जहाँ मैं हूँ वहाँ तुम तुरंत आये हो। हे मेघ! क्या यह अर्थ समर्थ है? अर्थात् यह बात सत्य है?

मेघ मुनि बोले—'हाँ, यह अर्थ समर्थ है।'

तब भगवान् ने कहा—'देवानुप्रिय! जैसे सुख उपजे वैसा करो। प्रतिबंध न करो।'

तए णं से मेहे अणगारे समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुन्नाए समाणे हट्ठ जाव हियए उट्ठाए उट्ठेइ, उट्ठाए उट्ठेत्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ, करित्ता वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता सयमेव पंच महव्वयाइं आरुहेइ, आरुहित्ता गोयमाइ समणे निग्गंथे निग्गंथीओ य खामेइ, खामेत्ता य तहारूवेहिं थेरेहिं सद्धिं विपुलं पव्वयं सणियं सणियं दुरूहइ, दुरूहित्ता

मेव मेहघणसन्निगासं पुढविसिलापट्टयं पडिलेहइ, पडिलेहित्ता उच्चार-पासवणभूमिं पडिलेहइ, पडिलेहित्ता दब्भसंथारगं संथरइ, संथरित्ता दब्भसंथारगं दुरूहइ, दुरुहित्ता पुरत्थाभिमुहे संपलियंकनिसन्ने करयल-परिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासीः—

'नमोऽत्थु णं अरिहंताणं भगवंताणं जाव संपत्ताणं, णमोऽत्थु णं समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव संपाविउकामस्स मम धम्मायरियस्स। वंदामि णं भगवंतं तत्थगयं इहगए, पासउ मे भगवं तत्थगए इहगयं' ति कट्टु वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासीः—

तत्पश्चात् वह मेघ अनगार श्रमण भगवान् महावीर की आज्ञा प्राप्त करके हृष्ट-तुष्ट हुए। उनके हृदय में आनन्द हुआ। वह उत्थान करके उठे और उठ कर श्रमण भगवान् महावीर को तीन बार दक्षिण दिशा से आरंभ करके प्रदक्षिणा की। प्रदक्षिणा करके वन्दना की, नमस्कार किया। वन्दना-नमस्कार करके स्वयं ही पाँच महाव्रतों का उच्चारण किया और गौतम आदि साधुओं को तथा साध्वियों को खमाया। खमा कर तथारूप (चारित्रवान्) और योगवहन आदि किये हुए स्थविर सन्तों के साथ धीरे-धीरे विपुल नामक पर्वत पर आरूढ़ हुए। आरूढ़ होकर स्वयं ही सघन मेघ के समान काले पृथ्वीशिलापट्टक की प्रतिलेखना की। प्रतिलेखना करके उच्चार-प्रस्रवण की-मलमूत्र त्यागने की-भूमि का प्रतिलेखन किया। प्रतिलेखन करके दर्भ का संथारा बिछाया और उस पर आरूढ़ हो गए। पूर्व दिशा के सन्मुख पद्मासन से बैठ कर, दोनों हाथ जोड़ कर और उन्हें मस्तक से स्पर्श करके (अंजलि करके) इस प्रकार बोले—

'अरिहन्त भगवन्तों को यावत् सिद्धि को प्राप्त सब तीर्थंकरों को नमस्कार हो। मेरे धर्माचार्य श्रमण भगवान् महावीर यावत् सिद्धिगति को प्राप्त करने के इच्छुक को नमस्कार हो। वहाँ (गुणशील चैत्य में) स्थित भगवान् को यहाँ (विपुलाचल पर) स्थित मैं वन्दना करता हूं। वहाँ स्थित भगवान् यहाँ स्थित मुझको देखें।' इस प्रकार कह कर भगवान् को वंदना की, नमस्कार किया। वन्दना-नमस्कार करके इस प्रकार कहा—

पुव्विं पि य णं मए समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए सव्वे पाणाइवाए पच्चक्खाए, मुसावाए अदिन्नादाणे मेहुणे परिग्गहे कोहे माणे माया लोहे पेज्जे दोसे कलहे अब्भक्खाणे पेसुन्ने परपरिवाए अरइ-रई मायामोसे मिच्छादंसणसल्ले पच्चक्खाए।

इयाणिं पि य णं अहं तस्सेव अंतिए सव्वं पाणाइवायं पच्चक्खामि जाव मिच्छादंसणसल्लं पच्चक्खामि । सव्वं असणपाणखाइमसाइमं चउव्विहं पि आहारं पच्चक्खामि जावज्जीवाए । जं पि य इमं सरी[रं] इट्ठं कंतं पियं जाव विविहा रोगायंका परीसहोवसग्गा फुसंतीति कट्टु, एयं पि य णं चरमेहिं ऊसासनिस्सासेहिं वोसिरामि त्ति कट्टु, संलेहणाझूसणाझूसिए भत्तपाणपडियाइक्खिए पाओवगए कालं अणवकंखमाणे विहरइ ।

पहले भी मैं ने श्रमण भगवान् महावीर के निकट समस्त प्राणातिपा[त] का त्याग किया है, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, कलह, अभ्याख्यान (मिथ्या दोषारोपण करना), पैशुन्य (चुगली), परपरिवाद (पराये दोषों का प्रकाशन), धर्म में अरति, अध[र्म में] रति, मायामृषा (वेष बदल कर ठगाई करना) और मिथ्यादर्शनशल्य, इ[न] सब का प्रत्याख्यान किया है ।

अब भी मैं उन्हीं भगवान् के निकट सम्पूर्ण प्राणातिपात का प्रत्याख्यान करता हूँ, यावत् मिथ्यादर्शनशल्य का प्रत्याख्यान करता हूं । तथा सब प्रकार [के] अशन, पान, खादिम और स्वादिम रूप चारों प्रकार के आहार का यावज्जी[वन] प्रत्याख्यान करता हूँ । और यह शरीर, जो इष्ट है, कान्त (मनोहर) है अ[ौर] प्रिय है, उसे यावत् रोग, शूलादिक आतंक, बाईस परीषह और उपसर्ग स्प[र्श] करते हैं, अतएव इस शरीर का भी मैं अन्तिम श्वासोच्छ्वास पर्यन्त परित्याग करता हूं ।'

इस प्रकार कह कर संलेखना को अंगीकार करके, भक्तपान का त्याग करके, पादपोपगमन समाधिमरण अंगीकार कर मृत्यु की भी कामना न [कर]ते हुए मेघ मुनि विचरने लगे ।

तए णं ते थेरा भगवंतो मेहस्स अणगारस्स अगिलाए वेय[ाव]डियं करेन्ति ।

तब वह स्थविर भगवन्त ग्लानिरहित होकर मेघ अनगार की वैय[ावृत्य] करने लगे ।

तए णं से मेहे अणगारे समणस्स भगवओ महावीरस्स तहा[रू]रूवाणं थेराणं अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जित्ता

एस णं भंते ! मेहे देवे ताओ देवलोयाओ आउक्खएणं, ठिइ
एणं, भवक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता कहिं गच्छिहिइ ? कहिं उ
वज्जिहिइ ?

भगवन् ! यह मेघ देव उस देवलोक से आयु का अर्थात् आयु कर्म
दलिकों का क्षय करके, आयुकर्म की स्थिति का वेदन द्वारा क्षय करके तथा भ
का अर्थात् देवभव के कारणभूत कर्मों का क्षय करके तथा देवभव के शरीर
त्याग करके अथवा देवलोक से च्यवन करके किस गति में जाएगा ? किस स्थान
पर उत्पन्न होगा ?

गोयमा ! महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ, बुज्झिहिइ, मुच्चि
परिनिव्वाहिइ, सव्वदुक्खाणमंतं काहिइ ।

हे गौतम ! महाविदेह वर्ष में (जन्म लेकर) सिद्धि प्राप्त करेगा-स
मनोरथों को सम्पन्न करेगा, केवलज्ञान से समस्त पदार्थों को जानेगा, स
कर्मों से मुक्त होगा और परिनिर्वाण प्राप्त करेगा, अर्थात् कर्मजनित सम
विकारों से रहित हो जाने के कारण स्वस्थ होगा और समस्त दुःखों का अ
करेगा ।

एवं खलु जंबू ! समणेणं भगवया महावीरेणं आइगरेणं तित्थयरेणं
जाव संपत्तेणं अप्पोपालंभनिमित्तं पढमस्स नायज्झयणस्स अयमट्ठे
पन्नत्ते त्ति बेमि ॥

पढमं अज्झयणं समत्तं

श्रीसुधर्मा स्वामी अपने प्रधान शिष्य जम्बू स्वामी से कहते ह
प्रकार हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर ने जो प्रवचन की आदि
वाले, तीर्थ की संस्थापना करने वाले यावत् मुक्ति को प्राप्त हुए हैं, आप्त (
कारी) गुरु को चाहिए कि वह अविनीत शिष्य को उपालंभ दे, इस प्रयोजन
प्रथम ज्ञाताध्ययन का यह अर्थ कहा है । ऐसा मैं कहता हूँ-अर्थात् तीर्थंकर
भगवान् ने जैसा फर्माया है, वैसा ही मैं तुमसे कहता हूँ ।

प्रथम अध्ययन समाप्त

संघाट नामक द्वितीय अध्ययन

जइ णं भंते! समणेणं भगवया महावीरेणं पढमस्स नायज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते, बिइयस्स णं भंते! नायज्झयणस्स के अट्ठे पन्नत्ते?

श्रीजम्बू स्वामी, श्री सुधर्मा स्वामी से प्रश्न करते हैं–'भगवन्! यदि श्रमण भगवान् महावीर ने प्रथम ज्ञाताध्ययन का यह (आपके द्वारा प्रतिपादित [उक्त) अर्थ कहा है, तो हे भगवन्! द्वितीय ज्ञाताध्ययन का क्या अर्थ कहा है?'

एवं खलु जंबू! ते णं काले णं ते णं समए णं रायगिहे णामं नयरे होत्था, वन्नओ। तत्थ णं रायगिहे णयरे सेणिए राया होत्था महया० वण्णओ। तस्स णं रायगिहस्स नगरस्स बहिया उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए गुणसिलए नामं चेइए होत्था, वन्नओ।

श्री सुधर्मा स्वामी, जम्बू स्वामी के प्रश्न का उत्तर देते हुए, द्वितीय अध्ययन के अर्थ की भूमिका प्रतिपादित करते हैं–'इस प्रकार हे जम्बू! उस काल और उस समय में राजगृह नामक नगर था। उसका वर्णन कह लेना चाहिए। उस राजगृह नगर में श्रेणिक राजा था। वह महान् हिमवन्त पर्वत के समान था, इत्यादि वर्णन भी औपपातिकसूत्र से समझ लेना चाहिए। उस राजगृह नगर से बाहर उत्तरपूर्व दिशा में ईशान कोण में–गुणशील नामक चैत्य था। उसका वर्णन भी कह लेना चाहिए।

तस्स णं गुणसिलयस्स चेइयस्स अदूरसामंते एत्थ णं महं एगे पडिय-जिण्णुज्जाणे यावि होत्था, विणट्ठदेवउले परिसाडियतोरणघरे नाणाविहगुच्छगुम्मलयावल्लिवच्छच्छाइए अणेगवालसयसंकणिज्जे यावि होत्था।

अंजणगुणोववेया माणुम्माणप्पमाणपडिपुण्णसुजायसव्वंगसुंदरंगी ससिसोमागारा कंता पियदंसणा सुरूवा करयलपरिमियतिवलियमज्झा कुंडलुल्लिहियगंडलेहा कोमुइरयणियरपडिपुण्णसोमवयणा सिंगारागारचारुवेसा जाव पडिरूवा वंझा अवियाउरी जाणुकोप्परमाया यावि होत्था।

उस राजगृह नगर में धन्य नामक सार्थवाह था। वह समृद्धिशाली था, तेजस्वी था और उसके घर बहुत-सा भोजन पानी तैयार होता था।

उस धन्य सार्थवाह की भद्रा नाम की पत्नी थी। उसके हाथ पैर सुकुमार थे। पाँचों इन्द्रियाँ हीनता से रहित परिपूर्ण थीं। वह स्वस्तिक आदि लक्षणों तथा तिल मसा आदि व्यंजनों के गुणों से युक्त थी। मान-उन्मान और प्रमाण से परिपूर्ण थी। अच्छी तरह उत्पन्न हुए—सुन्दर सब अवयवों के कारण वह सुन्दरांगी थी। उसका आकार चन्द्रमा के समान सौम्य था। वह अपने पति के लिए मनोहर थी। देखने में प्रिय लगती थी। सुरूपवती थी। मुट्ठी में समा जाने वाला उसका मध्यभाग (कटि प्रदेश) त्रिवलि से सुशोभित था। कुंडलों से उसके गंडस्थलों की रेखा घिसती रहती थी। उसका मुख पूर्णिमा के चन्द्र के समान सौम्य था। वह शृङ्गार का आगार थी। उसका वेष सुन्दर था। यावत् वह प्रतिरूप थी—उसका रूप प्रत्येक दर्शक को नया-नया ही दिखाई देता था। मगर वह वन्ध्या थी, प्रसव करने के स्वभाव से रहित थी। जानु और कूर्पर की ही माता थी, अर्थात् सन्तान न होने से जानु और कूर्पर ही उसके स्तनों का स्पर्श करते थे। या उसकी गोद में जानु और कूर्पर ही स्थित होते थे—पुत्र नहीं।

तस्स णं धण्णस्स सत्थवाहस्स पंथए नामं दासचेडे होत्था, सव्वंगसुंदरंगे मंसोवचिए बालकीलावणकुसले यावि होत्था।

उस धन्य सार्थवाह का पंथक नामक दास-चेटक था। वह सर्वाङ्ग सुन्दर था, मांस से पुष्ट था और बालकों को खेलाने में कुशल था।

तए णं से धण्णे सत्थवाहे रायगिहे नयरे बहूणं नगरनिगमसेट्ठिसत्थवाहाणं अट्ठारसण्ह य सेणिप्पसेणीणं बहुसु कज्जेसु य कुडुंबेसु य मंतेसु य जाव चक्खुभूए यावि होत्था। नियगस्स वि य णं कुडुंबस्स बहुसु य कज्जेसु जाव चक्खुभूए यावि होत्था।

वह धन्य सार्थवाह राजगृह नगर में बहुतसे नगर के व्यापारियों, श्रेष्ठियों और सार्थवाहों के तथा अठारहों श्रेणियों (जातियों) और प्रश्रेणियों के बहुत से कार्यों में, कुटुम्बों में और मंत्रणाओं में यावत् चक्षु के समान मार्ग-दर्शक था और अपने कुटुम्ब में भी बहुत-से कार्यों में यावत् चक्षु के समान था।

तत्थ णं रायगिहे नगरे विजए नामं तक्करे होत्था, पावे चंडालरूवे भीमतररुद्दकम्मे आरुसियदित्तरत्तनयणे खरफरुसमहल्लविगयबीभत्थदाढिए असंपुडियउट्ठे उद्धुयपइन्नलंबंतमुद्धए भमरराहुवन्ने निरणुक्कोसे निरणुतावे दारुणे पइभए निसंसइए निरणुकंपे अहिव्व एगंतदिट्ठिए, खुरे व एगंतधाराए, गिद्धे व आमिसतल्लिच्छे अग्गिमिव सव्वभक्खे, जलमिव सव्वगाही, उक्कंचणवंचणमायानियडिकूडकवडसाइसंपओगबहुले, चिरनगरविणट्ठदुट्ठसीलायारचरित्ते, जूयपसंगी, मज्जपसंगी, भोज्जपसंगी, मंसपसंगी, दारुणे, हिययदारए, साहसिए, संधिच्छेयए, उवहिए, विस्संभघाई, आलीयगतित्थभेयलहुहत्थसंपउत्ते, परस्स दव्वहरणम्मि निच्चं अणुबद्धे, तिव्ववेरे, रायगिहस्स नगरस्स बहूणि अइगमणाणि य निग्गमणाणि य दाराणि य अवदाराणि य छिंडिओ य खंडिओ य नगरनिद्धमणाणि य संवट्टणाणि य निव्वट्टणाणि य जूवखलयाणि य पाणागाराणि य वेसागाराणि य तद्दारट्ठाणाणि (तक्करट्ठाणाणि) य तक्करघराणि य सिंघाडगाणि य तियाणि य चउक्काणि य चच्चराणि य नागघराणि य भूयघराणि य जक्खदेउलाणि य सभाणि य पवाणि य पणियसालाणि य सुन्नघराणि य आभोएमाणे आभोएमाणे मग्गमाणे गवेसमाणे, बहुजणस्स छिद्देसु य [illegible]मेसु य विहुरेसु य वसणेसु य अब्भुदएसु य उस्सवेसु य पसवेसु य [illegible]हीसु य छणेसु य जन्नेसु य पव्वणीसु य मत्तपमत्तस्स य वक्खित्तस्स य वाउलस्स य सुहियस्स य दुक्खियस्स य विदेसत्थस्स य विप्पवसियस्स य मग्गं च छिद्दं च विरहं च अंतरं च मग्गमाणे गवेसमाणे एवं [illegible]णं विहरइ।

उस राजगृह नगर में विजय नामक एक चोर था। वह पाप कर्म करने वा[illegible], चाण्डाल के समान रूप वाला, अत्यन्त भयानक और क्रूर कर्म करने

वाला था। क्रुद्ध हुए पुरुष के समान देदीप्यमान और लाल उसके नेत्र थे। उसकी दाढ़ी या दाढें अत्यन्त कठोर, मोटी, विकृत और बीभत्स (डरावनी) थीं। उसके होंठ आपस में मिलते नहीं थे, अर्थात् दांत बड़े और बाहर निकले हुए थे और होंठ छोटे थे। उसके मस्तक के केश हवा से उड़ते रहते थे, बिखरे रहते थे और लम्बे थे। वह भ्रमर अथवा राहु के समान काला था। वह दया और पश्चात्ताप से रहित था। दारुण (रौद्र) था और इसी कारण भय उत्पन्न करता था। वह नृशंस-नरघातक था। उसे प्राणियों पर अनुकम्पा नहीं थी। वह साँप की भाँति एकान्त दृष्टि वाला था, अर्थात् किसी भी कार्य के लिए पक्का निश्चय कर लेता था। वह छुरे की तरह एक धार वाला था, अर्थात् जिसके घर चोरी करने का निश्चय करता, उसी में पूरी तरह संलग्न हो जाता था। वह गिद्ध की तरह मांस का लोलुप था और अग्नि के समान सर्वभक्षी था अर्थात् जिसकी चोरी करता, उसका सर्वस्व हरण कर लेता था। जल के समान सर्वग्राही था, अर्थात् नजर पर चढ़ी सब वस्तुओं को अपहरण कर लेता था। वह उत्कंचन में (हीन गुण वाली वस्तु को अधिक मूल्य लेने के लिए उत्कृष्ट गुण वाली बतानें में), वंचन-दूसरों को ठगने में, माया (पर को धोखा देने की बुद्धि) में, निकृति-बगुला के समान ढोंग करने में, कूट में अर्थात् तोल-नाप को कम-ज्यादा करने में और कपट करने अर्थात् वेष और भाषा को बदलने में अति निपुण था। सातिसंप्रयोग में उत्कृष्ट वस्तु में मिलावट करने में भी निपुण था या अविश्वास करने में चतुर था। वह चिरकाल से नगर में उपद्रव कर रहा था। उसका शील, आकार और चरित्र अत्यन्त दूषित था। वह द्यूत में आसक्त था, मदिरापान में अनुरक्त था, अच्छा भोजन करने में गृद्ध था और मांस में लोलुप था। लोगों के हृदय को विदारण कर देने वाला, साहसी-परिणाम का विचार न करके कार्य करने वाला, सेंध लगाने वाला, गुप्त कार्य करने वाला, विश्वासघाती और आग लगा देने वाला था। तीर्थ रूप देवद्रोणी आदि का भेदन करने वाला और हस्तलाघव वाला था। पराया द्रव्य हरण करने में सदैव तैयार रहता था। तीव्र वैर वाला था।

वह विजय चोर राजगृह नगर के बहुत-से प्रवेश करने के मार्गों, निकलने के मार्गों, दरवाजों, पीछे की खिड़कियों, छिंडियों, किले की छोटी खिड़कियों, मोरियों, रास्ते मिलने की जगहों, रास्ते अलग-अलग होने के स्थानों, जुआ के अखाड़ों, मदिरापान के स्थानों, वेश्या के घरों, उनके घरों के द्वारों (चोरों के अड्डों) चोरों के घरों, शृङ्गाटकों-सिंघाड़े के आकार के मार्गों, तीन मार्ग मिलने के स्थानों, चौकों, अनेक मार्ग मिलने के स्थानों, नागदेव के गृहों, भूतों के गृहों, यक्षगृहों, सभास्थानों, प्याउओं, दुकानों और शून्यगृहों को देखता।

'अहं धन्नेण सत्थवाहेण सद्धिं बहूणि वासाणि सद्दफरिसरसगंधरूवाणि माणुस्सयाइं कामभोगाइं पच्चणुभवमाणी विहरामि। नो चेव णं अहं दारगं वा दारिगं वा पयायामि।

तं धन्नाओ णं ताओ अम्मयाओ जाव सुलद्धे णं माणुस्सए जम्मजीवियफले तासिं अम्मयाणं, जासिं मन्ने णियगकुच्छिसंभूयाइं थणदुद्धलुद्धयाइं महुरसमुल्लावगाइं मम्मणपजंपियाइं थणमूलकक्खदेसभागं अभिसरमाणाइं मुद्धयाइं थणयं पिबंति। तओ य कोमलकमलोवमेहिं हत्थेहिं गिण्हिऊणं उच्छंगे निवेसियाइं देन्ति समुल्लावए पिए सुमहुरे पुणो पुणो मंजुलप्पभणिए।

तं अहं णं अधन्ना अपुन्ना अलक्खणा अकयपुन्ना एत्तो एगमवि न पत्ता।'

धन्य सार्थवाह की भार्या भद्रा एक बार कदाचित् मध्यरात्रि के समय कुटुम्ब सम्बन्धी चिन्ता कर रही थी कि उसे इस प्रकार का विचार यावत् उत्पन्न हुआ—

बहुत वर्षों से मैं धन्य सार्थवाह के साथ शब्द, स्पर्श, रस, गन्ध और रूप यह पाँचों प्रकार के मनुष्य सम्बन्धी कामभोग भोगती हुई विचर रही हूँ, परन्तु मैंने एक भी पुत्र या पुत्री को जन्म नहीं दिया।

वे माताएँ धन्य हैं, यावत् उन माताओं को मनुष्य-जन्म और जीवन का फल भला प्राप्त हुआ है, जो माताएँ, मैं मानती हूँ कि, अपनी कूँख से उत्पन्न हुए, स्तनों का दूध पीने में लुब्ध, मीठे बोल बोलने वाले, तुतला-तुतला कर बोलने वाले और स्तन के मूल से काँख के प्रदेश की ओर सरकने वाले मुग्ध बालकों को स्तनपान कराती हैं। और फिर कोमल कमल के समान हाथों से उन्हें पकड़ कर अपनी गोद में बिठलाती हैं और बार बार अतिशय प्रिय वचन वाले मधुर उल्लाप देती हैं।

सो मैं अधन्य हूँ, पुण्यहीन हूँ, कुलक्षणा हूँ और पापिनी हूँ कि इनमें से एक भी (विशेषण) न पा सकी।

तं सेयं मम कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए जाव जलंते धण्णं सत्थवाहं आपुच्छित्ता धण्णेणं सत्थवाहेणं अब्भणुन्नाया समाणी

विउलं असणपाणखाइमसाइमं उवक्खडावेत्ता सुबहुं पुप्फवत्थगंधमल्लालंकारं गहाय बहूहिं मित्तनाइनियगसयणसंबंधिपरिजणमहिलाहिं सद्धिं संपरिवुडा जाइं इमाइं रायगिहस्स नगरस्स बहिया णागाणि य भूयाणि य जक्खाणि य इंदाणि य खंदाणि य रुद्दाणि य सेवाणि य वेसमणाणि य तत्थ णं बहूणं नागपडिमाण य जाव वेसमणपडिमाण य महरिहं पुप्फच्चणियं करेत्ता जाणुपायपडियाए एवं वइत्तए:—जइ णं अहं देवाणुप्पिया ! दारगं वा दारिगं वा पयायामि, तो णं अहं तुम्हं जायं च दायं च भायं च अक्खयणिहिं च अणुवड्ढेमि त्ति कट्टु, उवाइयं उवाइत्तए।

अतएव मेरे लिए यही श्रेयस्कर है कि कल रात्रि के प्रभात रूप में प्राप्त होने पर और सूर्योदय होने पर धन्य सार्थवाह से पूछ कर, धन्य सार्थवाह की आज्ञा पाकर मैं बहुत अधिक अशन, पान, खादिम और स्वादिम आहार तैयार कराके बहुत-से पुष्प वस्त्र गंध माला और अलंकार ग्रहण करके बहुसंख्यक मित्रों, ज्ञातिजनों, निजजनों, स्वजनों संबंधियों, परिजनों की महिलाओं के साथ परिवृत होकर, राजगृह नगर के बाहर जो नाग, भूत, यक्ष, इन्द्र, स्कन्द, रुद्र, शिव और वैश्रमण आदि देवों के आयतन हैं और उनमें जो नाग की प्रतिमा यावत् वैश्रमण की प्रतिमा हैं, उनकी बहुमूल्य पुष्पादि से पूजा करके घुटने और पैर झुका कर अर्थात् उनको नमस्कार करके इस प्रकार कहूँ—'हे देवानुप्रिय ! यदि मैं एक भी पुत्र या पुत्री को जन्म दूँगी तो मैं तुम्हारी पूजा करूँगी, पर्व के दिन दान दूँगी, भाग-द्रव्य के लाभ का हिस्सा दूँगी और तुम्हारे अक्षय निधि की वृद्धि करूँगी। इस प्रकार अपनी इष्ट वस्तु की याचना करूँ।

एवं संपेहेइ, संपेहित्ता कल्लं जाव जलंते जेणामेव धण्णे सत्थवाहे तेणामेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता एवं वयासी—एवं खलु अहं देवाणुप्पिया ! तुम्हेहिं सद्धिं बहूइं वासाइं जाव देंति समणुब्भवमाणी सुमहूइं पुत्ताई पुत्तो मंगलपलालिए। तं णं अहं अहन्ना अपुन्ना अकयलक्खणा, एत्तो एगमवि न पत्ता। तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया ! तुब्भेहिं अब्भणुन्नाया समाणी विउलं असणं ४ जाव अणुवड्ढेमि, उवाइयं करित्तए।

भद्रा ने इस प्रकार विचार किया। विचार करके दूसरे दिन यावत् सूर्य के उदय होने पर जहाँ धन्य सार्थवाह थे, वहाँ आई। आकर इस प्रकार बोली—

हे देवानुप्रिय ! मैं ने आपके साथ बहुत वर्षों तक कामभोग भोगे हैं। वे धन्य स्त्रियाँ बार-बार अति मधुर वचन वाले उल्लाप देती हैं-अपने बच्चों को लोरियाँ गाती हैं, किन्तु मैं अधन्य, पुण्य-हीन और लक्षणहीन हूं, जिससे पूर्वोक्त विशेषणों में से एक भी विशेषण न पा सकी। तो हे देवानुप्रिय ! मैं चाहती हूं कि आपकी आज्ञा पाकर विपुल अशन आदि तैयार कराकर नाग आदि की पूजा करूँ यावत् उनकी अक्षय निधि की वृद्धि करूँ, ऐसी मनौती मनाऊँ। (पूर्वसूत्र के अनुसार यहाँ भी सब कह लेना चाहिए)

तए णं धण्णे सत्थवाहे भद्दं भारियं एवं वयासी-ममं पि य णं खलु देवाणुप्पिए ! एस चेव मणोरहे-कहं णं तुमं दारगं दारियं वा पयाएज्जसि ?' भद्दाए सत्थवाहीए एयमट्ठं अणुजाणाइ।

तत्पश्चात धन्य सार्थवाह ने भद्रा भार्या से इस प्रकार कहा-'हे देवानुप्रिये ! निश्चय ही मेरा भी यही मनोरथ है कि किस प्रकार तुम पुत्र या पुत्री का प्रसव करो।' इस प्रकार कह कर भद्रा सार्थवाही को उस अर्थ की-उसने वैसा करने की अनुमति दे दी।

तए णं सा भद्दा सत्थवाही धण्णेणं सत्थवाहेणं अब्भणुन्नाया समाणी हट्ठतुट्ठ जाव हयहियया विपुलं असणपाणखाइमसाइमं उवक्खडावेइ। उवक्खडावेत्ता सुबहुं पुप्फगंधवत्थमल्लालंकारं गेण्हइ। गेण्हित्ता सयाओ गिहाओ निग्गच्छइ। निग्गच्छित्ता रायगिहं नगरं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छइ। निग्गच्छित्ता पोक्खरिणी तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता पुक्खरिणीए तीरे सुबहुं पुप्फ जाव मल्लालंकारं ठवेइ। ठवित्ता पुक्खरिणिं ओगाहइ। ओगाहित्ता जलमज्जणं करेइ, जलकीडं करेइ, करित्ता ण्हाया कयबलिकम्मा उल्लपडसाडिगा जाइं तत्थ उप्पलाइं जाव सहस्सपत्ताइं ताइं गिण्हइ। गिण्हित्ता पुक्खरिणीओ पच्चोरुहइ। पच्चोरुहित्ता तं सुबहुं पुप्फगंधमल्लं गेण्हइ। गेण्हित्ता जेणामेव नागघरए य जाव वेसमणघरए य तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता तत्थ णं नागपडिमाण य जाव वेसमणपडिमाण य आलोए पणामं करेइ, ईसिं पच्चुन्नमइ। पच्चुन्नमित्ता लोमहत्थगं परामुसइ। परामुसित्ता नागपडिमाओ य जाव वेसमणपडिमाओ य लोमहत्थेणं

पुष्करिणी थी, वहाँ आई। आने पर उन मित्र ज्ञाति यावत् नगर की स्त्रियों ने भद्रा सार्थवाही को सर्व आभूषणों से अलंकृत किया।

तत्पश्चात् भद्रा सार्थवाही ने उन मित्र, ज्ञाति, निजक, स्वजन, सबंधी, परिजन एवं नगर की स्त्रियों के साथ विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम का यावत् परिभोग करके अपने दोहद को पूर्ण किया। पूर्ण करके जिस दिशा से वह प्रादुर्भूत हुई थी, उसी दिशा में लौट गई।

तए णं सा भद्दा सत्थवाही संपुन्नडोहला जाव तं गब्भं सुहंसुहेणं परिवहइ।

तएणं सा भद्दा सत्थवाही णवण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं अद्धट्ठमाण राइंदियाणं सुकुमालपाणिपायं जाव दारगं पयाया।

तत्पश्चात् भद्रा सार्थवाही दोहद पूर्ण करके यावत् उस गर्भ को सुखपूर्वक वहन करने लगी।

तत्पश्चात् उस भद्रा सार्थवाही ने नौ मास सम्पूर्ण हो जाने पर और साढ़े सात दिन रात व्यतीत हो जाने पर सुकुमार हाथों-पैरों वाले बालक का प्रसव किया।

तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो पढमे दिवसे जातकम्मं करेन्ति, करित्ता तहेव जाव विउलं असणंपाणखाइमसाइमं उवक्खडावेंति, उवक्खडावित्ता तहेव मित्तनाइ० भोयावेत्ता अयमेयारूवं गोण्णं गुणनिप्फण्णं नामधेज्जं करेंति—'जम्हा णं अम्हं इमे दारए बहूणं नागपडिमाण य जाव वेसमणपडिमाण य उवाइयलद्धे णं तं होउ णं अम्हं इमे दारए देवदिन्ननामेणं।'

तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो जायं च दायं च भायं च अक्खयनिहिं च अणुवड्ढेन्ति।

तत्पश्चात् उस बालक के माता-पिता ने पहले दिन जातकर्म नामक संस्कार किया। करके उसी प्रकार यावत् अशन, पान, खादिम और स्वादिम आहार तैयार करवाया। तैयार करवाकर उसी प्रकार मित्र ज्ञाति जनों आदि को भोजन कराकर इस प्रकार का गौण अर्थात् गुणनिष्पन्न नाम रक्खा—'क्योंकि हमारा यह पुत्र बहुत-सी नागप्रतिमाओं यावत् वैश्रमणप्रतिमाओं की

एकान्त में-एक ओर बिठला दिया। बिठला कर बहुसंख्यक बालकों यावत् कुमारिकाओं के साथ, (देवदत्त की ओर से) असावधान होकर खेलने लगा-विचरने लगा।

इमं च णं विजए तक्करे रायगिहस्स नगरस्स बहूणि याराणि य अवदाराणि य तहेव जाव आभोएमाणे मग्गेमाणे गवेसेमाणे जेणेव देवदिन्ने दारए तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता देवदिन्नं दारगं सव्वालंकारविभूसियं पासइ। पासित्ता देवदिन्नस्स दारगस्स आभरणालंकारेसु मुच्छिए गढिए गिद्धे अज्झोववन्ने पंथयं दासचेडं पमत्तं पासइ। पासित्ता दिसालोयं करेइ। करेत्ता देवदिन्नं दारयं गेण्हइ। गेण्हित्ता कक्खंसि अल्लियावेइ। अल्लियावित्ता उत्तरिज्जेणं पिहेइ। पिहेत्ता सिग्घं तुरियं चवलं वेइयं रायगिहस्स नगरस्स अवदारेणं निग्गच्छइ। निग्गच्छित्ता जेणेव जिण्णुज्जाणे, जेणेव भग्गकूवए तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता देवदिन्नं दारयं जीवियाओ ववरोवेइ। ववरोवित्ता आभरणालंकारं गेण्हइ। गेण्हित्ता देवदिन्नस्स दारगस्स सरीरयं निप्पाणं निच्चेट्ठं जीवियविप्पजढं भग्गकूवए पक्खिवइ। पक्खिवित्ता जेणेव मालुयाकच्छए तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता मालुयाकच्छयं अणुपविसइ। अणुपविसित्ता निच्चले निप्फंदे तुसिणीए दिवसं खिवेमाणे चिट्ठइ।

इसी समय विजय चोर राजगृह नगर के बहुतसे द्वारों एवं अपद्वारों आदि को यावत् देखता हुआ, उनकी मार्गणा करता हुआ, गवेषणा करता हुआ, जहाँ देवदत्त बालक था, वहाँ आ पहुँचा। आकर देवदत्त बालक को सभी आभूषणों से भूषित देखा। देखकर बालक देवदत्त के आभरणों और अलंकारों में मूर्छित (मूढ-विवेकविहीन) हो गया, ग्रथित (लोभ से ग्रस्त) हो गया, गृद्ध (आकांक्षायुक्त) हो गया और अध्युपपन्न (उसमें अत्यन्त तन्मय) हो गया। उसने दासचेटक पंथक को बेखबर देखा और चारों ओर दिशाओं का अवलोकन किया। फिर बालक देवदत्त को उठाया और उठाकर कांख में दबा लिया। ओढ़ने के कपड़े से उसे छिपा लिया-ढँक लिया। फिर शीघ्र, त्वरित, चपल और उतावल के साथ राजगृह नगर के अपद्वार से बाहर निकल गया। निकल कर जहाँ जीर्ण उद्यान था और जहाँ टूटा-फूटा कुआ था, वहाँ पहुँचा।

कर देवदत्त बालक को जीवन से रहित कर दिया। उसे निर्जीव करके उसके आभरण और अलंकार ले लिये। फिर बालक देवदत्त के प्राणहीन, चेष्टा एवं निर्जीव शरीर को उस भग्न कूप में पटक दिया। इसके बाद वह मालु कच्छ में घुस गया और निश्चल अर्थात् गमनागमनरहित, निस्पन्द-हाथों-को भी न हिलाता हुआ, और मौन रहकर दिन समाप्त होने की राह देखने लग

तए णं से पंथए दासचेडे तओ मुहुत्तंतरस्स जेणेव देवदिन्ने दा ठविए तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता देवदिन्नं दारयं तंसि ठाणं अपासमाणे रोयमाणे कंदमाणे विलवमाणे देवदिन्नदारगस्स सव्व समंता मग्गणगवेसणं करेइ। करित्ता देवदिन्नस्स दारगस्स क सुइं वा खुइं वा पउत्तिं वा अलभमाणे जेणेव सए गिहे, जेणेव ध सत्थवाहे तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता धण्णं सत्थवाहं वयासी-'एवं खलु सामी! भद्दा सत्थवाही देवदिन्नं दारयं ण्ह जाव मम हत्थंसि दलयइ। तए णं अहं देवदिन्नं दारयं क गिण्हामि। गिण्हित्ता जाव मग्गणगवेसणं करेमि, तं न णज्ज सामी! देवदिन्ने दारए केणइ हए वा अवहिए वा अवखित्ते वा प वढिए धण्णस्स सत्थवाहस्स एयमट्ठं निवेदेइ।

तत्पश्चात् वह पंथक नामक दासचेटक थोड़ी देर बाद जहाँ बालक दत्त को बिठलाया था, वहाँ पहुँचा। पहुँचने पर उसने देवदत्त बालक को स्थान पर न देखा। वह रोता, चिल्लाता और विलाप करता हुआ सब ओर उसकी ढूंढ-खोज करने लगा। मगर कहीं भी उसे बालक देवदत्त की खब मिली, छींक वगैरह का शब्द न सुनाई दिया, न पता चला। तब वह जहाँ अ घर था और जहाँ धन्य सार्थवाह था, वहाँ पहुँचा। पहुँच कर धन्य सार्थवा इस प्रकार कहने लगा-'स्वामिन्! इस प्रकार भद्रा सार्थवाही ने स्नान किये बालक देवदत्त को यावत् मेरे हाथ में दिया। तत्पश्चात् मैंने बालक देवद कमर से ले लिया। लेकर (बाहर ले गया, एक जगह बिठलाया। थोड़ी बाद वह दिखाई न दिया) यावत् सब जगह उसकी ढूंढ-खोज की, परन्तु मालूम स्वामिन्! कि देवदत्त बालक को कोई मित्रादि अपने घर ले गया चोर ने अपहरण कर लिया है अथवा किसी ने ललचा लिया है?, इस प्र धन्य सार्थवाह के पैरों में पड़कर उसने सर्व निवेदन किया।

तए णं से धण्णे सत्थवाहे पंथयदासचेडयस्स एयमट्ठं सोच्चा णिस

णि यं महया पुत्तसोएणाभिभूए समाणे परसुणियत्ते चंपगपायवे धसत्ति
धरणीयलंसि सव्वंगेहिं सन्निवइए।

तत्पश्चात् धन्य सार्थवाह पंथक दासचेटक की यह बात सुन कर और
हृदय में धारण करके महान् पुत्रशोक से व्याकुल होकर, कुल्हाड़े से काटे हुए
चम्पक वृक्ष की तरह धड़ाम से पृथ्वी पर सब अंगों से गिर पड़ा-मूर्छित
हो गया।

तए णं से धण्णे सत्थवाहे तओ मुहुत्तंतरस्स आसत्थे पच्चागय-
पाणे देवदिन्नस्स दारगस्स सव्वओ समंता मग्गणगवेसणं करेइ।
देवदिन्नस्स दारगस्स कत्थइ सुइं वा खुइं वा पउत्तिं वा अलभमाणे
जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता महत्थं पाहुडं
गेण्हइ। गेण्हित्ता जेणेव नगरगुत्तिया तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता
तं महत्थं पाहुडं उवणेइ, उवणेइत्ता एवं वयासी—एवं खलु देवा-
णुप्पिया! मम पुत्ते भद्दाए भारियाए अत्तए देवदिन्ने नामं दारए
इट्ठे जाव उंबरपुप्फं पिव दुल्लहे सवणयाए किमंग पुण पासणयाए?

तत्पश्चात् धन्य सार्थवाह थोड़ी देर बाद आश्वस्त हुआ-होश में आया,
उसके प्राण मानों वापिस लौटे, उसने देवदत्त बालक की सब ओर ढूंढ-खोज
की, मगर कहीं भी देवदत्त बालक का पता न चला, छींक आदि का शब्द भी न
सुन पड़ा और न समाचार मिला। तब वह अपने घर पर आया। आकर
बहुमूल्य भेंट ली और जहाँ नगररक्षक-कोतवाल थे,वहाँ पहुँच कर वह बहुमूल्य
भेंट सामने रक्खी और इस प्रकार कहा—हे देवानुप्रियो! मेरा पुत्र और भद्रा
भार्या का आत्मज देवदत्त नामक बालक हमें इष्ट है, यावत् गूलर के फूल के
समान उसका नाम श्रवण करना भी दुर्लभ है तो फिर दर्शन का तो कहना
ही क्या है!

तए णं सा भद्दा देवदिन्नं ण्हायं सव्वालंकारविभूसियं पंथगस्स
हत्थे दलयइ, जाव पायवडिए तं मम निवेदेइ। तं इच्छामि णं देवा-
णुप्पिया! देवदिन्नदारगस्स सव्वओ समंता मग्गण-गवेसणं कयं
(करित्तए-करेह)।

तत्पश्चात् भद्रा ने देवदत्त को स्नान करा कर और समस्त अलंकारों से

कर मुझ से निवेदन किया। (यहाँ पिछला सब वृत्तान्त कह लेना चाहिए) तो हे देवानुप्रियो ! मैं चाहता हूँ कि आप देवदत्त बालक की सब जगह मार्गण गवेषणा करें।

तए णं ते नगरगोत्तिया धण्णेणं सत्थवाहेणं एवं वुत्ता समाण सन्नद्धबद्धवम्मियकवया उप्पीलियसरासणपट्टिया जाव गहियाउ पहरणा धण्णेणं सत्थवाहेणं सद्धिं रायगिहस्स नगरस्स बहूणि अइग णाणि य जाव पवासु य मग्गणगवेसणं करेमाणा रायगिहाओ न राओ पडिणिक्खमंति। पडिणिक्खमित्ता जेणेव जिण्णुज्जाणे जेणेव भग्ग कूवए तेणेव उवागच्छंति। उवागच्छित्ता देवदिन्नस्स दारगस्स सरीरं निप्पाणं निच्चेट्ठं जीवविप्पजढं पासंति। पासित्ता हा हा अहो अकज्ज मिति कट्टु देवदिन्नं दारयं भग्गकूवाओ उत्तारेंति। उत्तारित्त धण्णस्स सत्थवाहस्स हत्थे णं दलयंति।

तत्पश्चात् उन नगररक्षकों ने धन्य सार्थवाह के ऐसा कहने पर कव (बख्तर) तैयार किया, उसे कसों से बाँधा और शरीर पर धारण किया। धनु रूपी पट्टिका पर प्रत्यंचा चढ़ाई अथवा भुजाओं पर चमड़े का पट्टा बाँधा आयुध (शस्त्र) और प्रहरण (तीर आदि) ग्रहण किये। फिर धन्य सार्थवा के साथ राजगृह नगर के बहुत-से निकलने के मार्गों यावत् प्याऊ आदि ढूंढ-खोज करते हुए राजगृह नगर से बाहर निकले। निकल कर जहाँ जी उद्यान था और जहाँ भग्न कूप था, वहाँ आये। आकर उस कूप में निष्प्रा निश्चेष्ट एवं निर्जीव देवदत्त का शरीर देखा, देख कर 'हा, हा, अहो अकार्य इस प्रकार कह कर उन्होंने देवदत्त कुमार को उस भग्न कूप से बाहर निका और धन्य सार्थवाह के हाथ में सौंप दिया।

तए णं ते नगरगुत्तिया विजयस्स तक्करस्स पयमग्गमणुगच्छमाण जेणेव मालुयाकच्छए तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता मालुयाकच्छ अणुपविसंति, अणुपविसित्ता विजयं तक्करं ससक्खं सहोढं सगेवे जीवग्गाहं गिण्हंति। गिण्हित्ता अट्ठिमुट्ठिजाणुकोप्परपहारसंभग्गमहिय गत्तं करेंति। करित्ता अवउडाबंधणं करेंति। करित्ता देवदिन्न दारगस्स आभरणं गेण्हंति। गेण्हित्ता विजयस्स तक्करस्स गीव ... मालुयाकच्छगाओ पडिनिक्खमंति। पडिनिक्खमि

जेणेव रायगिहे नयरे तेणेव उवागच्छंति । उवागच्छित्ता रायगिहं नगरं अणुपविसंति । अणुपविसित्ता रायगिहे नगरे सिंघाडगतिय-चउक्कचच्चरमहापहपहेसु कसप्पहारे य लयप्पहारे य छिवापहारे य निवाएमाणा निवाएमाणा छारं च धूलिं च कयवरं च उवरिं पक्किरमाणा पक्किरमाणा महया महया सद्देणं उग्घोसेमाणा एवं वदंतिः—

तत्पश्चात् वे नगररक्षक विजय चोर के पैरों के निशानों का अनुसरण करते हुए मालुकाकच्छ में पहुँचे। उसके भीतर प्रविष्ट हुए। प्रविष्ट होकर विजय चोर को पंचों की साक्षी पूर्वक, चोरी के माल के साथ, गर्दन में बाँधा और जीवित पकड़ लिया। फिर अस्थि (हड्डी की लकड़ी) मुष्टि, घुटनों और कोहनियों के प्रहार करके उसके शरीर को भग्न और मथित कर दिया—ऐसी मार मारी कि उसका सारा शरीर ढीला पड़ गया। उसकी गर्दन और दोनों हाथ पीठ की तरफ बाँध दिये। फिर बालक देवदत्त के आभरण कब्जे में किये। तत्पश्चात् विजय चोर को गर्दन से बाँधा और मालुकाकच्छ से बाहर निकले। निकल कर जहाँ राजगृह नगर था, वहाँ आये। वहाँ आकर राजगृह नगर में प्रविष्ट हुए और नगर के त्रिक चतुष्क, चत्वर एवं महापथ आदि मार्गों में कोड़ों के प्रहार, छड़ियों के प्रहार, छिवा (कंबा) के प्रहार करते-करते और उसके ऊपर राख, धूल और कचरा डालते हुए तेज आवाज से घोषणा करते हुए इस प्रकार बोलेः—

'एस णं देवाणुप्पिया ! विजए नामं तक्करे जाव गिद्धे विव आमिसभक्खी बालघायए, बालमारए, तं नो खलु देवाणुप्पिया ! एयस्स केइ राया वा रायपुत्ते वा रायमच्चे वा अवरज्झइ, एत्थट्ठे अप्पणो सयाइं कम्माइं अवरज्झंति' त्ति कट्टु जेणामेव चारगसाला तेणामेव उवागच्छंति। उवागच्छित्ता हडिबंधणं करेन्ति, करित्ता भत्तपाणनिरोहं करेन्ति, करित्ता तिसंझं कसप्पहारे य जाव निवाए-माणा निवाएमाणा विहरंति।

'हे देवानुप्रियो ! (लोको !) यह विजय नामक चोर यावत् गीध के समान मांसभक्षी, बालघातक और बालक का हत्यारा है। हे देवानुप्रियो ! कोई राजा, राजपुत्र अथवा राजा का अमात्य इसके लिए अपराधी नहीं है—कोई निष्कारण ही इसे दंड नहीं दे रहा है। इस विषय में इसके अपने किये कार्य ही अपराधी हैं।' इस प्रकार कह कर जहाँ चारकशाला (कारागार) थी, वहाँ

पहुँचे वहाँ पहुँच कर उसे बेड़ियों से जकड़ दिया। भोजन-पानी बंद कर दिया और तीनों संध्याकालों में-प्रातः, मध्याह्न और सूर्यास्त के समय, चाबुक आ के प्रहार करते हुए विचरने लगे।

तए णं से धण्णे सत्थवाहे मित्तनाइनियगसयणसंबंधिपरियणे सद्धिं रोयमाणे जाव कंदमाणे देवदिन्नस्स दारगस्स सरीरस्स मह इड्ढीसक्कारसमुदएणं निहरणं करेंति। करित्ता बहूइं लोइयाइं मयग किच्चाइं करेंति, करित्ता केणइ कालंतरेणं अवगयसोए जाए यावि होत्था।

तत्पश्चात् धन्य सार्थवाह ने मित्र, ज्ञाति, निजक, स्वजन, संबंधी और परिवार के साथ रोते-रोते यावत् विलाप करते-करते बालक देवदत्त के श का महान् ऋद्धि-सत्कार के समूह के साथ नीहरण किया, अर्थात् अग्नि-संस्कार के लिए श्मशान में ले गया। तत्पश्चात् अनेक लौकिक मृतककृत्य किये। मृ कृत्य करके कुछ समय के अनन्तर वह उस शोक से रहित हो गया।

तए णं से धण्णे सत्थवाहे अन्नया कयाइं लहुसयंसि रायावराहं संपलत्ते जाए यावि होत्था। तए णं ते नगरगुत्तिया धण्णं सत्थवा गेण्हंति, गेण्हित्ता जेणेव चारगे तेणेव उवागच्छंति। उवागच्छि चारगं अणुपवेसंति, अणुपवेसित्ता विजएणं तक्करेणं सद्धिं एगय हडिबंधणं करेंति।

तत्पश्चात् किसी समय धन्य सार्थवाह को चुगलखोरों ने छोटा-सा र कीय अपराध लगा दिया। तब नगररक्षकों ने धन्य सार्थवाह को गिरफ्तार लिया। गिरफ्तार करके जहाँ कारागार था, वहाँ ले गये। ले जा कर कारा में प्रवेश किया और प्रवेश करके विजय चोर के साथ एक ही बेड़ी में बाँध दि

तए णं सा भद्दा भारिया कल्लं जाव जलंते विपुलं असणपा खाइमसाइमं उवक्खडेइ, उवक्खडित्ता भोयणपिडए करेइ, करि भायणाइं पक्खिवइ, पक्खिवित्ता। लंछियमुद्दियं करेइ। करि एगं च सुरभिवारिपडिपुण्णं दगवारयं करेइ। करित्ता पंथयं दासं सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी-'गच्छ णं तुमं देवाणुप्पिया! इमं असणपाणखाइमसाइमं गहाय चारगसालाए धन्नस्स सत्थवाह उवणेहि।'

तत्पश्चात् भद्रा भार्या ने दूसरे दिन यावत् सूर्य के जाज्वल्यमान होने पर विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम तैयार किया। भोजन तैयार करके भोजन रखने का पिटक (बांस की छाबड़ी) ठीकठाक किया और उसमें भोजन के पात्र रख दिये। फिर उस पिटक को लांछित और मुद्रित कर दिया, अर्थात् उस पर रेखा आदि के चिह्न बना दिये और मोहर लगा दी। सुगंधित जल से परिपूर्ण छोटा-सा घड़ा तैयार किया। फिर पंथक दासचेटक को आवाज दी और कहा–हे देवानुप्रिय ! तू जा। यह विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम लेकर कारागार में धन्य सार्थवाह के पास ले जा।

तए णं से पंथए भद्दाए सत्थवाहीए एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठे तं भोयणपिडयं तं च सुरभिवरवारिपडिपुण्णं दगवारयं गेण्हइ। गेण्हित्ता सयाओ गिहाओ पडिनिक्खमइ। पडिनिक्खमित्ता रायगिहं नगरं मज्झंमज्झेणं जेणेव चारगसाला, जेणेव धन्ने सत्थवाहे तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता भोयणपिडयं ठावेइ, ठावेत्ता उल्लंछइ, उल्लंछित्ता भायणाइं गेण्हइ। गेण्हित्ता भायणाइं धोवेइ, धोवित्ता हत्थसोयं दलयइ, दलइत्ता धण्णं सत्थवाहं तेणं विपुलेणं असणपाणखाइमसाइमेणं परिवेसइ।

तत्पश्चात् पंथक ने भद्रा सार्थवाही के इस प्रकार कहने पर हृष्ट-तुष्ट होकर उस भोजन-पिटक को और उत्तम सुगंधित जल से परिपूर्ण घट को ग्रहण किया। ग्रहण करके अपने घर से निकला। निकल कर राजगृह के मध्यभाग में होकर जहाँ कारागार था और जहाँ धन्य सार्थवाह था, वहाँ पहुँचा। पहुँच कर भोजन का पिटक रख दिया। उसे लांछन और मुद्रा से रहित किया, अर्थात् उस पर बना हुआ चिह्न हटाया और मोहर हटा दी। फिर भोजन के पात्र लिये, उन्हें धोया और फिर हाथ धोने का पानी दिया। तत्पश्चात् धन्य सार्थवाह को वह विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम भोजन परोसा।

तए णं से विजए तक्करे धण्णं सत्थवाहं एवं वयासी–'तुमं णं देवाणुप्पिया ! मम एयाओ विपुलाओ असणपाणखाइमसाइमाओ संविभागं करेहि।'

तए णं से धण्णे सत्थवाहे विजयं तक्करं एवं वयासी–'अवियाइं अहं विजया ! एयं विपुलं असणपाणखाइमसाइमं कायाणं वा सुणगाणं–

वा दलएज्जा, उक्कुरुडियाए वा णं छड्डेज्जा, नो चेव णं तव पुत्तघा-
गस्स पुत्तमारगस्स अरिस्स वेरियस्स पडिणीयस्स पच्चामित्तस्स एत्तो
विपुलाओ असणपाणखाइमसाइमाओ संविभागं करेज्जामि।'

उस समय विजय चोर ने धन्य सार्थवाह से इस प्रकार कहा—'देवानुप्रिय!
तुम मुझे इस विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम भोजन में से संविभाग
करो—हिस्सा दो।'

तब धन्य सार्थवाह ने विजय चोर से इस प्रकार कहा—हे विजय!
भले ही मैं यह विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम कागों और कुत्तों को
दे दूंगा अथवा उकरड़े में फेंक दूंगा, परन्तु तुझ पुत्रघातक, पुत्रहन्ता शत्रु, वैरी
(सानुबन्ध वैर वाले), प्रतिकूल आचरण करने वाले एवं प्रत्यमित्र—प्रत्येक बात
में विरोधी—को इस अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य में से संविभाग नहीं करूँगा

तए णं से धन्ने सत्थवाहे तं विउलं असणपाणखाइमसाइमं आहा-
रेइ। आहारित्ता तं पंथयं पडिविसज्जेइ। तए णं से पंथए दासचेडे
भोयणपिडगं गिण्हइ, गिण्हित्ता जामेव दिसिं पाउब्भूए तामेव दिसिं
पडिगए।

इसके बाद धन्य सार्थवाह ने उस विपुल अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य
का आहार किया। आहार करके पंथक को लौटा दिया। पंथक दासचेट
भोजन का वह पिटक लिया और लेकर जिस ओर से आया था, उसी ओर
लौट गया।

तए णं तस्स धण्णस्स सत्थवाहस्स तं विपुलं असणपाणखाइ-
माइमं आहारियस्स समाणस्स उच्चारपासवणेणं उव्वाहित्था।

तए णं से धण्णे सत्थवाहे विजयं तक्करं एवं वयासी—एहि ता
विजया! एगंतमवक्कमामो, जेण अहं उच्चारपासवणं परिट्ठवेमि।

तए णं से विजए तक्करे धण्णं सत्थवाहं एवं वयासी—तुब्भं देवा-
णुप्पिया! विपुलं असणपाणखाइमसाइमं आहारियस्स अत्थि उच्चारे
वा पासवणे वा, मम णं देवाणुप्पिया! इमेहिं बहूहिं कसप्पहारेहि
य लयापहारेहि य तण्हाए य छुहाए य परब्भवमाणस्स णत्थि केइ

उच्चारे वा पासवणे वा, तं छंदेणं तुमं देवाणुप्पिया ! एगंते अवक्कमित्ता उच्चारपासवणं परिट्ठवेहि ।

तत्पश्चात् विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम भोजन किये हुए धन्य सार्थवाह को मल-मूत्र की बाधा उत्पन्न हुई। तब धन्य सार्थवाह ने विजय चोर से कहा-विजय, चलो, एकान्त मे चलें; जिससे मैं मल-मूत्र का त्याग कर सकूँ।

तब विजय चोर ने धन्य सार्थवाह से कहा-देवानुप्रिय ! तुमने विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम का आहार किया है, अतएव तुम्हें मल और मूत्र की बाधा उत्पन्न हुई है। देवानुप्रिय ! मैं तो इन बहुत चाबुकों के प्रहारों से, यावत् लता के प्रहारों से तथा प्यास और भूख से पीडित हो रहा हूँ। मुझे मल-मूत्र की बाधा नहीं है। देवानुप्रिय ! जाने की इच्छा हो तो तुम्हीं एकान्त में जाकर मल-मूत्र का त्याग करो।

तए णं धण्णे सत्थवाहे विजएणं तक्करेणं एवं वुत्ते समाणे तुसिणीए संचिट्ठइ । तए णं से धण्णे सत्थवाहे मुहुत्तंतरस्स बलियतरागं उच्चारपासवणेणं उव्वाहिज्जमाणे विजयं तक्करं एवं वयासी—एहि ताव विजया ! जाव अवक्कमामो ।

तए णं से विजए धण्णं सत्थवाहं एवं वयासी—'जइ णं तुमं देवाणुप्पिया ! तओ विपुलाओ असणपाणखाइमसाइमाओ संविभागं करेहि, ततो हं तुम्हेहिं सद्धिं एगंतं अवक्कमामि ।'

तत्पश्चात् धन्य सार्थवाह विजय चोर के इस प्रकार कहने पर मौन रह गया। इसके बाद, थोड़ी देर में धन्य सार्थवाह उच्चार-प्रस्रवण की बाधा से अत्यन्त पीड़ित होता हुआ विजय चोर से बोला-'विजय, चलो, यावत् एकान्त में चलें।

तब विजय चोर ने धन्य सार्थवाह से कहा-'देवानुप्रिय ! यदि तुम उस विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम में से संविभाग करो तो मैं तुम्हारे साथ एकान्त में चलूँ।

तए णं से धण्णे सत्थवाहे विजयं एवं वयासी—'अहं णं तुब्भं तओ विउलाओ असणपाणखाइमसाइमाओ संविभागं करिस्सामि ।'

तए णं से विजए धण्णस्स सत्थवाहस्स एयमट्ठं पडिसुणेइ। तए णं से विजए धण्णेणं सद्धिं एगंते अवक्कमेइ, उच्चारपासवणं परिट्ठवेइ, आयंते चोक्खे परमसुइभूए तमेव ठाणं उवसंकमित्ता णं विहरइ।

तत्पश्चात् धन्य सार्थवाह ने विजय से कहा-मैं तुम्हें उस विपुल अशन पान खादिम और स्वादिम में से संविभाग करूँगा-हिस्सा दूंगा।

तत्पश्चात् विजय ने धन्य सार्थवाह के इस अर्थ को स्वीकार किया। फिर विजय, धन्य सार्थवाह के साथ एकान्त में गया। धन्य सार्थवाह ने मल-मूत्र का परित्याग किया। फिर जल से चोखा और परम पवित्र होकर उसी स्थान पर आकर ठहरे।

तए णं सा भद्दा कल्लं जाव जलंते विउलं असणपाणखाइमसाइमं जाव परिवेसेइ। तए णं से धण्णे सत्थवाहे विजयस्स तक्करस्स तओ विउलाओ असणपाणखाइमसाइमाओ संविभागं करेइ। तए णं से धण्णे सत्थवाहे पंथयं दासचेडं विसज्जेइ।

तत्पश्चात् भद्रा सार्थवाही ने दूसरे दिन सूर्य के देदीप्यमान होने पर विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम तैयार करके पंथक के साथ भेजा यावत् पंथक ने धन्य को परोसा। तब धन्य सार्थवाह ने विजय चोर को उस विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम में से भाग दिया। फिर धन्य सार्थवाह ने पंथक दास चेटक को रवाना कर दिया।

तए णं से पंथए भोयणपिडगं गहाय चारगाओ पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता रायगिहं नगरं मज्झंमज्झेणं जेणेव सए गिहे, जेणेव भद्दा भारिया, तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता भद्दं सत्थवाहिं एवं वयासी-'एवं खलु देवाणुप्पिए! धण्णे सत्थवाहे तव पुत्तघायगस्स जाव पच्चामित्तस्स ताओ विउलाओ असणपाणखाइमसाइमाओ संविभागं करेइ।

णं सा भद्दा सत्थवाही पंथयस्स दासचेडयस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा रुट्ठा जाव मिसिमिसेमाणा धण्णस्स सत्थवाहस्स
।

तदनन्तर वह पंथक भोजन-पिटक लेकर कारागार से बाहर निकला। कल कर राजगृह नगर के बीचोंबीच ही कर जहाँ अपना घर था और जहाँ त भार्या थी, वहाँ पहुँचा। वहाँ पहुँच कर उसने भद्रा सार्थवाही से कहा– वानुप्रिये! धन्य सार्थवाह ने तुम्हारे पुत्र के घातक यावत् प्रत्यमित्र को उस पुल अशन पान खादिम और स्वादिम में से हिस्सा दिया है।

तब भद्रा सार्थवाही दासचेटक पंथक के पास से यह अर्थ सुन कर तत्काल ल हो गई, रुष्ट हुई, यावत् मिसमिसाती हुई धन्य सार्थवाह पर प्रद्वेष ने लगी।

तए णं से धरणे सत्थवाहे अन्नया कयाइं मित्तनाइनियगसयण- बंधिपरिजणेणं सएण य अत्थसारेणं रायकज्जाओ अप्पाणं मोया- इ। मोयावित्ता चारगसालाओ पडिनिक्खमइ। पडिनिक्खमित्ता णेव अलंकारियसभा तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता अलंकारिय- म्मं करेइ। करित्ता जेणेव पुक्खरिणी तेणेव उवागच्छइ। उवा- च्छित्ता अह धोयमट्टियं गेण्हइ। गेण्हित्ता पोक्खरिणिं ओगाहइ। गाहित्ता जलमज्जणं करेइ। करित्ता ण्हाए कयबलिकम्मे जाव राय- हं नगरं अणुपविसइ। अणुपविसित्ता रायगिहनगरस्स मज्झंमज्झेणं णेव सए गिहे तेणेव पहारेत्थ गमणाए।

तत्पश्चात् धन्य सार्थवाह को किसी समय मित्र, ज्ञाति, निजक, स्वजन, बंधी और परिवार के लोगों ने अपने (धन्य सार्थवाह के) सारभूत अर्थ से, जदंड से मुक्त कराया। मुक्त होकर वह कारागार से बाहर निकला। निकल जहाँ अलंकारिकसभा (हजामत बनवाना, नाखून कटवाना आदि शरीर- हार करने की नाई की दुकान) थी, वहाँ पहुंचा। पहुंच कर अलंकारिक-कर्म या। फिर जहां पुष्करिणी थी, वहाँ आया। आकर नीचे की धोने की मिट्टी और पुष्करिणी में अवगाहन किया, जल में मज्जन किया, स्नान किया, लिकर्म किया, यावत् राजगृह नगर में प्रवेश किया। राजगृह नगर के मध्य होकर जहां अपना घर था, वहां जाने के लिए रवाना हुआ।

तए णं धरणं सत्थवाहं एज्जमाणं पासित्ता रायगिहे नगरे बहवे णियसेट्ठिसत्थवाहपभइओ आढंति परिजाणंति सक्कारेंति, सम्माणेंति भुट्ठेंति, सरीरकुसलं पुच्छंति।

तए णं से धण्णे जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता जावि य से तत्थ बाहिरिया परिसा भवइ, तंजहा दासाइ वा, पेस्साइ वा, भियगाइ वा, भाइल्लगाइ वा, से वि य णं धण्णं सत्थवाहं एज्जमाणं पासइ, पासित्ता पायवडियाए खेमकुसलं पुच्छंति।

तत्पश्चात् धन्य सार्थवाह को आता देख कर राजगृह नगर में बहुत से आत्मीय श्रेष्ठी सार्थवाह आदि ने आदर किया, सन्मान से बुलाया, वस्त्र आदि से सत्कार किया, नमस्कार आदि करके सन्मान किया, खड़े होकर मान दिया और शरीर की कुशल पूछी।

तत्पश्चात् धन्य सार्थवाह अपने घर पहुँचा। वहाँ जो बाहर की सभा थी, जैसे-दास (दासीपुत्र), प्रेष्य (काम-काज के लिए बाहर भेजे जाने वाले नौकर), भृतक (जिनका बाल्यावस्था से पालन-पोषण किया हो) और व्यापार के हिस्सेदार। उन्होंने भी धन्य सार्थवाह को आता देखा। देख कर पैरों में गिर कर क्षेम-कुशल की पृच्छा की।

जावि य से तत्थ अब्भंतरिया परिसा भवइ, तंजहा-मायाइ वा, पियाइ वा, भायाइ वा, भगिणीइ वा, सावि य णं धण्णं सत्थवाहं एज्जमाणं पासइ, पासित्ता आसणाओ अब्भुट्ठेइ। अब्भुट्ठेत्ता कंठाकंठियं अवयासिय बाहप्पमोक्खणं करेइ।

और वहाँ जो आभ्यन्तर सभा थी, जैसे कि-माता, पिता, भाई, बहिन आदि, उन्होंने भी धन्य सार्थवाह को आता देखा। देखकर वे आसन से खड़े हुए उठकर गले से गला मिलाकर हर्ष के आँसू बहाये।

तए णं से धण्णे सत्थवाहे जेणेव भद्दा भारिया तेणेव उवागच्छइ। तए णं सा भद्दा सत्थवाही धण्णं सत्थवाहं एज्जमाणं पासइ, पासित्ता णो आढाइ, नो परियाणाइ, अणाढायमाणी अपरिजाणमाणी तुसिणीया परम्मुही संचिट्ठइ।

तए णं से धण्णे सत्थवाहे भद्दं भारियं एवं वयासी-किं णं तुमं देवाणुप्पिए! न तुट्ठी वा, न हरिसे वा, नाणंदे वा? जं मए सएणं रायकज्जाओ अप्पाणं विमोइए?

तत्पश्चात् धन्य सार्थवाह भद्रा भार्या के पास पहुँचा। तब भद्रा सार्थवाही ने धन्य सार्थवाह को आता देखा। देख कर उसने न आदर किया, न मानों जाना। न आदर करती हुई और न जानती हुई वह मौन रह कर और पीठ फेर कर (विमुख होकर) बैठी रही।

तब धन्य सार्थवाह ने भद्रा भार्या से इस प्रकार कहा–देवानुप्रिये! मेरे आने से तुम्हें सन्तोष क्यों नहीं है? हर्ष क्यों नहीं है? आनन्द क्यों नहीं है? मैंने अपने सारभूत अर्थ से राजकार्य (राजदंड) से अपने आपको छुड़ाया है।

तए णं सा भद्दा धण्णं सत्थवाहं एवं वयासी–'कहं णं देवाणुप्पिया! मम तुट्ठी वा जाव आणंदे वा भविस्सइ, जेण तुमं मम पुत्तघायगस्स जाव पच्चामित्तस्स तओ विपुलाओ असणपाणखाइम-साइमाओ संविभागं करेसि?

तत्पश्चात् भद्रा ने धन्य सार्थवाह से इस प्रकार कहा–देवानुप्रिय! मुझे क्यों सन्तोष यावत् आनन्द होगा, जब कि तुमने मेरे पुत्र के घातक यावत् प्रत्यमित्र (विजय चोर) को उस विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम भोजन में से संविभाग किया?

तए णं से धण्णे भद्दं एवं वयासी–'नो खलु देवाणुप्पिए! धम्मो त्ति वा, तवो त्ति वा, कयपडिकइया वा, लोगजत्ता इ वा, नायए ति वा, घाडिए ति वा, सहाए ति वा, सुहि त्ति वा, तओ विपुलाओ असणपाणखाइमसाइमाओ संविभागे कए, नन्नत्थ सरीरचिन्ताए।

तए णं सा भद्दा धण्णेणं सत्थवाहेणं एवं वुत्ता समाणी हट्ठतुट्ठा जाव आसणाओ अब्भुट्ठेइ, कंठाकंठिं अवयासेइ, खेमकुसलं पुच्छइ, पुच्छित्ता ण्हाया जाव पायच्छित्ता विपुलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणी विहरइ।

तब धन्य सार्थवाह ने भद्रा से कहा–देवानुप्रिये! धर्म समझ कर, तप समझ कर, किये उपकार का बदला समझ कर, लोकयात्रा–लोकदिखावा–समझ कर, न्याय समझ कर या नायक समझ कर, सहचर समझ कर, सहायक समझ कर अथवा सुहृद (मित्र) समझ कर मैंने उस विपुल अशन, पान...

तए णं से धण्णे जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ । उवागच्छित्ता जावि य से तत्थ बाहिरिया परिसा भवइ, तंजहा दासाइ वा, पेस्साइ वा, भियगाइ वा, भाइल्लगाइ वा, से वि य णं धण्णं सत्थवाहं एज्जमाणं पासइ, पासित्ता पायवडियाए खेमकुसलं पुच्छंति ।

तत्पश्चात् धन्य सार्थवाह को आता देख कर राजगृह नगर में बहुत-से आत्मीय श्रेष्ठी सार्थवाह आदि ने आदर किया, सन्मान से बुलाया, वस्त्र आदि से सत्कार किया, नमस्कार आदि करके सन्मान किया, खड़े होकर मान किया और शरीर की कुशल पूछी ।

तत्पश्चात् धन्य सार्थवाह अपने घर पहुंचा । वहां जो बाहर की परिषद् थी, जैसे-दास (दासीपुत्र), प्रेष्य (काम-काज के लिए बाहर भेजे जाने वाले नौकर), भृतक (जिनका बाल्यावस्था से पालन-पोषण किया हो) और व्यापार के हिस्सेदार । उन्होंने भी धन्य सार्थवाह को आता देखा । देख कर पैरों में गिर कर क्षेम-कुशल की पृच्छा की ।

जावि य से तत्थ अब्भंतरिया परिसा भवइ, तंजहा—मायाइ वा, पियाइ वा, भायाइ वा, भगिणीइ वा, सावि य णं धण्णं सत्थवाहं एज्जमाणं पासइ, पासित्ता आसणाओ अब्भुट्ठेइ । अब्भुट्ठेत्ता कंठाकंठियं अवयासिय बाहप्पमोक्खणं करेइ ।

और वहाँ जो आभ्यन्तर सभा थी, जैसे कि-माता, पिता, भाई, बहिन आदि, उन्होंने भी धन्य सार्थवाह को आता देखा । देखकर वे आसन से खड़े हुए उठकर गले से गला मिलाकर हर्ष के आँसू बहाये ।

तए णं से धण्णे सत्थवाहे जेणेव भद्दा भारिया तेणेव उवागच्छइ । तए णं सा भद्दा सत्थवाही धण्णं सत्थवाहं एज्जमाणं पासइ, पासित्ता णो आढाइ, नो परियाणाइ, अणाढायमाणी अपरिजाणमाणी तुसिणीया परम्मुही संचिट्ठइ ।

तए णं से धण्णे सत्थवाहे भद्दं भारियं एवं वयासी—किं णं तुब्भं देवाणुप्पिए ! न तुट्ठी वा, न हरिसे वा, नाणंदे वा ? जं मए सएणं [illegible] विमोइए ?

तत्पश्चात धन्य सार्थवाह भद्रा भार्या के पास पहुँचा। तब भद्रा सार्थवाही ने धन्य सार्थवाह को आता देखा। देख कर उसने न आदर किया. न मानों जाना। न आदर करती हुई और न जानती हुई वह मौन रह कर और पीठ फेर कर (विमुख होकर) बैठी रही।

तब धन्य सार्थवाह ने भद्रा भार्या से इस प्रकार कहा-देवानुप्रिये! मेरे आने से तुम्हें सन्तोष क्यों नहीं है? हर्ष क्यों नहीं है? आनन्द क्यों नहीं है? मैंने अपने सारभूत अर्थ से राजकार्य (राजदंड) से अपने आपको छुड़ाया है।

तए णं सा भद्दा धण्णं सत्थवाहं एवं वयासी-'कहं णं देवाणुप्पिया! मम तुट्ठी वा जाव आणंदे वा भविस्सइ, जेण तुमं मम पुत्तघायगस्स जाव पच्चामित्तस्स तओ विपुलाओ असणपाणखाइम-साइमाओ संविभागं करेसि?

तत्पश्चात् भद्रा ने धन्य सार्थवाह से इस प्रकार कहा-देवानुप्रिय! मुझे क्यों सन्तोष यावत् आनन्द होगा, जब कि तुमने मेरे पुत्र के घातक यावत प्रत्यमित्र (विजय चोर) को उस विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम भोजन में से संविभाग किया?

तए णं से धण्णे भद्दं एवं वयासी-'नो खलु देवाणुप्पिए! धम्मो त्ति वा, तवो त्ति वा, कयपडिकइया वा, लोगजत्ता इ वा, नायए ति वा, घाडिए ति वा, सहाए ति वा, सुहि त्ति वा, तओ विपुलाओ असणपाणखाइमसाइमाओ संविभागे कए, नन्नत्थ सरीरचिन्ताए।

तए णं सा भद्दा धण्णेणं सत्थवाहेणं एवं वुत्ता समाणी हट्ठतुट्ठा जाव आसणाओ अब्भुट्ठेइ, कंठाकंठिं अवयासेइ, खेमकुसलं पुच्छइ, पुच्छित्ता ण्हाया जाव पायच्छित्ता विपुलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणी विहरइ।

तब धन्य सार्थवाह ने भद्रा से कहा-देवानुप्रिये! धर्म समझ कर, तप समझ कर, किये उपकार का बदला समझ कर, लोकयात्रा-लोकदिखावा-समझ कर, न्याय समझ कर या नायक समझ कर, सहचर समझ कर, सहायक समझ कर अथवा सुहृद् (मित्र) समझ कर मैंने उस विपुल अशन, पान,

और स्वादिम में से संविभाग नहीं किया है। सिवाय शरीर चिन्ता (मल-मूत्र की बाधा) के और किसी प्रयोजन से संविभाग नहीं किया।

धन्य सार्थवाह के इस प्रकार कहने पर भद्रा हृष्ट-तुष्ट हुई, यावत् आसन से उठी, कंठ से मिलाया और क्षेम-कुशल पूछी फिर स्नान किया, यावत् प्रायश्चित्त (तिलक आदि) किया और पाँचों इन्द्रियों के विपुल भोग भोगती हुई रहने लगी।

तए णं से विजए तक्करे चारगसालाए तेहिं बंधेहिं वहेहिं कसप्पहारेहि य जाव तण्हाए य छुहाए य परब्भवमाणे कालमासे कालं किच्चा नरएसु नेरइयत्ताए उववन्ने। से णं तत्थ नेरइए जाए काले कालोभासे जाव वेयणं पच्चणुब्भवमाणे विहरइ।

से णं तओ उव्वट्टित्ता अणादीयं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंतसंसारकंतारं अणुपरियट्टिस्सइ।

तत्पश्चात् विजय चोर कारागार में बन्ध, वध, चाबुकों के प्रहार, यावत् प्यास और भूख से पीड़ित होता हुआ, मृत्यु के अवसर पर काल करके नारक रूप से नरक में उत्पन्न हुआ। नरक में उत्पन्न हुआ वह काला और अतिशय काला दीखता था, यावत् वेदना का अनुभव कर रहा था।

वह नरक से निकल कर अनादि, अनन्त दीर्घ मार्ग या दीर्घ काल वाले चतुर्गति रूप संसार-कान्तार में पर्यटन करेगा।

एवामेव जंबू! जे णं अम्हं निग्गंथो वा निग्गंथी वा आयरिय-उवज्झायाणं अंतिए मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइए समाणे विपुलमणिमुत्तियधणकणगरयणसारेणं लुब्भइ से वि य एवं चेव।

श्रीसुधर्मा स्वामी उपसंहार करते हुए जम्बू स्वामी से कहते हैं—हे जम्बू! इसी प्रकार हमारा जो साधु या साध्वी आचार्य या उपाध्याय के पास मुण्डित होकर, गृहत्याग कर साधुत्व की दीक्षा अंगीकार करके विपुल मणि मौक्तिक धन कनक और रत्नों के सार में लुब्ध होता है, वह भी ऐसा ही होता है—उसकी दशा भी विजय चोर जैसी होती है।

तेणं कालेणं तेणं समएणं धम्मघोसा नामं थेरा भगवंतो

जाइसंपन्ना कुलसंपन्ना जाव पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे जाव जेणेव राय-गिहे नगरे, जेणेव गुणसिलए चेइए जाव अहापडिरूवं उग्गहं उगिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणा विहरंति। परिसा निग्गया, धम्मो कहिओ।

उस काल और उस समय में धर्मघोष नामक स्थविर भगवंत जाति से सम्पन्न यावत् अनुक्रम से चलते हुए जहाँ राजगृह नगर था और जहाँ गुणशील चैत्य था, वहाँ आये। यावत् यथायोग्य उपाश्रय की याचना करके संयम और तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे-रहे। उनका आगमन जानकर परिषद् निकली। धर्मघोष स्थविर ने धर्मदेशना की।

तए णं तस्स धण्णस्स सत्थवाहस्स बहुजणस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–'एवं खलु भगवंतो जाइसंपन्ना इहमागया, इहं संपत्ता, तं इच्छामि णं थेरे भग-वंते वंदामि, नमंसामि।'

ण्हाए जाव सुद्धप्पावेसाइं मंगल्लाइं वत्थाइं पवरपरिहिए पायविहार-चारेणं जेणेव गुणसिले चेइए, जेणेव थेरा भगवंतो तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता वंदइ, नमंसइ। तए णं थेरा धण्णस्स विचित्तं धम्म-माइक्खंति।

तत्पश्चात् धन्य सार्थवाह को बहुत लोगों से यह अर्थ (वृत्तान्त) सुन कर और समझ कर इस प्रकार का अध्यवसाय उत्पन्न हुआ–'उत्तम जाति से सम्पन्न स्थविर भगवान् यहाँ आये हैं, यहाँ प्राप्त हुए हैं। तो मैं चाहता हूँ कि स्थविर भगवान् को वंदना करूँ, नमस्कार करूँ।'

इस प्रकार विचार कर धन्य ने स्नान किया, यावत् शुद्ध–साफ बहुमूल्य, अल्प, मांगलिक वस्त्र धारण किये। फिर पैदल चल कर जहाँ गुणशील चैत्य था और जहाँ स्थविर भगवान् थे, वहाँ पहुँचा। पहुँच कर उन्हें वन्दना की, नमस्कार किया। तत्पश्चात् स्थविर भगवान् ने धन्य सार्थवाह को विचित्र धर्म का उपदेश दिया, अर्थात् ऐसे धर्म का उपदेश दिया जो जिनशासन के सिवाय अन्य सुलभ नहीं है।

तए णं से धण्णे सत्थवाहे धम्मं सोच्चा एवं वयासी–'सद्दहामि णं

भंते ! निग्गंथं पावयणं जाव पव्वइए । जाव बहूणि वासाणि सामण्ण-परियागं पाउणित्ता, भत्तं पच्चक्खाइत्ता मासियाए संलेहणाए सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदेइ, छेदित्ता कालमासे कालं किच्चा सोहम्मे कप्पे देवत्ताए उववन्ने ।

तत्थ णं अत्थेगइयाणं देवाणं चत्तारि पलिओवमाइं ठिई पन्नत्ता । तत्थ णं धण्णस्स देवस्स चत्तारि पलिओवमाइं ठिई पन्नत्ता ।

से णं धण्णे देवे ताओ देवलोयाओ आउक्खएणं ठिइक्खएणं भवक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ जाव सव्वदुक्खाणमंतं करिहिइ ।

तत्पश्चात् धन्य सार्थवाह धर्मोपदेश सुन कर यावत् बोला–'भगवन् ! निर्ग्रन्थ प्रवचन पर श्रद्धा करता हूं ।' यावत् वह प्रव्रजित हो गया । यावत् बहुत वर्षों तक श्रामण्य-पर्याय पाल कर, भोजन का प्रत्याख्यान करके एक मास की संलेखना से, अनशन से साठ भक्तों को छेद कर, कालमास में काल करके सौधर्म देवलोक में देव के रूप में उत्पन्न हुआ ।

सौधर्म देवलोक में किन्हीं–किन्हीं देवों की चार पल्योपम की स्थिति कही है । धन्य नामक देव की भी चार पल्योपम की स्थिति कही है ।

वह धन्य नामक देव आयु के दलिकों का क्षय करके, आयुकर्म की स्थिति का क्षय करके तथा भव (देवभव के कारण गति आदि कर्मों) का क्षय करके अनन्तर ही देह का त्याग करके महाविदेह क्षेत्र में (मनुष्य होकर) सिद्धि प्राप्त करेगा यावत् सर्व दुःखों का अन्त करेगा ।

जहा णं जंबू ! धण्णेणं सत्थवाहेणं नो धम्मो त्ति वा जाव विजयस्स तक्करस्स ताओ विपुलाओ असणपाणखाइमसाइमाओ संविभागे कए नन्नत्थ सरीरसारक्खणट्ठाए, एवामेव जंबू ! जे णं अम्हं निग्गंथो वा निग्गंथी वा जाव पव्वइए समाणे ववगयण्हाणुम्मद्दणपुप्फगंधमल्लालंकारविभूसे इमस्स ओरालियसरीरस्स नो वण्णहेउं वा, रूवहेउं वा, विसयहेउं वा असणपाणखाइमसाइमं आहारमाहारेइ, नन्नत्थ णाण-दंसण-चरित्ताणं वहणयाए । से णं इह लोए चेव बहूणं समणाणं सम-

णीणं सावगाण य साविगाण य अच्चणिज्जे जाव पज्जुवासणिज्जे भवइ। परलोए वि य णं नो बहूणि हत्थच्छेयणाणि य कन्नच्छेयणाणि य नासाछेयणाणि य एवं हिययउप्पायणाणि य वसणुप्पाडणाणि य उल्लंबणाणि य पाविहिइ। अणाईयं च णं अणवदग्गं दीहं जाव वीईवइस्सइ, जहा से धण्णे सत्थवाहे।

श्रीसुधर्मा स्वामी ने जम्बू स्वामी से कहा—हे जम्बू ! जैसे धन्य सार्थवाह ने 'धर्म है' ऐसा समझ कर यावत् विजय चोर को उस विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम में से संविभाग नहीं किया था, सिवाय शरीर की रक्षा करने के, अर्थात् धन्य सार्थवाह ने केवल शरीररक्षा के लिए ही विजय को अपने आहार में से हिस्सा दिया था, धर्म या उपकार आदि समझ कर नहीं। इसी प्रकार हे जम्बू ! हमारा जो साधु या साध्वी यावत् प्रव्रजित होकर स्नान, उपमर्दन, पुष्प, गंध, माला, अलंकार आदि शृङ्गार का त्याग करके अशन पान खादिम और स्वादिम आहार करता है सो इस औदारिक शरीर के वर्ण के लिए, रूप के लिए या विषय-सुख के लिए नहीं करता। सिवाय ज्ञान, दर्शन और चारित्र को वहन करने के उसका अन्य कोई प्रयोजन नहीं होता। वह साधुओं साध्वियों श्रावकों और श्राविकाओं द्वारा इस लोक में अर्चनीय यावत् उपासनीय होता है। परलोक में भी वह हस्तछेदन (हाथों का काटा जाना), कर्णछेदन और नासिकाछेदन को तथा इसी प्रकार हृदय के उत्पाटन एवं वृषणों (अंडकोषों) के उत्पाटन और उद्बंधन (ऊँचा बाँध कर लटकाना) आदि कष्टों को प्राप्त नहीं करेगा। वह अनादि अनन्त दीर्घमार्ग वाले संसार को यावत् पार करेगा, जैसे धन्य सार्थवाह ने किया।

एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव दोच्चस्स नायज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते त्ति बेमि।

इस प्रकार हे जंबू ! श्रमण भगवान् महावीर ने द्वितीय ज्ञाताध्ययन का यह अर्थ कहा है।

सारांश

इस दृष्टान्त की योजना इस प्रकार की गई है—उदाहरण में जो राजगृह

स्थान पर अनन्त अनुपम आनन्द का कारणभूत संयम समझना चाहिए। जैसे पंथक के प्रमाद से देवदत्त का घात हुआ, उसी प्रकार शरीर की प्रमाद रूप अशुभ प्रवृत्ति से संयम का घात होता है। देवदत्त के आभूषणों के स्थान पर इन्द्रियविषय समझना चाहिए। इन विषयों के प्रलोभन में पड़ा हुआ शरीर संयम का घात कर डालता है। हडिबंधन के समान जीव और शरीर का अभिन्न रूप से रहना समझना चाहिए। राजा के स्थान पर कर्मफल जानना चाहिए। कर्म की प्रकृतियाँ राजपुरुषों के समान हैं। अल्प अपराध के स्थान पर मनुष्यायु के बंध के हेतु समझने चाहिए। उच्चार-प्रस्रवण की जगह प्रत्युपेक्षण आदि क्रियाएँ समझना चाहिए अर्थात् जैसे आहार न देने से विजय चोर उच्चार-प्रस्रवण के लिए प्रवृत्त न हुआ, उसी प्रकार शरीर भी आहार के बिना प्रत्युपेक्षण आदि क्रियाओं में प्रवृत्त नहीं होता। पंथक के स्थान पर मुग्ध साधु समझना चाहिए। भद्रा सार्थवाही को आचार्य के स्थान पर जानना चाहिए। किसी मुग्ध (भोले) साधु के मुख से जब आचार्य किसी साधु का अशनादि से शरीर का पोषण करता सुनता है, तब वह उस साधु को उपालंभ देता है। जब वह साधु बतलाता है कि मैंने विषयभोग आदि के लिए शरीर का पोषण नहीं किया, परन्तु ज्ञान दर्शन चारित्र की आराधना के लिए शरीर को आहार दिया है, तब गुरु को संतोष हो जाता है। कहा भी है—

सिवसाहणेसु आहारविरहिओ जं न वट्टए देहो।
तम्हा धण्णो व्व विजयं, साहू तं तेण पोसेज्जा॥

अर्थात्–निराहार शरीर मोक्ष के कारणों–प्रतिलेखन आदि क्रियाओं–में प्रवृत्त नहीं होता, अतएव जैसे धन्य सार्थवाह ने विजय चोर का पोषण किया, उसी प्रकार साधु शरीर का पोषण करे।

द्वितीय अध्ययन समाप्त

तत्थ णं चंपाए नयरीए देवदत्ता नामं गणिया परिवसइ, अड्ढा जाव भत्तपाणा चउसट्ठिकलापंडिया चउसट्ठिगणियागुणोववेया अउणत्तीसं विसेसे रममाणी एक्कवीसरइगुणप्पहाणा बत्तीसपुरिसोवयारकुसला णवंगसुत्तपडिबोहिया अट्ठारसदेसीभासाविसारया सिंगारागारचारुवेसा संगयगयहसियभणियविहियविलाससललियसंलावनिउणजुत्तोवयारकुसला ऊसियझया सहस्सलंभा विइन्नछत्तचामरवालवियणिया कन्नीरहप्पयाया यावि होत्था, बहूणं गणियासहस्साणं आहेवच्चं जाव विहरइ।

उस चम्पा नगरी में देवदत्ता नामक गणिका निवास करती थी। वह समृद्ध थी, यावत् बहुत भोजन पान वाली थी। चौसठ कलाओं में पंडिता थी। गणिका के चौसठ गुणों से युक्त थी। उनतीस प्रकार की विशेष क्रीड़ा से क्रीड़ा करने वाली थी। कामक्रीड़ा के इक्कीस गुणों से श्रेष्ठ थी। बत्तीस प्रकार के पुरुष के उपचार करने में कुशल थी। सोते हुए नौ अंगों (दो कान, दो नेत्र, दो नासिकापुट, जिह्वा, त्वचा, और मन) को जागृत करने वाली अर्थात् युवावस्था को प्राप्त थी। अठारह प्रकार की देशी भाषाओं में निपुण थी। वह ऐसा सुन्दर वेष धारण करती थी, मानो शृङ्गाररस का स्थान हो। सुन्दर गति, उपहास, वचन, चेष्टा, विलास (नेत्रों की चेष्टा) एवं ललित संलाप (बात-चीत) करने में कुशल थी। योग्य उपचार (व्यवहार) करने में चतुर थी। उसके घर पर ध्वजा फहराती थी। एक हजार देने वाले को वह प्राप्त होती थी, अर्थात् उसका एक दिन का शुल्क एक हजार रुपया था। राजा के द्वारा उसे छत्र, चामर और बालव्यजन (विशेष प्रकार का चामर) प्रदान किया गया था। वह कर्णीरथ नामक वाहन पर आरूढ़ होकर आती जाती थी, यावत् हजार गणिकाओं का आधिपत्य करती हुई रहती थी।

तए णं तेसिं सत्थवाहदारगाणं अन्नया कयाइ पुव्वावरण्हकालसमयंसि जिमियभुत्तुत्तरागयाणं समाणाणं आयंताणं चोक्खाणं परमसुइभूयाणं सुहासणवरगयाणं इमेयारूवे मिहोकहासमुल्लावे समुप्पज्जित्था-' तं सेयं खलु अम्हं देवाणुप्पिया! कल्लं जाव जलंते विपुलं असणपाणखाइमसाइमं उवक्खडावेत्ता तं विपुलं असणपाणखाइमसाइमं धूवपुप्फगंधवत्थं गहाय देवदत्ताए गणियाए सद्धिं सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स

खचियणत्थपग्गहोवग्गहिएहिं नीलुप्पलकयामेलएहिं पवरगोणजुवाणएहिं नाणामणिरयणकंचणघंटियाजालपरिक्खित्तं पवरलक्खणोववेयं जुत्तमेव पवहणं उवणेह।' ते वि तहेव उवणेन्ति।

तत्पश्चात् सार्थवाहपुत्रों ने दूसरी बार (दूसरे) कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया और बुलाकर कहा-शीघ्र ही एक समान खुर और पूंछ वाले, एक-से चित्रित, तीखे सींगों वाले, चाँदी की घंटियों वाले स्वर्णजटित सूत की डोरी की नाथ से बँधे हुए तथा नील कमल की कलंगी से युक्त श्रेष्ठ जवान बैल जिसमें जुते हों, नाना प्रकार की मणियों की रत्नों की और स्वर्ण की घंटियों के समूह से युक्त तथा श्रेष्ठ लक्षणों से युक्त रथ ले आओ।' वे कौटुम्बिक पुरुष आदेशानुसार रथ उपस्थित करते हैं।

तए णं ते सत्थवाहदारगा ण्हाया जाव सरीरा पवहणं दुरुहंति। दुरुहित्ता जेणेव देवदत्ताए गणियाए गिहं तेणेव उवागच्छंति। उवागच्छित्ता पवहणाओ पच्चोरुहन्ति, पच्चोरुहित्ता देवदत्ताए गणियाए गिहं अणुपविसेन्ति।

तए णं सा देवदत्ता गणिया सत्थवाहदारए एज्जमाणे पासइ, पासित्ता हट्ठतुट्ठा आसणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठित्ता सत्तट्ठपयाइं अणुगच्छइ, अणुगच्छित्ता ते सत्थवाहदारए एवं वयासी-'संदिसंतु णं देवाणुप्पिया! किमिहागमणप्पओयणं?'

तत्पश्चात् उन सार्थ[illegible]
से अलंकृत किया और वे [illegible]
देवदत्ता गणिका का घर [illegible]
और उतर कर देवदत्ता गणिका के घर में प्रविष्ट हुए।

उस समय देवदत्ता गणिका ने सार्थवाहपुत्रों को आता देखा। देखकर वह हृष्ट-तुष्ट होकर आसन से उठी और उठ कर सात-आठ कदम सामने गई। [illegible] देवानुप्रियो! आज्ञा [illegible]

[illegible] वयासी-'इच्छामो णं देवाणुप्पिए! तुम्हेहिं सद्धिं सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स उज्जाणसिरिं पच्चणुब्भवमाणा विहरित्तए।' [illegible]

तए णं सा देवदत्ता तेसिं सत्थवाहदारगाणं एयमट्ठं पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता ण्हाया कयकिच्चा किं ते पवर जाव सिरिसमाणवेसा जेणेव सत्थवाहदारगा तेणेव समागया।

तत्पश्चात् सार्थवाहपुत्रों ने देवदत्ता गणिका से इस प्रकार कहा—'हे देवानुप्रिये! हम तुम्हारे साथ सुभूमिभाग नामक उद्यान की उद्यानश्री का अनुभव करते हुए विचरना चाहते हैं।'

तत्पश्चात् देवदत्ता ने उन सार्थवाहपुत्रों की इस बात को स्वीकार किया। स्वीकार करके स्नान किया, मंगलकृत्य किया। अधिक क्या कहें? लक्ष्मी के समान श्रेष्ठ वेष धारण किया। जहाँ सार्थवाहपुत्र थे वहाँ आ गई।

तए णं ते सत्थवाहदारगा देवदत्ताए गणियाए सद्धिं जाणं दुरूहंति, दुरूहित्ता चंपाए नयरीए मज्झंमज्झेणं जेणेव सुभूमिभागे उज्जाणे, जेणेव नंदापुक्खरिणी तेणेव उवागच्छंति। उवागच्छित्ता पवहणाओ पच्चोरुहंति, पच्चोरुहित्ता णंदापोक्खरिणिं ओगाहिंति। ओगाहित्ता जलमज्जणं करेंति, जलकीडं करेंति, ण्हाया देवदत्ताए सद्धिं पच्चुत्तरंति। जेणेव थूणामंडवे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता थूणामंडवं अणुपविसित्ता सव्वालंकारविभूसिया आसत्था वीसत्था सुहासणवरगया देवदत्ताए सद्धिं तं विपुलं असणपाणखाइमसाइमं धूवपुप्फगंधवत्थं आसाएमाणा वीसाएमाणा परिभुंजेमाणा एवं च णं विहरंति। जिमियभुत्तुत्तरागया वि य णं समाणा देवदत्ताए सद्धिं विपुलाइं माणुस्सगाइं कामभोगाइं भुंजमाणा विहरंति।

तत्पश्चात् वे सार्थवाहपुत्र देवदत्ता गणिका के साथ यान पर आरूढ़ हुए और चम्पा नगरी के बीचोंबीच होकर जहाँ सुभूमिभाग उद्यान था, और जहाँ नन्दा पुष्करिणी थी, वहाँ पहुँचे। वहाँ पहुँच कर यान (रथ) से नीचे उतरे। उतर कर नन्दा पुष्करिणी में अवगाहन किया। अवगाहन करके जलमज्जन किया, जलक्रीड़ा की, स्नान किया और फिर देवदत्ता के साथ बाहर निकले। जहाँ स्थूणामंडप था वहाँ आये। आकर स्थूणामंडप में प्रवेश किया। सब अलंकारों से विभूषित हुए, आश्वस्त (स्वस्थ) हुए, विश्वस्त (विश्रान्त) हुए, श्रेष्ठ आसन पर बैठे। देवदत्ता गणिका के साथ उस विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम तथा धूप, पुष्प, गंध और वस्त्र का आस्वादन करते हुए, विशेष

रूप से आस्वादन करते हुए एवं भोगते हुए विचरने लगे। भोजन के पश्चात् देवदत्ता के साथ मनुष्य संबंधी विपुल कामभोग भोगते हुए विचरते लगे।

तए णं ते सत्थवाहदारगा पुव्वावरण्हकालसमयंसि देवदत्ताए गणियाए सद्धिं थूणामंडवाओ पडिणिक्खमंति। पडिणिक्खमित्ता हत्थसंगेल्लीए सुभूमिभागे बहुसु आलिघरएसु य कयलीघरेसु य लयाघरएसु य अच्छणघरएसु य पेच्छणघरएसु य पसाहणघरएसु य मोहणघरएसु य सालघरएसु य जालघरएसु य कुसुमघरएसु य उज्जाणसिरिं पच्चणुभवमाणा विहरंति।

तत्पश्चात् वे सार्थवाहपुत्र दिन के पिछले पहर में देवदत्ता गणिका के साथ स्थूणामंडप से बाहर निकले। बाहर निकल कर हाथ में हाथ डाल कर सुभूमिभाग उद्यान में बने हुए आलि वृक्षों के गृहों में, कदलीगृहों में, लतागृहों में, आसन (बैठने के) गृहों में, प्रेक्षणगृहों में, मण्डन करने के गृहों में, मैथुन-गृहों में, साल वृक्षों के गृहों में, जाली वाले गृहों में, पुष्पगृहों में उद्यान की शोभा का अनुभव करते हुए विचरने लगे।

तए णं ते सत्थवाहदारगा जेणेव से मालुयाकच्छए तेणेव पहारेत्थ गमणाए। तए णं सा वणमऊरी ते सत्थवाहदारए एज्जमाणे पासइ। पासित्ता भीया तत्था महया महया सद्देणं केकारवं विणिम्मुयमाणी विणिम्मुयमाणी मालुयाकच्छाओ पडिणिक्खमइ। पडिणिक्खमित्ता एगंसि रुक्खडालयंसि ठिच्चा ते सत्थवाहदारए मालुयाकच्छयं च अणिमिसाए दिट्ठीए पेहमाणी पेहमाणी चिट्ठइ।

तत्पश्चात् वे सार्थवाहदारक जहाँ मालुकाकच्छ था, वहाँ जाने के लिए प्रवृत्त हुए। तब उस वनमयूरी ने सार्थवाहपुत्रों को आता देखा। देख कर वह डर गई और घबरा गई। वह जोर-जोर से आवाज करके केकारव करती हुई मालुकाकच्छ से बाहर निकली। निकल कर एक वृक्ष की डाली पर स्थित होकर उन सार्थवाहपुत्रों को तथा मालुकाकच्छ को अपलक दृष्टि से देखने लगी।

तए णं ते सत्थवाहदारगा अण्णमण्णं सद्दावेन्ति, सद्दावित्ता एवं वयासी—'जहा णं देवाणुप्पिया! एसा वणमऊरी अम्हे एज्जमाणा पासित्ता भीया तत्था तसिया उव्विग्गा, पलाया महया महया सद्देणं,

जाव अम्हे मालुयाकच्छयं च पेच्छमाणी पेच्छमाणी चिट्ठइ, तं भवि-
यव्वमेत्थ कारणेणं' त्ति कट्टु, मालुयाकच्छयं अंतो अणुपविसंति।
अणुपविसित्ता तत्थ णं दो पुट्ठे परियागए जाव पासित्ता अन्नम
सद्दावेन्ति, सद्दावित्ता एवं वयासी—

तत्पश्चात् उन सार्थवाहपुत्रों ने आपस में एक दूसरे को बुलाया और बुलाकर इस प्रकार कहा—हे देवानुप्रिय ! यह वनमयूरी हमें आता देखकर भयभीत हुई, स्तब्ध रह गई, त्रास को प्राप्त हुई, उद्विग्न हुई, भाग (उड़) गई और जोर-जोर की आवाज करके यावत् हम लोगों को तथा मालुकाकच्छ को पुनः पुनः देखती हुई ठहरी है, अतएव यहाँ कोई कारण होना चाहिए।' इस प्रकार कह कर वे मालुकाकच्छ के भीतर घुसे। घुस कर उन्होंने वहाँ दो पुष्ट और अनुक्रम से वृद्धि प्राप्त मयूरी-अंडे यावत् देखे, देख कर एक दूसरे को बुलाया और बुला कर इस प्रकार कहा:—

'सेयं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हे इमे वणमऊरीअंडए साणं जाइमंताणं कुक्कुडियाणं अंडएसु य पक्खिवित्तए। तए णं ताओ कुक्कुडियाओ ताए अंडए सए य अंडए सएणं पक्खवाएणं सारक्खमाणीओ संगोवेमाणीओ विहरिस्संति तए णं अम्हं एत्थं दो कीलावणगा मऊरपोयगा भविस्संति।' त्ति कट्टु, अन्नमन्नस्स एयमट्ठं पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता सए सए दासचेडे सद्दावेंति, सद्दावित्ता एवं वयासी—'गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया ! इमे अंडए गहाय सयाणं जाइमंताणं कुक्कुडीणं अंडएसु पक्खिवह।' जाव ते वि पक्खिवेंति।

'हे देवानुप्रिय ! वनमयूरी के इन अंडों को अपनी उत्तम जाति की मुर्गी के अंडों में डलवा देना अपने लिए अच्छा रहेगा। ऐसा करने से अपनी जातिवन्त मुर्गियाँ इन अंडों का और अपने अण्डों का अपने पंखों की हवा से रक्षण करती और सँभालती रहेंगी। तो हमारे दो क्रीड़ा करने के मयूर-बालक हो जाएँगे।' इस प्रकार कह कर उन्होंने एक दूसरे की बात स्वीकार की। स्वीकार करके अपने-अपने दासपुत्रों को बुलाया। बुला कर इस प्रकार कहा—हे देवानुप्रियो ! तुम जाओ। इन अंडों को लेकर अपनी उत्तम जाति की मुर्गियों के अंडों में डाल (मिला) दो।' यावत् उन दासपुत्रों ने उन दोनों अंडों को मुर्गियों के अंडों में मिला दिया।

तए णं ते सत्थवाहदारगा देवदत्ताए गणियाए सद्धिं सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स उज्जाणसिरिं पच्चणुभवमाणा विहरित्ता तमेव जाणं दुरूढा समाणा जेणेव चंपानयरी जेणेव देवदत्ताए गणियाए गिहे तेणेव उवागच्छंति। उवागच्छित्ता देवदत्ताए गिहं अणुपविसंति। अणुपविसित्ता देवदत्ताए गणियाए विउलं जीवियारिहं पीइदाणं दलयंति। दलइत्ता सक्कारेंति, सक्कारित्ता संमाणेंति, सम्माणित्ता देवदत्ताए गिहाओ पडिणिक्खमंति पडिणिक्खमित्ता जेणेव सयाइं सयाइं गिहाइं तेणेव उवागच्छंति। उवागच्छित्ता सकम्मसंपउत्ता जाया यावि होत्था।

तत्पश्चात् वे सार्थवाहपुत्र देवदत्ता गणिका के साथ सुभूमिभाग उद्यान में उद्यान की शोभा का अनुभव करते हुए विचरण करके उसी यान पर आरूढ़ होते हुए जहाँ चम्पा नगरी थी और जहाँ देवदत्ता गणिका का घर था, वहाँ आये। आकर देवदत्ता के घर में प्रवेश किया। प्रवेश करके देवदत्ता गणिका को विपुल जीविका के योग्य प्रीतिदान दिया। प्रीतिदान देकर उसका सत्कार किया, सत्कार करके सन्मान किया। सन्मान करके दोनों देवदत्ता के घर से बाहर निकले। निकल कर जहाँ अपने-अपने घर थे, वहाँ आये। आकर अपने कार्य में संलग्न हो गये।

तए णं जे से सागरदत्तपुत्ते सत्थवाहदारए से णं कल्लं जाव जलंते जेणेव से वणमऊरीअंडए तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता तंसि मऊरीअंडयंसि संकिए कंखिए विइगिच्छासमावन्ने भेयसमावन्ने कलुससमावन्ने-'किं णं ममं एत्थ कीलावणमऊरीपोयए भविस्सइ, उदाहु णो भविस्सइ?' त्ति कट्टु तं मऊरीअंडयं अभिक्खणं अभिक्खणं उव्वत्तेइ, परियत्तेइ, आसारेइ, संसारेइ, चालेइ, फंदेइ, घट्टेइ, खोभेइ, अभिक्खणं अभिक्खणं कण्णमूलंसि टिट्टियावेइ। तए णं से मऊरीअंडए अभिक्खणं अभिक्खणं उव्वत्तिज्जमाणे जाव टिट्टियावेज्जमाणे पोच्चडे जाए यावि होत्था।

तत्पश्चात् उनमें जो सागरदत्त का पुत्र सार्थवाहदारक था, वह कल (दूसरे दिन), सूर्य के देदीप्यमान होने पर जहाँ वनमयूरी का अंडा था, वहाँ

जाव अम्हे मालुयाकच्छयं च पेच्छमाणी पेच्छमाणी चिट्ठइ, तं भवि-यव्वमेत्थ कारणेणं' ति कट्टु, मालुयाकच्छयं अंतो अणुपविसंति। अणुपविसित्ता तत्थ णं दो पुट्ठे परियागए जाव पासित्ता अन्नमन्नं सद्दावेन्ति, सद्दावित्ता एवं वयासी–

तत्पश्चात् उन सार्थवाहपुत्रों ने आपस में एक दूसरे को बुलाया और बुलाकर इस प्रकार कहा–हे देवानुप्रिय ! यह वनमयूरी हमें आता देखकर भय-भीत हुई, स्तब्ध रह गई, त्रास को प्राप्त हुई, उद्विग्न हुई, भाग (उड़) गई और जोर–जोर की आवाज करके यावत हम लोगों को तथा मालुकाकच्छ को पुनः पुनः देखती हुई ठहरी है, अतएव यहाँ कोई कारण होना चाहिए।' इस प्रकार कह कर वे मालुकाकच्छ के भीतर घुसे। घुस कर उन्होंने वहाँ दो पुष्ट और अनुक्रम से वृद्धि प्राप्त मयूरी–अंडे यावत् देखे, देख कर एक दूसरे को बुलाया और बुला कर इस प्रकार कहा:—

'सेयं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हे इमे वणमऊरीअंडए साणं जाइमं-ताणं कुक्कुडियाणं अंडएसु य पक्खिवित्तए। तए णं ताओ कुक्कु-डियाओ ताए अंडए सए य अंडए सएणं पक्खवाएणं सारक्खमाणी संगोवेमाणीओ विहरिस्संति तए णं अम्हं एत्थं दो कीलावणगा मऊर-पोयगा भविस्संति।' त्ति कट्टु अन्नमन्नस्स एयमट्ठं पडिसुणेंति, पडि-सुणित्ता सए सए दासचेडे सद्दावेंति, सद्दावित्ता एवं वयासी 'गच्छह णं तुम्हे देवाणुप्पिया ! इमे अंडए गहाय सयाणं जाइमंताणं कुक्कुडीणं अंडएसु पक्खिवह।' जाव ते वि पक्खिवेंति।

'हे देवानुप्रिय ! वनमयूरी के इन अंडों को अपनी उत्तम जाति की मुर्गियों के अंडों में रखवा देना अपने लिए अच्छा रहेगा। ऐसा करने से अपनी जातिवन्त मुर्गियाँ इन अंडों का और अपने अण्डों का अपने पंखों की हवा से रक्षण करती और सँभालती रहेंगी। तो हमारे दो क्रीड़ा करने के मयूर-बालक हो जाएँगे।' इस प्रकार कह कर उन्होंने एक दूसरे की बात स्वीकार की। स्वीकार करके अपने-अपने दासपुत्रों को बुलाया। बुला कर इस प्रकार कहा–हे देवानुप्रियो ! तुम जाओ। इन अंडों को लेकर अपनी उत्तम जाति की मुर्गियों के अंडों में डाल (मिला) दो।' यावत् उन दासपुत्रों ने उन दोनों अंडों को मुर्गियों के अंडों में मिला दिया।

तए णं ते सत्थवाहदारगा देवदत्ताए गणियाए सद्धिं सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स उज्जाणसिरिं पच्चणुभवमाणा विहरित्ता तमेव जाणं दुरूढा समाणा जेणेव चंपानयरी जेणेव देवदत्ताए गणियाए गिहे तेणेव उवागच्छंति। उवागच्छित्ता देवदत्ताए गिहं अणुपविसंति। अणुपविसित्ता देवदत्ताए गणियाए विउलं जीवियारिहं पीइदाणं दलयंति। दलइत्ता सक्कारेंति, सक्कारित्ता संमाणेंति, सम्माणित्ता देवदत्ताए गिहाओ पडिणिक्खमंति पडिणिक्खमित्ता जेणेव सयाइं सयाइं गिहाइं तेणेव उवागच्छंति। उवागच्छित्ता सकम्मसंपउत्ता जाया यावि होत्था।

तत्पश्चात् वे सार्थवाहपुत्र देवदत्ता गणिका के साथ सुभूमिभाग उद्यान में उद्यान की शोभा का अनुभव करते हुए विचरण करके उसी यान पर आरूढ़ होते हुए जहाँ चम्पा नगरी थी और जहाँ देवदत्ता गणिका का घर था, वहाँ आये। आकर देवदत्ता के घर में प्रवेश किया। प्रवेश करके देवदत्ता गणिका को विपुल जीविका के योग्य प्रीतिदान दिया। प्रीतिदान देकर उसका सत्कार किया, सत्कार करके सन्मान किया। सन्मान करके दोनों देवदत्ता के घर से बाहर निकले। निकल कर जहाँ अपने-अपने घर थे, वहाँ आये। आकर अपने कार्य में संलग्न हो गये।

तए णं जे से सागरदत्तपुत्ते सत्थवाहदारए से णं कल्लं जाव जलंते जेणेव से वणमऊरीअंडए तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता तंसि मऊरीअंडयंसि संकिए कंखिए विइगिच्छासमावन्ने भेयसमावन्ने कलुससमावन्ने-'किं णं ममं एत्थ कीलावणमऊरीपोयए भविस्सइ, उदाहु णो भविस्सइ ?' त्ति कट्टु तं मऊरीअंडयं अभिक्खणं अभिक्खणं उव्वत्तेइ, परियत्तेइ, आसारेइ, संसारेइ, चालेइ, फंदेइ, घट्टेइ, खोभेइ, अभिक्खणं अभिक्खणं कण्णमूलंसि टिट्टियावेइ। तए णं से मऊरीअंडए अभिक्खणं अभिक्खणं उव्वत्तिज्जमाणे जाव टिट्टियावेज्जमाणे पोच्चडे जाए यावि होत्था।

तत्पश्चात् उनमें जो सागरदत्त का पुत्र सार्थवाहदारक था, वह कल (दूसरे दिन), सूर्य के देदीप्यमान होने पर जहाँ वनमयूरी का अंडा था, वहाँ

या उपाध्याय के समीप प्रव्रज्या ग्रहण करके पाँच महाव्रतों के विषय में, यावत् षट् जीवनिकाय के विषय में अथवा निर्ग्रन्थप्रवचन के विषय में शंका करता है यावत् कलुषता को प्राप्त होता है, वह इसी भव में बहुत-से साधुओं, साध्वियों, श्रावकों और श्राविकाओं के द्वारा हीलना करने योग्य-गच्छ से पृथक् करने योग्य मन से निन्दा करने योग्य, लोकनिन्दनीय, समक्ष में ही गर्हा (निन्दा) करने योग्य और परिभव (अनादर) के योग्य होता है। परभव में भी वह बहुत दंड पाता है, यावत् अनन्त संसार में परिभ्रमण करता है।

तए णं से जिणदत्तपुत्ते जेणेव से मऊरीअंडए तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता तंसि मऊरीअंडयंसि निस्संकिए, 'सुवत्तए णं मम एत्थ कीलावणए मऊरीपोयए भविस्सइ' त्ति कट्टु तं मऊरीअंडयं अभिक्खणं अभिक्खणं नो उव्वत्तेइ जाव नो टिट्टियावेइ। तए णं से मऊरीअंडए अणुव्वत्तिजमाणे जाव अटिट्टियाविज्जमाणे ते णं काले णं ते णं समए णं उब्भिन्ने मऊरीपोयए एत्थ जाए।

तत्पश्चात् जिनदत्त का पुत्र जहाँ मयूरी का अंडा था, वहाँ आया। आकर उस मयूरी के अंडे के विषय में निःशंक रहा। 'मेरे इस अंडे में से क्रीड़ा करने के लिए बढ़िया गोलाकार मयूरी-बालक होगा' इस प्रकार निश्चय करके, उस मयूरी के अंडे को उसने बार-बार उलटा-पलटा नहीं यावत् बजाया नहीं। इस कारण उलट-पलट न करने से और न बजाने से उस काल और उस समय में अर्थात् समय का परिपाक होने पर वह अंडा फूटा और मयूरी के बालक का जन्म हुआ।

तए णं से जिणदत्तपुत्ते तं मऊरीपोययं पासइ, पासित्ता हट्ठतुट्ठे मऊरपोसए सद्दावेइ। सद्दावित्ता एवं वयासी—तुब्भे णं देवाणुप्पिया! इमं मऊरपोययं बहूहिं मऊरपोसणपाउग्गेहिं दव्वेहिं अणुपुव्वेणं सारक्खमाणा संगोवेमाणा संवड्ढेह, नट्टुल्लगं च सिक्खावेह।

तए णं ते मऊरपोसगा जिणदत्तस्स पुत्तस्स एयमट्ठं पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता तं मऊरपोययं गेण्हंति, गेण्हित्ता जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छंति। उवागच्छित्ता तं मऊरपोयगं जाव नट्टुल्लगं सिक्खावेंति।

तत्पश्चात् जिनदत्त के पुत्र ने उस मयूरी के बच्चे को देखा। देख कर

तए णं से मऊरपोयए जिणदत्तपुत्तेणं एगाए चप्पुडियाए कयाए समाणीए णंगोला (ल) भंगसिरोधरे सेयावंगे अवयारियपइन्नपक्खे उक्खित्तचंदकाइयकलावे केक्काइयसयाणि विमुचमाणे णच्चइ।

तए णं से जिणदत्तपुत्ते तेणं मऊरपोयएणं चंपाए नयरीए सिंघाडग जाव पहेसु सइएहि य साहस्सिएहि य सयसाहस्सिएहि य पणिएहि य जयं करेमाणे विहरइ।

तत्पश्चात् वह मयूर बालक जिनदत्त के पुत्र द्वारा एक चुटकी बजाने पर लांगूल के भंग के समान अर्थात् जैसे सिंह आदि अपनी पूंछ को टेढ़ी करते हैं उसी प्रकार अपनी गर्दन टेढ़ी करता था। उसके शरीर पर पसीना आ जाता था अथवा उसके नेत्र के कोने श्वेत वर्ण के हो गये थे। वह बिखरे पिच्छों वाले दोनों पंखों को शरीर से जुदा कर लेता था अर्थात् उन्हें फैला देता था। वह चन्द्रक आदि से युक्त पिच्छों के समूह को ऊँचा कर लेता था और सैकड़ों केकारव करता हुआ नृत्य करता था।

तत्पश्चात् वह जिनदत्त का पुत्र उस मयूर बालक के द्वारा चम्पानगरी के शृङ्गाटक आदि मार्गों में सैकड़ों, हजारों और लाखों की होड़ में विजय प्राप्त करता हुआ विचरता था।

एवामेव समणाउसो! जो अम्हं निग्गंथो वा निग्गंथी वा पव्वइए समाणे पंचसु महव्वएसु छसु जीवनिकाएसु निग्गंथे पावयणे निस्संकिए निक्कंखिए निव्विइगिच्छे से णं इह भवे चेव बहूणं समणाणं समणीणं जाव वीइवइस्सइ। एवं खलु जंबू! समणेणं भगवया महावीरेणं णायाणं तच्चस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते त्ति बेमि॥

हे आयुष्मन् श्रमणो! इसी प्रकार हमारा जो साधु या साध्वी दीक्षित होकर पाँच महाव्रतों में, षट् जीवनिकाय में तथा निर्ग्रन्थ प्रवचन में शंका से रहित, कांक्षा से रहित तथा विचिकित्सा से रहित होता है, वह इसी भव में बहुत से श्रमणों एवं श्रमणियों में मान-सम्मान प्राप्त करके यावत् संसार रूप अटवी को पार करेगा। हे जम्बू! इस प्रकार श्रमण भगवान् महावीर ने ज्ञाता के तृतीय अध्ययन का यह अर्थ फरमाया है।

तृतीय अध्ययन समाप्त

चतुर्थ कूर्म अध्ययन

जइ णं भंते ! समणेणं भगवया महावीरेणं नायाणं तच्च नायज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते, चउत्थस्स णं णायाणं के अट्ठे पन्नत्ते ?

श्रीजम्बू स्वामी अपने गुरुदेव श्रीसुधर्मा स्वामी से प्रश्न करते हैं 'भगवन् ! यदि श्रमण भगवान् महावीर ने ज्ञाताअंग के तृतीय अध्ययन का यह अर्थ फर्माया है तो ज्ञाता अंग के चौथे ज्ञात-अध्ययन का क्या अर्थ फर्माया है ?'

एवं खलु जंबू ! तेणं काले णं तेणं समए णं वाणारसी नामं नयरी होत्था, वन्नओ। तीसे णं वाणारसीए नयरीए बहिया उत्तरपुरच्छिमे दिसिभागे गंगाए महानदीए मयंगतीरद्दहे नामं दहे होत्था, अणुपुव्वसुजायवप्पगंभीरसीयलजले अच्छविमलसलिलपलिच्छन्ने संछन्नपत्तपुप्फपलासे बहुउप्पलपउमकुमुयनलिणसुभगसोगंधियपुंडरीयमहापुंडरीयसयपत्तसहस्सपत्तकेसरपुप्फोवचिए पासाईए दरिसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे।

श्रीसुधर्मा स्वामी, जम्बूस्वामी के प्रश्न का उत्तर देते हुए कहते हैं— हे जम्बू ! उस काल और समय में वाणारसी (बनारस) नामक नगरी थी। यहाँ उसका वर्णन औपपातिक सूत्र के नगरी-वर्णन के समान कहना चाहिए।

उस वाणारसी नगरी के बाहर उत्तर-पूर्व दिशा अर्थात् ईशान कोण में गंगा नामक महानदी में मृतगंगातीर ह्रद नामक एक ह्रद था। उसके अनु... से सुन्दर ... थे। उसका जल गहरा और शीतल था। वह ह्रद ... परिपूर्ण था। कमलिनियों के पत्तों और फूलों की ... बहुत से उत्पलों (नील कमलों), पद्मों (लाल कमलों

मनुष्य ही चलते-फिरते थे और सब मनुष्य अपने-अपने घरों में विश्राम कर रहे थे अथवा सब लोग चलने-फिरने से विरत हो चुके थे, तब आहार के अभिलाषी दो कछुए निकले। वे मृतगंगातीर ह्रद के आसपास चारों ओर फिरते हुए अपनी आजीविका करते हुए विचरण करने लगे।

तयाणंतरं च णं ते पावसियालगा आहारत्थी जाव आहारं गवेसमाणा मालुयाकच्छयाओ पडिणिक्खमंति। पडिणिक्खमित्ता जेणेव मयंगतीरे दहे तेणेव उवागच्छंति। उवागच्छित्ता तस्सेव मयंगतीरदहस्स परिपेरंतेणं परिघोलेमाणा परिघोलेमाणा वित्तिं कप्पेमाणा विहरंति।

तए णं ते पावसियाला ते कुम्मए पासंति, पासित्ता जेणेव ते कुम्मए तेणेव पहारेत्थ गमणाए।

तत्पश्चात् आहार के अर्थी यावत् आहार की गवेषणा करते हुए वे दोनों पापी शृगाल मालुकाकच्छ से बाहर निकले। निकल कर जहाँ मृतगंगातीर नामक ह्रद था, वहाँ आए। आकर उसी मृतगंगातीर ह्रद के पास इधर-उधर चारों ओर फिरने लगे और आजीविका करते हुए विचरण करने लगे।

तत्पश्चात् उन पापी सियारों ने उन दो कछुओं को देखा। देखकर जहाँ दोनों कछुए थे, वहाँ आने के लिए प्रवृत्त हुए।

तए णं ते कुम्मगा ते पावसियालए एज्जमाणे पासंति। पासित्ता भीता तत्था तसिया उव्विग्गा संजातभया हत्थे य पाए य गीवाए य सएहिं सएहिं काएहिं साहरंति, साहरित्ता निच्चला निप्फंदा तुसिणीया संचिट्ठंति।

तत्पश्चात् उन कछुओं ने उन पापी सियारों को आता देखा। देख कर वे डरे, त्रास को प्राप्त हुए, भागने लगे, उद्वेग को प्राप्त हुए और बहुत भयभीत हुए। उन्होंने अपने हाथ, पैर और ग्रीवा को अपने शरीर में गोपित कर लिया छिपा लिया। गोपन करके निश्चल, निष्पंद (हलन-चलन से रहित), और मौन रह गए।

तए णं ते पावसियालया जेणेव ते कुम्मगा तेणेव उवागच्छंति। कुम्मगा सव्वओ समंता उव्वत्तेन्ति, परियत्तेन्ति,

आसारेन्ति, संसारेन्ति, चालेन्ति, घट्टेन्ति, फंदेन्ति, खोभेन्ति, नहेहिं आलुंपंति, दंतेहि य अक्खोडेंति, नो चेव णं संचाएंति तेसिं कुम्मगाणं सरीरस्स आबाहं वा, पबाहं वा, बाबाहं वा उप्पाएत्तए छविच्छेयं वा करेत्तए।

तए णं ते पावसियालया एए कुम्मए दोच्चं पि तच्चं पि सव्वओ समंता उव्वत्तेंति, जाव नो चेव णं संचाएंति करेत्तए। ताहे संता तंता परितंता निव्विण्णा समाणा सणियं सणियं पच्चोसक्कंति, एगंतमवक्कमंति, निच्चला निप्फंदा तुसिणीया संचिट्ठंति।

तत्पश्चात् वे पापी सियार जहाँ वे कछुए थे, वहाँ आए। आकर उन कछुओं को सब तरफ से फिराने लगे, स्थानान्तरित करने लगे, सरकाने लगे, हटाने लगे, चलाने लगे, स्पर्श करने लगे, हिलाने लगे, क्षुब्ध करने लगे, नाखूनों से फाड़ने लगे और दांतों से चींथने लगे, किन्तु उन कछुओं के शरीर को थोड़ी बाधा, अधिक बाधा या विशेष बाधा उत्पन्न करने में अथवा उनकी चमड़ी छेदने में समर्थ न हो सके।

तत्पश्चात् उन पापी सियारों ने इन कछुओं को दूसरी बार और तीसरी बार सब ओर से घुमाया-फिराया, किन्तु यावत् उनकी चमड़ी छेदने में समर्थ न हुए। तब वे श्रान्त हो गये-शरीर से थक गये, तान्त हो गये-मानसिक ग्लानि को प्राप्त हुए और शरीर तथा मन-दोनों से थक गये तथा खेद को प्राप्त हुए। धीमे-धीमे पीछे लौट गये, एकान्त में चले गये और निश्चल, निस्पंद तथा मूक होकर ठहर गये।

तत्थ णं एगे कुम्मए ते पावसियालए चिरंगए दूरगए जाणित्ता सणियं सणियं एगं पायं निच्छुभइ। तए णं ते पावसियालया तेणं कुम्मएणं सणियं सणियं एगं पायं नीणियं पासंति। पासित्ता ताए उक्किट्ठाए गईए सिग्घं चवलं तुरियं चंडं जइणं वेगिइं जेणेव से कुम्मए तेणेव उवागच्छंति। उवागच्छित्ता तस्स णं कुम्मगस्स तं पायं नखेहिं आलुंपंति, दंतेहिं अक्खोडेंति, तओ पच्छा मंसं च सोणियं च आहारेंति, आहारित्ता तं कुम्मगं सव्वओ समंता उव्वत्तेंति जाव नो चेव णं संचाएंति करेत्तए। ताहे दोच्चं पि अवक्कमंति, एवं चत्तारि

वि पाया जाव सणियं सणियं गीवं णीणेइ। तए णं ते पावसियालया तेणं कुम्मएणं गीवं णीणियं पासंति, पासित्ता सिग्घं चवलं तुरियं चंडं नहेहिं दंतेहिं कवालं विहाडेंति, विहाडित्ता तं कुम्मगं जीवियाओ ववरोवेंति, ववरोवित्ता मंसं च सोणियं च आहारेंति।

उन दोनों में से एक कछुए ने उन पापी सियारों को बहुत समय पहले और दूर गया जान कर धीरे-धीरे अपना एक पैर बाहर निकाला।

तत्पश्चात उन पापी शृगालों ने देखा कि उस कछुए ने धीरे-धीरे एक पैर निकाला है। यह देख कर वे दोनों उत्कृष्ट गति से शीघ्र, चपल, त्वरित, चंड, जय और वेगयुक्त रूप से जहाँ वह कछुआ था, वहाँ आये। आकर उन्होंने कछुए का वह पैर नाखूनों से विदारण किया और दाँतों से तोड़ा। तत्पश्चात् उसके मांस और रक्त का आहार किया। आहार करके वे कछुए को उलटपलट कर देखने लगे, किन्तु यावत उसकी चमड़ी छेदने में समर्थ न हुए। तब वे दूसरी बार हट गये। इसी प्रकार क्रमशः चारों पैरों के विषय में कहना चाहिए। फिर उस कछुए ने ग्रीवा बाहर निकाली। उन पापी सियारों ने देखा कि कछुए ने ग्रीवा बाहर निकाली है। यह देख कर वे शीघ्र ही उसके समीप आये। उन्होंने नाखूनों से विदारण करके और दाँतों से तोड़ कर उसके कपाल को अलग कर दिया। अलग करके कछुए को जीवन-रहित कर दिया। जीवन रहित करके उसके मांस और रुधिर का आहार किया।

एवामेव समणाउसो! जो अम्हं निग्गंथो वा निग्गंथी वा आयरियउवज्झायाणं अंतिए पव्वइए समाणे पंच से इंदियाइं अगुत्ताइं भवंति, से णं इह भवे चेव बहूणं समणाणं बहूणं समणीणं सावगाणं साविगाणं हीलणिज्जे परलोए वि य णं आगच्छइ बहूणि दंडणाणि जाव अणुपरियट्टइ, जहा कुम्मए अगुत्तिंदिए।

इसी प्रकार हे आयुष्मन् श्रमणो! हमारा जो निर्ग्रन्थ अथवा निर्ग्रन्थी आचार्य या उपाध्याय के निकट दीक्षित हो कर पाँचों इन्द्रियों का गोपन नहीं करते हैं, वे इसी भव में बहुत साधुओं, साध्वियों, श्रावकों और श्राविकाओं द्वारा हीलना करने योग्य होते हैं और परलोक में भी बहुत दंड पाते हैं, यावत अनन्त संसार में परिभ्रमण करते हैं, जैसे अपनी इन्द्रियों का गोपन न करने वाला कछुआ मृत्यु को प्राप्त हुआ।

तए णं ते पावसियालया जेणेव से दोच्चए कुम्मए तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता तं कुम्मयं सव्वओ समंता उव्वत्तेंति जाव दंतेहिं अक्खुडेंति जाव करित्तए।

तए णं ते पावसियालया दोच्चं पि तच्चं पि जाव नो संचाएंति तस्स कुम्मगस्स किंचि आबाहं वा विबाहं वा जाव छविच्छेयं वा करित्तए, ताहे संता तंता परितंता निव्विण्णा समाणा जामेव दिसिं पाउब्भूआ तामेव दिसिं पडिगया।

तत्पश्चात् वे दोनों पापी सियार जहाँ दूसरा कछुआ था, वहाँ आये। आकर उस कछुए को चारों तरफ से, सब दिशाओं से उलट-पलट कर देखने लगे, यावत् दांतों से तोड़ने लगे, परन्तु यावत् उसकी चमड़ी का छेदन करने में समर्थ न हो सके।

तत्पश्चात वे पापी सियार दूसरी बार और तीसरी बार दूर चले गये किन्तु कछुए ने अपने अंग बाहर न निकाले, अतः वे उस कछुए को कुछ भी आबाधा या विबाधा अर्थात थोड़ी या बहुत पीड़ा न कर सके यावत् उसकी चमड़ी छेदने में भी समर्थ न हो सके। तब वे श्रान्त, क्लान्त और परितान्त हो कर तथा खिन्न होकर जिस दिशा से आये थे, उसी दिशा में लौट गये।

तए णं से कुम्मए ते पावसियालए चिरंगए दूरगए जाणित्ता सणियं सणियं गीवं नेणेइ, नेणित्ता दिसावलोयं करेइ, करित्ता जमगसमगं चत्तारि वि पाए नीणेइ, नीणेत्ता ताए उक्किट्ठाए कुम्मगईए वीइवयमाणे वीइवयमाणे जेणेव मयंगतीरद्दहे तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता मित्तनाइनियगसयणसंबंधिपरियणेणं सद्धिं अभिसमन्नागए यावि होत्था।

तत्पश्चात् उस कछुए ने उन पापी सियारों को चिरकाल से गया और दूर गया जान कर धीरे-धीरे अपनी ग्रीवा बाहर निकाली। ग्रीवा निकाल कर सब दिशाओं में अवलोकन किया। अवलोकन करके एक साथ चारों पैर बाहर निकाले और उत्कृष्ट कूर्मगति से अर्थात् कछुए के योग्य अधिक से अधिक तेज चाल से दौड़ता-दौड़ता जहाँ मृतगंगातीर नामक ह्रद था, वहाँ आ पहुँचा। वहाँ आकर मित्र ज्ञाति निजक, स्वजन, संबंधी और परिजन के साथ मिल गया।

गणदेवसंघचारणविज्जाहरमिहुणसंविचिन्ने निच्चच्छणए दसारवरवीरपुरिस-तेलोक्कबलवगाणं सोमे सुभगे पियदंसणे सुरूवे पासाईए दरिसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे।

उस द्वारिका नगरी के बाहर उत्तरपूर्व दिशा अर्थात् ईशान कोण में रैवतक (गिरनार) नामक पर्वत था। यह बहुत ऊँचा था। उसके शिखर गगन-तल को स्पर्श करते थे। यह नाना प्रकार के गुच्छों, गुल्मों लताओं और वल्लियों से व्याप्त था। हंस मृग मयूर, क्रौंच, सारस, चक्रवाक, मदनसारिका और कोयल आदि पक्षियों के झुंडों से व्याप्त था। उसमें अनेक तट और गंड-शैल थे। बहु संख्यक गुफाएँ, झरने, प्रपात, प्राग्भार (कुछ-कुछ नमे हुए गिरि-प्रदेश) और शिखर थे। यह पर्वत अप्सराओं के समूहों, देवों के समूहों, चारण मुनियों और विद्याधरों के मिथुनों (जोड़ों) से युक्त था। उसमें दशार वंश के समुद्रविजय आदि वीर पुरुषों के, जो कि नेमिनाथ के साथ होने के कारण तीनों लोकों से भी अधिक बलवान् थे, नित्य नये उत्सव होते रहते थे यह पर्वत सौम्य, सुभग, देखने में प्रिय, सुरूप, प्रसन्नता प्रदान करने वाला, दर्शनीय, अभिरूप तथा प्रतिरूप था।

तस्स णं रेवयगस्स अदूरसामंते एत्थ णं णंदणवणे नामं उज्जाणे होत्था सव्वोउयपुप्फफलसमिद्धे रम्मे नंदणवणप्पगासे पासाईए दरिसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे।

तस्स णं उज्जाणस्स बहुमज्झभागे सुरप्पिए नामं जक्खाययणे होत्था दिव्वे वण्णओ।

उस रैवतक पर्वत से न अधिक दूर और न अधिक समीप एक नन्दनवन नामक उद्यान था। यह सब ऋतुओं संबंधी पुष्पों और फलों से समृद्ध था, मनोहर था। नन्दनवन के समान आनन्दप्रद, दर्शनीय, अभिरूप और प्रतिरूप था।

उस उद्यान के ठीक बीचोंबीच यक्ष का दिव्य आयतन था। यहाँ यक्षायतन का वर्णन कहना चाहिए।

तत्थ णं बारवईए नयरीए कण्हे नामं वासुदेवे राया परिवसइ। से णं तत्थ समुद्दविजयपामोक्खाणं दसण्हं दसाराणं, बलदेवपामोक्खाणं पंचण्हं महावीराणं, उग्गसेणपामोक्खाणं सोलसण्हं राईसहस्साणं,

पज्जुण्णपामोक्खाणं अद्भुट्टाणं कुमारकोडीणं, संबपामोक्खाणं सट्ठीए दुद्दंतसाहस्सीणं, वीरसेणपामोक्खाणं एक्कवीसाए वीरसाहस्सीणं, महासेनपामोक्खाणं छप्पन्नाए बलवगसाहस्सीणं, रुप्पिणीपामोक्खाणं बत्तीसाए महिलासाहस्सीणं, अणंगसेणापामोक्खाणं अणेगाणं गणियासाहस्सीणं, अन्नेसिं च बहूणं ईसरतलवर जाव सत्थवाहपभिईणं वेयड्ढगिरिसायरपेरंतस्स य दाहिणड्ढभरहस्स य बारवईए नयरीए आहेवच्चं जाव पालेमाणे विहरइ।

उस द्वारिका नगर में कृष्ण नामक वासुदेव राजा निवास करते थे। वह वासुदेव वहाँ समुद्रविजय आदि दश दशारों, बलदेव आदि पाँच महावीरों, उग्रसेन आदि सोलह हजार राजाओं, प्रद्युम्न आदि साढ़े तीन करोड़ कुमारों, शाम्ब आदि साठ हजार दुर्दान्त योद्धाओं, वीरसेन आदि इक्कीस हजार पुरुषों, महासेन आदि छप्पन हजार बलवान् पुरुषों, रुक्मिणी आदि बत्तीस हजार रानियों, अनंगसेना आदि अनेक सहस्र गणिकाओं तथा अन्य बहुत-से ईश्वरों (ऐश्वर्यवान् धनाढ्य सेठों), तलवरों (कोतवालों) यावत् सार्थवाहों आदि का, उत्तर दिशा में वैताढ्य पर्वत पर्यन्त तथा अन्य तीन दिशाओं में समुद्र पर्यन्त दक्षिणार्ध भरत क्षेत्र का और द्वारिका नगरी का अधिपतित्व करते हुए और पालन करते हुए विचरते थे।

तत्थ णं बारवईए नयरीए थावच्चा णामं गाहावइणी परिवसइ, अड्ढा जाव अपरिभूया। तीसे णं थावच्चाए गाहावइणीए पुत्ते थावच्चापुत्ते णामं सत्थवाहदारए होत्था सुकुमालपाणिपाए जाव सुरूवे।

तए णं सा थावच्चा गाहावइणी तं दारयं साइरेगअट्ठवासजाययं जाणित्ता सोहणंसि तिहिकरणनक्खत्तमुहुत्तंसि कलायरियस्स उवणेइ, जाव भोगसमत्थं जाणित्ता बत्तीसाए इब्भकुलबालियाणं एगदिवसेणं पाणिं गेण्हावेइ, बत्तीसओ दाओ जाव बत्तीसाए इब्भकुलबालियाहिं सद्धिं विउले सद्दफरिसरसरूववन्नगंधे जाव भुंजमाणे विहरइ।

द्वारिका नगरी में थावच्चा नामक एक गाथापत्नी (गृहस्थ महिला) निवास करती थी। वह समृद्धि वाली थी यावत् किसी से पराभव पाने वाली नहीं थी। उस थावच्चा गाथापत्नी का थावच्चापुत्र नामक सार्थवाह का बालक

नेमि को वन्दना करने गये। वंदना नमस्कार करके भगवान् की उपासना करने लगे।

थावच्चापुत्ते वि निग्गए, जहा मेहे तहेव धम्मं सोचा णिसम्म जेणेव थावच्चा गाहावइणी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पायग्गहणं करेइ। जहा मेहस्स तहा चेव णिवेयणा। जाहे नो संचाएइ विसयाणुलोमाहि य विसयपडिकूलेहि य बहूहिं आघवणाहि य पन्नवणाहि य सन्नवणाहि य विन्नवणाहि य आघवित्तए वा पन्नवित्तए वा सन्नवित्तए वा विन्नवित्तए वा, ताहे अकामिया चेव थावच्चापुत्तदारगस्स निक्खमणमणुमन्नित्था। नवरं निक्खमणाभिसेयं पासामो। तए णं से थावच्चापुत्ते तुसिणीए संचिट्ठइ।

मेघ कुमार की तरह थावच्चापुत्र भी भगवान् को वन्दना करने के लिए निकला। उसी प्रकार धर्म को श्रवण करके और हृदय में धारण करके जहाँ थावच्चा गाथापत्नी थी, वहाँ आया। आकर माता के पैरों को ग्रहण किया-चरण स्पर्श किया। जैसे मेघकुमार ने अपने वैराग्य का निवेदन किया, उसी प्रकार थावच्चापुत्र की भी वैराग्य निवेदना समझ लेनी चाहिए। माता जब विषयों के अनुकूल और विषयों के प्रतिकूल बहुत-सी आघवना-सामान्य कथन से, पन्नवणा-विशेष कथन से, सन्नवणा-धन-वैभव आदि का लालच दिखला कर, विन्नवणा-आजीजी करके, सामान्य कहने, विशेष कहने, ललचाने और मनाने में समर्थ न हुई, तब इच्छा न होने पर भी माता ने थावच्चापुत्र बालक का निष्क्रमण स्वीकार किया। विशेष यह कहा कि-'मैं तुम्हारा दीक्षा-महोत्सव देखूँ।' तब थावच्चापुत्र मौन रह गया, अर्थात् उसने माता की बात मान ली।

तए णं सा थावच्चा आसणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठित्ता महत्थं महग्घं महरिहं रायरिहं पाहुडं गेण्हइ, गेण्हित्ता मित्त जाव संपरिवुडा जेणेव कण्हस्स वासुदेवस्स भवणवरपडिदुवारदेसभाए तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता पडिहारदेसिएणं मग्गेणं जेणेव कण्हे वासुदेवे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता करयल वद्धावेइ, वद्धावित्ता तं महत्थं महग्घं महरिहं रायरिहं पाहुडं उवणेइ, उवणित्ता एवं वयासी-

तत्पश्चात् वह थावच्चा सार्थवाही आसन से उठी। उठ कर महान् अर्थ वाली, महामूल्य वाली, महान् पुरुषों के योग्य तथा राजा के योग्य भेंट ग्रहण

की। ग्रहण करके मित्र ज्ञाति आदि से परिवृत होकर जहाँ कृष्ण वासुदेव
श्रेष्ठ भवन का मुख्य द्वार का देशभाग था, वहाँ आई। आकर प्रतीहार द्वारा दि
लाये मार्ग से जहाँ कृष्ण वासुदेव थे, वहाँ आई। आकर दोनों हाथ जोड़ क
कृष्ण वासुदेव को बधाया। बधाकर वह महा अर्थ वाली, महामूल्य वाली
महान् पुरुषों के योग्य और राजा के योग्य भेंट सामने रक्खी। सामने रख क
इस प्रकार कहा:—

एवं खलु देवाणुप्पिया! मम एगे पुत्ते थावच्चापुत्ते नामं दार
इट्ठे जाव से णं संसारभयउव्विग्गे इच्छइ अरहओ अरिट्ठनेमिस्स अ
पव्वइत्तए। अहं णं निक्खमणसक्कारं करेमि। इच्छामि णं देवा
णुप्पिया! थावच्चापुत्तस्स निक्खममाणस्स छत्तमउडचामराओ
विदिन्नाओ।

हे देवानुप्रिय! मेरा थावच्चापुत्र नामक एक ही पुत्र है। वह मुझे इष्ट
कान्त है, यावत् वह संसार के भय से उद्विग्न होकर अरिहन्त अरिष्टनेमि
समीप प्रव्रज्या अंगीकार करना चाहता है। मैं उसका निष्क्रमणसत्कार कर
चाहती हूँ। अतएव हे देवानुप्रिय! प्रव्रज्या अंगीकार करने वाले थावच्चापु
लिए आप छत्र मुकुट और चामर प्रदान करें, यह मेरी अभिलाषा है।

तए णं कण्हे वासुदेवे थावच्चागाहावइणिं एवं वयासी—'अच्छा
णं तुमं देवाणुप्पिए! सुनिव्वुया वीसत्था, अहं णं सयमेव थाव
पुत्तस्स दारगस्स निक्खमणसक्कारं करिस्सामि।'

तत्पश्चात् कृष्ण वासुदेव ने थावच्चा सार्थवाही से इस प्रकार कहा-
देवानुप्रिये! तुम निश्चिन्त रहो और विश्वस्त रहो। मैं स्वयं ही थावच्
बालक का दीक्षासत्कार करूँगा।

तए णं से कण्हे वासुदेवे चाउरंगिणीए सेणाए विजयं हत्थिरय
दुरूढे समाणे जेणेव थावच्चाए गाहावइणीए भवणे तेणेव उवागच्छ
उवागच्छित्ता थावच्चापुत्तं एवं वयासी:—

मा णं तुमं देवाणुप्पिया! मुंडे भवित्ता पव्वयाहि, भुंजाहि
देवाणुप्पिया! विउले माणुस्सए कामभोए मम बाहुच्छायापरिग्गहि
केवलं देवाणुप्पियस्स अहं णो संचाएमि वाउकायं उवरिमेणं निवा

सेए। अण्णे णं देवाणुप्पियस्स जं किंचि वि आबाहं वा वाबाहं वा उप्पाएइ तं सव्वं निवारेमि।

तत्पश्चात् कृष्ण वासुदेव चतुरङ्गिणी सेना के साथ, विजय नामक उत्तम हाथी पर आरूढ़ होकर जहाँ थावच्चा सार्थवाही का भवन था वहीं आये। आकर थावच्चापुत्र से इस प्रकार बोले:—

[illegible] भुजाओं [illegible] में केवल [illegible] रोकने मे [illegible] न्य पीड़ा [illegible]

तए णं से थावच्चापुत्ते कण्हेणं वासुदेवेणं एवं वुत्ते समाणे कण्हं वासुदेवं एवं वयासी—'जइ णं तुमं देवाणुप्पिया! मम जीवियंतकरणं मच्चुं एज्जमाणं निवारेसि, जरं वा सरीररूवविणासिणिं सरीरं अइवयमाणिं निवारेसि, तए णं अहं तव बाहुच्छायापरिग्गहिए विउले माणुस्सए कामभोगे भुंजमाणे विहरामि।

तब कृष्ण वासुदेव के इस प्रकार कहने पर थावच्चापुत्र ने कृष्ण वासुदेव से इस प्रकार कहा—हे देवानुप्रिय! यदि तुम मेरे जीवन का अन्त करने वाले आते हुए मरण को रोक दो और शरीर पर आक्रमण करने वाली एवं शरीर के रूप का विनाश करने वाली जरा को रोक दो, तो मैं तुम्हारी भुजाओं की छाया के नीचे रह कर मनुष्य संबंधी विपुल कामभोग भोगता हुआ विचरूँ।

तए णं से कण्हे वासुदेवे थावच्चापुत्तेणं एवं वुत्ते समाणे थावच्चापुत्तं एवं वयासी—'एए णं देवाणुप्पिया! दुरइक्कमणिज्जा, णो खलु सक्का सुबलिएणावि देवेण वा दाणवेण वा णिवारित्तए, णण्णत्थ अप्पणो कम्मक्खएणं।'

तत्पश्चात् थावच्चापुत्र के द्वारा इस प्रकार कहने पर कृष्ण वासुदेव ने थावच्चापुत्र से इस प्रकार कहा—हे देवानुप्रिय! मरण और जरा का उल्लंघन नहीं किया जा सकता। अतीव बलशाली देव अथवा दानव के द्वारा भी इनका निवारण नहीं किया जा सकता। हाँ, अपने कर्मों का क्षय ही इन्हें रोक सकता है।

का निर्वाह करेंगे। इस प्रकार की घोषणा करो।' यावत् कौटुम्बिक पुरुषों ने इसी प्रकार की घोषणा कर दी।

तए णं थावच्चापुत्तस्स अणुराएणं पुरिससहस्सं णिक्खमणाभिमुहं ण्हायं सव्वालंकारविभूसियं पत्तेयं पत्तेयं पुरिससहस्सवाहिणीसु सिवियासु दुरूढं समाणं मित्तणाइपरिवुडं थावच्चापुत्तस्स अंतियं पाउब्भूयं।

तए णं से कण्हे वासुदेवे पुरिससहस्समंतियं पाउब्भवमाणं पासइ, पासित्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी—जहा मेहस्स निक्खमणाभिसेओ तहेव सेयापीएहिं ण्हावेइ।

तए णं से थावच्चापुत्ते सहस्सपुरिसेहिं सद्धिं सिवियाए दुरूढे समाणे जाव रवेणं बारवइणयरिं मज्झंमज्झेणं जेणेव अरहओ अरिट्ठनेमिस्स छत्ताइच्छत्तं पडागाइपडागं पासंति, पासित्ता विज्जाहरचारणे जाव पासित्ता सिवियाओ पच्चोरुहंति।

तत्पश्चात् थावच्चापुत्र पर अनुराग होने के कारण एक हजार पुरुष निष्क्रमण के लिए तैयार हुए। वे स्नान करके, सब अलंकारों से विभूषित होकर प्रत्येक प्रत्येक-अलग-अलग-हजार पुरुषों द्वारा वहन की जाने वाली पालकियों पर सवार होकर, मित्रों एवं ज्ञाति जनों आदि से परिवृत होकर थावच्चापुत्र के समीप प्रकट हुए—आये।

तब कृष्ण वासुदेव ने एक हजार पुरुषों को प्रकट आया-हुआ देखा। देखकर कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया। बुलाकर इस प्रकार कहा—(देवानुप्रियो ! जाओ, थावच्चापुत्र को स्नान कराओ, अलंकारों से विभूषित करो और पुरुष-सहस्रवाहिनी शिविका पर आरूढ करो, इत्यादि) जैसा मेघकुमार के दीक्षाभिषेक का वर्णन किया गया है, उसी प्रकार यहाँ कहना चाहिए। फिर श्वेत और पीत अर्थात् चाँदी और सोने के कलशों से उसे स्नान कराया, यावत् सर्व अलंकारों से विभूषित किया।

तत्पश्चात् थावच्चापुत्र उन हजार पुरुषों के साथ, शिबिका पर आरूढ होकर, यावत् वाद्यों की ध्वनि के साथ, द्वारिका नगरी के बीचोंबीच होकर जहाँ अरिहन्त अरिष्टनेमि के छत्र पर छत्र और पताका पर पताका (आदि अतिशय) देखता है और देख कर विद्याधर एवं चारण मुनियों वगैरह को देखता है, वहाँ शिबिका से उतर जाता है।

'तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया ! अन्नाणमिच्छत्तअविरइ... संचियस्स अत्तणो कम्मक्खयं करित्तए।'

(कृष्ण वासुदेव के कथन के उत्तर में थावच्चापुत्र ने कहा-) देवानुप्रिय ! इसी कारण मैं अज्ञान, मिथ्यात्व, अविरति और कषाय से... आत्मा के कर्मों का क्षय करना चाहता हूं।

तए णं से कण्हे वासुदेवे थावच्चापुत्तेणं एवं वुत्ते समाणे कोडुंबि... पुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी-'गच्छह णं देवाणुप्पिया... बारवईए नयरीए सिंघाडगतियचउक्कचच्चर जाव हत्थिखंधवरग... महया महया सद्देणं उग्घोसेमाणा उग्घोसेमाणा, उग्घोसणं करेह-... खलु देवाणुप्पिया ! थावच्चापुत्ते संसारभउव्विग्गे, भीए जम्म... मरणाणं, इच्छइ अरहओ अरिट्ठनेमिस्स अंतिए मुंडे भवित्ता प... इत्तए। तं जो खलु देवाणुप्पिया ! राया वा, जुवराया वा, देवी... कुमारे वा, ईसरे वा, तलवरे वा, कोडुंबिय-माडंबिय-इब्भ-सेट्ठि-से... वइ-सत्थवाहे वा थावच्चापुत्तं पव्वयंतमणुपव्वयइ, तस्स णं क... वासुदेवे अणुजाणाइ, पच्छातुरस्स वि य से मित्तनाइनियगसं... परिजणस्स जोगखेमं वट्टमाणं पडिवहइ त्ति कट्टु घोसणं घोसे... जाव घोसंति।

थावच्चापुत्र के द्वारा इस प्रकार कहने पर कृष्ण वासुदेव ने कौटु... पुरुषों को बुलाया। बुला कर इस प्रकार कहा-'हे देवानुप्रियो ! तुम... और द्वारिका नगरी के शृङ्गाटक, त्रिक, चतुष्क और चत्वर आदि स्था... यावत् श्रेष्ठ हाथी के स्कंध पर आरूढ होकर ऊँची-ऊँची ध्वनि से उद्घोष... उद्घोष करते ऐसी उद्घोषणा करो-इस प्रकार हे देवानुप्रियो ! संसार... से उद्विग्न और जन्म-मरण से भयभीत थावच्चापुत्र अर्हन्त अरिष्टनेमि के... मुंडित होकर दीक्षा ग्रहण करना चाहता है। तो हे देवानुप्रियो ! जो... युवराज, रानी, कुमार, ईश्वर, तलवर, कौटुम्बिक, माडंबिक, इभ्य, ... सार्थवाह अथवा सार्थवाह दीक्षित होते हुए थावच्चापुत्र के साथ दीक्षा... होगा, उसे कृष्ण वासुदेव अनुज्ञा देते हैं और पीछे रहे हुए उसके मित्र, निजक, संबंधी या परिवार में कोई भी दुःखी होगा तो उसके वर्तमान... संबंधी योग (अप्राप्त पदार्थ की प्र... और क्षेम (प्राप्त पदार्थ का र...

उस काल और उस समय में सौगंधिका नामक नगरी थी। उसका वर्णन समझ लेना चाहिए। उस नगरी के बाहर नीलाशोक नामक उद्यान था। उसका भी वर्णन कह लेना चाहिए। उस सौगंधिका नगरी में सुदर्शन नामक नगरश्रेष्ठी निवास करता था। वह समृद्धिशाली था, यावत् किसी से पराभूत नहीं हो सकता था।

ते णं काले णं ते णं समएणं सुए नामं परिव्वायए होत्था रिउव्वेयजजुव्वेयसामवेयअथव्वणवेयसट्ठितंतकुसले, संखसमए लद्धट्ठे, पंचजमपंचनियमजुत्तं सोयमूलयं दसप्पयारं परिव्वायगधम्मं दाणधम्मं च सोयधम्मं च तित्थाभिसेयं च आघवेमाणे पएणवेमाणे धाउरत्त-वत्थपवरपरिहिए तिदंडकुंडियछत्तछन्नालियंकुसपवित्तयकेसरीहत्थगए परिव्वायगसहस्सेणं सद्धिं संपरिवुडे जेणेव सोगंधिया नयरी जेणेव परिव्वायगावसहे तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता परिव्वायगावसहंसि भंडगनिक्खेवं करेइ, करित्ता संखसमएणं अप्पाणं भावेमाणे विहरइ।

उस काल और उस समय में शुक नामक एक परिव्राजक था। वह ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद तथा षष्टितंत्र (सांख्यशास्त्र) में कुशल था। सांख्य मत के शास्त्रों में कुशल था। पाँच यमों और पाँच नियमों से युक्त दस प्रकार के शौचमूलक परिव्राजक धर्म का, दानधर्म का, शौचधर्म का और तीर्थस्नान का उपदेश और प्ररूपण करता था। गेरु से रँगे हुए श्रेष्ठ वस्त्रों को धारण करता था। त्रिदंड, कुण्डिका-कमंडलु, मयूरपिच्छ का छत्र, छन्नालिक (काष्ठ का एक उपकरण), अंकुश (वृक्ष के पत्ते तोड़ने का एक उपकरण), पवित्री (ताम्र धातु की बनी अंगूठी) और केसरी (प्रमार्जन करने का वस्त्र-खण्ड), यह सात उपकरण उसके हाथ में रहते थे। एक हजार परिव्राजकों से परिवृत वह शुक परिव्राजक जहाँ सौगंधिका नगरी थी और जहाँ परिव्राजकों का आवसथ (मठ) था, वहाँ आया। आकर परिव्राजकों के उस मठ में उसने अपने उपकरण रक्खे और सांख्यमत के अनुसार अपनी आत्मा को भावित करता हुआ विचरने लगा।

तए णं सोगंधियाए सिंघाडगतिगचउक्कचच्चर०. बहुजणो अन्न-मन्नस्स एवमाइक्खइ-एवं खलु सुए परिव्वायए इह हव्वमागए जाव विहरइ। परिसा निग्गया। सुदंसणो निग्गए।

उस काल और उस समय में सौगंधिका नामक नगरी थी। उसका वर्णन समझ लेना चाहिए। उस नगरी के बाहर नीलाशोक नामक उद्यान था। उसका भी वर्णन कह लेना चाहिए। उस सौगंधिका नगरी में सुदर्शन नामक नगरश्रेष्ठी निवास करता था। वह समृद्धिशाली था, यावत् किसी से पराभूत नहीं हो सकता था।

तेणं कालेणं तेणं समएणं सुए नामं परिव्वायए होत्था रिउव्वेयजजुव्वेयसामवेयअथव्वणवेयसट्ठितंतकुसले, संखसमए लद्धट्ठे, पंचजमपंचनियमजुत्तं सोयमूलयं दसप्पयारं परिव्वायगधम्मं दाणधम्मं च सोयधम्मं च तित्थाभिसेयं च आघवेमाणे पण्णवेमाणे धाउरत्त-वत्थपवरपरिहिए तिदंडकुंडियछत्तछन्नालियंकुसपवित्तयकेसरीहत्थगए परिव्वायगसहस्सेणं सद्धिं संपरिवुडे जेणेव सोगंधिया नयरी जेणेव परिव्वायगावसहे तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता परिव्वायगावसहंसि भंडगनिक्खेवं करेइ, करित्ता संखसमएणं अप्पाणं भावेमाणे विहरइ।

उस काल और उस समय में शुक नामक एक परिव्राजक था। वह ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्वणवेद तथा षष्टितंत्र (सांख्यशास्त्र) में कुशल था। सांख्य मत के शास्त्रों में कुशल था। पाँच यमों और पाँच नियमों से युक्त दस प्रकार के शौचमूलक परिव्राजक धर्म का, दानधर्म का, शौचधर्म का और तीर्थस्नान का उपदेश और प्ररूपण करता था। गेरू से रंगे हुए श्रेष्ठ वस्त्रों को धारण करता था। त्रिदंड, कुण्डिका-कमंडलु, मयूरपिच्छ का छत्र, छन्नालिक (काष्ठ का एक उपकरण), अंकुश (वृक्ष के पत्ते तोड़ने का एक उपकरण), पवित्री (ताम्र धातु की बनी अंगूठी) और केसरी (प्रमार्जन करने का वस्त्र-खण्ड), यह सात उपकरण उसके हाथ में रहते थे। एक हजार परिव्राजकों से परिवृत वह शुक परिव्राजक जहाँ सौगंधिका नगरी थी और जहाँ परिव्राजकों का आवसथ (मठ) था, वहाँ आया। आकर परिव्राजकों के उस मठ में उसने अपने उपकरण रक्खे और सांख्यमत के अनुसार अपनी आत्मा को भावित करता हुआ विचरने लगा।

तए णं सोगंधियाए सिंघाडगतिगचउक्कचच्चर० बहुजणो अन्न-मन्नस्स एवमाइक्खइ-एवं खलु सुए परिव्वायए इह हव्वमागए जाव विहरइ। परिसा निग्गया। सुदंसणो निग्गए।

तए णं से सुए परिव्वायए तीसे परिसाए सुदंसणस्स य अन्नेसिं च बहूणं संखाणं परिकहेइ—'एवं खलु सुदंसणा ! अम्हं सोयमूलए धम्मे पन्नत्ते। से वि य सोए दुविहे पण्णत्ते, तंजहा—दव्वसोए य भावसोए य। दव्वसोए य उदएणं मट्टियाए य। भावसोए दब्भेहि य मंतेहि य। जं णं अम्हं देवाणुप्पिया ! किंचि असुई भवइ, तं सव्वं सज्जो पुढवीए आलिप्पइ, तओ पच्छा सुद्धेण वारिणा पक्खालिज्जइ, तओ तं असुई सुई भवइ। एवं खलु जीवा जलाभिसेयपूयप्पाणो अविग्घेणं सग्गं गच्छंति।

तब उस सौगंधिका नगरी के शृंगाटक, त्रिक, चतुष्क और चत्वर आदि स्थानों में अनेक मनुष्य एकत्रित होकर परस्पर ऐसा कहने लगे—इस प्रकार निश्चय ही शुक परिव्राजक यहाँ आये हैं यावत् आत्मा को भावित करते हुए विचरते हैं।' परिषद् निकली। सुदर्शन भी निकला।

तत्पश्चात् शुक परिव्राजक ने उस परिषद् को, सुदर्शन को तथा अन्य बहुत-से श्रोताओं को सांख्यमत का उपदेश दिया। यथा—हे सुदर्शन ! हमारा धर्म शौचमूलक कहा गया है यह शौच दो प्रकार का है—द्रव्यशौच और भावशौच। द्रव्यशौच जल से और मिट्टी से होता है। भावशौच दर्भ से और मंत्र से होता है। हे देवानुप्रिय ! हमारे यहाँ जो कोई वस्तु अशुचि होती है, वह तत्काल पृथ्वी (मिट्टी) से मांज दी जाती है और फिर शुद्ध जल से धो दी जाती है। तब अशुचि शुचि हो जाती है। इसी प्रकार निश्चय ही जीव जलस्नान से अपनी आत्मा को पवित्र करके बिना विघ्न के स्वर्ग प्राप्त करते हैं।

तए णं से सुदंसणे सुयस्स अंतिए धम्मं सोच्चा हट्ठे, सुयस्स अंतियं सोयमूलयं धम्मं गेण्हइ, गेण्हित्ता परिव्वायए विपुलेणं असणपाणखाइमसाइमवत्थेणं पडिलाभेमाणे जाव विहरइ। तए णं से सुए परिव्वायए सोगंधियाओ नयरीओ निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता बहिया जणवयविहारं विहरइ।

तत्पश्चात् सुदर्शन, शुक परिव्राजक के समीप धर्म को श्रवण करके हर्षित हुआ। उसने शुक से शौचमूलक धर्म को ग्रहण किया। ग्रहण करके परिव्राजकों को विपुल अशन पान खादिम स्वादिम और वस्त्र से प्रतिलाभित करता हुआ यावत् विचरने लगा। तत्पश्चात् वह शुक परि-

श्रावक सौगंधिका नगरी से बाहर निकला। निकल कर जनपद-विहार में विचरने लगा।

ते णं काले णं ते णं समए णं थावच्चापुत्ते णामं अणगारे सहस्सेणं अणगारेणं सद्धिं पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे सुहं-सुहेणं विहरमाणे जेणेव सोगंधिया नयरी जेणेव नीलासोए उज्जाणे तेणेव समोसढे।

उस काल और उस समय में थावच्चापुत्र नामक अनगार एक हजार अनगारों के साथ अनुक्रम से विहार करते हुए, एक ग्राम से दूसरे ग्राम जाते हुए और सुखे सुखे विचरते हुए जहाँ सौगंधिका नामक नगरी थी और जहाँ नीलाशोक नामक उद्यान था, वहाँ पधारे।

परिसा निग्गया। सुदंसणो वि णिग्गए। थावच्चापुत्तं नामं अणगारं आयाहिणं पयाहिणं करेइ, करित्ता वंदइ, नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी–'तुम्हाणं किंमूलए धम्मे पन्नत्ते?'

तए णं थावच्चापुत्ते सुदंसणेणं एवं वुत्ते समाणे सुदंसणं एवं वयासी–'सुदंसणा! विणयमूले धम्मे पण्णत्ते। से वि य विणए दुविहे पण्णत्ते, तंजहा–अगारविणए य अणगारविणए य। तत्थ णं जे से अगारविणए से णं पंच अणुव्वयाइं, सत्तसिक्खावयाइं, एक्कारस उवासगपडिमाओ। तत्थ णं जे से अणगारविणए से णं पंच महव्वयाइं पण्णत्ताइं, तंजहा सव्वाओ पाणाइवायाओ वेरमणं, सव्वाओ मुसावायाओ वेरमणं, सव्वाओ अदिन्नादाणाओ वेरमणं, सव्वाओ मेहुणाओ वेरमणं, सव्वाओ परिग्गहाओ वेरमणं, सव्वाओ राइभोयणाओ वेरमणं, जाव मिच्छादंसणसल्लाओ वेरमणं, दसविहे पच्चक्खाणे, बारस भिक्खुपडिमाओ, इच्चेएणं दुविहेणं विणयमूलएणं धम्मेणं अणुपुव्वेणं अट्ठ-कम्मपगडीओ खवेत्ता लोयग्गपइट्ठाणे भवंति।

थावच्चापुत्र अनगार का आगमन जानकर परिषद् निकली। सुदर्शन भी निकला। उसने थावच्चापुत्र अनगार को दक्षिण तरफ से आरंभ करके प्रदक्षिणा की। प्रदक्षिणा करके वन्दना की, नमस्कार किया। वन्दना-नमस्कार करके वह इस प्रकार बोला–आपके धर्म का मूल क्या कहा गया है?

तब सुदर्शन के इस प्रकार कहने पर थावच्चापुत्र अनगार ने सुदर्शन से इस प्रकार कहा-हे सुदर्शन ! धर्म विनयमूलक कहा गया है। वह विनय (चारित्र) भी दो प्रकार का कहा है-अगारविनय अर्थात् गृहस्थ का चारित्र और अनगारविनय अर्थात् मुनि का चारित्र। इनमें जो अगारविनय है, वह पाँच अणुव्रत, सात शिक्षाव्रत और ग्यारह उपासक प्रतिमा रूप है। जो अनगारविनय है, वह पाँच महाव्रत रूप है, यथा-समस्त प्राणातिपात (हिंसा) से विरमण, समस्त मृषावाद से विरमण, समस्त अदत्तादान से विरमण, समस्त मैथुन से विरमण, समस्त परिग्रह से विरमण, इसके अतिरिक्त समस्त रात्रि-भोजन से विरमण, यावत् समस्त मिथ्यादर्शनशल्य से विरमण, दस प्रकार के प्रत्याख्यान और बारह भिक्षुप्रतिमाएँ। इस प्रकार दो तरह के विनयमूलक धर्म से, क्रमशः आठ कर्मप्रकृतियों का क्षय करके जीव लोक के अग्रभाग में-मोक्ष में प्रतिष्ठित होते हैं।

तए णं थावच्चापुत्ते सुदंसणं एवं वयासी-'तुब्भे णं सुदंसणा ! किंमूलए धम्मे पण्णत्ते ?'

'अम्हाणं देवाणुप्पिया ! सोयमूले धम्मे पण्णत्ते, जाव सग्गं गच्छंति।'

तत्पश्चात् थावच्चापुत्र ने सुदर्शन से कहा-'हे सुदर्शन ! तुम्हारे धर्म का मूल क्या कहा गया है ?'

(सुदर्शन ने उत्तर दिया-) देवानुप्रिय ! हमारा धर्म शौचमूलक कहा गया है। इस धर्म से यावत् जीव स्वर्ग में जाते हैं।

तए णं थावच्चापुत्ते सुदंसणं एवं वयासी-'सुदंसणा ! से जहानामए केई पुरिसे एगं महं रुहिरकयं वत्थं रुहिरेण चेव धोवेज्जा, तए णं सुदंसणा ! तस्स रुहिरकयस्स रुहिरेण चेव पक्खालिज्जमाणस्स अत्थि काइ सोही ?'

'णो तिणट्ठे समट्ठे।'

तत्पश्चात् थावच्चापुत्र अनगार ने सुदर्शन से इस प्रकार कहा-हे सुदर्शन ! जैसे कुछ भी नाम वाला कोई पुरुष एक बड़े रुधिर से लिप्त वस्त्र को रुधिर से ही धोए, तो हे सुदर्शन ! उस रुधिर से ही धोये जाने वाले वस्त्र की कोई शुद्धि होगी ?

(सुदर्शन ने ...) अर्थ समर्थ नहीं, अर्थात् ऐसा नहीं हो सकता।

एवामेव सुदंसणा ! तुम्हं पि पाणाइवाएणं जाव मिच्छादंसण-सल्लेणं नत्थि सोही, जहा तस्स रुहिरकयस्स वत्थस्स रुहिरेणं चेव पक्खालिज्जमाणस्स नत्थि सोही।

'सुदंसणा ! से जहा नामए केइ पुरिसे एगं महं रुहिरकयं वत्थं सज्जियाखारेणं अणुलिंपइ, अणुलिंपित्ता पयणं आरुहेइ, आरुहित्ता उण्हं गाहेइ, गाहित्ता तओ पच्छा सुद्धेणं वारिणा धोवेज्जा, से णूणं सुदंसणा ! तस्स रुहिरकयस्स वत्थस्स सज्जियाखारेणं अणुलित्तस्स पयणं आरुहियस्स उण्हं गाहियस्स सुद्धेणं वारिणा पक्खालिज्जमाणस्स सोही भवइ ?'

'हंता भवइ।'

एवामेव सुदंसणा ! अम्हं पि पाणाइवायवेरमणेणं जाव मिच्छा-दंसणसल्लवेरमणेणं अत्थि सोही, जहा वि तस्स रुहिरकयस्स वत्थस्स जाव सुद्धेणं वारिणा पक्खालिज्जमाणस्स अत्थि सोही।

इसी प्रकार हे सुदर्शन ! तुम्हारे मतानुसार भी प्राणातिपात से यावत् मिथ्यादर्शनशल्य से शुद्धि नहीं हो सकती, जैसे उस रुधिरलिप्त और रुधिर से ही धोये जाने वाले वस्त्र की शुद्धि नहीं होती।

हे सुदर्शन ! जैसे यथानामक (कुछ भी नाम वाला) कोई पुरुष एक बड़े रुधिरलिप्त वस्त्र को सज्जी के खार के पानी में भिगावे, फिर पाकस्थान (चूल्हे) पर चढ़ावे, चढ़ा कर उष्णता ग्रहण करावे (उबाले) और फिर स्वच्छ जल से धोवे, तो निश्चय ही हे सुदर्शन ! वह रुधिर से लिप्त वस्त्र, सज्जीखार के पानी में भीग कर, चूल्हे पर चढ़ कर, उबल कर और शुद्ध जल से प्रक्षालित होकर शुद्ध हो जाता है ?

(सुदर्शन कहता है—) 'हाँ, हो जाता है।'

इसी प्रकार हे सुदर्शन ! हमारे धर्म के अनुसार भी प्राणातिपात विर-मण से यावत् मिथ्यादर्शनशल्य के विरमण से शुद्धि होती है, जैसे उस रुधिर लिप्त वस्त्र की यावत् शुद्ध जल से धोये जाने पर शुद्धि होती है।

तए णं से सुदंसणे संबुद्धे थावच्चापुत्तं वंदइ, नमंसइ, वंदित्ता

तब सुदर्शन के इस प्रकार कहने पर थावच्चापुत्र अनगार ने सुदर्शन से इस प्रकार कहा—हे सुदर्शन ! धर्म विनयमूलक कहा गया है। वह विनय (चारित्र) भी दो प्रकार का कहा है—अगारविनय अर्थात् गृहस्थ का चारित्र और अनगारविनय अर्थात् मुनि का चारित्र। इनमें जो अगारविनय है, वह पाँच अणुव्रत, सात शिक्षाव्रत और ग्यारह उपासक प्रतिमा रूप है। जो अनगारविनय है, वह पाँच महाव्रत रूप है, यथा—समस्त प्राणातिपात (हिंसा) से विरमण, समस्त मृषावाद से विरमण, समस्त अदत्तादान से विरमण, समस्त मैथुन से विरमण, समस्त परिग्रह से विरमण, इसके अतिरिक्त समस्त रात्रि-भोजन से विरमण, यावत् समस्त मिथ्यादर्शनशल्य से विरमण, दस प्रकार का प्रत्याख्यान और बारह भिक्षुप्रतिमाएँ। इस प्रकार दो तरह के विनयमूलक धर्म से, क्रमशः आठ कर्मप्रकृतियों को क्षय करके जीव लोक के अग्रभाग में—मोक्ष में प्रतिष्ठित होते हैं।

तए णं थावच्चापुत्ते सुदंसणं एवं वयासी—'तुब्भे णं सुदंसणा! किंमूलए धम्मे पण्णत्ते ?'

'अम्हाणं देवाणुप्पिया ! सोयमूले धम्मे पण्णत्ते, जाव सग्गं गच्छंति।'

तत्पश्चात् थावच्चापुत्र ने सुदर्शन से कहा—'हे सुदर्शन ! तुम्हारे धर्म का मूल क्या कहा गया है ?'

(सुदर्शन ने उत्तर दिया—) देवानुप्रिय ! हमारा धर्म शौचमूलक कहा गया है। इस धर्म से यावत् जीव स्वर्ग में जाते हैं।

तए णं थावच्चापुत्ते सुदंसणं एवं वयासी—'सुदंसणा ! से जहानामए केई पुरिसे एगं महं रुहिरकयं वत्थं रुहिरेण चेव धोवेज्जा, तए णं सुदंसणा ! तस्स रुहिरकयस्स रुहिरेण चेव पक्खालिज्जमाणस्स अत्थि काइ सोही ?'

'णो तिणट्ठे समट्ठे।'

तत्पश्चात् थावच्चापुत्र अनगार ने सुदर्शन से इस प्रकार कहा—हे सुदर्शन ! जैसे कुछ भी नाम वाला कोई पुरुष एक बड़े रुधिर से लिप्त वस्त्र को रुधिर से ही धोए, तो हे सुदर्शन ! उस रुधिर से ही धोये जाने वाले वस्त्र की कोई शुद्धि होगी ?

(सुदर्शन ने कहा)—यह अर्थ समर्थ नहीं, अर्थात् ऐसा नहीं हो सकता।

एवामेव सुदंसणा ! तुब्भं पि पाणाइवाएणं जाव मिच्छादंसण-सल्लेणं नत्थि सोही, जहा तस्स रुहिरकयस्स वत्थस्स रुहिरेणं चेव पक्खालिज्जमाणस्स नत्थि सोही।

'सुदंसणा ! से जहा नामए केइ पुरिसे एगं महं रुहिरकयं वत्थं सज्जियाखारेणं अणुलिंपइ, अणुलिंपित्ता पयणं आरुहेइ, आरुहित्ता ... गाहित्ता तओ पच्छा सुद्धेणं वारिणा धोवेज्जा, से णूणं सुदंसणा ! तस्स रुहिरकयस्स वत्थस्स सज्जियाखारेणं अणुलित्तस्स पयणं आरुहियस्स उण्हं गाहियस्स सुद्धेणं वारिणा पक्खालिज्जमाणस्स सोही भवइ ?'

'हंता भवइ।'

एवामेव सुदंसणा ! अम्हं पि पाणाइवायवेरमणेणं जाव मिच्छा-... यस्स वत्थस्स

इसी प्रकार हे सुदर्शन ! तुम्हारे मतानुसार भी प्राणातिपात से यावत् मिथ्यादर्शनशल्य से शुद्धि नहीं हो सकती, जैसे उस रुधिरलिप्त और रुधिर से ही धोये जाने वाले वस्त्र की शुद्धि नहीं होती।

हे सुदर्शन ! जैसे यथानामक (कुछ भी नाम वाला) कोई पुरुष एक बड़े रुधिरलिप्त वस्त्र को सज्जी के खार के पानी में भिगावे, फिर पाकस्थान (चूल्हे) पर चढ़ावे, चढ़ा कर उष्णता ग्रहण करावे (उबाले) और फिर स्वच्छ जल से धोवे, तो निश्चय ही हे सुदर्शन ! वह रुधिर से लिप्त वस्त्र, सज्जीखार के पानी में भींग कर, चूल्हे पर चढ़ कर, उबल कर और शुद्ध जल से प्रक्षालित होकर शुद्ध हो जाता है ?

(सुदर्शन कहता है—) 'हाँ, हो जाता है।'

इसी प्रकार हे सुदर्शन ! हमारे धर्म के अनुसार भी प्राणातिपात विर-... जैसे उस रुधिर

तत्थ णं से सुदंसणे संबुद्धे थावच्चापुत्तं वंदइ, नमंसइ, वंदित्ता

नमंसित्ता एवं वयासी—'इच्छामि णं भंते ! धम्मं सोच्चा जाणित्तए, जाव समणोवासए जाए अहिगयजीवाजीवे जाव पडिलाभेमाणे विहरइ।

तत्पश्चात् सुदर्शन प्रतिबोध को प्राप्त हुआ। उसने थावच्चापुत्र को वन्दना की, नमस्कार किया। वन्दना नमस्कार करके इस प्रकार कहा—'भगवन् ! धर्म को सुनकर जानना अंगीकार करना चाहता हूँ।' यावत् वह श्रमणोपासक हो गया, जीवाजीव का ज्ञाता हो गया, यावत् निर्ग्रन्थ श्रमणों को आहार आदि का दान करता हुआ विचरने लगा।

तए णं तस्स सुयस्स परिव्वायगस्स इमीसे कहाए लद्धट्ठस्स समाणस्स अयमेयारूवे जाव समुप्पज्जित्था—एवं खलु सुदंसणेणं सोयं धम्मं विप्पजहाय विणयमूले धम्मे पडिवन्ने। तं सेयं खलु मम सुदंसणस्स दिट्ठिं वामेत्तए, पुणरवि सोयमूलए धम्मे आघवित्तए त्ति कट्टु, एवं संपेहेइ, संपेहित्ता परिव्वायगसहस्सेणं सद्धिं जेणेव सोगंधिया नयरी जेणेव परिव्वायगावसहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता परिव्वायगावसहंसि भंडनिक्खेवं करेइ, करित्ता धाउरत्तवत्थपरिहिए पविरलपरिव्वायगेणं सद्धिं संपरिवुडे परिव्वायगावसहाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता सोगंधियाए नयरीए मज्झंमज्झेणं जेणेव सुदंसणस्स गिहे, जेणेव सुदंसणे तेणेव उवागच्छइ।

तत्पश्चात् उस शुक परिव्राजक को इस कथा का अर्थ अर्थात् समाचार जान कर इस प्रकार का विचार उत्पन्न हुआ—सुदर्शन ने शौच धर्म का त्याग करके विनयमूल धर्म अंगीकार किया है। अतएव सुदर्शन की दृष्टि का वमन (त्याग) कराना और पुनः शौचमूलक धर्म का उपदेश करना मेरे लिए श्रेयस्कर होगा। उसने ऐसा विचार किया। विचार करके एक हजार परिव्राजकों के साथ जहाँ सौगन्धिका नगरी थी और जहाँ परिव्राजकों का मठ था, वहाँ आया। आकर उसने परिव्राजकों के मठ में उपकरण रक्खे। तत्पश्चात् गेरू से रंगे वस्त्र धारण किये हुए वह थोड़े से परिव्राजकों के साथ घिरा हुआ परिव्राजक-मठ से निकला। निकल कर सौगंधिका नगरी के मध्यभाग में होकर जहाँ सुदर्शन का घर था और जहाँ सुदर्शन था, वहाँ आया।

तए णं से सुदंसणे तं सुयं एज्जमाणं पासइ, पासित्ता नो अब्भुट्ठेइ, नो पच्चुग्गच्छइ, नो आढाइ, नो परियाणाइ, नो वंदइ, तुसिणीए

तए णं से सुए परिव्वायए सुदंसणं अणब्भुट्ठियं पासित्ता एवं वयासी—'तुमं णं सुदंसणा ! अन्नया ममं एज्जमाणं पासित्ता अब्भुट्ठेसि जाव वंदसि, इयाणिं सुदंसणा ! तुमं ममं एज्जमाणं पासित्ता जाव णो वंदसि, तं कस्स णं तुमे सुदंसणा ! इमेयारूवे विणयमूलधम्मे पडिवन्ने ?

तत्पश्चात् उस सुदर्शन ने शुक को आता देखा। देखकर वह खड़ा नहीं हुआ, सामने नहीं गया, उसका आदर नहीं किया, उसे जाना नहीं, वन्दना नहीं की, किन्तु मौन बना रहा।

तब उस परिव्राजक ने सुदर्शन को न खड़ा हुआ देखकर इस प्रकार कहा—हे सुदर्शन! पहले तुम मुझे आता देखकर खड़े होते थे, यावत् वन्दना करते थे, परन्तु हे सुदर्शन! अब तुम मुझे आता देखकर न खड़े हुए, यावत् न वन्दना की, तो हे सुदर्शन! किसके समीप तुमने विनयमूल धर्म अंगीकार किया है ?

तए णं से सुदंसणे सुएणं परिव्वायएणं एवं वुत्ते समाणे आसणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठित्ता करयल० सुयं परिव्वायगं एवं वयासी—'एवं खलु देवाणुप्पिया ! अरहओ अरिट्ठनेमिस्स अंतेवासी थावच्चापुत्ते नामं अणगारे जाव इहमागए, इह चेव नीलासोए उज्जाणे विहरइ, तस्स णं अंतिए विणयमूले धम्मे पडिवन्ने ।

तत्पश्चात् शुक परिव्राजक के इस प्रकार कहने पर सुदर्शन आसन से उठ कर खड़ा हुआ। दोनों हाथ जोड़े और शुक परिव्राजक से इस प्रकार कहा—देवानुप्रिय! अरिहंत अरिष्टनेमि के अन्तेवासी थावच्चापुत्र नामक अनगार यावत् यहाँ आये हैं और यहीं नीलाशोक उद्यान में विचर रहे हैं। उनके पास से मैंने विनयमूल धर्म अंगीकार किया है।

तए णं से सुए परिव्वायए सुदंसणं एवं वयासी—'तं गच्छामो णं सुदंसणा ! तव धम्मायरियस्स थावच्चापुत्तस्स अंतियं पाउब्भवामो । इमाइं च णं एयारूवाइं अट्ठाइं हेऊइं पसिणाइं कारणाइं वागरणाइं पुच्छामो । तं जइ णं मे से इमाइं अट्ठाइं जाव वागरइ, तए णं अहं वंदामि नमंसामि । अह मे से इमाइं अट्ठाइं जाव नो से वागरेइ, तए णं अहं एएहिं चेव अट्ठेहिं हेऊहिं निप्पट्ठपसिणवागरणं करिस्सामि ।

तत्पश्चात् शुक परिव्राजक ने सुदर्शन से इस प्रकार कहा-
हम तुम्हारे धर्माचार्य थावच्चापुत्र के समीप प्रकट हों-चलें
के इन अर्थों को, हेतुओं को, प्रश्नों को, कारणों को तथा व्याकरण
अगर वह मेरे इन अर्थों आदि का उत्तर देंगे तो मैं उन्हें वन्द
नमस्कार करूँगा। और यदि वह मेरे इन अर्थों यावत् व्याकरण
कहेंगे-इनका उत्तर नहीं देंगे तो मैं उन्हें इन्हीं अर्थों तथा हेतुओं
निरुत्तर कर दूंगा।

तए णं से सुए परिव्वायगसहस्सेणं सुदंसणेण य सेट्ठिणा
जेणेव नीलासोए उज्जाणे, जेणेव थावच्चापुत्ते अणगारे तेणेव उ
गच्छइ। उवागच्छित्ता थावच्चापुत्तं एवं वयासी-'जत्ता ते भंते
जवणिज्जं ते अव्वाबाहं पि ते फासुयं विहारं ते ?

तए णं से थावच्चापुत्ते सुएणं परिव्वायगेणं एवं वुत्ते समाणे
परिव्वायगं एवं वयासी-'सुया! जत्ता वि मे, जवणिज्जं पि मे, अ
बाहं पि मे, फासुयविहारं पि मे।'

तत्पश्चात् वह शुक परिव्राजक, एक हजार परिव्राजकों के और सुद
सेठ के साथ जहाँ नीलाशोक उद्यान था, और जहाँ थावच्चापुत्र अनगार
वहाँ आया। आकर थावच्चापुत्र से कहने लगा-'भगवन्! तुम्हारी यात्रा च
रही है? यापनीय है? तुम्हारे अव्याबाध है? और तुम्हारा प्रासुक वि
हो रहा है?

तब थावच्चापुत्र ने शुक परिव्राजक के इस प्रकार कहने पर
हे शुक! मेरी यात्रा भी हो रही है, यापनीय भी वर्त रहा है, अव्या
और प्रासुक विहार भी हो रहा है।

तए णं से सुए थावच्चापुत्तं एवं वयासी-'किं भंते! जत्ता
'सुया! जं णं मम णाणदंसणचरित्ततवसंजममाइएहिं जो
... से तं जत्ता।'
'से किं तं भंते! जवणिज्जं ?'
'सुया! जवणिज्जे दुविहे
...दियजवणिज्जे य।'

'से किं तं इंदियजवणिज्जं ?'

'सुया ! जं णं मम सोइंदियचक्खिदियघाणिंदियजिब्भिंदियफासिं-[दि]याई निरुवहयाई वसे वट्टंति, से तं इंदियजवणिज्जं ।'

'से किं तं नोइंदियजवणिज्जे ?'

'सुया ! जन्नं कोहमाणमायालोभा खीणा, उवसंता, नो उदयंति, तं नोइंदियजवणिज्जे ।'

तत्पश्चात् शुक ने थावच्चापुत्र से इस प्रकार कहा-'भगवन् ! आपकी [या]त्रा क्या है ?'

(थावच्चापुत्र-) हे शुक ! ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप, संयम आदि [यो]गों से षट्काय के जीवों की यतना करना हमारी यात्रा है।

शुक—'भगवन् ! यापनीय क्या है ?'

थावच्चापुत्र—शुक ! यापनीय दो प्रकार का है-इन्द्रिययापनीय और [नो]इन्द्रिययापनीय।

'इन्द्रिययापनीय किसे कहते हैं ?'

'शुक ! हमारी श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुइन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय और [स्प]र्शनेन्द्रिय बिना किसी उपद्रव के वशीभूत रहती हैं, यही हमारा इन्द्रिय-[या]पनीय है ।'

'नो इन्द्रिययापनीय क्या है ?'

'हे शुक ! क्रोध मान माया लोभ रूप कषाय क्षीण हो गये हों, उपशांत [हो] गये हों, उदय में न आ रहे हों, यही हमारा नोइन्द्रिययापनीय कहलाता है।'

'से किं तं भंते ! अव्वाबाहं ?'

'सुया ! जन्नं मम वाइयपित्तियसिंभियसन्निवाइया विविहा रोगा-[यं]का णो उदीरेंति, से तं अव्वाबाहं ।'

'से किं तं भंते ! फासुयविहारं ?'

'सुया ! जन्नं आरामेसु उज्जाणेसु देवउलेसु सभासु पवासु इत्थि-[पसु]पंडगविवज्जियासु वसहीसु पाडिहारियं पीढफलगसेज्जासंथारयं [उव]संगिण्हित्ता णं विहरामि, से तं [फासुयविहारं] ।'

तत्पश्चात् शुक परिव्राजक ने सुदर्शन से इस प्रकार कहा–हे सुदर्शन चलें हम तुम्हारे धर्माचार्य थावच्चापुत्र के समीप प्रकट हों–चलें और इन प्र के इन अर्थों को, हेतुओं को, प्रश्नों को, कारणों को तथा व्याकरणों को पूछें। अगर वह मेरे इन अर्थों आदि का उत्तर देंगे तो मैं उन्हें वन्दना करूँगा, नमस्कार करूँगा। और यदि वह मेरे इन अर्थों यावत् व्याकरणों को नहीं कहेंगे–इनका उत्तर नहीं देंगे तो मैं उन्हें इन्हीं अर्थों तथा हेतुओं आदि से निरुत्तर कर दूंगा।

तए णं से सुए परिव्वायगसहस्सेणं सुदंसणेण य सेट्ठिणा सद्धिं जेणेव नीलासोए उज्जाणे, जेणेव थावच्चापुत्ते अणगारे तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता थावच्चापुत्तं एवं वयासी–'जत्ता ते भंते! जवणिज्जं ते अव्वाबाहं पि ते फासुयं विहारं ते?

तए णं से थावच्चापुत्ते सुएणं परिव्वायगेणं एवं वुत्ते समाणे सुयं परिव्वायगं एवं वयासी–'सुया! जत्ता वि मे, जवणिज्जं पि मे, अव्वाबाहं पि मे, फासुयविहारं पि मे।'

तत्पश्चात् वह शुक परिव्राजक, एक हजार परिव्राजकों के और सुदर्शन सेठ के साथ जहाँ नीलाशोक उद्यान था, और जहाँ थावच्चापुत्र अनगार थे, वहाँ आया। आकर थावच्चापुत्र से कहने लगा–'भगवन्! तुम्हारी यात्रा चल रही है? यापनीय है? तुम्हारे अव्याबाध है? और तुम्हारा प्रासुक विहार हो रहा है?

तब थावच्चापुत्र ने शुक परिव्राजक के इस प्रकार कहने पर शुक से कहा–हे शुक! मेरी यात्रा भी हो रही है, यापनीय भी वर्त रहा है, अव्याबाध भी है और प्रासुक विहार भी हो रहा है।

तए णं से सुए थावच्चापुत्तं एवं वयासी–'किं भंते! जत्ता?

'सुया! जं णं मम णाणदंसणचरित्ततवसंजममाइएहिं जोगेहिं जोयणा से तं जत्ता।'

'से किं तं भंते! जवणिज्जं?'

'सुया! जवणिज्जे दुविहे पण्णत्ते, तंजहा–इंदियजवणिज्जे य नोइंदियजवणिज्जे य।'

शुक परिव्राजक ने प्रश्न किया भगवन्! आपके लिये 'सरिसवया' भक्ष्य या अभक्ष्य हैं?'

थावच्चापुत्र ने उत्तर दिया—'हे शुक! 'सरिसवया' हमारे लिए भक्ष्य भी हैं और अभक्ष्य भी हैं।'

शुक ने पुनः प्रश्न किया—'भगवन्! किस अभिप्राय से ऐसा कहते हो कि सरिसवया' भक्ष्य भी हैं और अभक्ष्य भी हैं?'

थावच्चापुत्र उत्तर देते हैं—'हे शुक! सरिसवया दो प्रकार के कहे गये हैं। वे इस प्रकार:-मित्र सरिसवया और धान्यसरिसवया (सरसों)। इनमें जो मित्रसरिसवया हैं, वे तीन प्रकार के कहे गये हैं। वे इस प्रकार (१) साथ जन्मे हुए, (२) साथ बढ़े हुए और (३) साथ-साथ धूल में खेले हुए। यह तीनों प्रकार के मित्र सरिसवया श्रमण निर्ग्रन्थों के लिए अभक्ष्य हैं।

उनमें जो धान्यसरिसवया (सरसों) हैं, वे दो प्रकार के हैं। वह इस प्रकार शस्त्रपरिणत और अशस्त्रपरिणत। उनमें जो अशस्त्रपरिणत हैं अर्थात् जिनको अचित्त करने के लिए अग्नि आदि शस्त्रों का प्रयोग नहीं किया गया है, अतएव जो अचित्त नहीं हैं, वे श्रमण निर्ग्रन्थों के लिए अभक्ष्य हैं। उनमें जो शस्त्रपरिणत हैं, वे दो प्रकार के हैं। वह इस प्रकार प्रासुक और अप्रासुक। हे शुक! अप्रासुक भक्ष्य नहीं हैं। उनमें जो प्रासुक हैं, वे दो प्रकार के कहे हैं। वह इस प्रकार याचित (याचना किये हुए) और अयाचित (नहीं याचना किये हुए)। उनमें जो अयाचित हैं, वे अभक्ष्य हैं। उनमें जो याचित हैं, वे दो प्रकार के हैं। वह इस प्रकार एषणीय और अनेषणीय। उनमें जो अनेषणीय हैं वे अभक्ष्य हैं। जो एषणीय हैं, वे दो प्रकार के कहे हैं। वह इस प्रकार लब्ध (प्राप्त) और अलब्ध (अप्राप्त)। उनमें जो अलब्ध हैं, वे अभक्ष्य हैं। जो लब्ध हैं वे निर्ग्रन्थों के लिए भक्ष्य हैं। हे शुक! इस अभिप्राय से कहा है कि सरिसवया भक्ष्य भी हैं और अभक्ष्य भी हैं।'

एवं कुलत्था वि भाणियव्वा। नवरि इमं नाणत्तं—इत्थिकुलत्था य धन्नकुलत्था य। इत्थिकुलत्था तिविहा पन्नत्ता, तंजहा—कुलवधुया य, कुलमाउया य, कुलधूया य। धन्नकुलत्था तहेव।

इसी प्रकार 'कुलत्था' भी कहना चाहिए, अर्थात् जैसे सरिसवया के संबंध में प्रश्न और उत्तर ऊपर कहे हैं, वैसे ही कुलत्था के विषय में कहने चाहिए। विशेषता इस प्रकार है-कुलत्था के दो भेद हैं-स्त्रीकुलत्था (कुल में स्थित महिला) और धान्यकुलत्था अर्थात् कुलथ नामक धान्य। स्त्रीकुलत्था तीन प्रकार की है। वह इस प्रकार, कुलवधू, कुलमाता और कुलपुत्री। यह

शुक ने कहा—'भगवन् ! प्रासुक विहार क्या है ?'

'हे शुक ! जो वात पित्त कफ और सन्निपात (दो अथवा तीन का मि
आदि सम्बन्धी विविध प्रकार के रोग (उपायसाध्य व्याधि) और क्ष
(तत्काल प्राणनाशक व्याधि) उदय में न आवें, यह हमारा अव्याब

'भगवन्' प्रासुक विहार क्या है ?'

'हे शुक ! हम जो आराम में, उद्यान में, देवकुल में, सभा में, प्या
तथा स्त्री पशु और नपुंसक से रहित उपाश्रय में पडिहारी (वापिस लौ
योग्य) पीठ, फलक, शय्या, संस्तारक आदि ग्रहण करके विचरते हैं, वं
हमारा प्रासुक विहार है ।'

सरिसवया ते भंते ! भक्खेया अभक्खेया ?'

'सुया ! सरिसवया भक्खेया वि अभक्खेया वि .'

'से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ सरिसवया भक्खेया वि अभक्खेया
वि ?'

'सुया ! सरिसवया दुविहा पण्णत्ता, तंजहा—मित्तसरिसवया
सरिसवया य । तत्थ णं जे ते मित्तसरिसवया ते तिविहा पण्ण
तंजहा—सहजायया, सहवड्ढियया, सहपंसुकीलियया । ते णं समण
निग्गंथाणं अभक्खेया ।

तत्थ णं जे ते धन्नसरिसवया ते दुविहा पन्नत्ता, तंजहा—सत्थ-
परिणया य असत्थपरिणया य । तत्थ णं जे ते असत्थपरिण
समणाणं निग्गंथाणं अभक्खेया । तत्थ णं जे ते सत्थपरिणया
दुविहा पन्नत्ता, तंजहा—फासुगा य अफासुगा य । अफासुगा णं समण
नो भक्खेया । तत्थ णं ज ते फासुया ते दुविहा पन्नत्ता, तं
जाइया य अजाइया य । तत्थ णं जे ते जाइया ते दुविहा पण्ण
तंजहा—एसणिज्जा य अणेसणिज्जा य । तत्थ णं जे ते अणेसणिज्जा
णं अभक्खेया । तत्थ णं जे ते एसणिज्जा ते दुविहा पन्नत्ता, तंजहा
लद्धा य अलद्धा य । तत्थ णं जे ते अलद्धा ते अभक्खेया । तत्थ णं
जे ते लद्धा ते निग्गंथाणं भक्खेया । एएणं अट्ठेणं सुया ! एवं वुच्च
सरिसवया भक्खेया वि अभक्खेया वि ।

शुक परिव्राजक ने प्रश्न किया भगवन् ! आपके लिये 'सरिसवया' भक्ष्य हैं या अभक्ष्य हैं ?'

थावच्चापुत्र ने उत्तर दिया—'हे शुक ! 'सरिसवया' हमारे लिए भक्ष्य भी हैं और अभक्ष्य भी हैं।'

शुक ने पुनः प्रश्न किया—'भगवन् ! किस अभिप्राय से ऐसा कहते हो कि सरिसवया' भक्ष्य भी हैं और अभक्ष्य भी हैं ?'

थावच्चापुत्र उत्तर देते हैं—'हे शुक ! सरिसवया दो प्रकार के कहे गये हैं। वे इस प्रकारः-मित्र सरिसवया और धान्यसरिसवया (सरसों)। इनमें जो मित्रसरिसवया हैं, वे तीन प्रकार के कहे गये हैं। वे इस प्रकार (१) साथ जन्मे हुए, (२) साथ बढ़े हुए और (३) साथ-साथ धूल में खेले हुए। यह तीनों प्रकार के मित्र सरिसवया श्रमण निर्ग्रन्थों के लिए अभक्ष्य हैं।

उनमें जो धान्यसरिसवया (सरसों) हैं, वे दो प्रकार के हैं। वह इस प्रकार शस्त्रपरिणत और अशस्त्रपरिणत। उनमें जो अशस्त्रपरिणत हैं अर्थात् जिनको अचित्त करने के लिए अग्नि आदि शस्त्रों का प्रयोग नहीं किया गया है, अतएव जो अचित्त नहीं हैं, वे श्रमण निर्ग्रन्थों के लिए अभक्ष्य हैं। उनमें जो शस्त्रपरिणत हैं, वे दो प्रकार के हैं। वह इस प्रकार प्रासुक और अप्रासुक। हे शुक ! अप्रासुक भक्ष्य नहीं हैं। उनमें जो प्रासुक हैं, वे दो प्रकार के कहे हैं। वह इस प्रकार याचित (याचना किये हुए) और अयाचित (नहीं याचना किये हुए)। उनमें जो अयाचित हैं, वे अभक्ष्य हैं। उनमें जो याचित हैं, वे दो प्रकार के हैं। वह इस प्रकार एषणीय और अनेषणीय। उनमें जो अनेषणीय हैं वे अभक्ष्य हैं। जो एषणीय हैं, वे दो प्रकार के कहे हैं। वह इस प्रकार लब्ध (प्राप्त) और अलब्ध (अप्राप्त)। उनमें जो अलब्ध हैं, वे अभक्ष्य हैं। जो लब्ध हैं वे निर्ग्रन्थों के लिए भक्ष्य हैं। हे शुक ! इस अभिप्राय से कहा है कि सरिसवया भक्ष्य भी हैं और अभक्ष्य भी हैं।'

एवं कुलत्था वि भाणियव्वा। नवरि इमं नाणत्तं—इत्थिकुलत्था य धन्नकुलत्था य। इत्थिकुलत्था तिविहा पन्नत्ता, तंजहा—कुलवधुया य, कुलमाउया य, कुलधूया य। धन्नकुलत्था तहेव।

इसी प्रकार 'कुलत्था' भी कहना चाहिए, अर्थात् जैसे सरिसवया के संबंध में प्रश्न और उत्तर ऊपर कहे हैं, वैसे ही कुलत्था के विषय में कहने चाहिए। विशेषता इस प्रकार है—कुलत्था के दो भेद हैं—स्त्रीकुलत्था (कुल में स्थित महिला) और धान्यकुलत्था अर्थात् कुलथ नामक धान्य। स्त्रीकुलत्था तीन प्रकार की हैं। वह इस प्रकार कुलवधू, कुलमाता और कुलपुत्री।

अभक्ष्य हैं। धान्यकुलत्था भक्ष्य भी हैं और अभक्ष्य भी हैं, इत्यादि सरिसवया के समान समझना चाहिए।

एवं मासा वि। नवरि इमं नाणत्तं–मासा तिविहा पण्णत्ता, तंजहा–कालमासा य, अत्थमासा य, धन्नमासा य। तत्थ णं जे ते कालमासा ते णं दुवालसविहा पण्णत्ता, तं जहा–सावणे जाव आसाढे, ते णं अभक्खेया। अत्थमासा दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–हिरन्नमासा य सुवण्णमासा य। ते णं अभक्खेया। धन्नमासा तहेव।

मास संबंधी प्रश्नोत्तर भी इसी प्रकार जानना चाहिए। विशेषता यह है कि मास तीन प्रकार के कहे गये हैं। वह इस प्रकार–कालमास, अर्थमास और धान्यमास। इनमें से कालमास बारह प्रकार के कहे हैं। वे इस प्रकार हैं–श्रावण यावत् आषाढ़, अर्थात् श्रावणमास से लगा कर आषाढ़ मास तक। ये सब अभक्ष्य हैं। अर्थमास अर्थात् अर्थरूप मासा दो प्रकार के कहे हैं–चाँदी का मासा और सोने का मासा। ये भी अभक्ष्य हैं। धान्यमास अर्थात् उड़द भक्ष्य भी हैं। इत्यादि सरिसवया के समान कहना चाहिए।

'एगे भवं? दुवे भवं? अणेगे भवं? अक्खए भवं? अव्वए भवं? अवट्ठिए भवं? अणेगभूयभावभविए वि भवं?

'सुया! एगे वि अहं, दुवे वि अहं, जाव अणेगभूयभावभविए वि अहं।'

'से केणट्ठेणं भंते! एगे वि अहं जाव.........?

'सुया! दव्वट्ठयाए एगे अहं, नाणदंसणट्ठयाए दुवे वि अहं, पएसट्ठयाए अक्खए वि अहं, अव्वए वि अहं, अवट्ठिए वि अहं, उवओगट्ठयाए अणेगभूयभावभविए वि अहं।'

शुक परिव्राजक ने पुनः प्रश्न किया–'आप एक हैं? आप दो हैं? आप अनेक हैं? आप अक्षय हैं? आप अव्यय हैं? आप अवस्थित हैं? आप भूत भाव और भावी वाले हैं?'

(यह प्रश्न करने का परिव्राजक का अभिप्राय यह है कि अगर थावच्चापुत्र अनगार आत्मा को एक कहेंगे तो श्रोत्र आदि इन्द्रियों द्वारा होने वाले ज्ञान ... शरीर के अवयव अनेक होने से आत्मा की अनेकता का प्रतिपाद

क्ता का खंडन करूँगा। अगर वे आत्मा का द्वित्व स्वीकार करेंगे तो 'अहम्-' प्रत्यय से होने वाली एकता की प्रतीति में विरोध बतलाऊँगा। इसी प्रकार आत्मा की नित्यता स्वीकार करेंगे तो मैं अनित्यता का प्रतिपादन करके खंडन करूँगा। यदि अनित्यता स्वीकार करेंगे तो उसके विरोधी पक्ष को अंगीकार करके नित्यता का समर्थन करूँगा। मगर परिव्राजक के अभिप्राय को असफल बनाते हुए, अनेकान्तवाद का आश्रय लेकर थावच्चापुत्र उत्तर देते हैं-)

'हे शुक! मैं द्रव्य की अपेक्षा से एक हूँ क्योंकि जीवद्रव्य एक ही है। यहाँ द्रव्य से एकत्व स्वीकार करने से पर्याय की अपेक्षा अनेकत्व मानने में विरोध नहीं रहा।) ज्ञान और दर्शन की अपेक्षा से मैं दो भी हूँ। प्रदेशों की अपेक्षा से मैं अक्षय भी हूँ, अव्यय भी हूँ, अवस्थित भी हूं। (क्योंकि आत्मा के असंख्यात प्रदेश हैं और उनका कभी पूरी तरह क्षय नहीं होता, थोड़े-से प्रदेशों का भी व्यय नहीं होता, उसका असंख्यात प्रदेशीपन सदैव अवस्थित-नित्य रहता है।) और उपयोग की अपेक्षा से अनेक भूत (अतीतकालीन), भाव वर्त्तमान कालीन और भावी (भविष्यत् कालीन), भी हूं, अर्थात् अनित्य भी । तात्पर्य यह है कि उपयोग आत्मा का गुण है, आत्मा से कथंचित् अभिन्न है। और वह भूत, वर्त्तमान और भविष्यत् कालीन विषयों को जानता है और सदैव पलटता रहता है। इस प्रकार उपयोग अनित्य होने से आत्मा भी कथं-चित् अनित्य है।

एत्थ णं से सुए संबुद्धे थावच्चापुत्तं वंदइ, नमंसइ, वंदित्ता नमं-सित्ता एवं वयासी-'इच्छामि णं भंते! तुब्भे अंतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं निसामित्तए।' धम्मकहा भाणियव्वा।

तए णं से सुए परिव्वायए थावच्चापुत्तस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म एवं वयासी-'इच्छामि णं भंते! परिव्वायगसहस्सेणं सद्धिं संपरिवुडे देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता पव्वइत्तए।'

'अहासुहं देवाणुप्पिया!' जाव उत्तरपुरच्छिमे दिसीभागे तिदंडयं जाव धाउरत्ताओ य एगंते एडेइ, एडित्ता सयमेव सिहं उप्पाडेइ, उप्पाडित्ता जेणेव थावच्चापुत्ते० मुंडे भवित्ता जाव पव्वइए। सामाइय-माइयाइं चोद्दसपुव्वाइं अहिज्जइ। तए णं थावच्चापुत्ते सुयस्स अणगार-सहस्सं सीसत्ताए वियरइ।

थावच्चापुत्र के उत्तर से उस शुक परिव्राजक को प्रतिबोध प्राप्त हुआ। उसने थावच्चापुत्र को वन्दना की, नमस्कार किया। वन्दना और नमस्कार करके इस प्रकार कहा-'भगवन् ! मैं आपके पास से केवली प्ररूपित धर्म सुनने की अभिलाषा करता हूँ।' यहाँ धर्मकथा कहनी चाहिए।

तत्पश्चात् शुक परिव्राजक थावच्चापुत्र से धर्म सुन कर और उसे हृदय में धारण करके इस प्रकार बोला-'भगवन् ! मैं एक हजार परिव्राजकों के साथ देवानुप्रिय के निकट, मुंडित होकर प्रव्रजित होना चाहता हूं।'

थावच्चापुत्र अनगार बोले-'देवानुप्रिय ! जिस प्रकार सुख उपजे वैसा करो।' यह सुनकर यावत् उत्तरपूर्व दिशा में जाकर शुक परिव्राजक ने त्रिदंड यावत् गेरु से रंगे वस्त्र एकान्त में उतार डाले। अपने ही हाथ से शिखा उखाड़ ली। उखाड़ कर जहाँ थावच्चापुत्र अनगार थे वहाँ आया। मुंडित होकर यावत् दीक्षित हो गया। फिर सामायिक से आरंभ करके चौदह पूर्वों का अध्ययन किया। तत्पश्चात् थावच्चापुत्र ने शुक को एक हजार अनगार शिष्य के रूप में प्रदान किये।

तए णं थावच्चापुत्ते सोगंधियाओ नयरीओ नीलासोयाओ प निक्खमइ। पडिनिक्खमित्ता बहिया जणवयविहारं विहरइ। तए णं थावच्चापुत्ते अणगारसहस्सेणं सद्धिं संपरिवुडे जेणेव पुंडरीए प तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता पुंडरीयं पव्वयं सणियं सणियं दुरूहइ। दुरूहित्ता मेघघणसन्निगासं देवसन्निवायं पुढविसिलापट्टयं जाव पाओवगमणं समणुवन्ने।

तए णं से थावच्चापुत्ते बहूणि वासाणि सामन्नपरियागं पाउणित्ता मासियाए संलेहणाए सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए जाव केवलवरनाणदंसण समुप्पाडित्ता तओ पच्छा सिद्धे जाव पहीणे।

तत्पश्चात थावच्चापुत्र अनगार सौगंधिका नगरी से और नीलाशोक उद्यान से निकले। निकल कर जनपदविहार अर्थात् विभिन्न देशों में विचरण करने लगे तत्पश्चात वह थावच्चापुत्र (अपना अन्तिम समय सन्निकट समझ कर) हजार साधुओं के साथ जहाँ पुण्डरीक-शत्रुंजयपर्वत था, वहाँ आये। आकर धीरे-धीरे पुण्डरीक पर्वत पर आरूढ़ हुए। आरूढ़ होकर उन्होंने मेघघटा के समान श्याम और जहाँ देवों का आगमन होता था ऐसे पृथ्वीशिलापट्टक पर आरूढ़ होकर यावत् पादपोपगमन अनशन ग्रहण किया।

तत्पश्चात् वह थावच्चापुत्र बहुत वर्षों तक श्रामण्यपर्याय पाल कर, एक ... केवलज्ञान और ... से मुक्त हुए।

तए णं से सुए अन्नया कयाइं जेणेव सेलगपुरे नयरे, जेणेव ...भूमिभागे उज्जाणे तेणेव समोसरिए। परिसा निग्गया, सेलओ ...ग्गच्छइ। धम्मं सोच्चा जं. णवरं-'देवाणुप्पिया! पंथगपामोक्खाइं ... मंतिसयाइं आपुच्छामि, मंडुयं च कुमारं रज्जे ठावेमि, तओ पच्छा ...वाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वयामि।'

'अहासुहं देवाणुप्पिया!'

तत्पश्चात् शुक अनगार किसी समय जहाँ शैलकपुर नगर था और जहाँ ...भूमिभाग नामक उद्यान था, वहीं पधारे। उन्हें वन्दना करने के लिए परिषद् ...निकली। शैलक राजा भी निकला। धर्म सुन कर उसे प्रतिबोध प्राप्त हुआ। ...विशेष यह कि राजा ने निवेदन किया-हे देवानुप्रिय! मैं पंथक आदि पाँच सौ ...मंत्रियों से पूछ लूँ-उनकी अनुमति ले लूँ, और मंडुक कुमार को राज्य पर ...स्थापित कर दूँ। उसके पश्चात् आप देवानुप्रिय के समीप मुंडित होकर गृहवास ...से निकल कर अनगारदीक्षा अंगीकार करूँगा।'

यह सुन कर शुक अनगार ने कहा-'जैसे सुख उपजे वैसा करो।'

तए णं से सेलए राया सेलगपुरं नयरं अणुपविसइ, अणुपविसित्ता ...जेणेव सए गिहे, जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवागच्छइ, ...उवागच्छित्ता सीहासणं सन्निसन्ने।

तए णं से सेलए राया पंथयपामोक्खे पंच मंतिसए सद्दावेइ, सद्दा-...वित्ता एवं वयासी-एवं खलु देवाणुप्पिया! मए सुयस्स अंतिए धम्मे ...निसंते, से वि य धम्मे मए इच्छिए पडिच्छिए अभिरुइए। अहं णं ...देवाणुप्पिया! संसारभयउव्विग्गे, जाव पव्वयामि। तुब्भे णं देवा-...णुप्पिया! किं करेह? किं वसेह? किं वा ते हियइच्छं ति?

तए णं तं पंथयपामोक्खा सेलगं रायं एवं वयासी-'जइ णं तुब्भे ...देवाणुप्पिया! संसार० जाव पव्वयह, अम्हाणं देवाणुप्पिया! किमन्ने

आहारे वा, आलंबे वा ? अम्हे वि य णं देवाणुप्पिया ! संसारभउव्विग्गा जाव पव्वयामो, जहा देवाणुप्पिया ! अम्हं बहुसु कज्जेसु य कारणेसु य जाव तहा णं पव्वइयाण वि समाणाणं बहुसु जाव चक्खुभूए ।

तत्पश्चात् शैलक राजा ने शैलकपुर नगर में प्रवेश किया। प्रवेश करके जहाँ अपना घर था और जहाँ बाहर की उपस्थानशाला (राजसभा) थी, वहाँ आया। आकर, सिंहासन पर बैठा।

तत्पश्चात् शैलक राजा ने पंथक आदि पाँच सौ मंत्रियों को बुलाया। बुला कर इस प्रकार कहा-'हे देवानुप्रियो ! मैंने शुक अनगार से धर्म सुना है और उस धर्म की मैंने इच्छा की है। वह धर्म मुझे रुचा है। अतएव हे देवानुप्रियो ! मैं संसार के भय से उद्विग्न होकर यावत् दीक्षा ग्रहण कर रहा हूँ। देवानुप्रियो ! तुम क्या करोगे ? कहाँ रहोगे ? तुम्हारा हित और इच्छित क्या है ?

तत्पश्चात् वे पंथक आदि मंत्री शैलक राजा से इस प्रकार कहने लगे-'हे देवानुप्रिय ! यदि आप संसार के भय से उद्विग्न होकर यावत् प्रव्रजित होना चाहते हैं, तो हे देवानुप्रिय ! हमारा दूसरा आधार कौन है ? हमारा आलंबन कौन है ? अतएव हे देवानुप्रिय ! हम भी संसार के भय से उद्विग्न होकर दीक्षा अंगीकार करेंगे। हे देवानुप्रिय ! जैसे हम यहाँ गृहस्थावस्था में बहुत-से कार्यों में तथा कारणों में यावत् आपके मार्गदर्शक हैं, उसी प्रकार दीक्षित होकर भी आपके बहुत-से कार्य-कारणों में यावत् चक्षुभूत (मार्ग प्रदर्शक) होंगे।

तए णं से सेलगे पंथगपामोक्खे पंच मंतिसए एवं वयासी-'जइ णं देवाणुप्पिया ! तुब्भे संसार० जाव पव्वयह, तं गच्छह णं देवाणुप्पिया ! सएसु सएसु कुडुंबेसु जेट्ठे [illegible] ठावेत्ता पुरिसहस्सवाहिणीओ [illegible] तियं पाउब्भवह [illegible] त्ति। तहेव पाउब्भ[illegible]

तत्पश्चात [illegible]
कहा-'हे देवानु[illegible]
[illegible] करना चाह[illegible]
[illegible] करके
[illegible] करके दे-

र पाँच सौ मंत्री गये, राजा के आदेशानुसार कार्य करके शिविकाओं पर
ारूढ़ होकर राजा के पास प्रकट हुए-आये।

तए णं से सेलए राया पंच मंतिसयाइं पाउब्भवमाणाइं पासइ,
ासित्ता हट्ठतुट्ठे कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी-'खिप्पा-
व भो देवाणुप्पिया! मंडुयस्स कुमारस्स महत्थं जाव रायाभिसेयं
वट्ठवेह०।' अभिसिंचइ जाव राया जाए, जाव विहरइ।

तत्पश्चात् शैलक राजा ने पाँच सौ मंत्रियों को अपने पास आया देखा।
प्रकर हृष्ट-तुष्ट होकर कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया। बुला कर इस प्रकार
हा-'हे देवानुप्रियो! शीघ्र ही मंडुक कुमार के महान् अर्थ वाले राज्याभिषेक
ी तैयारी करो।' कौटुम्बिक पुरुषों ने वैसा ही किया। शैलक राजा ने राज्या-
षेक किया। मंडुक राजा हो गया, यावत् सुखपूर्वक विचरने लगा।

तए णं से सेलए मंडुयं रायं आपुच्छइ। तए णं से मंडुए राया
ोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी-'खिप्पामेव सेलगपुरं
यरं आसित्त जाव गंधवट्टिभूयं करेह य कारवेह य, करित्ता कार-
वेत्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह।'

तए णं से मंडुए दोच्चं पि कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता
एवं वयासी-'खिप्पामेव सेलगस्स रण्णो महत्थं जाव निक्खमणाभिसेयं'
जहेव मेहस्स तहेव, णवरं पउमावई देवी अग्गकेसे पडिच्छइ। सव्वे वि
पडिग्गहं गहाय सीयं दुरूहंति, अवसेसं तहेव, जाव सामाइयमाइयाइं
एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ, अहिज्जित्ता बहूहिं चउत्थ जाव विहरइ।

तत्पश्चात् शैलक ने मंडुक राजा से दीक्षा लेने की आज्ञा माँगी। तब
मंडुक राजा ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया। बुला कर इस प्रकार कहा-'शीघ्र
ही शैलकपुर नगर को स्वच्छ और सिंचित करके सुगंध की बट्टी के समान करो
और कराओ। ऐसा करके और कराकर यह आज्ञा मुझे वापिस सौंपो अर्थात्
आज्ञानुसार कार्य हो जाने की मुझे सूचना दो।

तत्पश्चात् मंडुक राजा ने दुबारा कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया। बुला
कर इस प्रकार कहा-शीघ्र ही शैलक महाराजा के महान् अर्थ वाले (बहुव्यय-
साध्य) यावत् दीक्षाभिषेक की तैयारी करो।' जिस प्रकार मेघकुमार के अध्ययन

आहारे वा आलंबे वा ? अम्हे वि य णं देवाणुप्पिया ! संसारभउव्विग्गा जाव पव्वयामो, जहा देवाणुप्पिया ! अम्हं बहुसु कज्जेसु य कारणेसु य जाव तहा णं पव्वइयाण वि समाणाणं बहुसु जाव चक्खुभूए।

तत्पश्चात् शैलक राजा ने शैलकपुर नगर में प्रवेश किया। प्रवेश करके जहाँ अपना घर था और जहाँ बाहर की उपस्थानशाला (राजसभा) थी, वहाँ आया। आकर सिंहासन पर बैठा।

तत्पश्चात् शैलक राजा ने पंथक आदि पाँच सौ मंत्रियों को बुलाया। बुला कर इस प्रकार कहा-'हे देवानुप्रियो ! मैंने शुक अनगार से धर्म सुना है और उस धर्म की मैंने इच्छा की है। वह धर्म मुझे रुचा है। अतएव हे देवानुप्रियो ! मैं संसार के भय से उद्विग्न होकर यावत् दीक्षा ग्रहण कर रहा हूँ। देवानुप्रियो ! तुम क्या करोगे ? कहाँ रहोगे ? तुम्हारा हित और इच्छित क्या है ?

तत्पश्चात् वे पंथक आदि मंत्री शैलक राजा से इस प्रकार कहने लगे-'हे देवानुप्रिय ! यदि आप संसार के भय से उद्विग्न होकर यावत् प्रव्रजित होना चाहते हैं, तो हे देवानुप्रिय ! हमारा दूसरा आधार कौन है ? हमारा आलंबन कौन है ? अतएव हे देवानुप्रिय ! हम भी संसार के भय से उद्विग्न होकर दीक्षा अंगीकार करेंगे। हे देवानुप्रिय ! जैसे हम यहाँ गृहस्थावस्था में बहुत-से कार्यों में तथा कारणों में यावत् आपके मार्गदर्शक हैं, उसी प्रकार दीक्षित होकर भी आपके बहुत-से कार्य-कारणों में यावत् चक्षुभूत (मार्ग प्रदर्शक) होंगे।

तए णं से सेलगे पंथगपामोक्खे पंच मंतिसए एवं वयासी-'जइ णं देवाणुप्पिया ! तुब्भे संसार० जाव पव्वयह, तं गच्छह णं देवाणुप्पिया ! सएसु सएसु कुडुंबेसु जेट्ठे पुत्ते कुडुंबमज्झे ठावेत्ता पुरिससहस्सवाहिणीओ सीयाओ दुरूढा समाणा मम अंतियं पाउब्भवह' त्ति। तहेव पाउब्भवंति।

तत्पश्चात् शैलक राजा ने पंथक प्रभृति पाँच सौ मंत्रियों से इस प्रकार कहा-'हे देवानुप्रियो ! यदि तुम संसार के भय से उद्विग्न हुए हो, यावत् दीक्षा ग्रहण करना चाहते हो तो, देवानुप्रियो ! जाओ और अपने-अपने कुटुम्बों में अपने अपने ज्येष्ठ पुत्रों को कुटुम्ब के मध्य में स्थापित करके हजार पुरुषों द्वारा वहन करने योग्य शिविका पर आरूढ होकर मेरे समीप प्रकट होओ।' यह सुन

सौ मंत्री गये, राजा के आदेशानुसार कार्य करके शिविकाओं पर होकर राजा के पास प्रकट हुए-आये।

ए णं से सेलए राया पंच मंतिसयाइं पाउब्भवमाणाइं पासइ, ा हट्ठतुट्ठे कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी-'खिप्पा- । देवाणुप्पिया ! मंडुयस्स कुमारस्स महत्थं जाव रायाभिसेयं ह०।' अभिसिंचइ जाव राया जाए, जाव विहरइ।

तत्पश्चात् शैलक राजा ने पाँच सौ मंत्रियों को अपने पास आया देखा। हृष्ट-तुष्ट होकर कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया। बुला कर इस प्रकार देवानुप्रियो ! शीघ्र ही मंडुक कुमार के महान् अर्थ वाले राज्याभिषेक ारी करो।' कौटुम्बिक पुरुषों ने वैसा ही किया। शैलक राजा ने राज्या- किया। मंडुक राजा हो गया, यावत् सुखपूर्वक विचरने लगा।

तए णं से सेलए मंडुयं रायं आपुच्छइ। तए णं से मंडुए राया वियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी-'खिप्पामेव सेलगपुरं आसित्त जाव गंधवट्टिभूयं करेह य कारवेह य, करित्ता कार- । एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह।'

तए णं से मंडुए दोच्चं पि कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता वयासी-'खिप्पामेव सेलगस्स रण्णो महत्थं जाव निक्खमणाभिसेयं' मेहस्स तहेव, णवरं पउमावई देवी अग्गकेसे पडिच्छइ। सव्वे वि गहं गहाय सीयं दुरूहंति, अवसेसं तहेव, जाव [illegible] कारस अंगाई अहिज्जइ, अहिज्जित्ता बहूहिं चउत्थ [illegible] विहरइ।

तत्पश्चात् शैलक ने मंडुक राजा से दीक्षा लेने की [illegible]। तब क राजा ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया। बुला कर इस प्रकार कहा-'शी शैलकपुर नगर को स्वच्छ और सिंचित करके [illegible] र कराओ। ऐसा करके और कराकर यह आज्ञा [illegible] ज्ञानुसार कार्य हो जाने की मुझे सूचना दो।

तत्पश्चात् मंडुक राजा ने दुबारा कौटुम्बिक [illegible] इस प्रकार कहा-शीघ्र ही शैलक महाराज के [illegible] र्थ) यावत् दीक्षाभिषेक की तैयारी [illegible]

में कहा था, उसी प्रकार यहाँ भी कहना चाहिए। विशेषता यह है कि पद्मावती देवी ने शैलक के अग्रकेश ग्रहण किये। सभी शोभार्थी प्रतिपद्‍... करके शिबिका पर आरूढ़ हुए। शेष वर्णन पूर्ववत् समझना चाहिए। राजर्षि शैलक ने दीक्षित होकर सामायिक से आरंभ करके ग्यारह अंगों का अध्ययन किया। अध्ययन करके बहुत-से उपवास आदि करते हुए वे विचरने लगे।

तए णं से सुए सेलयस्स अणगारस्स ताइं पंथयपामोक्खाइं अणगारसयाइं सीसत्ताए वियरइ।

तए णं से सुए अन्नया कयाइं सेलगपुराओ नगराओ सुभूमिभागाओ उज्जाणाओ पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता बहिया जणवयविहारं विहरइ।

तए णं से सुए अणगारे अन्नया कयाइं तेणं अणगारसहस्सेणं सद्धिं संपरिवुडे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं विहरमाणे जेणेव पोंडरीए पव्वए जाव सिद्धे॥

तत्पश्चात् शुक अनगार ने शैलक अनगार को पंथक प्रभृति पाँच सौ अनगार शिष्य रूप में प्रदान किये।

तत्पश्चात् शुक मुनि किसी समय शैलकपुर नगर से और सुभूमिभाग उद्यान से निकले। निकल कर बाहर जनपद विहार में विचरने लगे।

तत्पश्चात् वह शुक अनगार एक हजार अनगारों के साथ अनुक्रम से विचरते हुए, ग्रामानुग्राम विहार करते हुए अपना अन्तिम समय समीप जान कर पुंडरीक पर्वत पर पधारे यावत् सिद्ध हुए।

तए णं तस्स सेलगस्स रायरिसिस्स तेहिं अंतेहि य, पंतेहि य, तुच्छेहि य, लूहेहि य, अरसेहि य, विरसेहि य, सीएहि य, उण्हेहि य, कालाइक्कंतेहि य, पमाणाइक्कंतेहि य णिच्चं पाणभोयणेहि य पयइसुकुमालस्स सुहोचियस्स सरीरगंसि वेयणा पाउब्भूया उज्जला जाव दुरहियासा, कंडुयदाहपित्तज्जरपरिगयसरीरे यावि विहरइ। तेणं रोगायंकेणं सुक्के जाए यावि होत्था।

तत्पश्चात् प्रकृति से सुकुमार और सुखभोग के योग्य शैलक राजर्षि के
रीर में अन्त (चना आदि) प्रान्त (ठंडा या बचाखुचा), तुच्छ (अल्प),
रूक्ष (रूखा), अरस (हींग आदि के संस्कार से रहित), विरस (स्वादहीन),
ठंडा-गरम, कालातिक्रान्त (भूख का समय बीत जाने पर प्राप्त) और प्रमाणा-
तिक्रान्त (कम या ज्यादा भोजन-पान नित्य मिलने के कारण) वेदना उत्पन्न
हो गई। वह वेदना उत्कट यावत् दुस्सह थी। उनका शरीर खुजली और दाह
उत्पन्न करने वाले पित्तज्वर से व्याप्त हो गया। तब वह शैलक राजर्षि उस
रोगातंक से शुष्क हो गये, अर्थात् उनका शरीर सूख गया।

तए णं से सेलए अन्नया कयाइं पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे जाव जेणेव
सुभूमिभागे उज्जाणे तेणेव विहरइ। परिसा निग्गया, मंडुओ वि
निग्गओ, सेलयं अणगारं जाव वंदइ, नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता
पज्जुवासइ।

तए णं से मंडुए राया सेलयस्स अणगारस्स सरीरयं सुक्कं
भुक्खं जाव सव्वाबाहं सरोगं पासइ, पासित्ता एवं वयासी—'अहं णं
भंते! तुब्भं अहापवित्तेहिं तिगिच्छिएहिं अहापवित्तेणं ओसहभेसज्जेणं
भत्तपाणेणं तिगिच्छं आउट्टामि, तुब्भे णं भंते! मम जाणसालासु
समोसरह, फासुअं एसणिज्जं पीढफलगसेज्जासंथारगं ओगिण्हित्ताणं
विहरह।

तत्पश्चात् शैलक राजर्षि किसी समय अनुक्रम से विचरते हुए यावत्
जहाँ सुभूमिभाग नामक उद्यान था, वहाँ आकर विचरने लगे। उन्हें वंदना
करने के लिए परिषद् निकली। मंडुक राजा भी निकला। शैलक अनगार को
सब ने वंदन किया, नमस्कार किया। वन्दना-नमस्कार करके उपासना की।
उस समय मंडुक राजा ने शैलक अनगार का शरीर शुष्क, निस्तेज यावत् सब
प्रकार की पीड़ावाला और रोगयुक्त देखा। देख कर इस प्रकार कहा—

'भगवन्! मैं आपकी साधु के योग्य चिकित्सकों से, साधु के योग्य औषध
और भेषज के द्वारा तथा भोजन-पान द्वारा चिकित्सा कराऊँ। हे भगवन्!
[illegible] प्रासुक एवं एषणीय पीठ, फलक, शय्या
[illegible]

तए णं से सेलए अणगारे मंडुयस्स रण्णो एयमट्ठं तह त्ति पडि-

तत्पश्चात् प्रकृति से सुकुमार और सुखभोग के योग्य शैलक राजर्षि के र में अन्त (चना आदि) प्रान्त (ठंडा या बचाखुचा), तुच्छ (अल्प), (रूखा), अरस (हींग आदि के संस्कार से रहित), विरस (स्वादहीन), -गरम, कालातिक्रान्त (भूख का समय बीत जाने पर प्राप्त) और प्रमाणा-न्त (कम या ज्यादा भोजन-पान नित्य मिलने के कारण वेदना उत्पन्न गई। वह वेदना उत्कट यावत् दुस्सह थी। उनका शरीर खुजली और दाह न्न करने वाले पित्तज्वर से व्याप्त हो गया। तब वह शैलक राजर्षि उस तंक से शुष्क हो गये, अर्थात् उनका शरीर सूख गया।

तए णं से सेलए अन्नया कयाइं पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे जाव जेणेव भूमिभागे उज्जाणे तेणेव विहरइ। परिसा निग्गया, मंडुओ वि गओ, सेलयं अणगारं जाव वंदइ, नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता ज्जुवासइ।

तए णं से मंडुए राया सेलयस्स अणगारस्स सरीरयं सुक्कं क्कं जाव सव्वाबाहं सरोगं पासइ, पासित्ता एवं वयासी—'अहं णं तुब्भं अहापवित्तेहिं तिगिच्छिएहिं अहापवित्तेणं ओसहभेसज्जेणं पाणेणं तिगिच्छं आउट्टामि, तुब्भे णं भंते ! मम जाणसालासु सरह, फासुयं एसणिज्जं पीढफलगसेज्जासंथारगं ओगिण्हित्ताणं रह।

तत्पश्चात् शैलक राजर्षि किसी समय अनुक्रम से विचरते हुए यावत् सुभूमिभाग नामक उद्यान था, वहाँ आकर विचरने लगे। उन्हें वंदना के लिए परिषद् निकली। मंडुक राजा भी निकला। शैलक अनगार को ने वंदन किया, नमस्कार किया। वन्दना-नमस्कार करके उपासना की। समय मंडुक राजा ने शैलक अनगार का शरीर शुष्क, निस्तेज यावत् सर्व र की पीड़ावाला और रोगयुक्त देखा। देख कर इस प्रकार कहा—

'भगवन् ! मैं आपकी साधु के योग्य चिकित्सकों से, साधु के योग्य औषध भेषज के द्वारा तथा भोजन-पान द्वारा चिकित्सा कराऊँ। हे भगवन् ! मेरी यानशाला में पधारिए और प्रासुक एवं एषणीय पीठ, फलक, शय्या संस्तारक ग्रहण करके विचरिए।

तए णं से सेलए अणगारे मंडुयस्स रण्णो एयमट्ठं तह त्ति पडि-

तत्पश्चात् प्रकृति से सुकुमार और सुखभोग के योग्य शैलक राजर्षि के र में अन्त (चना आदि) प्रान्त (ठंडा या बचाखुचा), तुच्छ (अल्प), (रूखा), अरस (हींग आदि के संस्कार से रहित), विरस (स्वादहीन), ने पर प्राप्त) और प्रमाण- के कारण वेदना उत्पन्न शरीर खुजली और दाह न्न करने वाले पित्तज्वर से व्याप्त हो गया। तब वह शैलक राजर्षि उस तंक से शुष्क हो गये, अर्थात् उनका शरीर सूख गया।

तए णं से सेलए अन्नया कयाइं पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे जाव जेणेव भूमिभागे उज्जाणे तेणेव विहरइ । परिसा निग्गया, मंडुओ वि गओ, सेलयं अणगारं जाव वंदइ, नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता जुवासइ ।

तए णं से मंडुए राया सेलयस्स अणगारस्स सरीरयं सुक्कं कं जाव सव्वाबाहं सरोगं पासइ, पासित्ता एवं वयासी—'अहं णं ! तुब्भं अहापवित्तेहिं तिगिच्छिएहिं अहापवित्तेणं ओसहभेसज्जेणं तपाणेणं तिगिच्छं आउट्टामि, तुब्भे णं भंते ! मम जाणसालासु सरह, फासुयं एसणिज्जं पीढफलगसेज्जासंथारगं ओगिण्हित्ताणं हरह ।

तत्पश्चात् शैलक राजर्षि किसी समय अनुक्रम से विचरते हुए यावत् सुभूमिभाग नामक उद्यान था, वहाँ आकर विचरने लगे। उन्हें वंदना । मंडुक राजा भी निकला। शैलक अनगार को किया। वन्दना-नमस्कार करके उपासना की। क अनगार का शरीर शुष्क, निस्तेज यावत् सब और रोगयुक्त देखा। देख कर इस प्रकार कहा—

'भगवन् ! मैं आपकी साधु के योग्य चिकित्सकों से, साधु के योग्य औषध र भेषज के द्वारा तथा भोजन-पान द्वारा चिकित्सा कराऊँ। हे भगवन् ! प मेरी यानशाला में पधारिए और प्रासुक एवं एषणीय पीठ, फलक, शय्या ा संस्तारक ग्रहण करके विचरिए।

तए णं से सेलए अणगारे मंडुयस्स रण्णो एयमट्ठं तह त्ति पडि-

सुणेइ । तए णं से मंडुए सेलयं वंदइ, नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता जामेव दिसिं पाउब्भूए तामेव दिसिं पडिगए ।

तए णं से सेलए कल्लं जाव जलंते सभंडमत्तोवगरणमायाय पंथ पामोक्खेहिं पंचहिं अणगारसएहिं सद्धिं सेलगपुरमणुपविसइ, अणु सित्ता जेणेव मंडुयस्स जाणसाला तेणेव उवागच्छइ । उवागच्छि फासुयं पीढ० जाव विहरइ ।

तत्पश्चात् शैलक अनगार ने मंडुक राजा के इस अर्थ को (विज्ञप्ति 'ठीक है' ऐसा कह कर स्वीकार किया । तब मंडुक राजा ने शैलक की व की, नमस्कार किया और वन्दना नमस्कार करके जिस दिशा से आया उसी दिशा में लौट गया ।

तत्पश्चात् वह शैलक राजर्षि कल (दूसरे दिन) सूर्य के देदीप्यमान हो पर भंडमात्र (पात्र) और उपकरण लेकर पंथक प्रभृति पाँच सौ मुनि साथ शैलकपुर में प्रविष्ट हुए । प्रवेश करके जहाँ मंडुक राजा की यानशाला उधर आये । आकर प्रासुक पीठ फलक आदि ग्रहण करके विचरने लगे ।

तए णं से मंडुए राया चिगिच्छए सद्दावेइ, सद्दावित्ता ए वयासी—'तुब्भे णं देवाणुप्पिया ! सेलयस्स फासुयएसणिज्जेणं तेगिच्छं आउट्टेह ।'

तए णं तेगिच्छया मंडुएणं रण्णा एवं वुत्ता समाणा सेलयस्स रायरिसिस्स अहापवित्तेहिं ओसहभेसज्जभत्तपाणेहिं ते आउट्टेंति । मज्जपाणगं च से उवदिसंति ।

तए णं तस्स सेलयस्स अहापवित्तेहिं जाव मज्जपाणेणं रो उवसंते होत्था, हट्ठे जाव बलियसरीरे जाए ववगयरोगायंके ।

तत्पश्चात् मंडुक राजा ने चिकित्सकों को बुलाया । बुला कर इस कहा—देवानुप्रियो ! तुम शैलक राजर्षि की प्रासुक और एषणीय औषध यावत् चिकित्सा करो ।

तब चिकित्सक मंडुक राजा के इस प्रकार कहने पर हृष्ट-तुष्ट हुए । के योग्य औषध, भेषज एवं भोजन-पान से चिकित्सा की और के लिए कहा ।

तत्पश्चात् साधु के योग्य औषध आदि से तथा मद्यपान से शैलक राजर्षि का रोगातंक शान्त हो गया। वह हृष्टपुष्ट यावत् बलवान् शरीर वाले हो गए। उनके रोगातंक पूरी तरह दूर हो गये।

तए णं से सेलए तंसि रोगायंकंसि उवसंतंसि समाणंसि, तंसि विपुलंसि असणपाणखाइमसाइमंसि मज्जपाणए य मुच्छिए गढिए गिद्धे अज्झोववन्ने ओसन्ने ओसन्नविहारी एवं पासत्थे पासत्थविहारी, कुसीले कुसीलविहारी, पमत्ते पमत्तविहारी, संसत्ते संसत्तविहारी, उउबद्धपीढ-फलगसेज्जासंथारए पमत्ते यावि विहरइ। नो संचाएइ फासुयं एसणिज्जं पीढं पच्चप्पिणित्ता मंडुयं च रायं आपुच्छित्ता बहिया जणवयविहारं विहरित्तए।

तत्पश्चात् शैलक राजर्षि उस रोगातंक के उपशान्त हो जाने पर उस विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम में एवं मद्यपान में मूर्छित, मत्त, गृद्ध और अत्यन्त आसक्त हो गये। वह अवसन्न–आलसी अर्थात् आवश्यक आदि क्रिया सम्यक् प्रकार से न करने वाले, अवसन्नविहारी अर्थात् लगातार बहुत दिनों तक आलस्यमय जीवन यापन करने वाले हो गये। इसी प्रकार पार्श्वस्थ (ज्ञान दर्शन चारित्र को एक किनारे रख देने वाले) तथा पार्श्वस्थविहारी अर्थात् बहुत समय तक ज्ञानादि को एक किनारे रख देने वाले, कुशील अर्थात् काल विनय आदि भेद वाले ज्ञान दर्शन और चारित्र के आचारों के विराधक बहुत समय तक इनके विराधक होने के कारण कुशील विहारी तथा प्रमत्त (पाँच प्रकार के प्रमाद से युक्त), प्रमत्तविहारी, संसक्त (कदाचित् संविग्न के और कदाचित् पार्श्वस्थ के गुणों से युक्त तथा तीन गौरव वाले तथा संसक्त-विहारी हो गये। शेष (वर्षाऋतु के सिवाय) काल में भी शय्या-संस्तारक के लिए पीठ-फलक रखने वाले प्रमादी हो गये। वह प्रासुक तथा एषणीय पीठ फलक आदि को वापिस देकर और मंडुक राजा से अनुमति लेकर बाहर यावत् जनपद-विहार करने में असमर्थ हो गए।

तए णं तेसिं पंथयवज्जाणं पंचण्हं अणगारसयाणं अन्नया कयाइ एगयओ सहियाणं जाव पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि धम्मजागरियं जागरमाणाणं अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था—'एवं खलु सेलए रायरिसी चइत्ता रज्जं पव्वइए, विपुलं णं असणपाणखाइम-साइमे मज्जपाणए मुच्छिए, नो संचाएइ जाव विहरित्तए, नो खलु

तत्पश्चात् साधु के योग्य औषध आदि से तथा मद्यपान से शैलक र्षि का रोगातंक शान्त हो गया। वह हृष्टपुष्ट यावत् बलवान् शरीर वाले गए। उनके रोगातंक पूरी तरह दूर हो गये।

तए णं से सेलए तंसि रोगायंकंसि उवसंतंसि समाणंसि, तंसि पुलंमि असणपाणखाइमसाइमंसि मज्जपाणए य मुच्छिए गढिए गिद्धे ज्झोववन्ने ओसन्ने ओसन्नविहारी एवं पासत्थे पासत्थविहारी, कुसीले सीलविहारी, पमत्ते पमत्तविहारी, संसत्ते संसत्तविहारी, उउबद्धपीढ-लगसेज्जासंथारए पमत्ते यावि विहरइ। नो संचाएइ फासुयं एसणिज्जं ढं पच्चप्पिणित्ता मंडुयं च रायं आपुच्छित्ता बहिया जणवयविहारं हरित्तए।

तत्पश्चात् शैलक राजर्षि उस रोगातंक के उपशान्त हो जाने पर उस पुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम में एवं मद्यपान में मूर्छित, मत्त, गृद्ध र अत्यन्त आसक्त हो गये। वह अवसन्न-आलसी अर्थात् आवश्यक आदि या सम्यक् प्रकार से न करने वाले, अवसन्नविहारी अर्थात् लगातार बहुत नों तक आलस्यमय जीवन यापन करने वाले हो गये। इसी प्रकार पार्श्वस्थ ज्ञान दर्शन चारित्र को एक किनारे रख देने वाले) तथा पार्श्वस्थविहारी र्थात् बहुत समय तक ज्ञानादि को एक किनारे रख देने वाले, कुशील-अर्थात् ल विनय आदि भेद वाले ज्ञान दर्शन और चारित्र के आचारों के विराधक हुत समय तक इनके विराधक होने के कारण कुशील विहारी तथा प्रमत्त पाँच प्रकार के प्रमाद से युक्त), प्रमत्तविहारी, संसक्त (कदाचित् संविग्न और कदाचित् पार्श्वस्थ के गुणों से युक्त तथा तीन गौरव वाले तथा संसक्त-हारी हो गये। शेष (वर्षाऋतु के सिवाय) काल में भी शय्या-संस्तारक के लए पीठ-फलक रखने वाले प्रमादी हो गये। वह प्रासुक तथा एषणीय पीठ लक आदि को वापिस देकर और मंडुक राजा से अनुमति लेकर बाहर यावत् नपद-विहार करने में असमर्थ हो गए।

तए णं तेसिं पंथयवज्जाणं पंचण्हं अणगारसयाणं अन्नया कयाइ एगयओ सहियाणं जाव पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि धम्मजागरियं जागरमाणाणं अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था-'एवं खलु सेलए रायरिसी चइत्ता रज्जं पव्वइए, विपुलं णं असणपाणखाइम साइमे मज्जपाणए मुच्छिए, नो संचाएइ जाव विहरित्तए, नो खलु

तत्पश्चात् किसी समय शैलक राजर्षि कार्तिकी चौमासी के दिन विपुल अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य आहार करके और बहुत अधिक मद्यपान करके सायंकाल के समय आराम से सो रहे थे।

तए णं से पंथए कत्तियचाउम्मासियंसि कयकाउस्सग्गे देवसियं पडिक्कमणं पडिक्कंते चाउम्मासियं पडिक्कमिउंकामे सेलयं रायरिसिं खामणट्टयाए सीसेणं पाएसु संघट्टेइ।

तए णं से सेलए पंथएणं सीसेणं पाएसु संघट्टिए समाणे आसुरुत्ते जाव मिसमिसेमाणे उट्ठेइ, उट्ठित्ता एवं वयासी-'से केस णं भो! एस अपत्थियपत्थिए जाव परिवज्जिए जे णं ममं सुहपसुत्तं पाएसु संघट्टेइ?'

उस समय पंथक मुनि ने कार्तिक की चौमासी के दिन कायोत्सर्ग करके, दैवसिक प्रतिक्रमण करके, चातुर्मासिक प्रतिक्रमण करने की इच्छा से, शैलक राजर्षि को खमाने के लिए अपने मस्तक से उनके चरणों का स्पर्श किया।

पंथक शिष्य के द्वारा मस्तक से चरणों का स्पर्श करने पर शैलक राजर्षि तत्काल रुष्ट हुए, यावत् क्रोध से मिसमिसाने लगे और उठ गये। उठ कर बोले-अरे, कौन है यह अप्रार्थित (मौत) की इच्छा करने वाला, यावत् लज्जा आदि से रहित, जिसने सुखपूर्वक सोये हुए मेरे पैरों का स्पर्श किया?

तए णं से पंथए सेलएणं एवं वुत्ते समाणे भीए तत्थे तसिए करयल० कट्टु एवं वयासी-'अहं णं भंते! पंथए कयकाउस्सग्गे देवसियं पडिक्कमणं पडिक्कंते, चाउम्मासियं पडिक्कंते चाउम्मासियं खामेमाणे देवाणुप्पियं वंदमाणे सीसेणं पाएसु संघट्टेमि। तं खमंतु णं देवाणुप्पिया! खमंतु मेऽवराहं, तुमं णं देवाणुप्पिया! णाइभुज्जो एवं करणयाए' त्ति कट्टु सेलयं अणगारं एयमट्ठं सम्मं विणएणं भुज्जो भुज्जो खामेइ।

शैलक ऋषि के इस प्रकार कहने पर पंथक मुनि भयभीत हो गये, त्रास को और खेद को प्राप्त हुए। दोनों हाथ जोड़ कर कहने लगे-भगवन्! मैं पंथक हूँ। मैंने कायोत्सर्ग करके दैवसिक प्रतिक्रमण किया है और चौमासी प्रतिक्रमण करता हूँ। अतएव चौमासी खामणा देने के लिए आप देवानुप्रिय को वन्दना करते समय, मैंने अपने मस्तक से आपके चरणों का स्पर्श किया है। सो

तत्पश्चात् किसी समय शैलक राजर्षि कार्तिकी चौमासी के दिन विपुल [अ]शन, पान, खाद्य और स्वाद्य आहार करके और बहुत अधिक मद्यपान करके [स]ायंकाल के समय आराम से सो रहे थे।

तए णं से पंथए कत्तियचाउम्मासियंसि कयकाउस्सग्गे देवसियं [प]डिक्कमणं पडिक्कंते चाउम्मासियं पडिक्कमिउकामे सेलयं रायरिसिं [ख]ामणट्ठयाए सीसेणं पाएसु संघट्टेइ।

तए णं से सेलए पंथएणं सीसेणं पाएसु संघट्टिए समाणे आसुरुत्ते [ज]ाव मिसमिसेमाणे उट्ठेइ, उट्ठित्ता एवं वयासी–'से केस णं भो! एस [अ]पत्थियपत्थिए जाव परिवज्जिए जे णं ममं सुहपसुत्तं पाएसु संघट्टेइ?'

उस समय पंथक मुनि ने कार्तिक की चौमासी के दिन कायोत्सर्ग करके, [illegible]

[तत्]काल रुष्ट हुए, यावत् क्रोध से मिसमिसाने लगे और उठ गये। उठ कर बोल-[े]— अरे, कौन है यह अप्रार्थित (मौत) की इच्छा करने वाला, यावत् लज्जा आदि [स]े रहित, जिसने सुखपूर्वक सोये हुए मेरे पैरों का स्पर्श किया?

तए णं से पंथए सेलएणं एवं वुत्ते समाणे भीए तत्थे तसिए कर-[य]लं० कट्टु एवं वयासी–'अहं णं भंते! पंथए कयकाउस्सग्गे देव-[स]ियं पडिक्कमणं पडिक्कंते, चाउम्मासियं पडिक्कंते चाउम्मासियं [ख]ामेमाणे देवाणुप्पियं वंदमाणे सीसेणं पाएसु संघट्टेमि। तं खमंतु णं देवाणुप्पिया! खमंतु मेऽवराहं, तुमं णं देवाणुप्पिया! णाइभुज्जो एवं [क]रणयाए' त्ति कट्टु सेलयं अणगारं एयमट्ठं सम्मं विणएणं भुज्जो [भ]ुज्जो खामेइ।

शैलक ऋषि के इस प्रकार कहने पर पंथक मुनि भयभीत हो गये, त्रास [क]ो और खेद को प्राप्त हुए। दोनों हाथ जोड़ कर कहने लगे–भगवन्! मैं पंथक [ह]ूँ। मैंने कायोत्सर्ग करके दैवसिक प्रतिक्रमण किया है और चौमासी प्रतिक्रमण [क]रता हूँ। अतएव चौमासी खामणा देने के लिए आप देवानुप्रिय को वन्दना [क]रते समय, मैंने अपने मस्तक से आपके चरणों का स्पर्श किया है

देवानुप्रिय ! क्षमा कीजिए, मेरा अपराध क्षमा कीजिए। देवानुप्रिय ! फिर ऐ नहीं करूँगा।' इस प्रकार कह कर शैलक अनगार की सम्यक् रूप से, वि पूर्वक इस अर्थ (अपराध) के लिए पुनः पुनः खमाने लगे।

तए णं तस्स सेलयस्स रायरिसिस्स पंथएणं एवं वुत्तस्स अ मेयारूवे जाव समुप्पज्जित्था–'एवं खलु अहं रज्जं च जाव ओस जाव उउबद्धपीढ० विहरामि। तं नो खलु कप्पइ समणाणं णिग्गं पासत्थाणं जाव विहरित्तए। तं सेयं खलु मे कल्लं मंडुयं आपुच्छित्ता पाडिहारियं पीढफलगसेज्जासंथारयं पच्चप्पिणित्ता पंथ अणगारेणं सद्धिं बहिया अब्भुज्जएणं जाव जणवयविहारेणं विहरित्त एवं संपेहेइ, संपेहित्ता कल्लं जाव विहरइ।

पंथक के द्वारा इस प्रकार कहने पर उन शैलक राजर्षि को इस प्र का यह विचार उत्पन्न हुआ–'मैं राज्य आदि का त्याग करके भी यावत् अव आलसी आदि होकर शेष काल में भी पीठ फलक आदि रख कर विच हूँ–रह रहा हूँ। श्रमण निर्ग्रन्थों को पार्श्वस्थ–शिथिलाचारी होकर रहना कल्पता। अतएव कल मंडुक राजा से पूछ कर पडिहारी पीठ, फलक, श और संस्तारक वापिस देकर, पंथक अनगार के साथ, बाहर अभ्युद्यत (उ विहार में विचरना ही मेरे लिए श्रेयस्कर है।' उन्होंने ऐसा विचार कि विचार करके दूसरे दिन यावत् उसी प्रकार करके विहार कर दिया।

एवामेव समणाउसो ! जाव निग्गंथो वा निग्गंथी वा ओ जाव संथारए पमत्ते विहरइ, से णं इहलोए चेव बहूणं समणाणं समणीणं बहूणं सावयाणं बहूणं सावियाणं हीलणिज्जे, सं भाणियव्वो।

हे आयुष्मन् श्रमणो ! इसी प्रकार जो साधु या साध्वी आलसी संस्तारक आदि के विषय में प्रमादी होकर रहता है, वह इसी लोक में ब श्रमणों, बहुत-सी श्रमणियों, बहुत-से श्रावकों और बहुत-सी श्राविकाओं हीलना का पात्र होता है। यावत् वह चिरकाल पर्यन्त संसार-भ्रमण है। इस प्रकार संसार कहना चाहिए।

तए णं ते पंथगवज्जा पंच अणगारसया इमीसे कहाए ल समाणा अन्नमन्नं सद्दावेंति, सद्दावित्ता एवं वयासी–'सेलए रा

यएणं बहिया जाव विहरइ, तं सेयं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं सेलयं
विमंपज्जित्ताणं विहरित्तए ।' एवं संपेहेंति, संपेहित्ता सेलयं रायरिसिं
आसंपज्जित्ता णं विहरंति ।

तत्पश्चात् पंथक को छोड़ कर पाँच सौ अनगारों (अर्थात् ४९९ मुनियों)
[illegible] इस प्रकार
[illegible] हैं, वो हे
[illegible] ।' उन्होंने
[illegible] चरने लगे।

तए णं ते सेलगपामोक्खा पंच अणगारसया बहूणि वासाणि
सामन्नपरियागं पाउणित्ता जेणेव पोंडरीए पव्वए तेणेव उवागच्छंति ।
उवागच्छित्ता जहेव थावच्चापुत्ते तहेव सिद्धा ।

तत्पश्चात् शैलक प्रभृति पाँच सौ मुनि बहुत वर्षों तक संयमपर्याय पाल
कर जहाँ पुंडरीक पर्वत था, वहाँ आये। आकर थावच्चापुत्र की भाँति सिद्ध हुए।

एवामेव समणाउसो ! जो निग्गंथो वा निग्गंथी वा जाव
विहरिस्सइ०, एवं खलु जंबू ! समणेणं भगवया महावीरेणं पंचमस्स
नायज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते त्ति बेमि ॥

इसी प्रकार हे आयुष्मन् श्रमणो ! जो साधु या साध्वी इस तरह विच-
रेगा, वह सिद्धि प्राप्त करेगा। हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर ने पाँचवें
ज्ञाताध्ययन का यह अर्थ फर्माया है। उनके कथनानुसार मैं कहता हूँ।
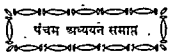
पंचम अध्ययन समाप्त

छठा तुंबक अध्ययन

'जइ णं भंते ! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं पंचमस्स नायज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते, छट्ठस्स णं भंते ! णायज्झयणस्स समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ?'

श्रीजम्बू स्वामी ने सुधर्मा स्वामी से प्रश्न किया—'भगवन् ! यदि श्रमण भगवान् महावीर यावत् सिद्धि को प्राप्त ने पाँचवें ज्ञाताध्ययन का यह अर्थ कहा है, तो हे भगवन् ! छठे ज्ञाताध्ययन का श्रमण भगवान् महावीर यावत् सिद्धि को प्राप्त ने क्या अर्थ कहा है ?

एवं खलु जंबू ! ते णं काले णं ते णं समए णं रायगिहे णामं नयरे होत्था । तत्थ णं रायगिहे णयरे सेणिए नामं राया होत्था । तस्स णं रायगिहस्स बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए एत्थ णं गुण-सिलए नामं चेइए होत्था ।

श्रीसुधर्मा स्वामी ने जम्बू स्वामी के प्रश्न के उत्तर में कहा—हे जम्बू उस काल और उस समय में राजगृह नामक नगर था । उस राजगृह नगर श्रेणिक नामक राजा था । उस राजगृह नगर के बाहर उत्तरपूर्व दिशा में ईशा कोण में गुणशील नामक चैत्य (उद्यान) था ।

ते णं काले णं ते णं समए णं समणे भगवं महावीरे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे जाव जेणेव रायगिहे णयरे जेणेव गुणसिलए चेइए तेणे समोसढे । अहापडिरूवं उग्गहं गिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भा माणे विहरइ । परिसा निग्गया, सेणिओ वि निग्गओ, धम्मो कहिओ परिसा पडिगया ।

उस काल और उस समय में श्रमण भगवान् महावीर अनुक्रम से वि यावत् जहाँ राजगृह नगर था और जहाँ गुणशील चैत्य था, ा योग्य अवग्रह ग्रहण करके संयम और तप से आत्मा को भा विचरने लगे । भगवान् को वन्दना करने के लिए परिषद् निक

श्रेणिक राजा भी निकला। भगवान् ने धर्म कहा। उसे सुनकर परिषद् वापिस चली गई।

ते णं काले णं ते णं समए णं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी इंदभूई नामं अणगारे अदूरसामंते जाव सुक्कज्झाणोवगए विहरइ।

तए णं से इंदभूई जायसड्ढे समणस्स भगवओ महावीरस्स एवं वयासी—'कहं णं भंते! जीवा गुरुयत्तं वा लहुयत्तं वा हव्वमागच्छंति?'

उस काल और उस समय में श्रमण भगवान् महावीर के ज्येष्ठ शिष्य इन्द्रभूति नामक अनगार न अधिक दूर और न अधिक समीप स्थान पर यावत शुक्ल ध्यान में लीन होकर विचर रहे थे।

उस समय, जिन्हें श्रद्धा उत्पन्न हुई है ऐसे इन्द्रभूति अनगार ने श्रमण भगवान् महावीर स्वामी से इस प्रकार कहा—'भगवन्! किस प्रकार जीव शीघ्र ही गुरुता अथवा लघुता को प्राप्त होते हैं?'

'गोयमा! से जहानामए केइ पुरिसे एगं महं सुक्कं तुंबं णिच्छिड्डं निरुवहयं दब्भेहिं कुसेहिं वेढेइ, वेढित्ता मट्टियालेवेणं लिंपइ, उण्हे दलयइ, दलइत्ता सुक्कं समाणं दोच्चं पि दब्भेहि य कुसेहि य वेढेइ, वेढित्ता मट्टियालेवेणं लिंपइ, लिंपित्ता उण्हे सुक्कं समाणं तच्चं पि दब्भेहि य कुसेहि य वेढेइ, वेढित्ता मट्टियालेवेणं लिंपइ। एवं खलु एएणुवाएणं अंतरा वेढेमाणे, अंतरा लिंपेमाणे, अंतरा सुक्कवेमाणे जाव अट्ठहिं मट्टियालेवेहिं आलिंपइ, अत्थाहमतारमपोरिसियंसि उदगंसि पक्खिवेज्जा। से णूणं गोयमा! से तुंबे तेसिं अट्ठण्हं मट्टियालेवेणं गुरुययाए भारिययाए गुरुयभारिययाए उप्पिं सलिलमइवइत्ता अहे धरणियलपइट्ठाणे भवइ।

एवामेव गोयमा! जीवा वि पाणाइवाएणं जाव मिच्छादंसणसल्लेणं अणुपुव्वेणं अट्ठकम्मपगडीओ समज्जिणंति। तासिं गुरुययाए भारिययाए गरुयभारिययाए कालमासे कालं किच्चा धरणियलमइवइत्ता

छठा तुंबक अध्ययन

'जइ णं भंते ! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं नायज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते, छट्ठस्स णं भंते ! णाय- समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ?'

श्रीजम्बू स्वामी ने सुधर्मा स्वामी से प्रश्न किया—'भगवन् ! भगवान् महावीर यावत् सिद्धि को प्राप्त ने पाँचवें ज्ञाताध्ययन कहा है, तो हे भगवन् ! छठे ज्ञाताध्ययन का श्रमण भगवान् सिद्धि को प्राप्त ने क्या अर्थ कहा है ?

एवं खलु जंबू ! ते णं काले णं ते णं समए णं रा- नयरे होत्था । तत्थ णं रायगिहे णयरे सेणिए नामं राया तस्स णं रायगिहस्स बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए ए- सिलए नामं चेइए होत्था ।

श्रीसुधर्मा स्वामी ने जम्बू स्वामी के प्रश्न के उत्तर में क- उस काल और उस समय में राजगृह नामक नगर था । उस रा- श्रेणिक नामक राजा था । उस राजगृह नगर के बाहर उत्तरपूर्व दि- कोण में गुणशील नामक चैत्य (उद्यान) था ।

ते णं काले णं ते णं समए णं समणे भगवं महावीरे चरमाणे जाव जेणेव रायगिहे णयरे जेणेव गुणसिलए समोसढे । अहापडिरूवं उग्गहं गिण्हित्ता संजमेणं तवसा अ- माणे विहरइ । परिसा निग्गया, सेणिओ वि निग्गओ, धम्म- परिसा पडिगया ।

उस काल और उस समय में श्रमण भगवान् महावीर अनु- रते हुए, यावत् जहाँ राजगृह नगर था और जहाँ गुणशील पधारे । यथा योग्य अवग्रह ग्रहण करके संयम और तप से आत्मा- हुए विचरने लगे । भगवान् की वन्दना करने के लिए परिष-

कुछ और ऊपर आ जाता है। इस प्रकार इस उपाय से उन आठों मृतिकालेपों के गोले हो जाने पर यावत् हट जाने पर तूंबा बन्धन मुक्त होकर धरणीतल को लांघ कर ऊपर जल की सतह पर स्थित हो जाता है।

एवामेव गोयमा ! जीवा पाणाइवाय वेरमणेणं जाव मिच्छादंसण-सल्लवेरमणेणं अणुपुव्वेणं अट्ठकम्मपगडीओ खवेत्ता गगणतलमुप्पइत्ता उप्पिं लोयग्गपइट्ठाणा भवंति। एवं खलु गोयमा ! जीवा लहुयत्तं हव्वमागच्छंति।

इसी प्रकार हे गौतम ! प्राणातिपातविरमण यावत् मिथ्यादर्शनशल्य-विरमण से क्रमशः आठ कर्मप्रकृतियों को खपा कर आकाशतल की ओर बढ़ कर लोकाग्र भाग में स्थित हो जाते हैं। इस प्रकार हे गौतम ! जीव शीघ्र लघुत्व को पाते हैं।

एवं खलु जंबू ! समणेणं भगवया महावीरेणं छट्ठस्स नायज्झ-यणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते त्ति बेमि।

श्री सुधर्मास्वामी अध्ययन का उपसंहार करते हुए कहते हैं—' इस प्रकार हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर ने छठे ज्ञाताध्ययन का यह अर्थ कहा है। वही मैं तुमसे कहता हूं।

छठा अध्ययन समाप्त

अहे नरगतलपइट्ठाणा भवंति। एवं खलु गोयमा! जीवा गुरुयत्तं हव्वमागच्छंति।

हे गौतम! यथानामक-कुछ भी नाम वाला, कोई पुरुष एक बड़े, सूखे, छिद्ररहित और अखंडित तूंबे को दर्भ (डाभ) से और कुश (दूब) से लपेटे और फिर मिट्टी के लेप से लीपे फिर धूप में रख दे। सूख जाने पर दूसरी बार दर्भ और कुश से लपेटे और फिर मिट्टी के लेप से लीप दे। लीप कर सूख जाने पर तीसरी बार दर्भ और कुश से लपेटे और लपेट कर [illegible] लेप चढ़ा दे। इसी प्रकार, इसी उपाय से बीच-बीच में दर्भ और कुश लपेटता जाय, बीच-बीच में लेप चढ़ाया जाय और बीच-बीच में [illegible] जाय, यावत् आठ मिट्टी के लेप उस तूंबे पर चढ़ाये। फिर उसे अथाह [illegible] तिरा न जा सके अपौरुषिक (जिसे पुरुष की ऊँचाई से नापा न जा [illegible]) जल में डाल दिया जाय। तो निश्चय ही हे गौतम! वह तूंबा मिट्टी के लेपों के कारण गुरुता को प्राप्त होकर, भारी होकर तथा गुरु एवं [illegible] होकर ऊपर रहे हुए जल को लांघ कर, नीचे धरती के तल भाग में [illegible] जाता है।

इसी प्रकार हे गौतम! जीव भी प्राणातिपात से यावत् मिथ्यादर्शन शल्य से अर्थात् अठारह पापस्थानकों के सेवन से क्रमशः आठ कर्मप्रकृतियों का उपार्जन करते हैं। उन कर्मप्रकृतियों की गुरुता के कारण, भारीपन के [illegible] और गुरुता के भार के कारण, मृत्यु के समय मृत्यु को प्राप्त होकर, इस [illegible] तल को लांघ कर नीचे नरक तल में स्थित होते हैं। इस प्रकार हे गौतम! जीव गुरुत्व को प्राप्त होते हैं।

अह णं गोयमा! से तुंबे तंसि पढमिल्लुगंसि मट्टियाले[illegible] तित्तंसि कुहियंसि परिसडियंसि ईसिं धरणियलाओ उप्पइत्ता[illegible] चिट्ठइ। तयाऽणंतरं च णं दोच्चं पि मट्टियालेवे जाव उप्पइत्ता[illegible] चिट्ठइ। एवं खलु एएणं उवाएणं तेसु अट्ठसु मट्टियालेवेसु ति[illegible] जाव विमुक्कबंधणे अहे धरणियलमइवइत्ता उप्पिं सलिलतल[illegible] ट्ठाणे भवइ।

अब हे गौतम! उस तूंबे का पहला (ऊपर का) मिट्टी का लेप [illegible] हो कर [illegible] और परिशटित (नष्ट) हो जाता है तो वह तूंबा [illegible] कुछ ऊपर [illegible] है। तदनन्तर दूसरा मृत्तिकालेप [illegible]

कुछ और ऊपर आ जाता है। इस प्रकार इस उपाय से उन आठों मृत्तिकालेपों के गीले हो जाने पर यावत् हट जाने पर तूंबा बन्धन मुक्त होकर धरणीतल को लांघ कर ऊपर जल की सतह पर स्थित हो जाता है।

एवामेव गोयमा ! जीवा पाणाइवाय वेरमणेणं जाव मिच्छादंसण-सल्लवेरमणेणं अणुपुव्वेणं अट्ठकम्मपगडीओ खवेत्ता गगणतलमुप्पइत्ता उप्पि लोयग्गपइट्ठाणा भवंति। एवं खलु गोयमा ! जीवा लहुयत्तं हव्वमागच्छंति।

इसी प्रकार हे गौतम ! प्राणातिपातविरमण यावत् मिथ्यादर्शनशल्य-विरमण से क्रमशः आठ कर्मप्रकृतियों को खपा कर आकाशतल की ओर उड़ कर लोकाग्र भाग में स्थित हो जाते हैं। इस प्रकार हे गौतम ! जीव शीघ्र लघुत्व को पाते हैं।

एवं खलु जंबू ! समणेणं भगवया महावीरेणं छट्ठस्स नायज्झ-यणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते त्ति बेमि।

श्री सुधर्मास्वामी अध्ययन का उपसंहार करते हुए कहते हैं—' इस प्रकार हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर ने छठे ज्ञाताध्ययन का यह अर्थ कहा है। वही मैं तुमसे कहता हूं।

छठा अध्ययन समाप्त

सातवाँ रोहिणीज्ञात अध्ययन

जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं छट्ठस्स नायज्झ
अयमट्ठे पण्णत्ते, सत्तमस्स णं भंते ! नायज्झयणस्स के अट्ठे प

श्री जम्बूस्वामी ने सुधर्मास्वामी से प्रश्न किया—भगवन् ! यदि
भगवान् महावीर यावत् निर्वाणप्राप्त ने छठे ज्ञात-अध्ययन का यह
है तो भगवन् ! सातवें ज्ञात-अध्ययन का क्या अर्थ कहा है ?

एवं खलु जंबू ! ते णं काले णं ते णं समएणं रायगिहे न
होत्था । तत्थ णं रायगिहे णयरे सेणिए नामं राया होत्था । तस्स
रायगिहस्स णयरस्स बहिया उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए गुणसि
(सुभूमिभागे) उज्जाणे होत्था ।

तत्थ णं रायगिहे नयरे धण्णे नामं सत्थवाहे परिवसइ अड्ढे जा
अपरिभूए । तस्स णं धण्णस्स सत्थवाहस्स भद्दा नामं भारिया होत्था,
अहीणपंचिंदियसरीरा जाव सुरूवा ।

श्री सुधर्मास्वामी उत्तर देते हैं—इस प्रकार हे जम्बू ! उस काल
उस समय में राजगृह नामक नगर था । उस राजगृह नगर में श्रेणिक ना
राजा था । उस राजगृह नगर के बाहर उत्तरपूर्व दिशा-ईशान कोण में गुण
(सुभूमिभाग) उद्यान था ।

उस राजगृह नगर में धन्य नामक सार्थवाह निवास करता था
समृद्धिशाली था और किसी से पराभूत होने वाला नहीं था । उस धन्य
वाह की भद्रा नामक भार्या थी । उसकी पाँचों इन्द्रियाँ और शरीर के
परिपूर्ण थे, यावत् वह सुन्दर रूप वाली थी ।

तस्स णं धण्णस्स सत्थवाहस्स पुत्ता भद्दाए भारियाए
ारि सत्थवाहदारया होत्था, तंजहा—धणपाले, धणदेवे
े, धणरक्खिए ।

तस्स णं धण्णस्स सत्यवाहस्स चउण्हं पुत्ताणं भारियाओ चत्तारि सुण्हाओ होत्था, तंजहा–उज्झिया, भोगवइया, रक्खिया, रोहिणिया।

उस धन्य सार्थवाह के पुत्र और भद्रा भार्या के आत्मज (उदरजात) चार सार्थवाह पुत्र थे। वे इस प्रकार–धनपाल, धनदेव, धनगोप, धनरक्षित।

उस धन्य सार्थवाह के चार पुत्रों की चार भार्याएँ–सार्थवाह की पुत्रवधुएँ थीं। वे इस प्रकार–उज्झिका, भोगवती, रक्षिका और रोहिणी।

तए णं तस्स धण्णस्स सत्यवाहस्स अन्नया कयाइं पुव्वरत्तावरत्त-कालसमयंसि इमेयारूवे अब्भत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–'एवं खलु अहं रायगिहे णयरे बहूणं राईसर जाव पभिईणं सयस्स कुडुंबस्स बहुसु कज्जेसु य, करणिज्जेसु य, कुडुंबेसु य, मंतणेसु य, गुज्झे रहस्से निच्छए ववहारेसु य आपुच्छणिज्जे, पडिपुच्छणिज्जे, मेढी, पमाणे, आहारे, आलंबणे, चक्खू, मेढीभूए, सव्वकज्जवड्ढावए। तं ण णज्जइ जं मए गयंसि वा, चुयंसि वा, मयंसि वा, भग्गंसि वा, लुग्गंसि वा, सडियंसि वा, पडियंसि वा, विदेसत्थंसि वा, विप्पवसियंसि वा, इमस्स कुडुंबस्स किं मन्ने आहारे वा आलंबे वा पडिबंधे वा भविस्सइ?

तं सेयं खलु मम कल्लं जाव जलंते विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेत्ता मित्तणाइणियगसयण० चउण्हं सुण्हाणं कुलघर-वग्गं आमंतेत्ता तं मित्तणाइणियगसयण० चउण्ह य सुण्हाणं कुलघर-वग्गं विपुलेणं असणपाणखाइमसाइमेणं धूवपुप्फवत्थगंध० जाव सक्कारेत्ता सम्माणेत्ता तस्सेव मित्तणाइ० चउण्ह य सुण्हाणं कुलघरवग्गस्स पुरओ चउण्हं सुण्हाणं परिक्खणट्ठयाए पंच पंच सालिअक्खए दलइत्ता जाणामि ताव का किहं वा सारक्खेइ वा, संगोवेइ वा, संवड्ढेइ वा?

तत्पश्चात् धन्य सार्थवाह को किसी समय, मध्य रात्रि के समय इस प्रकार का अध्यवसाय उत्पन्न हुआ– '[illegible]

मेढ़ीभूत और सब कार्यों की प्रवृत्ति कराने वाला हूँ। अर्थात् राजा आदि सभी श्रेणियों के लोग सब प्रकार के कार्यों में मुझसे सलाह लेते हैं, मैं सब का विश्वासभाजन हूँ। परन्तु न जाने मेरे कहीं दूसरी जगह चले जाने पर, किसी अनाचार के कारण अपने स्थान से च्युत हो जाने पर, मर जाने पर भग्न हो जाने पर अर्थात् वायु आदि के कारण लूला-लंगड़ा कुबड़ा होकर असमर्थ हो जाने पर, रुग्ण हो जाने पर, किसी रोग विशेष से विशीर्ण हो जाने पर, प्रासाद आदि से गिर जाने पर या बीमारी से खाट में पड़ जाने पर, परदेश जाकर रहने पर अथवा घर से निकल कर विदेश जाने लिए प्रवृत्त होने पर कुटुम्ब का पृथ्वी की तरह आधार, रस्सी के समान अवलम्बन और बुहारी की सलाइयों के समान प्रतिबन्ध करने वाला—सब में एकता रखने वाला कौन होगा ?

अतएव मेरे लिए यह उचित होगा कि कल यावत् सूर्योदय होने पर विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम-यह चार प्रकार का आहार तैयार करवा कर मित्र, ज्ञाति, निजक और स्वजन सम्बन्धी आदि को तथा चारों वधुओं के कुलगृह (मैके) के समुदाय को आमंत्रित करके और उन मित्र ज्ञाति निजक स्वजन आदि तथा चारों पुत्रवधुओं के कुलगृह वर्ग का अशन पान खादिम स्वादिम से तथा धूप पुष्प वस्त्र एवं गंध आदि से सत्कार करके सम्मान करके, उन्हीं मित्र ज्ञाति आदि के समक्ष तथा चारों पुत्रवधुओं के कुलगृहवर्ग (मैके के सभी लोगों) के समक्ष, पुत्रवधुओं की परीक्षा करने के लिए पाँच-पाँच शालि-अक्षत (चावल के दाने) दूं। इससे जान सकूँगा कि कौन पुत्रवधू किस प्रकार उनकी रक्षा करती है, सार-सँभाल रखती है या बढ़ाती है ?

एवं संपेहेइ, संपेहित्ता कल्लं जाव मित्तणाइ० चउण्हं सुण्हाणं कुलघरवग्गं आमंतेइ, आमंतित्ता विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेइ।

धन्य सार्थवाह ने इस प्रकार विचार करके दूसरे दिन मित्र, ज्ञाति आदि को तथा चारों पुत्रवधुओं के कुलगृहवर्ग को आमंत्रित किया। आमंत्रित करके विपुल अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य तैयार करवाया।

तओ पच्छा ण्हाए भोयणमंडवंसि सुहासणवरगए मित्तणाइ० चउण्ह य सुण्हाणं कुलघरवग्गेणं सद्धिं तं विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं जाव सक्कारेइ, सम्माणेइ, सक्कारित्ता सम्माणित्ता त

त्तणाइ० चउण्ह य सुण्हाणं कुलघरवग्गस्स पुरओ पंच सालि-
क्खए गेण्हइ, गेण्हित्ता जेट्ठा सुण्हा उज्झियइया तं सद्दावेइ, सद्दावित्ता
वं वयासी–'तुमं णं पुत्ता ! मम हत्थाओ इमे पंच सालिअक्खए
एहाहि, गेण्हित्ता अणुपुव्वेणं सारक्खेमाणी संगोवेमाणी विहराहि ।
या णं अहं पुत्ता ! तुमं इमे पंच सालिअक्खए जाएज्जा, तया णं
मं मम इमे पंच सालिअक्खए पडिदिज्जाएज्जासि' त्ति कट्टु सुण्हाए
त्थे दलयइ, दलइत्ता पडिविसज्जेइ ।

उसके बाद धन्य सार्थवाह ने स्नान किया । वह भोजन मंडप में उत्तम
सुखासन पर बैठा । फिर मित्र, ज्ञाति आदि के तथा चारों पुत्रवधुओं के कुल-
गृहवर्ग के साथ उस विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम का भोजन
करके, यावत् उन सब का सत्कार किया, सन्मान किया; सत्कार-सम्मान करके
उन्हीं मित्रों, ज्ञातिजनों आदि के तथा चारों पुत्रवधुओं के कुलगृहवर्ग के सामने
पाँच चावल के दाने लिये । लेकर जेठी पुत्रवधू उज्झिका को बुलाया । बुलाकर
इस प्रकार कहा–हे पुत्री ! तुम मेरे हाथ से यह पाँच चावल के दाने लो । इन्हें
लेकर अनुक्रम से इनका संरक्षण और संगोपन करती रहो । हे पुत्री ! जब मैं
तुम से यह पाँच चावल के दाने माँगूँ, तब तुम यह पाँच चावल के दाने मुझे
वापिस लौटाना ।' इस प्रकार कह कर पुत्र वधू के हाथ में वह दाने दे दिये ।
देकर उसे विदा किया ।

तए णं सा उज्झिया धण्णस्स तह त्ति एयमट्ठं पडिसुणेइ, पडि-
सुणित्ता धण्णस्स सत्थवाहस्स हत्थाओ ते पंच सालिअक्खए गेण्हइ,
गेण्हित्ता एगंतमवक्कमइ, एगंतमवक्कमियाए इमेयारूवे अज्झत्थिए
जाव समुप्पज्जेत्था:–'एवं खलु तायाणं कोट्ठागारंसि बहवे पल्ला सालीणं
पडिपुण्णा चिट्ठंति, तं जया णं ममं ताओ इमे पंच सालिअक्खए
जाएस्सइ, तया णं अहं पल्लंतराओ अन्ने पंच सालि-अक्खए गहाय
दाहामि' त्ति कट्टु एवं संपेहेइ, संपेहित्ता ते पंच सालि-अक्खए एगंते

मेढ़ीभूत और सब कार्यों की प्रवृत्ति कराने वाला हूं। अर्थात् राजा आदि म श्रेणियों के लोग सब प्रकार के कार्यों में मुझसे सलाह लेते हैं, मैं सब विश्वासभाजन हूं। परन्तु न जाने मेरे कहीं दूसरी जगह चले जाने पर, कि अनाचार के कारण अपने स्थान से च्युत हो जाने पर, मर जाने पर भग्न जाने पर अर्थात् वायु आदि के कारण लूला-लंगड़ा कुबड़ा होकर असमर्थ जाने पर, रुग्ण हो जाने पर, किसी रोग विशेष से विशीर्ण हो जाने पर प्रासाद आदि से गिर जाने पर या बीमारी से खाट में पड़ जाने पर, परदेश जाकर रहने पर अथवा घर से निकल कर विदेश जाने लिए प्रवृत्त होने पर कुटुम्ब का पृथ्वी की तरह आधार, रस्सी के समान अवलम्बन और बुहारू सलाइयों के समान प्रतिबन्ध करने वाला—सब में एकता रखने वा कौन होगा ?

अतएव मेरे लिए यह उचित होगा कि कल यावत् सूर्योदय होने पर विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम-यह चार प्रकार का आहार तैयार करवा कर मित्र, ज्ञाति, निजक और स्वजन सम्बन्धी आदि को तथा चारों वधुओं के कुलगृह (मैके) के समुदाय को आमंत्रित करके और उन मित्र ज्ञाति निजक स्वजन आदि तथा चारों पुत्रवधुओं के कुलगृह वर्ग का अशन पान खादिम स्वादिम से तथा धूप पुष्प वस्त्र एवं गंध आदि से सत्कार करके सम्मान करके, उन्हीं मित्र ज्ञाति आदि के समक्ष तथा चारों पुत्रवधुओं के कुलगृहवर्ग (मैके के सभी लोगों) के समक्ष, पुत्रवधुओं की परीक्षा करने के लिए पाँच-पाँच शालि-अक्षत (चावल के दाने) दूं। इससे जान सकूंगा कि कौन पुत्रवधू किस प्रकार उनकी रक्षा करती है, सार-सँभाल रखती है या बढ़ाती है ?

एवं संपेहेइ, संपेहित्ता कल्लं जाव मित्तणाइ० चउण्हं सुण्हा कुलघरवग्गं आमंतेइ, आमंतित्ता विपुलं असणं पाणं खाइमं सा उवक्खडावेइ।

धन्य सार्थवाह ने इस प्रकार विचार करके दूसरे दिन मित्र, ज्ञाति को तथा चारों पुत्रवधुओं के कुलगृहवर्ग को आमंत्रित किया। आमंत्रित क विपुल अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य तैयार करवाया।

तओ पच्छा ण्हाए भोयणमंडवंसि सुहासणवरगए मित्तणा चउण्ह य सुण्हाणं कुलघरवग्गेणं सद्धिं तं विपुलं असणं पाणं खा साइमं जाव सक्कारेइ, सम्माणेइ, सक्कारित्ता सम्माणित्ता तर

खलु मम एए पंच सालिअक्खए सारक्खमाणीए संगोवेमाणीए संवड्ढेमाणीए' त्ति कट्टु एवं संपेहेइ। संपेहित्ता कुलघरपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी–

'तुब्भे णं देवाणुप्पिया! एए पंच सालिअक्खए गेण्हह, गेण्हित्ता पढमपाउसंसि महावुट्ठिकायंसि निवइयंसि समाणंसि खुड्डागं केयारं सुपरिकम्मियं करेह। करित्ता इमे पंच सालिअक्खए वावेह, वावेत्ता दोच्चं पि तच्चं पि उक्खयनिक्खए करेह, करेत्ता वाडिपक्खेवं करेह, करित्ता सारक्खेमाणा संगोवेमाणा अणुपुव्वेणं संवड्ढेह।'

तत्पश्चात् धान्य सार्थवाह ने उन्हीं मित्रों आदि को समक्ष चौथी पुत्रवधू रोहिणी को बुलाया। बुला कर उसे भी वही कह कर पाँच दाने दिये। यावत् उसने सोचा–इस प्रकार पाँच दाने देने में कोई कारण होना चाहिए। अतएव मेरे लिए उचित है कि इन पाँच चावल के दानों का संरक्षण करूँ, संगोपन करूँ और इनकी वृद्धि करूँ। उसने ऐसा विचार किया। विचार करके अपने कुलगृह के पुरुषों को बुलाया और बुला कर इस प्रकार कहा—

'देवानुप्रियो तुम इन पाँच शालि-अक्षतों को ग्रहण करो। ग्रहण करके पहली वर्षाऋतु में अर्थात् वर्षा के आरंभ में जब खूब वर्षा हो तब एक छोटी-सी क्यारी को अच्छी तरह साफ करना। साफ करके यह पाँच शालि-अक्षत बो देना। बोकर दूसरी बार और तीसरी बार उत्क्षेप-निक्षेप करना, अर्थात् एक जगह से उखाड़ कर दूसरी जगह रोपना। फिर क्यारी के चारों ओर बाड़ लगाना। इनकी रक्षा और संगोपना करते हुए अनुक्रम से बढ़ाना।

तए णं ते कोडुंबिया रोहिणीए एयमट्ठं पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता ते पंच सालि-अक्खए गेण्हंति, गेण्हित्ता अणुपुव्वेणं संरक्खंति, संगोवेंति विहरंति।

तए णं ते कोडुंबिया पढमपाउसंसि महावुट्ठिकायंसि णिवइयंसि समाणंसि खुड्डायं केयारं सुपरिकम्मियं करेंति, करित्ता ते पंच सालि-अक्खए ववेंति, ववित्ता दोच्चं पि तच्चं पि उक्खयनिक्खए करेंति,

ग्रहण करके एकान्त में गई। वहाँ जाकर उसे इस प्रकार का विचार उत्पन्न हुआ-'इस प्रकार निश्चय ही पिता (श्वसुर) के कोठार में शालि से भरे हुए बहुत से पल्य विद्यमान हैं। सो जब पिता मुझसे यह पाँच शालिअक्षत माँगेंगे, तब मैं दूसरे पल्य से दूसरे शालि-अक्षत लेकर दे दूंगी।' उसने ऐसा विचार किया। विचार करके उसने उन पाँच चावल के दानों को एकान्त में डाल दिया और डाल कर अपने काम में लग गई।

एवं भोगवईयाए वि, णवरं सा छोल्लेइ, छोल्लित्ता अणुगिलइ, अणुगिलित्ता सकम्मसंजुत्ता जाया। एवं रक्खियाए वि, णवरं गेण्हित्ता इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था-एवं खलु ममं इमस्स मित्तनाइ० चउण्ह सुण्हाणं कुलघरवग्गस्स य पुरओ सद्दावेत्ता एवं वयासी-'तुमं णं पुत्ता! मम हत्थाओ जाव पडिदिज्जाएज्जासि' त्ति कट्टु मम हत्थंसि पंच सालिअक्खए दलयइ, तं भवियव्वं एत्थ कारणेणं' ति कट्टु एवं संपेहेइ, संपेहित्ता ते पंच सालिअक्खए सुद्धे वत्थे बंधइ, बंधित्ता रयणकरंडियाए पक्खिवेइ, पक्खिवित्ता ऊसीसामूले ठावेइ, ठावित्ता तिसंझं पडिजागरमाणी विहरइ।

इसी प्रकार दूसरी पुत्रवधू भोगवती को भी बुलाकर पाँच दाने दिये, इत्यादि। विशेष यह है कि उसने यह दाने छीले और छील कर निगल गई। निगल कर अपने काम में लग गई।

इसी प्रकार रक्षिका के विषय में जानना चाहिए। विशेषता यह है कि उसने यह दाने लिये। लेने पर उसे यह विचार उत्पन्न हुआ कि-मेरे पिता (श्वसुर) ने मित्र ज्ञाति आदि के तथा चारों बहुओं के कुलगृहवर्ग के सामने मुझे बुला कर यह कहा है कि-'पुत्री! तुम मेरे हाथ से यह पाँच दाने लो, यावत् जब मैं माँगूँ तो लौटा देना, यह कह कर मेरे हाथ में पाँच दाने दिये हैं, तो यहाँ कोई कारण होना चाहिए।' उसने इस प्रकार विचार किया। विचार करके वह चावल के पाँच दाने शुद्ध वस्त्र में बाँधे। बाँध कर रत्नों की डिबिया में रख लिये। रख कर सिरहाने के नीचे स्थापित किये। स्थापित करके तीनों संध्याओं के समय उनकी सारसँभाल करती हुई रहने लगी।

तए णं से धण्णे सत्थवाहे तस्सेव मित्त० जाव चउत्थिं रोहिणीयं सद्दावेइ। सद्दावेत्ता जाव 'तं भवियव्वं एत्थ कारणेणं, तं सेयं

लु मम एए पंच सालिअक्खए सारक्खमाणीए संगोवेमाणीए वड्ढेमाणीए' त्ति कट्टु एवं संपेहेइ। संपेहित्ता कुलघरपुरिसे सद्दा-इ, सद्दावेत्ता एवं वयासी—

'तुब्भे णं देवाणुप्पिया ! एए पंच सालिअक्खए गेण्हह, गेण्हित्ता मपाउसंसि महावुट्ठिकायंसि निवइयंसि समाणंसि खुड्डागं केयारं परिकम्मियं करेह। करित्ता इमे पंच सालिअक्खए वावेह, वावेत्ता च्चं पि तच्चं पि उक्खयनिक्खए करेह, करेत्ता वाडिपक्खेवं करेह, रित्ता सारक्खेमाणा संगोवेमाणा अणुपुव्वेणं संवड्ढेह।'

तत्पश्चात् धान्य सार्थवाह ने उन्हीं मित्रों आदि को समक्ष चौथी पुत्रवधू हिणी को बुलाया। बुला कर उसे भी वही कह कर पाँच दाने दिये। यावत् मने सोचा—इस प्रकार पाँच दाने देने में कोई कारण होना चाहिए। अतएव रे लिए उचित है कि इन पाँच चावल के दानों का संरक्षण करूँ, संगोपन रूँ और इनकी वृद्धि करूँ। उसने ऐसा विचार किया। विचार करके अपने लगृह के पुरुषों को बुलाया और बुला कर इस प्रकार कहा—

'देवानुप्रियो! तुम इन पाँच शालि-अक्षतों को ग्रहण करो। ग्रहण करके हली वर्षाऋतु में अर्थात् वर्षा के आरंभ में जब खूब वर्षा हो तब एक छोटी-सी यारी को अच्छी तरह साफ करना। साफ करके यह पाँच शालि-अक्षत बो ना। बोकर दूसरी बार और तीसरी बार उत्क्षेप-निक्षेप करना, अर्थात् एक गह से उखाड़ कर दूसरी जगह रोपना। फिर क्यारी के चारों ओर बाड़ गाना। इनकी रक्षा और संगोपना करते हुए अनुक्रम से बढ़ाना।

तए णं ते कोडुंबिया रोहिणीए एयमट्ठं पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता ते पंच सालि-अक्खए गेण्हंति, गेण्हित्ता अणुपुव्वेणं संरक्खंति, संगो-वेंति विहरंति।

तए णं ते कोडुंबिया पढमपाउसंसि महावुट्ठिकायंसि निवइयंसि समाणंसि खुड्डागं केयारं सुपरिकम्मियं करेंति, करित्ता ते पंच सालि-अक्खए ववंति, ववित्ता दोच्चं पि तच्चं पि उक्खयनिक्खए करेंति,

ग्रहण करके एकान्त में गई। वहाँ जाकर उसे इस प्रकार का विचार
हुआ-'इस प्रकार निश्चय ही पिता (श्वसुर) के कोठार में शालि से भरे हुए
से पल्य विद्यमान हैं। सो जब पिता मुझसे यह पाँच शालिअक्षत माँगें
में दूसरे पल्य से दूसरे शालि-अक्षत लेकर दे दूँगी।' उसने ऐसा विचार
विचार करके उसने उन पाँच चावल के दानों को एकान्त में डाल दिया
डाल कर अपने काम में लग गई।

एवं भोगवईयाए वि, णवरं सा छोल्लेइ, छोल्लित्ता अणु
अणुगिलित्ता सकम्मसंजुत्ता जाया। एवं रक्खिया वि, णवरं
गेण्हित्ता इमेयारूवे अब्भत्थिए जाव समुप्पज्जित्था-एवं खलु ममं
इमस्स मित्तनाइ० चउण्ह सुण्हाणं कुलघरवग्गस्स य पुरओ म
एवं वयासी-'तुमं णं पुत्ता! मम हत्थाओ जाव पडिदिज्जाए
त्ति कट्टु मम हत्थंसि पंच सालिअक्खए दलयइ, तं भविय
कारणेणं' ति कट्टु एवं संपेहेइ, संपेहित्ता ते पंच सालिअक्ख
वत्थे बंधइ, बंधित्ता रयणकरंडियाए पक्खिवेइ, पक्खिवित्ता उ
मूले ठावेइ, ठावित्ता तिसंझं पडिजागरमाणी विहरइ।

इसी प्रकार दूसरी पुत्रवधू भोगवती को भी बुलाकर पाँच
इत्यादि। विशेष यह है कि उसने वह दाने छीले और छील कर नि
निगल कर अपने काम में लग गई।

इसी प्रकार रक्षिका के विषय में जानना चाहिए। विशेषता य
उसने वह दाने लिये। लेने पर उसे यह विचार उत्पन्न हुआ कि-
(श्वसुर) ने मित्र ज्ञाति आदि के तथा चारों बहुओं के कुलगृहवर्ग
मुझे बुला कर यह कहा है कि-'पुत्री! तुम मेरे हाथ से यह पाँच
चावल जब मैं माँगूँ तो लौटा देना, यह कह कर मेरे हाथ में पाँच दा
तो यहाँ कोई कारण होना चाहिए।' उसने इस प्रकार विचार किया
करके वह चावल के पाँच दाने शुद्ध वस्त्र में बाँधे। बाँध कर रत्नों क
में रख लिये। रख कर सिरहाने के नीचे स्थापित किये। स्थापित क
संध्याओं के समय उनकी सारसँभाल करती हुई रहने लगी।

तए णं से धण्णे सत्थवाहे तस्सेव मित्त० जाव चउत्थिं
सद्दावेइ। सद्दावेत्ता जाव 'तं भवियव्वं एत्थ कारणेणं

बढ़वाई हो ऐसे) हँसियों (दात्रों) से काटे। काट कर उनका हथेलियों से मर्दन किया। मर्दन करके साफ किया। इससे वे चोखे-निर्मल, शुचि-पवित्र, अखंड और अस्फोटित-बिना टूटे-फूटे और सूप से भटक-भटक कर साफ किये हुए हो गये। वे मगधदेश में प्रसिद्ध एक प्रस्थक प्रमाण हो गये।

तए णं ते कोडुंबिया ते साली नवएसु घडएसु पक्खिवंति, पक्खिवित्ता उवलिंपंति, उवलिंपित्ता लंछियमुद्दिए करेंति, करित्ता कोट्ठागारस्स एगदेसंसि ठावेंति, ठावित्ता सारक्खेमाणा संगोवेमाणा विहरंति।

तत्पश्चात् कौटुम्बिक पुरुषों ने उन प्रस्थ प्रमाण शालि-अक्षतों को नवीन घड़े में भरा। भर कर उसके मुख पर मिट्टी का लेप कर दिया। लेप करके उसे लांछित-मुद्रित किया-उस पर सील लगा दी। फिर उसे कोठार के एक भाग में रख दिया। रख कर उसका रक्षण और संगोपन करते हुए विचरने लगे।

तए णं ते कोडुंबिया दोच्चम्मि वासारत्तंसि पढमपाउसंसि महावुट्ठिकायंसि निवइयंसि खुड्डागं केयारं सुपरिकम्मियं करेंति, करित्ता ते सालि वयंति, दोच्चं पि तच्चं पि उक्खयनिक्खए जाव लुणेंति जाव चलणतलमलिए करेंति, करित्ता पुणंति, तत्थ णं सालीणं बहवे कुडए जाए। जाव एगदेसंसि ठावेंति, ठावित्ता सारक्खेमाणा संगोवेमाणा विहरंति।

तत्पश्चात् उन कौटुम्बिक पुरुषों ने दूसरी वर्षाऋतु में, वर्षाकाल के प्रारंभ में महावृष्टि पड़ने पर एक छोटी क्यारी को साफ किया। साफ करके वे शालि बो दिये। दूसरी बार और तीसरी बार उनका उत्क्षेप-निक्षेप किया, यावत् लुनाई की-उन्हें काटा। यावत् पैरों के तलुवों से उनका मर्दन किया, उन्हें साफ किया। अब शालि के बहुत-से कुडव हो गये। यावत् उन्हें कोठार के एक भाग में रख दिया। कोठार में रख कर उनका संरक्षण और संगोपन करते हुए विचरने लगे।

तए णं ते कोडुंबिया तच्चंसि वासारत्तंसि महावुट्ठिकायंसि बहवे

केयारे सुपरिकम्मिए करेंति, जाव लुणेंति, लुणित्ता संवहंति, संवहित्ता खलयं करेंति, करित्ता मलेंति, जाव बहवे कुंभा जाया।

तए णं ते कोडुंबिया माली कोट्ठागारंसि पक्खिवंति, जाव विहरंति। चउत्थे वासारत्ते बहवे कुंभसया जाया।

तत्पश्चात् उन कौटुम्बिक पुरुषों ने तीसरी वर्षाऋतु में, महावृष्टि होने पर बहुत-सी क्यारियाँ अच्छी तरह साफ कीं। यावत् उन्हें बोकर काट लिया। काटकर भारा बाँध कर वहन किया। वहन करके खलिहान में रक्खा। मर्दन किया। यावत् बहुत-से कुम्भ प्रमाण शालि हो गये।

तत्पश्चात् उन कौटुम्बिक पुरुषों ने वह शालि कोठार में रक्खे, उनकी रक्षा करने लगे। चौथी वर्षाऋतु में इसी प्रकार करने से सैकड़ों कुम्भ प्रमाण शालि हो गये।

तए णं तस्स धण्णस्स पंचमयंसि संवच्छरंसि परिणममाणंसि पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि इमेयारूवे अब्भत्थिए जाव समुप्पज्जित्था— एवं खलु मम इओ अईए पंचमे संवच्छरे चउण्हं सुण्हाणं परिक्खणट्ठयाए ते पंच सालिअक्खया हत्थे दिन्ना, तं सेयं खलु मम कल्लं जाव जलंते पंच सालिअक्खए परिजाइत्तए। जाव जाणामि ताव काए किहं सारक्खिया वा संगोविया वा संवड्ढिया वा? जाव त्ति कट्टु एवं संपेहेइ, संपेहित्ता कल्लं जाव जलंते विपुलं असणं पाणं खाइमं ... मित्तणाइ० चउण्ह य सुण्हाणं कुलघरवग्गं जाव सम्माणित्ता ... मित्तणाइ० चउण्ह य सुण्हाणं कुलघरवग्गस्स पुरओ जेट्ठं ... सद्दावेइ। सद्दावित्ता एवं वयासी—

तत्पश्चात् जब पाँचवाँ वर्ष चल रहा था, तब धन्य सार्थवाह ... रात्रि के समय में इस प्रकार का विचार यावत् उत्पन्न हुआ:—

मैंने इससे पहले के—अतीत, पाँचवें वर्ष में चारों पुत्रवधुओं की ... करने के निमित्त, यह पाँच चावल के दाने हाथ में दिये थे। तो कल याव... -दय होने पर पाँच चावल के दाने माँगना मेरे लिए-उचित होगा। याव... कि किसने किस प्रकार उनका संरक्षण, संगोपन और संवर्धन कि... सार्थवाह ने इस प्रकार विचार किया। विचार करके दूसरे दिन ...

होने पर विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम बनवाया। मित्रों ज्ञातिजनों आदि को तथा चारों पुत्रवधुओं के कुलगृहवर्ग को आमंत्रित यावत् सम्मानित करके उन्हीं मित्रों, ज्ञातिजनों आदि तथा चारों पुत्रवधुओं के कुलगृहवर्ग के समक्ष, जेठी पुत्रवधू उज्झिका को बुलाया और बुला कर इस प्रकार कहाः—

'एवं खलु अहं पुत्ता! इओ अईए पंचमंसि संवच्छरंसि इमस्स मित्तणाइ० चउण्ह सुण्हाणं कुलघरवग्गस्स य पुरओ तव हत्थंसि पंच मे, जया णं अहं पुत्ता! एए पंच सालिअक्खए मम इमे पंच सालिअक्खए पडिदिज्जाएसि त्ति कट्टु तं हत्थंसि दलयामि, से नूणं पुत्ता! अट्ठे समट्ठे?'

'हंता, अत्थि।'

'तं णं पुत्ता! मम ते सालिअक्खए पडिनिज्जाएहि।'

हे पुत्री! इससे अतीत पांचवें संवत्सर में इन्हीं मित्रों, ज्ञातिजनों आदि तथा चारों पुत्रवधुओं के कुलगृहवर्ग के समक्ष मैंने तुम्हारे हाथ में पांच शालि-अक्षत दिये थे, और यह कहा था कि हे पुत्री! जब मैं यह पांच शालिअक्षत मांगूं, तब तुम मेरे यह पांच शालि-अक्षत मुझे वापिस सौंपना। तो यह अर्थ समर्थ है-यह बात सत्य है?'

उज्झिका ने कहा-'हां, सत्य है।'

धन्य सार्थवाह बोले-'तो हे पुत्री! मेरे यह शालिअक्षत वापिस दो।'

तए णं सा उज्झिया एयमट्ठं धण्णस्स पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता जेणेव कोट्ठागारं तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पल्लाओ पंच सालि-अक्खए गेण्हइ, गेण्हित्ता जेणेव धण्णे सत्थवाहे तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता धण्णं सत्थवाहं एवं वयासी-'एए णं ते पंच सालि-अक्खए' त्ति कट्टु धण्णस्स सत्थवाहस्स हत्थंसि ते पंच सालिअक्खए दलयइ।

तत्पश्चात् उज्झिका ने धन्य सार्थवाह की यह बात स्वीकार की। स्वीकार
करके जहां कोठार था वहां पहुंची। पहुँच कर पल्य में से पांच शालि
ग्रहण किये और ग्रहण करके धन्य सार्थवाह के समीप आकर बोली-
यह पांच शालिअक्षत।' यों कह कर धन्य सार्थवाह के हाथ में पांच शालि
दाने दिये।

तब धन्य सार्थवाह ने उज्झिका को सौगंद दिलाई और कहा-
क्या वही ये शालि के दाने हैं अथवा ये दूसरे हैं?'

तए णं उज्झिया धण्णं सत्थवाहं एवं वयासी-'एवं खलु
ताओ! इओ अईए पंचमे संवच्छरे इमस्स मित्तणाइ० च
गुण्हाणं कुलघरवग्गस्स जाव विहराहि। तए णं अहं तुब्भे
पडिसुणेमि। पडिसुणित्ता ते पंच सालिअक्खए गेण्हामि,
मवक्कमामि। तए णं मम इमेयारूवे अब्भत्थिए जाव समुप्प
एवं खलु तायाणं कोट्ठागारंसि० सकम्मसंजुत्ता। तं णो खलु
ते चेव पंच सालिअक्खए, एए णं अन्ने।'

तत्पश्चात् उज्झिका ने धन्य सार्थवाह से इस प्रकार कहा-हे ता
पहले के पांचवें वर्ष में इन मित्रों एवं ज्ञातिजनों के तथा चारों पुत्र
कुलगृहवर्ग के सामने पांच दाने देकर आपने उनका संरक्षण संगोपन
धन करती हुई विचरना, ऐसा कहा था। उस समय मैंने आपकी बात
की। स्वीकार करके वह पांच शालि के दाने ग्रहण किये और एकान्त
गई। तब मुझे इस तरह का विचार उत्पन्न हुआ कि-पिताजी के कोठा
में शालि भरे हैं, जब मांगेंगे तो दे दूँगी। ऐसा विचार कर मैंने वह
दिये और अपने काम में लग गई। अतएव हे तात! ये वही शालि
नहीं हैं। यह दूसरे हैं।'

तए णं से धण्णे उज्झियाए अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म
रुट्ठे जाव मिसिमिसेमाणे उज्झियं तस्स मित्तनाइ० चउण्ह
सुण्हाणं कुलघरवग्गस्स य पुरओ तस्स कुलघरस्स छारुज्झियं च
च कयवरुज्झियं च समुच्छियं च सम्मज्जियं च पाउवदाइं च
ण्हाणोवदाइं च बाहिरपेसणकारिं ठवेइ।

तत्पश्चात् धन्य सार्थवाह उज्झिका के पास से यह अर्थ सुन कर और हृदय में धारण करके क्रुद्ध हुए। यावत् क्रोध में आकर मिसमिसाने लगे। उन्होंने उज्झिका को उन मित्रों, ज्ञातिजनों आदि के तथा चारों पुत्रवधुओं के कुलगृहवर्ग के सामने अपने कुलगृह की राख फेंकने वाली, छाणे डालने या थापने वाली, कचरा झाड़ने वाली, पैर धोने का पानी देने वाली, स्नान के लिए पानी देने वाली और बाहर के दासी के कार्य करने वाली नियुक्त की।

एवामेव समणाउसो ! जो अम्हं निग्गंथो वा निग्गंथी वा जाव पव्वइए पंच य से महव्वयाइं उज्झियाइं भवंति, से णं इह भवे चेव बहूणं समणाणं, बहूणं समणीणं, बहूणं सावयाणं, बहूणं सावियाणं हीलणिज्जे जाव अणुपरियट्टइस्सइ। जहा सा उज्झिया।

इसी प्रकार हे आयुष्मन् श्रमणो ! जो हमारा साधु और साध्वी यावत् प्रव्रज्या लेकर पांच (दानों के समान पांच) महाव्रतों का परित्याग कर देता है, वह उज्झिका की तरह इसी भव में बहुत से श्रमणों, बहुत-सी श्रमणियों, बहुत से श्रावकों और बहुत-सी श्राविकाओं की अवहेलना का पात्र बनता है, यावत् अनन्त संसार में पर्यटन करेगा।

एवं भोगवइया वि। नवरं तस्स कुलघरस्स कंडंतियं कोट्टंतियं पीसंतियं च एवं रुच्चंतियं च रंधंतियं च परिवेसंतियं च परिभायंतियं च अब्भिंतरियं च पेसणकारिं महाणसिणिं ठवेइ।

इसी प्रकार भोगवती के विषय में जानना चाहिए। विशेषता यह है कि (वह पांचों दाने खा गई थी, अतएव उसे) खांड़ने वाली, कूटने वाली, पीसने वाली, चक्की में दल कर धान्य के छिलके उतारने वाली, रांधने वाली, परोसने वाली, त्यौहारों के प्रसंग पर स्वजनों के घर जाकर ल्हावणी बांटने वाली, घर में भीतर की दासी का काम करने वाली एवं रसोईदारिन का कार्य करने वाली के रूप में नियुक्त किया।

एवामेव समणाउसो ! जो अम्हं समणो वा समणी वा पंच य से महव्वयाइं फोडियाइं भवंति, से णं इह भवे चेव बहूणं समणाणं बहूणं

इसी प्रकार हे आयुष्मन् श्रमणो ! हमारा जो साधु अथवा साध्वी महाव्रतों को फोड़ने वाला अर्थात् रसनेन्द्रिय के वशीभूत होकर नष्ट करने वाला होता है, वह इसी भव में बहुत-से साधुओं, बहुत-सी साध्वियों, बहुत श्रावकों और बहुत-सी श्राविकाओं की अवहेलना का पात्र बनता है, जैसे भोगवती।

एवं रक्खिया वि। नवरं जेणेव वासघरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता मंजूसं विहाडेइ, विहाडित्ता रयणकरंडगाओ ते पंच सालिअक्खए गेण्हइ, गेण्हित्ता जेणेव धण्णे सत्थवाहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पंच सालिअक्खए धण्णस्स सत्थवाहस्स हत्थे दलयइ।

इसी प्रकार रक्षिका के विषय में जानना चाहिए। विशेष बात यह है कि- (पांच दाने मांगने पर) वह जहां उसका निवासगृह था वहां आई। आकर उसने मंजूषा खोली। खोल कर रत्न की डिबिया में से वह पांच शालि के दाने ग्रहण किये। ग्रहण करके जहां धन्य सार्थवाह था, वहां आई। आकर धन्य सार्थवाह के हाथ में वह शालि के पांच दाने दे दिये।

तए णं से धण्णे सत्थवाहे रक्खियं एवं वयासी-'किं णं पुत्ता! ते चेव एए पंच सालिअक्खए, उदाहु अण्णे?' त्ति। तए णं रक्खिया धण्णं सत्थवाहं एवं वयासी-'ते चेव ताया! एए पंच सालिअक्खया, णो अन्ने।'

'कहं णं पुत्ता?'

'एवं खलु ताओ! तुब्भे इओ पंचमम्मि संवच्छरे जाव भवियव्वं एत्थ कारणेणं ति कट्टु, ते पंच सालिअक्खए सुद्धे वत्थे जाव तिसंझं पडिजागरमाणी यावि विहरामि। तओ एएणं कारणेणं ताओ! ते चेव ते पंच सालिअक्खए, णो अन्ने।

तत्पश्चात् धन्य सार्थवाह ने रक्षिका से इस प्रकार कहा-हे पुत्री! क्या यह वही पांच शालि-अक्षत हैं या दूसरे हैं?' तब रक्षिका ने धन्य सार्थवाह से ऐसा कहा-'तात! यह वही शालिअक्षत हैं, दूसरे नहीं हैं।'

धन्य ने पूछा-'पुत्री! कैसे?'

रक्षिका बोली-'तात ! आपने इससे अतीत पांचवें वर्ष में शालि के पांच दाने दिये थे। तब मैं ने विचार किया कि इसमें कोई कारण होना चाहिए। ऐसा विचार करके इन पांच शालि के दानों को शुद्ध वस्त्र में बांधा, यावत् तीनों संध्याओं में सार-संभाल करती हुई विचरती हूं। अतएव इस कारण से, हे तात ! यह वही शालि के दाने हैं, दूसरे नहीं हैं।

तए णं से धण्णे सत्थवाहे रक्खियाए अंतिए एयमट्ठं सोच्चा हट्ठतुट्ठ० तस्स कुलघरस्स हिरन्नस्स य कंसदूसविपुलधण जाव सावएज्जस्स य भंडागारिणिं ठवेइ।

तत्पश्चात् धन्य सार्थवाह रक्षिका के पास से यह अर्थ सुन कर हर्षित और संतुष्ट हुआ। उसे अपने घर के हिरण्य की (आभूषणों की), कांसा आदि बर्तनों की, दूष्य-रेशमी वस्त्रों की, विपुल धन, धान्य, कनक, मुक्ता आदि स्वापतेय की भाण्डागारिणी (भंडारी) के रूप में नियुक्त कर दिया।

एवामेव समणाउसो ! जाव पंच य से महव्वयाइं रक्खियाइं भवंति, से णं इह भवे चेव बहूणं समणाणं, बहूणं समणीणं बहूणं सावयाणं बहूणं सावियाणं अच्चणिज्जे, जहा जाव से रक्खिया।

इसी प्रकार हे आयुष्मन् श्रमणो ! यावत् हमारा जो साधु या साध्वी पांच महाव्रतों की रक्षा करता है, वह इसी भव में बहुत-से साधुओं, बहुत-सी साध्वियों, बहुत-से श्रावकों और बहुत-सी श्राविकाओं का अर्चनीय (पूज्य) होता है, जैसे वह रक्षिका।

रोहिणिया वि एवं चेव। नवरं-'तुब्भे ताओ ! मम सुबहुयं सगडीसागडं दलाहि, जेण अहं तुब्भं ते पंच सालिअक्खए पडिनिज्जाएमि।'

तए णं से धण्णे सत्थवाहे रोहिणिं एवं वयासी-'कहं णं तुमं मम पुत्ता ! ते पंच सालिअक्खए सगडसागडेणं निज्जाइस्ससि ?'

तए णं सा रोहिणी धण्णं सत्थवाहं एवं वयासी-'एवं खलु ताओ ! इओ तुब्भे पंचमे संवच्छरे इमस्स मित्त जाव बहवे कुंभसया जाया, तेणेव कमेणं। एवं खलु ताओ ! तुब्भे ते पंच सालिअक्खए सगडसागडेणं निज्जाएमि।

इसी प्रकार हे आयुष्मन् श्रमणो ! हमारा जो साधु अथवा साध्वी महाव्रतों को फोड़ने वाला अर्थात् रसनेन्द्रिय के वशीभूत होकर नष्ट करने वाला होता है, वह इसी भव में बहुत-से साधुओं, बहुत-सी साध्वियों, बहुत-से श्रावकों और बहुत-सी श्राविकाओं की अवहेलना का पात्र बनता है, जैसे भोगवती।

एवं रक्खिया वि। नवरं जेणेव वासघरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता मंजूसं विहाडेइ, विहाडित्ता रयणकरंडगाओ ते पंच सालिअक्खए गेण्हइ, गेण्हित्ता जेणेव धण्णे सत्थवाहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पंच सालिअक्खए धण्णस्स सत्थवाहस्स हत्थे दलयइ।

इसी प्रकार रक्षिका के विषय में जानना चाहिए। विशेष बात यह कि- (पांच दाने मांगने पर) वह जहां उसका निवासगृह था वहां आई। आकर उसने मंजूषा खोली। खोल कर रत्न की डिबिया में से वह पांच शालि के दाने ग्रहण किये। ग्रहण करके जहां धन्य सार्थवाह था, वहां आई। आकर धन्य सार्थवाह के हाथ में वह शालि के पांच दाने दे दिये।

तए णं से धण्णे सत्थवाहे रक्खियं एवं वयासी-'किं णं पुत्ता! ते चेव एए पंच सालिअक्खए, उदाहु अण्णे?' त्ति। तए णं रक्खिया धण्णं सत्थवाहं एवं वयासी-'ते चेव ताया! एए पंच सालिअक्खया, णो अण्णे।'

'कहं णं पुत्ता?'

'एवं खलु ताओ! तुब्भे इओ पंचमम्मि संवच्छरे जाव भविस्सइ एत्थ कारणेणं ति कट्टु ते पंच सालिअक्खए सुद्धे वत्थे जाव तिसंझं पडिजागरमाणी यावि विहरामि। तओ एएणं कारणेणं ताओ! ते चेव ते पंच सालिअक्खए, णो अण्णे।

तत्पश्चात् धन्य सार्थवाह ने रक्षिका से इस प्रकार कहा-हे पुत्री! क्या यह वही पांच शालि[illegible] या दूसरे हैं?' तब रक्षिका ने धन्य सार्थवाह [illegible] अक्षत हैं, दूसरे नहीं ''

[illegible] से?'

त्तनाइ० चउण्ह य सुण्हाणं कुलघरवग्गस्स पुरओ रोहिणीयं सुण्हं स्स कुलघरवग्गस्स बहुसु कज्जेसु य जाव रहस्सेसु य आपुच्छणिज्जं ात्र वट्टावियं पमाणभूयं ठावेइ ।

तत्पश्चात् धन्य सार्थवाह उन पांच शालि के दानों को छकड़ा-छकड़ियों ारा लौटाये देखता है। देखकर हृष्ट और तुष्ट होकर उन्हें स्वीकार करता है। ीकार करके उसने उन्हीं मित्रों एवं ज्ञातिजनों आदि के तथा चारों पुत्रवधुओं कुलगृहवर्ग के समक्ष रोहिणी पुत्रवधू को, उस कुलगृहवर्ग के अनेक कार्यों में ावत् रहस्यों में पूछने योग्य यावत् गृह का कार्य चलाने वाली और प्रमाणभूत नियुक्त किया।

एवामेव समणाउसो ! जाव पंच महव्वया संवड्ढिया भवंति, से गं इह भवे चेव बहूणं समणाणं जाव वीईवइस्सइ जहा व सा रोहिणीया

इसी प्रकार हे आयुष्मन् श्रमणो ! जो साधु-साध्वी अपने पाँच महाव्रतों ो बढ़ाते हैं, वे इसी भव में बहुत से श्रमणों आदि के पूज्य होकर यावत् संसार ं मुक्त हो जाते हैं। जैसे वह रोहिणी।

एवं खलु जंबू ! समणेणं भगवया महावीरेणं सत्तमस्स नायज्झ-यणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते त्ति बेमि ।

इस प्रकार हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर ने सातवें ज्ञाताध्ययन का ह अर्थ कहा है। वही मैंने तुमसे कहा है।
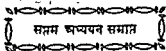
सप्तम अध्ययन समाप्त

उस वीतशोका राजधानी के उत्तरपूर्व (ईशान) दिशा के भाग में इन्द्र-कुम्भ नामक उद्यान था।

उस वीतशोका राजधानी में बल नामक राजा था। उस बल राजा के अन्तःपुर में धारिणी प्रभृति एक हजार देवियाँ (रानियाँ) थीं।

तए णं सा धारिणी देवी अन्नया कयाइ सीहं सुमिणे पासित्ता णं पडिबुद्धा जाव महब्बले नामं दारए जाए, उम्मुक्क जाव भोग-समत्थे। तए णं तं महब्बलं अम्मापियरो सरिसियाणं कमलसिरी-पामोक्खाणं पंचण्हं रायवरकन्नासयाणं एगदिवसेणं पाणिं गेण्हावेंति पंच पासायसया पंचसओ दाओ जाव विहरइ।

तत्पश्चात् वह धारिणी देवी किसी समय स्वप्न में सिंह को देख कर जागृत हुई। यावत् यथा समय महाबल नामक पुत्र का जन्म हुआ। वह बालक क्रमशः बाल्यावस्था को त्याग कर भोग भोगने में समर्थ हो गया। तब माता-पिता ने समान रूप वय वाली कमलश्री आदि पाँच सौ श्रेष्ठ राजकुमारियों के साथ, एक ही दिन में, महाबल का पाणिग्रहण कराया। पाँच सौ प्रासाद आदि पांच-पांच सौ का दहेज दिया। यावत् महाबल कुमार मनुष्य संबंधी कामभोग भोगता हुआ विचरने लगा।

तेणं कालेणं तेणं समएणं धम्मघोसा नाम थेरा पंचहिं अणगारसएहिं सद्धिं संपरिवुडे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे, गामाणुगामं दूइज्जमाणे, सुहंसुहेणं विहरमाणे जेणेव इंदकुंभे नामं उज्जाणे तेणेव समो-सढे, संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरंति।

उस काल और उस समय में धर्मघोष नामक स्थविर पांच सौ शिष्य अनगारों के साथ परिवृत होकर अनुक्रम से विचरते हुए, एक ग्राम से दूसरे ग्राम गमन करते हुए, सुखे-सुखे विहार करते हुए जहां इन्द्रकुम्भ नाम उद्यान था, वहां पधारे और संयम एवं तप से आत्मा को भावित करते हुए रहे।

परिसा निग्गया, बलो वि राया निग्गओ, धम्मं सोच्चा णिसम्म जं नवरं महब्बलं कुमारं रज्जे ठावेइ, ठावित्ता सयमेव बले राया थेराणं अंतिए पव्वइए एक्कारसअंगविओ बहूणि वासाणि सामण्ण-परियायं पाउणित्ता जेणेव चारुपव्वए मासिएणं भत्तेणं अपाणेणं पाउणित्ता जाव सिद्धे।

तए णं से महब्बले राया छप्पिय बालवयंसए एवं वयासी-'जइ
ं देवाणुप्पिया ! तुब्भे मए सद्धिं जाव पव्वयह, तओ णं तुब्भे गच्छह
ट्ठपुत्तं सएहिं सएहिं रज्जेहिं ठावेह, पुरिससहस्सवाहिणीओ सीयाओ
रूढा समाणा पाउब्भवह।' तए णं ते छप्पिय बालवयंसए जाव
ाउब्भवंति।

उस काल और उस समय में धर्मघोष नामक स्थविर जहाँ इन्द्रकुंभ
ान था, वहाँ पधारे। परिषद् वंदना करने के लिए निकली। महाबल राजा
ी निकला। स्थविर महाराज ने धर्म कहा। महाबल राजा को धर्म श्रवण
रके वैराग्य उत्पन्न हुआ। विशेष यह कि राजा ने कहा-'हे देवानुप्रिय ! मैं
पने छहों बाल मित्रों से पूछ लेता हूँ और बलभद्र कुमार को राज्य पर स्थापित
र देता हूं।' इस प्रकार कह कर उसने छहों बालमित्रों से पूछा।

तब वे छहों बाल-मित्र महाबल राजा से कहने लगे-देवानुप्रिय ! यदि
म प्रव्रजित होते हो तो हमारे लिए अन्य कौन-सा आधार है ? यावत् हम
ी दीक्षित होते हैं।

तत्पश्चात् महाबल राजा ने उन छहों बालमित्रों से कहा-हे देवानुप्रियो !
दि तुम मेरे साथ प्रव्रजित होते हो तो तुम जाओ और अपने-अपने
[illegible]
[illegible]
हों बालमित्र गये और अपने-अपने ज्येष्ठ पुत्रों को राज्यासीन करके यावत्
पा गये।

तए णं से महब्बले राया छप्पिय बालवयंसए पाउब्भूए पासइ,
ासित्ता हट्ठतुट्ठ कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी-'
गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया ! बलभद्दस्स कुमारस्स महया महया
रायाभिसेएणं अभिसिंचेह।' ते वि तहेव जाव बलभद्दं कुमारं अभि-
सिंचेंति।

तब महाबल राजा ने छहों बालमित्रों को आया देखा। देख कर वह
र्षित और संतुष्ट हुआ। उसने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया और बुला कर
कहा-देवानुप्रियो ! जाओ और बलभद्र कुमार का महान् महान् राज्याभिषेक
े अभिषेक करो। यह आदेश सुन कर उन्होंने उसी प्रकार किया, यावत् बल-
भद्र कुमार किया।

स्थविर मुनिराज को वन्दना करने के लिए जनसमूह निकला। राजा भी निकला। धर्म सुन कर राजा को वैराग्य हुआ। विशेष यह कि महाबल कुमार को राज्य पर प्रतिष्ठित किया। प्रतिष्ठित करके स्वयं ही राजा ने आकर स्थविर के निकट प्रव्रज्या अंगीकार की। वह ग्यारह अं वेत्ता हुए। बहुत वर्षों तक संयम पाल कर जहाँ चारुपर्वत था, वहाँ गये मास का निर्जल अनशन करके केवलज्ञान प्राप्त करके यावत् सिद्ध हुए।

तए णं कमलसिरी अन्नया कयाइ जाव सीहं सुमिणे पा पडिबुद्धा, जाव बलभद्दो कुमारो जाओ, जुवराया यावि होत्था।

तत्पश्चात् अन्यदा कदाचित् कमलश्री यावत् स्वप्न में सिंह को दे जागृत हुई। यावत् बलभद्र कुमार का जन्म हुआ। वह युवराज भी हो

तस्स णं महब्बलस्स रन्नो इमे छप्पिय बालवयंसगा र होत्था, तंजहा- (१) अयले (२) धरणे (३) पूरणे (४) वसू (५ मणे (६) अभिचंदे, सहजाया जाव संवड्ढिया। ते णित्थरिय फट्टु अन्नमन्नस्सेयमट्ठं पडिसुणेंति। सुहंसुहेणं विहरंति।

उस महाबल राजा के यह छहों राजा बालमित्र थे। वे इस प्र अचल (२) धरण (३) पूरण (४) वसु (५) वैश्रमण और (६) अभिच साथ ही जन्मे थे यावत् साथ ही वृद्धि को प्राप्त हुए थे। उन्होंने 'स देशविदेश जाना, साथ-साथ सुख-दुःख भोगना और साथ ही क निस्तार करना-आत्मा को संसार-सागर से तारना' ऐसा निर्णय करे में इस अर्थ (बात) को अंगीकार किया था। वे सुखपूर्वक रह रहे थे

तेणं काले णं तेणं समए णं धम्मघोसा थेरा जेणेव उज्जाणे तेणेव समोसढा, परिसा निग्गया, महब्बलो वि राया नि धम्मो कहिओ। महब्बलेणं धम्मं सोच्चा-जं नवरं देवाणुप्पिया बालवयंसगे आपुच्छामि, बलभद्दं च कुमारं रज्जे ठावेमि, जाव बालवयंसए आपुच्छइ।

तए णं ते छप्पि य बालवयंसए महब्बलं रायं एवं वया णं देवाणुप्पिया! तुब्भे पव्वयह, अम्हं के अन्ने आहारे व ...

जइ णं ते महब्बलवज्जा अणगारा छट्ठं उवसंपज्जित्ता णं विहरंति, तओ से महब्बले अणगारे अट्ठमं उवसंपज्जित्ता णं विहरइ। एवं अट्ठमं तो दसमं, अह दसमं तो दुवालसं।

तत्पश्चात् उन महाबल अनगार ने इस कारण से स्त्री नामगोत्र कर्म का पार्जन किया-यदि वे महाबल को छोड़ कर शेष छह अनगार चतुर्थभक्त उपवास) ग्रहण करके विचरते, तो वह महाबल अनगार (उन्हें बिना कहे) ष्ठभक्त (बेला) ग्रहण करके विचरते। अगर महाबल के सिवाय छह अनगार ष्ठभक्त अंगीकार करके विचरते तो महाबल अनगार अष्टमभक्त (तेला) ग्रहण रके विचरते। इसी प्रकार वे अष्टमभक्त करते तो महाबल दशमभक्त करते, वे शमभक्त करते तो महाबल द्वादशभक्त कर लेते। (इस प्रकार अपने साथी मुनियों छिपा कर-कपट करके महाबल अधिक तप करते थे।)

इमेहि य वीसाएहि य कारणेहिं आसेवियबहुलीकएहिं तित्थयर-णामगोयं कम्मं निव्वत्तिंसु, तंजहा—

अरिहंत-सिद्ध-पवयण-गुरु-थेर-बहुस्सुए-तवस्सीसु।
वच्छलया य तेसिं, अभिक्ख णाणोवओगे य॥ १॥
दंसण-विणए आवस्सए य सीलव्वए निरइयारं।
खणलव-तवच्चियाए, वेयावच्चे समाही य॥ २॥
अपुव्वनाणगहणे, सुयभत्ती पवयणे पभावणया।
एएहिं कारणेहिं, तित्थयरत्तं लहइ जीवो॥ ३॥

स्त्रीनामगोत्र के अतिरिक्त इन कारणों के एक बार और बार-बार सेवन ने से तीर्थंकरनामगोत्र कर्म का भी उपार्जन किया। वे कारण यह हैं:—

(१) अरिहंत (२) सिद्ध (३) प्रवचन-श्रुतज्ञान (४) गुरु-धर्मोपदेशक (५) विर अर्थात् साठ वर्ष की उम्र वाले जातिस्थविर, समवायांग के ज्ञाता श्रुत-विर और बीस वर्ष की दीक्षा वाले पर्यायस्थविर, यह तीन प्रकार के स्थविर (६) बहुश्रुत-दूसरों की अपेक्षा अधिक श्रुत के ज्ञाता (७) तपस्वी-इन सातों

...

र मूलगुणों का निरतिचार पालन करना (१२) क्षणलव अर्थात् क्षण एवं लव

जइ णं ते महब्बलवज्जा अणगारा छट्टं उवसंपज्जित्ता णं विहरंति
ओ से महब्बले अणगारे अट्ठमं उवसंपज्जित्ता णं विहरइ । एवं अट्ठ
तो दसमं, अह दसमं तो दुवालसं ।

तत्पश्चात् उन महाबल अनगार ने इस कारण से स्त्री नामगोत्र कर्म
पार्जन किया-यदि वे महाबल को छोड़ कर शेष छह अनगार चतुर्थभ
उपवास) ग्रहण करके विचरते, तो वह महाबल अनगार (उन्हें बिना कहे
ष्टभक्त (बेला) ग्रहण करके विचरते । अगर महाबल के सिवाय छह अनगा
ष्टभक्त अंगीकार करके विचरते तो महाबल अनगार अष्टमभक्त (तेला) ग्रह
रके विचरते । इसी प्रकार वे अष्टमभक्त करते तो महाबल दशमभक्त करते,
शमभक्त करते तो महाबल द्वादशभक्त कर लेते। (इस प्रकार अपने साथी मुनि
छिपा कर-कपट करके महाबल अधिक तप करते थे ।)

इमेहि य वीसाएहि य कारणेहिं आसेवियबहुलीकएहिं तित्थयर
नामगोयं कम्मं निव्वत्तिंसु, तंजहा—

अरिहंत-सिद्ध-पवयण-गुरु-थेर-बहुस्सुए-तवस्सीसु ।
वच्छलया य तेसिं, अभिक्ख णाणोवओगे य ॥ १ ॥
दंसण-विणए आवस्सए य सीलव्वए निरइयारं ।
खणलव-तवच्चियाए, वेयावच्चे समाही य ॥ २ ॥
अपुव्वनाणगहणे, सुयभत्ती पवयणे पभावणया ।
एएहिं कारणेहिं, तित्थयरत्तं लहइ जीवो ॥ ३ ॥

स्त्रीनामगोत्र के अतिरिक्त इन कारणों के एक बार और बार-बार सेव
ने से तीर्थंकरनामगोत्र कर्म का भी उपार्जन किया । वे कारण यह हैं:—

(१) [illegible] पदेशक (
ज्ञाता श्रुत
के स्थवि
ों-इन सात
प्रति वत्सलता धारण करना अर्थात् इनका यथोचित सत्कार-सम्मान करना

इस प्रकार इस क्षुल्लक सिंहनिष्क्रीडित तप की पहली परिपाटी छह म
और सात अहोरात्रों में सूत्र के अनुसार यावत् आराधित होती है। (
१५४ उपवास और तेतीस पारणा किये जाते हैं ।)

तयाणंतरं दोच्चाए परिवाडीए चउत्थं करेंति, नवरं विगइ
पारेंति। एवं तच्चा वि परिवाडी, नवरं पारणए अलेवाडं पारेंति।
चउत्था वि परिवाडी, नवरं पारणए आयंबिलेणं पारेंति।

तत्पश्चात् दूसरी परिपाटी में एक उपवास करते हैं, इत्यादि सब प
समान समझना। विशेषता यह है कि इसमें विकृतिरहित पारणा क
अर्थात् पारणा में विगय का सेवन नहीं करते। इसी प्रकार तीसरी प
भी समझनी चाहिए। इसमें विशेषता यह है कि अलेपकृत से पारणा कर
चौथी परिपाटी में भी ऐसा ही करते हैं। उसमें आयंबिल से प
की जाती है।

तए णं ते महब्बलपामोक्खा सत्त अणगारा खुड्डागं
निक्कीलियं तवोकम्मं दोहिं संवच्छरेहिं अट्ठावीसाए अहोरत्तेहिं
सुत्तं जाव आणाए आराहेत्ता, जेणेव थेरे भगवंते तेणेव उवागच
उवागच्छित्ता थेरे भगवंते वंदंति नमंसंति, वंदित्ता नमंसित
वयासी--

तत्पश्चात् वे महाबल आदि सातों अनगार क्षुल्लक (लघु)
निष्क्रीडित तप को (चारों परिपाटी सहित) दो वर्ष और अट्ठाईस अहो
सूत्र के कथनानुसार यावत् तीर्थंकर की आज्ञा से आराधन करके, जहाँ
भगवान् थे, वहाँ आये। आकर उन्होंने वन्दना की, नमस्कार किया।
नमस्कार करके इस प्रकार बोले:--

इच्छामो णं भंते! महालयं सीहनिक्कीलियं तवोकम्मं तहे
खुड्डागं, नवरं चोत्तीसइमाओ नियत्तए, एगाए चेव परि
कालो एगेणं संवच्छरेणं छहिं मासेहिं अट्ठारसेहि य अहोरत्तेहिं स
सव्वं पि सीहनिक्कीलियं छहिं वासेहिं, दोहि य मासेहिं, बार
अहोरत्तेहिं समप्पेइ।

हम महत् (बड़ा) सिंहनिष्क्रीडित नामक तपकर्म करन
सिंहनिष्क्रीडित तप के समान ही जानना चाहिए।

यह है कि इसमें चौतीस भक्त अर्थात् सोलह उपवास तक पहुँच कर वापिस लौटा जाता है। एक परिपाटी एक वर्ष, छह मास और अठारह अहोरात्र में समाप्त होती है। सम्पूर्ण महासिंहनिष्क्रीडित तप छह वर्ष, दो मास और बारह अहोरात्र में समाप्त होता है। (प्रत्येक परिपाटी में ५४८ दिन लगते हैं, ४९७ उपवास और ६१ पारणा होते हैं।

तए णं ते महब्बलपामोक्खा सत्त अणगारा महालयं सीह-निक्कीलियं महातवोकम्मं जाव आराहेत्ता जेणेव थेरे भगवंते तेणेव उवा-गच्छंति, उवागच्छित्ता थेरे भगवंते वंदइ, नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता बहूणि चउत्थ जाव विहरंति।

तत्पश्चात् वे महाबल प्रभृति सातों मुनि महासिंहनिष्क्रीडित तपकर्म को सूत्र के अनुसार यावत् आराधन करके जहां स्थविर भगवान् थे, वहां आते हैं। आकर स्थविर भगवान् की वन्दना करते हैं, नमस्कार करते हैं। वन्दना और नमस्कार करके बहुत से उपवास बेला आदि करते हुए विचरते हैं।

तए णं ते महब्बलपामोक्खा सत्त अणगारा तेणं उरालेणं सुक्का भुक्खा जहा खंदओ, नवरं थेरे आपुच्छित्ता चारुपव्वयं (वक्खारपव्वयं) दुरूहंति। दुरूहित्ता जाव दोमासियाए संलेहणाए सवीसं भत्तसयं अण-सणं चउरासीई वाससयसहस्साइं सामण्णपरियागं पाउणंति, पाउणित्ता चउरासीइं पुव्वसयसहस्साइं सव्वाउयं पालइत्ता जयंते विमाणे देवत्ताए उववन्ना।

तत्पश्चात् वे महाबल प्रभृति अनगार उस प्रधान तप के कारण शुष्क अर्थात् मांस-रक्त से हीन तथा रूक्ष अर्थात् निस्तेज हो गये, जैसे भगवतीसूत्र में कथित स्कंदक मुनि। विशेषता यह है कि स्कंदक मुनि ने भगवान् महावीर से आज्ञा प्राप्त की थी, पर इन सात मुनियों ने स्थविर भगवान् से आज्ञा ली। आज्ञा लेकर चारु पर्वत (चारु नामक वक्षस्कार पर्वत) पर आरूढ हुए। आरूढ होकर यावत् दो मास की संलेखना करके-एक सौ बीस भक्त का अनशन करके, चौरासी लाख वर्षों तक संयम का पालन करके, चौरासी लाख पूर्व का कुल आयुष्य भोग कर जयंत नामक तीसरे अनुत्तर विमान में देव-पर्याय से उत्पन्न हुए।

तत्थ णं अत्थेगइयाणं देवाणं बत्तीसं सागरोवमाइं ठिई पन्नत्ता।

तत्थ णं महब्बलवज्जाणं छण्हं देवाणं देसूणाइं बत्तीसं सागरोवमाइं ठि
महब्बलस्स देवस्स पडिपुण्णाइं बत्तीसं सागरोवमाइं ठिई पन्नत्ता।

उस जयन्त विमान में कितनेक देवों की बत्तीस सागरोपम की स्थि
कही गई है। उनमें से महाबल को छोड़ कर दूसरे छह देवों की कुछ कम बत्तीस
सागरोपम की स्थिति और महाबल देव की पूरे बत्तीस सागरोपम की स्थि
कही गई है।

तए णं ते महब्बलवज्जा छप्पि य देवा जयंताओ देवलोगाओ
आउक्खएणं ठिइक्खएणं भवक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता इहेव जंबुद्दी
दीवे भारहे वासे विसुद्धपिइमाइवंसेसु रायकुलेसु पत्तेयं पत्तेयं कुमारत्ताए
पच्चायायासी। तंजहा—पडिबुद्धी इक्खागराया १, चंदच्छाए अंगराया
२, संखे कासिराया ३, रुप्पी कुणालाहिवई ४, अदीणसत्तू कुरुराया
५, जियसत्तू पंचालाहिवई ६।

तत्पश्चात् महाबल देव के सिवाय छहों देव जयन्त देवलोक से, देव संबं
आयु का क्षय होने से, देवलोक में रहने रूप स्थिति का क्षय होने से और दे
संबंधी भव का क्षय होने से, अन्तर रहित, शरीर का त्याग करके अथवा च्यु
होकर इसी जम्बूद्वीप में, भरत वर्ष (क्षेत्र) में विशुद्ध माता-पिता के वंश वा
राजकुलों में, अलग-अलग कुमार के रूप में उत्पन्न हुए। वे इस प्रकार—
पहला मित्र प्रतिबुद्धि इक्ष्वाकु वंश का अथवा इक्ष्वाकु देश का राजा हुआ
(इक्ष्वाकु देश को कोशल देश भी कहते हैं, जिसकी राजधानी अयोध्या थी)
(२) दूसरा चंद्रच्छाय अंगदेश का राजा हुआ, जिसकी राजधानी चम्पा थी
(३) तीसरा मित्र शंख काशी देश का राजा हुआ, जिसकी राजधानी वाणार
नगरी थी। (४) चौथा रुक्मि कुणाल देश का राजा हुआ, जिसकी नगरी श्राव
थी। (५) पांचवां अदीनशत्रु कुरुदेश का राजा हुआ, जिसकी राजधानी हस्ति
नापुर थी। (६) छठा जितशत्रु पंचाल देश का राजा हुआ, जिसकी राजधा
कांपिल्यपुर थी।

तए णं से महब्बले देवे तिहिं णाणेहिं समग्गे उच्चट्ठाणट्ठिए
गहेसु, सोमासु दिसासु वितिमिरासु विसुद्धासु, जइएसु सउणेसु, पय
हिणाणुकूलंसि भूमिसप्पिंसि मारुतंसि पवायंसि, निप्फन्नसस्समेइणी
[illegible] कालंसि, पमुइयपक्कीलिएसु जणवएसु अद्धरत्तकालसमयं

उत्पश्चात् प्रभावती देवी को इस प्रकार का दोहद उत्पन्न हुआ देख व
पास में रहे हुए वाण-व्यन्तर देवों ने शीघ्र ही जल और थल में उत्पन्न हु
यावत् पाँच वर्ण वाले पुष्प, कुम्भों और भारों के प्रमाण में अर्थात् बहुत-
पुष्प कुम्भ राजा के भवन में लाकर डाल दिये। इनके अतिरिक्त सुखप्रद ए
सुगंध फैलाता हुआ एक श्रीदामकांड भी लाकर डाल दिया।

—लेणं डोहलं विणेइ
।

तए णं सा पभावई देवी नवण्हं मासाणं अद्धट्ठमाण य रत्तिदि
णं जे से हेमंताणं पढमे मासे दोच्चे पक्खे मग्गसिरसुद्धे तस्स
ग्गसिरसुद्धस्स एक्कारसीए पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि अस्सिणी
क्खत्तेणं जोगमुवागएणं उच्चट्ठाणगएसु गहेसु जाव पमुइयपक्कीलिए
णवएसु आरोयारोयं एगूणवीसइमं तित्थयरं पयाया।

तत्पश्चात प्रभावती देवी ने जल और थल में उत्पन्न यावत् फूलों
ला से अपना दोहला पूर्ण किया। तब प्रभावती देवी प्रशस्तदोहला होक
चरने लगी।

तत्पश्चात् प्रभावती देवी ने नौ मास और साढ़े सात दिवस पूर्ण हो
, हेमन्त के प्रथम मास में, दूसरे पक्ष में अर्थात् मार्गशीर्ष मास के शुक्ल प
, मार्गशीर्ष शुक्ल पक्ष की एकादशी के दिन, मध्य रात्रि में, अश्विनी नक्षत्र
न्द्रमा के साथ योग होने पर, सभी ग्रहों के उच्च स्थान पर स्थित होने पर, ज
के सब लोग प्रमुदित होकर क्रीड़ा कर रहे थे ऐसे समय में, आरोग्य-आरोग
र्वक अर्थात् बिना किसी बाधा के उन्नीसवें तीर्थङ्कर को जन्म दिया।

ते णं काले णं ते णं समए णं अहोलोगवत्थव्वाओ अट्ठ दिसा
मारीओ मइयरीयाओ जहा जंबुद्दीवपन्नत्तीए जम्मणं सव्वं भाणि
व्वं। नवरं मिहिलाए नयरीए कुंभरायस्स भवणंसि पभावईए देवी
भिलावो संजोएव्वो जाव नंदीसरवरे दीवे महिमा।

उस काल और उस समय में अधोलोक में बसने वाली महत्तरि
शाकुमारिकाएँ आईं, इत्यादि जन्म का जो वर्णन जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति में आ
, वह सब यहाँ समझ लेना चाहिए, विशेषता यह है कि-मिथिला नगरी में
भ राजा के भवन में, प्रभावती देवी का आलापक कहना-नाम

तए णं सा मल्ली विदेहवररायकन्ना उम्मुक्कबालभावा जाव रूवेण जोव्वणेण य जाव लावण्णेण य अईव अईव उक्किट्ठा उक्किट्ठसरीरा जाया यावि होत्था ।

तत्पश्चात् विदेहराज की वह श्रेष्ठ कन्या बाल्यावस्था से मुक्त हुई यावत् रूप, यौवन यावत् लावण्य से अतीव अतीव उत्कृष्ट और उत्कृष्ट शरीर वाली हुई ।

तए णं सा मल्ली विदेहवररायकन्ना देसूणवाससयजाया ते छप्पि य रायाणो विपुलेण ओहिणा आभोएमाणी आभोएमाणी विहरइ, तंजहा-पडिबुद्धिं जाव जियसत्तुं पंचालाहिवइं ।

तत्पश्चात् विदेहराज की वह उत्तम कन्या मल्ली कुछ कम सौ वर्ष की हो गई, तब वह उन (पूर्व के बालमित्र) छहों राजाओं को अपने विपुल अवधिज्ञान से देखती-देखती रहने लगी । वे इस प्रकार-प्रतिबुद्धि यावत् पंचाल देश का राजा जितशत्रु ।

तए णं सा मल्ली विदेहवररायकन्ना कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दाविचा एवं वयासी-'गच्छह णं देवाणुप्पिया ! असोगवणियाए एगं महं मोहणघरं करेह अणेगखंभसयसन्निविट्ठं । तत्थ णं मोहणघरस्स बहुमज्झदेसभाए छ गब्भघरए करेह । तेसि णं गब्भघराणं बहुमज्झदेसभाए जालघरयं करेह । तस्स णं जालघरयस्स बहुमज्झदेसभाए मणिपेढियं करेह ।' ते वि तहेव जाव पच्चप्पिणंति ।

तत्पश्चात् विदेहराज की उत्तम कन्या मल्ली ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया । बुलाकर कहा-देवानुप्रियो ! जाओ और अशोकवाटिका में एक बड़ा मोहनगृह (मोह उत्पन्न करने वाला अतिशय रमणीय घर) बनाओ, जो अनेक सैकड़ों खंभों से बना हुआ हो । उस मोहनगृह के एकदम मध्य भाग में छह गर्भगृह (कमरे) बनाओ । उन छहों गर्भगृहों के ठीक बीच में एक जालगृह (जिसके चारों ओर जाली लगी हो और जिसके भीतर की वस्तु बाहर वाले देख सकते हों ऐसा घर) बनाओ । उस जालगृह के मध्य में एक मणिमय पीठिका बनाओ ।' यह सुन कर कौटुम्बिक पुरुषों ने उसी प्रकार बना कर आज्ञा वापिस सौंपी ।

तए णं मल्ली मणिपेढियाए उवरिं अप्पणो सरिसियं स
सरिसव्वयं सरिसलावन्नजोव्वणगुणोववेयं कणगमइं मत्थ
पउमुप्पलप्पिहाणं पडिमं करेइ, करित्ता जं विपुलं असणं पा
साइमं आहारेइ, तओ मणुन्नाओ असणपाणखाइमसाइमाओ क
एगमेगं पिंडं गहाय तीसे कणगमईए मत्थयच्छिड्डाए जाव
मत्थयंसि पक्खिवमाणी पक्खिवमाणी विहरइ।

तत्पश्चात् उस मल्ली कुमारी ने मणिपीठिका के ऊपर अपनी जैसी
जैसी त्वचा वाली, अपनी सरीखी उम्र वाली, समान लावण्य, यौ
गुणों से युक्त एक सुवर्ण की प्रतिमा बनवाई। उस प्रतिमा के मस्तक
था और उस पर कमल का ढक्कन था। इस प्रकार की प्रतिमा बनवा
विपुल अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य वह खाती थी, उस मनोज्ञ अ
खाद्य और स्वाद्य में से प्रतिदिन एक-एक पिण्ड (कवल) लेकर उस स
मस्तक में छेद वाली यावत् प्रतिमा में मस्तक में से डालती रहती थी।

तए णं तीसे कणगमईए जाव मत्थयछिड्डाए पडिमाए ए
पिंडे पक्खिप्पमाणे पक्खिप्पमाणे पउमुप्पलपिहाणं पिहेइ। त
पाउब्भवइ, से जहानामए अहिमडेइ वा जाव एत्तो अणिट्ठतरा
यामतराए।

तत्पश्चात् उस स्वर्णमयी यावत् मस्तक में छिद्र वाली प्रतिमा
एक पिंड डाल-डाल कर कमल का ढक्कन ढँक देती थी। इससे उसमें ऐसी
उत्पन्न होती थी जैसे सर्प के मृतकलेवर की हो, यावत् उससे भी अधिक
और गंध उत्पन्न होती थी।

तेणं कालेणं तेणं समएणं कोसले नाम जणवए हो
तत्थ णं साएए नाम नयरे होत्था। तस्स णं उत्तरपुरत्थिमे दि
एत्थ णं महं एगे णागघरए होत्था दिव्वे सच्चे सच्चोवाए संनि
पाडिहेरे।

उस काल और उस समय में कौशल नामक देश था। उसमें
नामक नगर था। उस नगर के उत्तर पूर्व (ईशान) दिशा में एक न
देव की प्रतिमा से युक्त चैत्य) था। वह प्रधान था, सत्य था

नागदेव का कथन सत्य सिद्ध होता था, उसकी सेवा सफल होती थी और वह देवाधिष्ठित था।

तत्थ णं नयरे पडिबुद्धी नाम इक्खागुराया परिवसइ, तस्स पउमावई देवी, सुबुद्धी अमच्चे सामदंड० जाव रज्जधुराचिंतए होत्था।

उस साकेत नगर में प्रतिबुद्धि नामक इक्ष्वाकु वंश का राजा निवास करता था। पद्मावती उसकी पटरानी थी सुबुद्धि अमात्य था, जो साम, दाम, भेद और दंड नीतियों में कुशल था यावत् राज्य-धुरा की चिन्ता करने वाला था।

तए णं पउमावईए अन्नया कयाइं नागजन्नए यावि होत्था। तए णं सा पउमावई नागजन्नमुवट्ठियं जाणित्ता जेणेव पडिबुद्धी राया तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता करयल० जाव एवं वयासी-'एवं खलु सामी! मम कल्लं नागजन्नए यावि भविस्सइ, तं इच्छामि णं सामी! तुब्भेहिं अब्भणुन्नाया समाणी नागजन्नयं गमित्तए; तुब्भे वि णं सामी! मम नागजन्नंसि समोसरह।

किसी समय एक बार पद्मावती देवी की नागपूजा का उत्सव आया। तब पद्मावती देवी नागपूजा का उत्सव आया जान कर प्रतिबुद्धि राजा के पास गई। पास जाकर दोनों हाथ जोड़ कर इस प्रकार बोली-'स्वामिन्! कल मुझे नागपूजा करनी है। अतएव आपकी अनुमति पाकर मैं नागपूजा करने के लिए जाना चाहती हूँ। स्वामिन्! आप भी मेरी नागपूजा में पधारो, ऐसी मेरी इच्छा है।'

तए णं पडिबुद्धी पउमावईए देवीए एयमट्ठं पडिसुणेइ। तए णं पउमावई पडिबुद्धिणा रण्णा अब्भणुन्नाया हट्ठतुट्ठा जाव कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी-'एवं खलु देवाणुप्पिया! मम कल्लं नागजन्नए भविस्सइ, तं तुब्भे मालागारे सद्दावेह, सद्दावित्ता एवं वयह:-

तब प्रतिबुद्धि राजा ने पद्मावती देवी की यह बात स्वीकार की। तत्पश्चात् पद्मावती देवी, प्रतिबुद्धि राजा की अनुमति पाकर हृष्ट-तुष्ट हुई। उसने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया और कहा-'हे देवानुप्रियो! कल मेरे नागपूजा होगी, सो तुम मालाकारों को बुलाओ और उन्हें इस प्रकार कहो-

'एवं खलु पउमावईए देवीए कल्लं नागजन्नए भविस्सइ, तं तुब्भे णं देवाणुप्पिया ! जलथलय० दसद्धवन्नं मल्लं नागघरयंसि साहरह, एगं च णं महं सिरिदामगंडं उवणेह। तए णं जलथलय० दसद्धवन्नेहं मल्लेणं णाणाविहभत्तिसुविरइयं करेह। तंसि भत्तिसि हंस-मिय-मऊर-कोंच-सारस-चक्कवाय-मयणसाल-कोइलकुलोववेयं ईहामिय जाव भत्ति-चित्तं महग्घं महरिहं विपुलं पुप्फमंडवं विरएह। तस्स णं बहुमज्झदेस-भाए एगं महं सिरिदामगंडं जाव गंधद्धुणिं मुयंतं उल्लोयंसि ओलंबेह। ओलंबित्ता पउमावइं देविं पडिवालेमाणा पडिवालेमाणा चिट्ठह।' तए णं ते कोडुंबिया जाव चिट्ठंति।

'इस प्रकार निश्चय ही पद्मावतीदेवी के कल नागपूजा होगी। अतएव हे देवानुप्रियो ! तुम जल और थल में उत्पन्न हुए पाँचों रंगों के फूल नागगृह में ले जाओ। और एक श्रीदामकाण्ड (शोभित मालाओं का समूह) बना कर लाओ। तत्पश्चात् जल और थल में उत्पन्न होने वाले पाँच वर्णों के फूलों से विविध प्रकार की रचना करके उसे सजाओ। उस रचना में हंस, मृग, मयूर, क्रौंच, सारस, चक्रवाक, मदनशाल (मैना) और कोकिल के समूह से युक्त तथा ईहामृग, वृषभ, तुरग आदि की रचना वाले चित्र बना कर महामूल्यवान, महान् जनों के योग्य और विस्तार वाला एक पुष्पमण्डप बनाओ। उस पुष्प-मण्डप के मध्य भाग में एक महान् और गंध के समूह को छोड़ने वाला श्रीदाम-काण्ड उल्लोच (छत-चगासो) पर लटकाओ। लटका कर पद्मावती देवी की राह देखते-देखते ठहरो।' तत्पश्चात् वे कौटुम्बिक पुरुष इसी प्रकार कार्य करके यावत् पद्मावती की राह देखते हुए नागगृह में ठहरते हैं।

तए णं सा पउमावई देवी कल्लं० कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दा-वित्ता एवं वयासी–'खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! सागेयं नगरं सब्भि-तरबाहिरियं आसित्तसम्मज्जियोवलित्तं० जाव पच्चप्पिणंति।

तत्पश्चात् पद्मावती देवी ने दूसरे दिन प्रातः काल सूर्योदय होने पर कौटुम्बिक पुरुषों को बुला कर कहा–'हे देवानुप्रियो ! शीघ्र ही साकेत नगर में भीतर और बाहर पानी सींचो, सफाई करो और लिपाई करो।' यावत् वे कौटुम्बिक पुरुष उसी प्रकार कार्य करके आज्ञा वापिस लौटाते हैं।

तए णं सा पउमावई देवी दोच्चं पि कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दा-

वित्ता एवं वयासी–'खिप्पामेव देवाणुप्पिया ! लहुकरणजुत्तं जाव जुत्तामेव उवट्ठवेह ।' तए णं ते वि तहेव उवट्ठावेंति ।

तए णं सा पउमावई अंतो अंतेउरंसि ण्हाया जाव धम्मियं जाणं दुरूढा ।

तत्पश्चात् पद्मावती देवी ने दूसरी बार कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया। बुला कर इस प्रकार कहा–देवानुप्रियो ! शीघ्र ही लघुकरण से युक्त (द्रुतगामी अश्वों वाले) यावत् रथ को जोड़ कर उपस्थित करो।' तब वे भी उसी प्रकार रथ उपस्थित करते हैं।

तत्पश्चात् पद्मावती देवी अन्तःपुर के अन्दर स्नान करके यावत् धार्मिक (धर्म कार्य के लिए काम में आने वाले) यान पर अर्थात् रथ पर आरूढ़ हुई।

तए णं सा पउमावई नियगपरियालसंपरिवुडा सागेयं नगरं मज्झंमज्झेणं णिज्जइ, णिज्जित्ता जेणेव पुक्खरिणी तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता पुक्खरिणिं ओगाहइ । ओगाहित्ता जलमज्जणं जाव परम-सुइभूया उल्लपडसाडया जाइं तत्थ उप्पलाइं जाव गेण्हइ। गेण्हित्ता जेणेव नागघरए तेणेव पहारेत्थ गमणाए।

तत्पश्चात् पद्मावती देवी अपने परिवार से परिवृत होकर साकेत नगर के बीच में होकर निकली। निकल कर जहाँ पुष्करिणी थी वहाँ आई। आकर पुष्करिणी में प्रवेश किया। प्रवेश करके स्नान किया। यावत् अत्यन्त शुचि होकर गीली साड़ी पहन कर वहाँ जो कमल आदि थे, उन्हें यावत् ग्रहण किया ग्रहण करके जहाँ नागगृह था, वहाँ जाने के लिए विचार किया।

तए णं पउमावईए दासचेडीओ बहूओ पुप्फपडलगहत्थगयाओ धूवकडुच्छुगहत्थगयाओ पिट्ठओ समणुगच्छंति ।

तए णं पउमावई सव्विड्ढिए जेणेव णागघरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता नागघरयं अणुपविसइ, अणुपविसित्ता लोमहत्थगं जाव धूवं डहइ, डहित्ता पडिवुद्धिं रायं पडिवालेमाणी पडिवालेमाणी चिट्ठइ।

तत्पश्चात् पद्मावती देवी की बहुत-सी दास-चेटियाँ (दासियाँ) फूलों की छाबड़ियाँ लेकर तथा धूप की कुड़छियां हाथ में लेकर पीछे चलने ल

तत्पश्चात् पद्मावती देवी सर्व ऋद्धि के साथ-पूरे ठाठ के साथ-[illegible]
ना[illegible]
([illegible]
प्रतीक्षा करती हुई वहीं ठहरी।

तए णं पडिबुद्धि राया ण्हाए हत्थिखंधवरगए सकोरंटमल्लदामेणं छत्तेणं धारिज्जमाणेणं जाव सेयवरचामराहिं महयाहय-गय-रह-जोह-महयाभडचडगरपहकरेहिं साकेयनगरं मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता जेणेव णागघरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता हत्थिखंधाओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता आलोए पणामं करेइ, करित्ता पुप्फमंडवं अणुपविसइ, अणुपविसित्ता पासइ तं एगं महं सिरिदामगंडं।

तत्पश्चात् प्रतिबुद्धि राजा स्नान करके श्रेष्ठ हाथी के स्कंध पर आसीन हुआ। कोरंट के फूलों सहित अन्य पुष्पों की मालाएँ जिसमें लपेटी हुई हैं, ऐसा छत्र उसके मस्तक पर धारण किया गया। यावत् उत्तम श्वेत चामर ढोरे जाने लगे। उसके आगे-आगे विशाल घोड़े, हाथी, रथ और पैदल योद्धा-यह चतुरंगी सेना चली। सुभटों के समूह के समूह चले। वह साकेत नगर के मध्यभाग में होकर निकला। निकल कर जहाँ नागगृह था, वहाँ आया। आकर हाथी के स्कंध से नीचे उतरा। उतर कर प्रतिमा पर दृष्टि पड़ते ही उसे प्रणाम किया। प्रणाम करके पुष्प-मंडप में प्रवेश किया प्रवेश करके वहाँ एक महान् श्रीदामकाण्ड देखा।

तए णं पडिबुद्धी तं सिरिदामगंडं सुइरं कालं निरिक्खइ, निरिक्खित्ता तंसि सिरिदामगंडंसि जायविम्हए सुबुद्धिं अमच्चं एवं वयासी-

'तुमं णं देवाणुप्पिया! मम दोच्चेणं बहूणि गामागर० जाव संनिवेसाइं आहिंडसि, बहूणि राईसर जाव गिहाइं अणुपविससि, तं अत्थि णं तुमे कहिंचि एरिसए सिरिदामगंडे दिट्ठपुव्वे, जारिसए णं इमे पउमावईए देवीए सिरिदामगंडे?

तत्पश्चात् प्रतिबुद्धि राजा उस श्रीदामकाण्ड को बहुत देर तक देखता रहा। देख कर उस श्रीदामकाण्ड के विषय में उसे आश्चर्य उत्पन्न हुआ। उसने सुबुद्धि अमात्य से इस प्रकार कहा—

हे देवानुप्रिय ! तुम मेरे दौत्य कार्य से बहुतेरे ग्रामों, आकरों, नगर
सन्निवेशों में आदि में घूमते हो, और बहुत से राजाओं एवं ईश्वरों आदि
गृह में प्रवेश करते हो; तो क्या तुमने ऐसा सुन्दर श्रीदामकाण्ड कहीं पहले
है, जैसा पद्मावती देवी का यह श्रीदामकाण्ड है ?

तए णं सुबुद्धी पडिबुद्धिं रायं एवं वयासी–एवं खलु सामी ! अहं
अया कयाइं तुब्भं दोच्चेणं मिहिलं रायहाणिं गए, तत्थ णं मए कुंभ-
स्स रण्णो धूयाए पभावईए देवीए अत्तयाए मल्लीए विदेहवररायक-
आए संवच्छरपडिलेहणगंसि दिव्वे सिरिदामगंडे दिट्ठपुव्वे । तस्स णं
सिरिदामगंडस्स इमे पउमावईए सिरिदामगंडे सयसहस्सइमं पि कलं न
ग्घइ ।

तब सुबुद्धि अमात्य ने प्रतिबुद्धि राजा से कहा–हे स्वामिन् ! मैं एक बा
किसी समय आपके दौत्यकार्य से मिथिला राजधानी गया था । वहाँ मैंने कुंभ
राजा की पुत्री और प्रभावती देवी की आत्मजा, विदेह की उत्तम राजकुमारी
मल्ली के संवत्सर प्रतिलेखनक (जन्मगांठ के महोत्सव) के समय दिव्य
... पद्मावती देवी का यह श्रीदा

... एवं वयासी–'केरिसिया णं

...णुप्पिया ! मल्ली विदेहवररायकन्ना जस्स णं संवच्छरपडिलेहणयंसि
सिरिदामगंडस्स पउमावईए देवीए सिरिदामगंडे सयसहस्सइमं पि कलं
अग्घइ ?

तए णं सुबुद्धी अमच्चे पडिबुद्धिं इक्खागुरायं एवं वयासी–'एवं
खलु सामी ! मल्ली विदेहवररायकन्नगा सुपइट्ठियकुम्मुन्नयचारुचरणा,
...ओ ।

तत्पश्चात् प्रतिबुद्धि राजा ने सुबुद्धि मंत्री से इस प्रकार कहा–'देवानुप्रिय
विदेह की श्रेष्ठ राजकुमारी मल्ली कैसी है, जिसकी जन्मगांठ के उत्सव में बनाये
गये श्रीदामकाण्ड के सामने पद्मावती देवी का यह श्रीदामकाण्ड लाखवां अंश
भी नहीं पाता ?'

तब सुबुद्धि मंत्री ने इक्ष्वाकुराज प्रतिबुद्धि से कहा–इस प्रकार स्वामिन् !
विदेह की श्रेष्ठ राजकुमारी मल्ली सुप्रतिष्ठित और कछुए के समान उन्नत एवं

सुन्दर चरण वाली है। इत्यादि वर्णन जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति आदि के अनुसार
लेना चाहिए।

तए णं पडिबुद्धी राया सुबुद्धिस्स अमच्चस्स अंतिए एयमट्ठं सो
णिसम्म सिरिदामगंडजणियहासे दूयं सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी
'गच्छाहि णं तुमं देवाणुप्पिया ! मिहिलं रायहाणिं, तत्थ णं कुंभग
रण्णो धूयं पभावईए देवीए अत्तयं मल्लिं विदेहवररायकन्नगं
भारियत्ताए वरेहि, जइ वि णं सा सयं रज्जसुंका।

तत्पश्चात् प्रतिबुद्धि राजा ने सुबुद्धि अमात्य के पास से यह अर्थ
कर और हृदय में धारण करके और श्रीदामकाण्ड की बात से हर्षित होकर
को बुलाया। बुला कर इस प्रकार कहा—हे देवानुप्रिय ! तुम मिथिला राज
जाओ। वहाँ कुंभ राजा की पुत्री, पद्मावती देवी की आत्मजा और विदे
प्रधान राजकुमारी मल्ली की मेरी पत्नी के रूप में मगनी करो। फिर भ
उसके लिए सारा राज्य शुल्क-मूल्य में देना पड़े।

तए णं से दूए पडिबुद्धिणा रण्णा एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठे
सुणेइ, पडिसुणेत्ता जेणेव सए गिहे, जेणेव चाउग्घंटे आसरहे
उवागच्छइ, उवागच्छित्ता चाउग्घंटं आसरहं पडिकप्पावेइ, पडि
वित्ता दुरूढे जाव हयगयमहयाभडचडगरेणं साएयाओ निग्ग
निग्गच्छित्ता जेणेव विदेहजणवए जेणेव मिहिला रायहाणी तेणेव
रेत्थ गमणाए।

तत्पश्चात् उस दूत ने प्रतिबुद्धि राजा के इस प्रकार कहने पर हर्षि
संतुष्ट होकर उनकी आज्ञा अंगीकार की। अंगीकार करके जहां अपना
और जहां चार घंटों वाला अश्वरथ था, वहां आया। आकर (आगे, पी
अगल-बगल में) चार घंटों वाले अश्वरथ को तैयार कराया। तैयार
कर उस पर आरूढ हुआ। यावत् घोड़ों, हाथियों और बहुत से सुभटों
के साथ साकेत नगर से निकला। निकल कर जहां विदेह जनपद था औ
मिथिला राजधानी थी, वहां जाने का विचार किया-चल दिया।

तेणं कालेणं तेणं समएणं अंगे नामं जणवए होत्था
एं चंपानामं णयरी होत्था। तत्थ णं चंपाए नयरीए चंदच्छाए
राया होत्था।

उस काल और उस समय में अंग नामक जनपद था। उसमें चम्पा नामक नगरी थी। उस चम्पा नगरी में चन्द्रच्छाय नामक अंगराज-अंग देश का राजा था।

तत्थ णं चंपाए नयरीए अरहन्नगपामोक्खा बहवे संजत्ता णावावाणियगा परिवसंति, अड्ढा जाव अपरिभूया। तए णं से अरहन्नगे समणोवासए यावि होत्था, अहिगयजीवाजीवे, वन्नओ।

उस चम्पा नगरी में अर्हन्नक प्रभृति बहुत-से सांयात्रिक (परदेश जाकर व्यापार करने वाले) नौवणिक् (नौकाओं से व्यापार करने वाले) रहते थे। वे ऋद्धिसम्पन्न थे और किसी से पराभूत होने वाले नहीं थे। उनमें अर्हन्नक श्रमणोपासक (श्रावक) भी था, वह जीव अजीव आदि तत्त्वों का ज्ञाता था। यहाँ श्रावक का वर्णन जान लेना चाहिए।

तए णं तेसिं अरहन्नगपामोक्खाणं संजत्ताणावावाणियगाणं अन्नया कयाइ एगयओ सहियाणं इमे एयारूवे मिहो-कहासंलावे समुप्पज्जित्था—

'सेयं खलु अम्हं गणिमं च धरिमं च मेज्जं च पारिच्छेज्जं च भंडगं गहाय लवणसमुद्दं पोयवहणेण ओगाहित्तए' त्ति कट्टु अन्नमन्नं एयमट्ठं पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता गणिमं च धरिमं च मेज्जं च पारिच्छेज्जं च भंडगं गेण्हंति, गेण्हित्ता सगडिसागडियं च सज्जेंति, सज्जित्ता गणिमस्स च धरिमस्स च मेज्जस्स च पारिच्छेज्जस्स च भंडगस्स सगडसागडियं भरेंति, भरित्ता सोहणंसि तिहिकरणनक्खत्तमुहुत्तंसि विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेंति, मित्तणाइभोयण-वेलाए भुंजावेंति जाव आपुच्छंति, आपुच्छित्ता सगडिसागडियं जोयंति, चंपाए नयरीए मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छंति, णिग्गच्छित्ता जेणेव गंभीरए पोयपट्टणे तेणेव उवागच्छंति।

तत्पश्चात् वे अर्हन्नक आदि सांयात्रिक नौवणिक् किसी समय एक बार एक जगह इकट्ठे हुए, तब उनमें आपस में इस प्रकार कथासंलाप (वार्तालाप) हुआ—

'हमें गणिम (गिन-गिन कर बेचने योग्य नारियल आदि), धरिम (तोल कर बेचने योग्य घृत आदि), मेय (पायली आदि में माप कर-कर बेचने योग्य अनाज आदि) और परिच्छेद्य (काट कर बेचने योग्य वस्त्र आदि), यह चार प्रकार का भांड (सौदा) लेकर, जहाज द्वारा लवणसमुद्र में प्रवेश करना योग्य है। इस प्रकार विचार करके उन्होंने परस्पर में यह बात अंगीकार की। अंगीकार करके गणिम, धरिम, मेय और परिच्छेद्य भांड को ग्रहण किया। ग्रहण करके छकड़ा-छकड़ी तैयार किये। तैयार करके गणिम, धरिम मेय और परिच्छेद्य भांड के छकड़ी-छकड़े भरे। भर कर शुभ तिथि, करण, नक्षत्र और मुहूर्त्त में अशन, पान, खादिम और स्वादिम बनवाया। बनवा कर भोजन की वेला में मित्रों एवं ज्ञातिजनों को जिमाया, यावत् उनकी अनुमति ली। अनुमति लेकर गाड़ी-गाड़े जोते। जोत कर चम्पा नगरी के बीचोंबीच होकर निकले। निकल कर जहां गंभीर नामक पोतपट्टन (बन्दरगाह) था, वहां आये।

उवागच्छित्ता सगडिसागडियं मोयंति, मोइत्ता पोयवहणं सज्जेंति, सज्जित्ता गणिमस्स य धरिमस्स य मेज्जस्स य पारिच्छेज्जस्स य चउव्विहस्स भंडगस्स भरेंति, भरित्ता तंदुलाण य समियस्स य तेल्लस्स य गुलस्स य घयस्स य गोरसस्स य उदयस्स य उदयभायणाण य ओसहाण य भेसज्जाण य तणस्स य कट्ठस्स य आवरणाण य पहरणाण य अन्नेसिं च बहूणं पोयवहणपाउग्गाणं दव्वाणं पोयवहणं भरेंति। भरित्ता सोहणंसि तिहिकरणनक्खत्तमुहुत्तंसि विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेंति, उवक्खडावित्ता मित्तणाइ० आपुच्छंति, आपुच्छित्ता जेणेव पोयट्ठाणे तेणेव उवागच्छंति।

गंभीर नामक पोतपट्टन में आकर उन्होंने गाड़ी-गाड़े छोड़ दिये। छोड़ कर जहाज सज्जित किये। सज्जित करके गणिम, धरिम, मेय और परिच्छेद्य-चार प्रकार का भांड भरा। भर कर उसमें चावल, आटा, तेल, घी, गोरस (दूध-दही), पानी, पानी के बरतन, औषध, भेषज, घास, लकड़ी, वस्त्र, शस्त्र और भी जहाज में रखने योग्य अन्य वस्तुएँ जहाज में भरीं। भर कर प्रशस्त तिथि करण नक्षत्र और मुहूर्त में, विपुल अशन, पान खाद्य और स्वाद्य तैयार करवाया। तैयार करवा कर मित्रों एवं ज्ञातिजनों आदि को जिमा कर उन की अनुमति ली। अनुमति लेकर जहां नौका का स्थान था, वहां (समुद्र किनारे) आये।

तए णं तेसिं अरहन्नगपामोक्खाणं जाव वाणियगाणं परियणो तारिसेहिं वग्गूहिं अभिनंदंता य अभिसंथुणमाणा य एवं सी:–'अज्ज ! ताय ! भाय ! माउल ! भाइणेज्ज ! भगवया समु- अभिरक्खिज्जमाणा अभिरक्खिज्जमाणा चिरं जीवह, भद्दं च भे, वि लद्धट्ठे कयकज्जे अणहसमग्गे नियगं घरं हव्वमागए पासामो' कट्टु ताहिं सोमाहिं निद्धाहिं दीहाहिं सपिवासाहिं पप्पुयाहिं ोहिं निरीक्खमाणा मुहुत्तमेत्तं संचिट्ठंति।

तत्पश्चात् उन अर्हन्नक आदि यावत् नौका वणिकों के परिजन (परिवार ाग) यावत् उस प्रकार के मनोहर वचनों से अभिनन्दन करते हुए और ी प्रशंसा करते हुए इस प्रकार बोले:–

–'हे आर्य (पितामह) ! हे तात ! हे भ्रात ! हे मामा ! हे भागिनेय ! इस भगवान् समुद्र द्वारा पुनः पुनः रक्षण किये जाते हुए चिरजीवी हो। का मंगल हो ! हम आपको अर्थ का लाभ करके, इष्ट कार्य करके निर्दोष ज्यों के त्यों घर पर आया शीघ्र देखें।' इस प्रकार कह कर निर्विकार, मय, दीर्घ, पिपासा वाली–सतृष्ण और अश्रुप्लावित दृष्टि से देखते-देखते ोग मुहूर्त मात्र–थोड़ी देर–वहीं खड़े रहे।

तओ समाणिएसु पुप्फबलिकम्मेसु, दिन्नेसु सरसरत्तचंदणदद्दरपंचं- लितलेसु, अणुक्खित्तंसि धूवंसि, पूइएसु समुद्दवाएसु, संसारियासु यबाहासु, ऊसिएसु सिएसु झयग्गेसु, पडुप्पवाइएसु तूरेसु, जइएसु सउणेसु, गहिएसु रायवरसासणेसु, महया उक्किट्ठसीहनाय जाव णं पक्खुभियमहासमुद्दरवभूयं पिव मेइणिं करेमाणा एगदिसिं जाव णियगा णावं दुरूढा।

तत्पश्चात् नौका में पुष्पबलि (पूजा) कार्य समाप्त होने पर, सरस तचंदन का पाँचों उंगलियों का थापा (छापा) लगाने पर, धूप खेई जाने ; समुद्र की वायु की पूजा हो जाने पर, बलयवाहा (लम्बे काष्ठ–बल्ले) वास्थान सँभाल कर रख लेने पर, श्वेत पताकाएँ ऊपर फहरा देने पर, वाद्य [illegible] पर, यात्रा के लिए [illegible] ृष्ट सिंहनाद यावत् [illegible] पृथ्वी को [illegible]

रते हुए यावत् वे वणिक् एक तरफ से नौका पर चढ़े।

तओ पूसमाणवो वक्कमुदाहु-'हं भो ! सव्वेसिमवि अत्थसि
उवट्ठियाइं कल्लाणाइं, पडिहयाइं सव्वपावाइं, जुत्तो पूसो विजओ मु
अयं देसकालो ।'

तओ पूसमाणवेणं वक्कमुदाहिए हट्ठतुट्ठे कुच्छिधारकण्ण
गब्भिज्जसंजत्ताणावावाणियगा वावारिंसु, तं नावं पुण्णुच्छंगं पुण्ण
बंधणेहिंतो मुंचंति ।

तत्पश्चात् मन्त्रीजन ने इस प्रकार वचन कहा-हे व्यापारियो ! तु
को सर्व की सिद्धि हो, तुम्हें कल्याण प्राप्त हुए हैं, तुम्हारे समस्त पाप (
नष्ट हुए हैं । इस समय पुष्य नक्षत्र चन्द्रमा से युक्त है और विजय
मुहूर्त है अतः यह देश और काल यात्रा के लिए उत्तम है ।

तत्पश्चात् मंत्रीजन के द्वारा इस प्रकार वाक्य कहने पर हृष्ट-तु
कुक्षिधार-नौका की बगल में रह कर बल्ले चलाने वाले, कर्णधार (खेवैया)
गर्भज-नौका के मध्य में रहकर छोटे-मोटे कार्य करने वाले और वे सांयात्रि
नौकावणिक् अपने-अपने कार्य में लग गये । फिर भांडों से परिपूर्ण मध्य भा
वाली और मंगल से परिपूर्ण अग्रभाग वाली उस नौका को बंधनों से मु
किया ।

तए णं सा णावा विमुक्कबंधणा पवणबलसमाहया उस्सियसि
विततपक्खा इव गरुडजुवई गंगासलिलतिक्खसोयवेगेहिं संखुब्भमाणी
संखुब्भमाणी उम्मीतरंगमालासहस्साइं समतिच्छमाणी समतिच्छमाणी
कइवएहिं अहोरत्तेहिं लवणसमुद्दं अणेगाइं जोयणसयाइं ओगाढा ।

तत्पश्चात् वह नौका बन्धनों से मुक्त हुई, पवन के बल से प्रे
हुई । उस पर सफेद कपड़े का पाल चढ़ा हुआ था, अतएव ऐसी जान पड़
थी जैसे पंख फैलाये कोई गरुड़-युवती हो ! वह वह गंगा के जल के तीव्र प्र
के वेग से क्षुब्ध होती-होती हजारों मोटी तरंगों और छोटी तरंगों के समूह
उल्लंघन करती हुई-उल्लंघन करती हुई वह कुछ अहोरात्रों में लवणसमु
कई सौ योजन दूर चली गई ।

तए णं तेसिं अरहन्नगपामोक्खाणं संजत्तानावावाणियगाणं लव
समुद्दं अणेगाइं जोयणसयाइं ओगाढाणं समाणाणं बहूइं उप्पाइयस
पाउब्भूयाइं । तंजहा-

तत्पश्चात् कई सौ योजन लवणसमुद्र में पहुंचे हुए उन अर्हन्नक आदि सांयात्रिक नौकावणिकों को बहुत-से सैकड़ों उत्पात प्रादुर्भूत हुए-होने लगे। वे उत्पात इस प्रकार थे:—

अकाले गज्जिए, अकाले विज्जुए, अकाले थणियसद्दे, अभिक्खणं आगासे देवताओ णच्चंति, एगं च णं महं पिसायरूवं पासंति।

अकाल में गर्जना होने लगी, अकाल में बिजली चमकने लगी, अकाल में गंभीर गड़गड़ाहट होने लगी। बार-बार आकाश में देवता (मेघ) नृत्य करने लगे। एक महान् पिशाच का रूप दिखाई दिया।

तालजंघं दिवं गयाहिं बाहाहिं मसिमूसगमहिसकालगं, भरियमेहवन्नं, लंबोट्ठं, निग्गयग्गदंतं, निल्लालियजमलजुयलजीहं, आऊसियवयणगंडदेसं, चीणचिपिटनासियं, विगयभुग्गभुग्गभुमयं, खज्जोयगदित्तचक्खुरागं, उत्तासणगं, विसालवच्छं, विसालकुच्छिं, पलंबकुच्छिं, पहसियपयलियपयडियगत्तं, पणच्चमाणं, अप्फोडेंतं, अभिवयंतं, अभिगज्जंतं, बहुसो बहुसो अट्टट्टहासे विणिम्मुयंतं नीलुप्पलगवलगुलियअयसिकुसुमप्पगासं, खुरधारं असिं गहाय अभिमुहमावयमाणं पासंति।

[illegible]
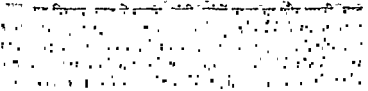
चपटी थी। भृकुटि डरावनी और अत्यन्त वक्र थी। नेत्रों का वर्ण जुगनू के समान चमकता हुआ-लाल था। देखने वाले को घोर त्रास पहुँचाने वाला था। छाती चौड़ी थी, कुक्षि विशाल और लंबी थी। हँसते और चलते समय उसके अवयव ढीले दिखाई देते थे। वह नाच रहा था, आकाश को मानो फोड़ रहा था, सामने आरहा था, गर्जना कर रहा था और बहुत-बहुत ठहाका मार रहा था। काले कमल, भैंस के सींग नील, अलसी के फूल के समान काली तथा छुरा की धार की तरह तीक्ष्ण तलवार लेकर आते हुए ऐसे पिशाच को देखा।

तए णं ते अरहण्णगवज्जा संजत्ताणावावाणियगा एगं च णं महं

तालपिसायं पासंति—तालजंघं, दिवं गयाहिं बाहाहिं, फुट्टसिरं भम-रणिगरवरमासरासिमहिसकालगं, भरियमेहवण्णं, सुप्पणहं, फालसरिस-जीहं, लंबोट्ठं धवलवट्टअसिलिट्ठतिक्खथिरपीणकुडिलदाढोवगूढवयणं, विकोसियधारासिजुयलसमसरिसतणुयचंचलगलंतरसलोलचवलफुरुफुरंत-निल्लालियग्गजीहं अवयच्छियमहल्लविगयबीभच्छलालपगलंतरत्ततालुयं हिंगुलुयसगब्भकंदरबिलं व अंजणगिरिस्स, अग्गिजालुग्गिलंतवयणं आऊसियअक्खचम्मउइट्ठगंडदेसं चीणचिमिडवंकभग्गणासं, रोसागय-धमधमेन्तमारुयनिट्ठुरखरफरुसझुसिरं, ओभुग्गणासियपुडं घाडुब्भड-रइयभीसणमुहं, उद्धमुहकन्नसक्कुलियमहंतविगयलोमसंखालगलंबंत-चलियकन्नं, पिंगलदिप्पंतलोयणं, भिउडितडियनिडालं नरसिरमाल-परिणद्धचिंधं, विचित्तगोणससुबद्धपरिकरं अवहोलंतपुप्फुयायंतसप्प-विच्छुयगोधुंदुरनउलसरडविरइयविचित्तवेयच्छमालियागं, भोगकूर-कण्हसप्पधमधमेंतलंबंतकन्नपूरं, मज्जारसियाललइयखंधं, दित्तघूघू-यंतघूयकयकुंतलसिरं, घंटारवेण भीमं, भयंकरं, कायरजणहिययफोडणं, दित्तमट्टट्टहासं विणिम्मुयंतं, वसा-रुहिर-पूय-मंस-मलमलिणपोच्चडतणुं, उत्तासणयं, विसालवच्छं, पेच्छंताभिन्नणह-मुह-नयण-कन्नवरवग्घ-चित्तकत्तीणियसणं, सरसरुहिरगयचम्मविततऊसवियबाहुजुयलं, य खरफरुसअसिणिद्धअणिट्ठदित्तअसुभअप्पियअकंतवग्गूहि य पासंति।

(पूर्ववर्णित तालपिशाच का ही यहाँ विशेष वर्णन किया है। दूसरा गम है)

तत्पश्चात् अर्हन्नक के सिवाय दूसरे सांयात्रिक नौका वणिकों ने एक तालपिशाच को देखा। उसकी जांघें ताड़ वृक्ष के समान लम्बी थीं और आकाश तक पहुंची हुई खूब लम्बी थीं। उसका मस्तक फूटा हुआ था, मस्तक के केश बिखरे थे। वह भ्रमरों के समूह उत्तम उड़द के ढेर और भैं के समान काला था। जल से परिपूर्ण मेघों के समान श्याम था। उसके सूप (छाजले) के समान थे। उसकी जीभ हल के फाल के समान थी—यावत पञ्च प्रमाण अग्नि में तपाये गये लोहे के फाल के समान लाल,

र लम्बी थी। उसके होठ लंबे थे। उसका मुख धवल गोल, पृथक्-पृथक्, तीखी, र, मोटी और टेढ़ी दाढों से व्याप्त था। उसके दो जिह्वाओं के अग्रभाग बिना ान की धारदार तलवार-युगल के समान थे, पतले थे, चपल थे उनमें से निर- र लार टपक रही थी। वह रस-लोलुप थे, चंचल थे, लपलपा रहे थे और मुख बाहर निकले हुए थे। मुख फटा होने से उसका लाल-लाल तालु खुला दिखाई ा था और वह बड़ा, विकृत, वीभत्स और लार झराने वाला था। उसके व में अग्नि की ज्वालाएँ निकल रही थीं, अतएव वह ऐसा जान पड़ता था, से हिंगलु से व्याप्त अंजनगिरि की गुफा रूप बिल हो। सिकुड़े हुए मोठ चरस) के समान उसके गाल सिकुड़े हुए थे, अथवा उसकी इन्द्रियाँ, शरीर चमड़ी, होठ और गाल-'सब सल वाले थे। उसकी नाक छोटी थी, चपटी , टेढ़ी थी और भग्न थी, अर्थात् ऐसी जान पड़ती थी जैसे लोहे के घन से पीट दी गई हो। उसके दोनों नथुनों (नासिकापुटों) से क्रोध के कारण कलता हुआ श्वासवायु निष्ठुर और अत्यन्त कर्कश था। उसका मुख मनुष्य ादि के घात के लिए रचित होने से भीषण दिखाई देता था। उसके दोनों कान लि और लम्बे थे, उनकी शष्कुली ऊँचे मुख वाली थी, उन पर लम्बे-लम्बे र विकृत बाल थे और वे कान नेत्र के पास की हड्डी (शंख) तक को छूते । उसके नेत्र पीले और चमकदार थे। उसके ललाट पर भ्रकुटि चढ़ी थी जो जली जैसी दिखाई देती थी। उसकी ध्वजा के चारों ओर मनुष्यों के मुंडों माला लिपटी हुई थी। विचित्र प्रकार के गोनस जाति के सर्पों का उसने र बना रक्खा था। उसने इधर-उधर फिरते और फुफकारने वाले सर्पों,

[illegible] की उत्तरासंग

[illegible] हुए दो काले

[illegible] यों पर बिलाव

[illegible] अपने मस्तक पर देदीप्यमान एवं धू-धू ध्वनि करने वाले [illegible] का मुकुट बनाया था। वह घंटा के शब्द के कारण भीम और भयंकर [illegible]त होता था। कायर जनों के हृदय को दलन करने वाला था। वह देदीप्य- [illegible] अट्टहास कर रहा था। उसका शरीर चर्बी, रक्त, मवाद, मांस और मल [illegible] मलिन और लिप्त था। वह प्राणियों को त्रास उत्पन्न करता था। उसकी [illegible] चौड़ी थी। उसने श्रेष्ठ व्याघ्र का ऐसा चित्र विचित्र चमड़ा पहन रक्खा [illegible] जिसमें (व्याघ्र के) नाखून (रोम) मुख, नेत्र और कान आदि अवयव [illegible] और साफ दिखाई पड़ते थे। उसने ऊपर उठाये हुए दोनों हाथों पर रस और [illegible]र से लिप्त हाथी का चमड़ा फैला रक्खा था। वह पिशाच नौका पर बैठे [illegible] लोगों को, अत्यन्त कठोर, स्नेहहीन, अनिष्ट, उत्तापजनक, स्वरूप से हो [illegible]म, अप्रिय तथा अकान्त-अनिष्ट स्वर वाली (अमनोहर) वाणी से तर्जना

कर रहा था। ऐसा भयानक पिशाच उन लोगों को दिखाई दिया।

तं तालपिसायरूवं एज्जमाणं पासंति, पासित्ता भीया संजायभया अन्नमन्नस्स कायं समतुरंगेमाणा समतुरंगेमाणा बहूणं इंदाण य खंदाण य रुद्दसिववेसमणणागाणं भूयाण य जक्खाण य अज्जकोट्टकिरियाण य बहूणि उवाइयसयाणि ओवाइयमाणा ओवाइयमाणा चिट्ठंति।

उन लोगों ने तालपिशाच के रूप को नौका की ओर आता देखा। देखकर वे डर गये, अत्यन्त भयभीत हुए, एक दूसरे के शरीर से चिपट गये और बहुत से इन्द्रों की, स्कंदों (कार्तिकेय) की तथा रुद्र, शिव, वैश्रमण, और नागदेवों की, भूतों की, यक्षों की दुर्गा की तथा कोट्टक्रिया (महिषवाहिनी दुर्गा) देवी की बहुत-बहुत सैकड़ों मनौतियाँ मनाने लगे।

तए णं से अरहन्नए समणोवासए तं दिव्वं पिसायरूवं एज्जमाणं पासइ, पासित्ता अभीए अतत्थे अचलिए असंभंते अणाउले अणुव्विग्गे अभिण्णमुहरागणयणवण्णे अदीणविमणमाणसे पोयवहणस्स एगदेसंसि वत्थंतेणं भूमिं पमज्जइ, पमज्जित्ता ठाणं ठाइ, ठाइत्ता करयल ... एवं वयासी–

'नमोऽत्थु णं अरहंताणं भगवंताणं जाव ठाणं संपत्ताणं, जइ णं अहं एत्तो उवसग्गाओ मुंचामि तो मे कप्पइ पारित्तए, अह णं एत्तो उवसग्गाओ ण मुंचामि तो मे तहा पच्चक्खाएयव्वे' त्ति कट्टु, सागारं भत्तं पच्चक्खाइ।

उस समय अर्हन्नक श्रमणोपासक ने उस दिव्य पिशाचरूप को आता देखा। उसे देख कर वह तनिक भी भयभीत नहीं हुआ, त्रास को प्राप्त नहीं हुआ, चलायमान नहीं हुआ, संभ्रान्त नहीं हुआ, व्याकुल नहीं हुआ, उद्विग्न नहीं हुआ। उसके मुख का राग और नेत्रों का वर्ण बदला नहीं। उसके मन में दीनता या खिन्नता उत्पन्न नहीं हुई। उसने पोतवहन के एक भाग में वस्त्र के छोर से भूमि का प्रमार्जन किया। प्रमार्जन करके उस स्थान पर बैठ गया और दोनों हाथ जोड़ कर इस प्रकार बोला:—

'अरिहन्त भगवन्त यावत् सिद्धि को प्राप्त प्रभु को नमस्कार

...कार नमोत्थुणं का पूरा पाठ उच्चारण किया)। फिर कहा—'यदि मैं इस उप... ...र्ग से मुक्त हो जाऊँ तो मुझे यह कायोत्सर्ग पारना कल्पता है, और यदि इस ...पसर्ग से मुक्त न होऊँ तो यही प्रत्याख्यान कल्पता है, अर्थात् कायोत्सर्ग ...रना नहीं कल्पता।' इस प्रकार कह कर उसने सागारी अनशन को ग्रहण ...या।

तए णं से पिसायरूवे जेणेव अरहन्नए समणोवासए तेणेव उवा... ...च्छइ, उवागच्छित्ता अरहन्नगं एवं वयासीः—

'हं भो अरहन्नगा! अपत्थियपत्थिया! जाव परिवज्जिया! णो ...लु कप्पइ तव सीलव्वयगुणवेरमणपच्चक्खाणे पोसहोववासाइं चालि... ...ए वा एवं खोभेत्तए वा, खंडित्तए वा, भंजित्तए वा, उज्झित्तए वा, ...रिच्चइत्तए वा। तं जइ णं तुमं सीलव्वयं जाव ण परिचयसि तो ते ...हं एयं पोयवहणं दोहिं अंगुलियाहिं गेण्हामि, गेण्हित्ता सत्तट्ठतल... ...उड्ढं वेहासे उव्विहामि, उव्विहित्ता अंतो जलंसि णिच्छो... ...मं अट्टदुहट्टवसट्टे असमाहिपत्ते अकाले चेव जीवियाओ ...ववरोविज्जसि।'

तत्पश्चात् वह पिशाचरूप वहाँ आया, जहाँ अर्हन्नक श्रमणोपासक था। ...कर अर्हन्नक से इस प्रकार बोलाः—

'अरे अप्रार्थित-मौत-की प्रार्थना (इच्छा) करने वाले! यावत् लज्जा ...र्ति बुद्धि और लक्ष्मी से परिवर्जित! तुझे शीलव्रत-अणुव्रत, गुणव्रत, ...रमण-रागादि की विरति का प्रकार, नवकारसी आदि प्रत्याख्यान और ...पधोपवास से चलायमान होना अर्थात् जिस भांगे से जो व्रत ग्रहण किया हो ...ने बदल कर दूसरे भांगे से कर लेना, क्षोभयुक्त होना अर्थात् 'इस व्रत को इसी ...पर पालूँ या त्याग दूँ' ऐसा सोच कर क्षुब्ध होना, एक देश से खंडित करना; ...तरह भंग करना, देशविरति का सर्वथा त्याग करना अथवा सम्यक्त्व का ...परित्याग करना कल्पता नहीं है। परन्तु यदि तू शीलव्रत आदि का परित्याग ...करता तो मैं तेरे इस पोतवहन को दो उंगलियों पर उठाए लेता हूँ और सात ...ठ तल की ऊँचाई तक आकाश में उछाले देता हूँ और उछाल कर इसे जल ...अन्दर डुबाए देता हूँ, जिससे तू आर्त्तध्यान के वशीभूत होकर, असमाधि ...प्राप्त होकर जीवन से रहित हो जायगा।

तए णं से अरहन्नए समणोवासए तं देवं मणसा चेव एवं वयासी-'अहं णं देवाणुप्पिया ! अरहन्नए णामं समणोवासए अहिगयजीवाजीवे, नो खलु अहं सक्का केणइ देवेण वा जाव निग्गंथाओ पावयणाओ चालित्तए वा खोभेत्तए वा विपरिणामेत्तए वा, तुमं णं जा सद्धा तं करेहि त्ति कट्टु अभीए जाव अभिन्नमुहरागणयणवण्णे अदीणविमणमाणसे निच्चले निप्फंदे तुसिणीए धम्मज्झाणोवगए विहरइ।

तब अर्हन्नक श्रमणोपासक ने उस देव को मन ही मन इस प्रकार कहा-'देवानुप्रिय ! मैं अर्हन्नक नामक श्रावक हूँ और जड़-चेतन के स्वरूप का ज्ञाता हूँ (मुझे कुछ ऐसा-वैसा अज्ञानी या कायर मत समझना)। निश्चय ही मुझे कोई देव या दानव निर्ग्रन्थ प्रवचन से चलायमान नहीं कर सकता, क्षुब्ध नहीं कर सकता और विपरीत भाव उत्पन्न नहीं कर सकता। तुम्हारी जो श्रद्धा (इच्छा) हो सो करो।'

इस प्रकार कह कर अर्हन्नक निर्भय, अपरिवर्त्तित मुख के रंग और नेत्रों के वर्ण वाला, दैन्य और मानसिक खेद से रहित, निश्चल, निस्पंद, मौन और धर्म-ध्यान में लीन बना रहा।

तए णं से दिव्वे पिसायरूवे अरहन्नगं समणोवासयं दोच्चं पि तच्चं पि एवं वयासी-'हं भो अरहन्नगा !' जाव अदीणविमणमाणसे निच्चले निप्फंदे तुसिणीए धम्मज्झाणोवगए विहरइ।

तत्पश्चात् वह दिव्य पिशाचरूप अर्हन्नक श्रमणोपासक से दूसरी बार और तीसरी बार कहने लगा-'अरे अर्हन्नक !' इत्यादि पूर्ववत्। यावत् अर्हन्नक ने वही उत्तर दिया और वह दीनता एवं मानसिक खेद से रहित, निश्चल, निस्पंद, मौन और धर्मध्यान में लीन बना रहा।

तए णं से दिव्वे पिसायरूवे अरहन्नगं धम्मज्झाणोवगयं पासइ, पासित्ता बलियतरागं आसुरुत्ते तं पोयवहणं दोहिं अंगुलियाहिं गिण्हइ, गिण्हित्ता सत्तट्ठ (ता) लाइं जाव अरहन्नगं एवं वयासी-'हं भो अरहन्नगा ! अपत्थियपत्थिया ! णो खलु कप्पइ तव सीलव्वय० जाव धम्मज्झाणोवगए विहरइ।

तत्पश्चात् उस दिव्य पिशाचरूप ने अर्हन्नक को धर्मध्यान में लीन देखा देखकर उसने और अधिक कुपित होकर उस पोतवहन को दो उंगलियों से पकड़ [illegible] ऊँचाई तक ऊप [illegible] करने वाले ! मुझे [illegible] चेतन। इस प्रका हने पर भी अर्हन्नक किंचित् भी चलायमान न हुआ और धर्मध्यान में लीन बना रहा।

तए णं से पिसायरूवे अरहन्नगं जाहे नो संचाएइ निग्गंथाओ० ालित्तए वा० ताहे उवसंते जाव निव्विण्णे तं पोयवहणं सणियं सणियं उवरिं जलस्स ठवेइ, ठवित्ता तं दिव्वं पिसायरूवं पडिसाहरइ, पडिसाह रेत्ता दिव्वं देवरूवं विउव्वइ, विउव्वित्ता अंतलिक्खपडिवन्ने सखिं खिणियाई जाव परिहिए अरहन्नगं समणोवासयं एवं वयासी:—

तत्पश्चात् वह पिशाचरूप जब अर्हन्नक को निर्ग्रन्थप्रवचन से चलायमा रने में समर्थ न हुआ, तब वह उपशान्त हो गया, यावत् मन में खेद को प्राप्त हुआ। फिर उसने उस पोतवहन को धीरे-धीरे उतार कर जल के ऊप रखा। रख कर पिशाच के दिव्य रूप का संहरण किया और दिव्य देव के रूप की विक्रिया की। विक्रिया करके, ऊपर स्थिर होकर घुंघरुओं की छम छम की ध्वनि से युक्त वस्त्राभूषण धारण करके अर्हन्नक श्रमणोपासक से इ प्रकार कहा—

"हं भो अरहन्नगा ! धन्नोऽसि णं तुमं देवाणुप्पिया ! जाव जीवियफले, जस्स णं तव निग्गंथे पावयणे इमेयारूवा पडिवत्ती लद्धा पत्ता अभिसमन्नागया, एवं खलु देवाणुप्पिया ! सक्के देविंदे देवराया सोहम्मे कप्पे सोहम्मवडिंसए विमाणे सभाए सुहम्माए बहूणं देवाणं मज्झगए महया सद्देणं आइक्खइ—'एवं खलु जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे चंपाए नयरीए अरहन्नए समणोवासए अहिगयजीवाजीवे, नो खलु सक्का केणइ देवेण वा दाणवेण वा निग्गंथाओ पावयणाओ चालित्तए वा जाव विपरिणामित्तए वा।

तए णं अहं देवाणुप्पिया ! सक्कस्स देविंदस्स एयमट्ठं नो सद्दहामि, नो रोयमाणे। तए णं मम इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समु-

जित्था–'गच्छामि णं अरहन्नगस्स अंतियं पाउब्भवामि, जाणामि ताव अहं अरहन्नगं किं पियधम्मे ? णो पियधम्मे ? दढधम्मे ? नो दढधम्मे ? सीलव्वयगुणे किं चालेइ जाव परिच्चयइ ? णो परिच्चयइ ? त्ति कट्टु एवं संपेहेमि, संपेहित्ता ओहिं पउंजामि, पउंजित्ता देवाणुप्पिया ! ओहिणा आभोएमि, आभोइत्ता उत्तरपुरच्छिमं दिसीभागं उत्तरवेउव्वियं समुग्घामि, ताए उक्किट्ठाए जाव जेणेव लवणसमुद्दे जेणेव देवाणुप्पिए तेणेव उवागच्छामि । उवागच्छित्ता देवाणुप्पियाणं उवसग्गं करेमि । नो चेव णं देवाणुप्पिया भीया वा तत्था वा, तं जं णं सक्के देविंदे देवराया वदइ, सच्चे णं एसमट्ठे । तं दिट्ठे णं देवाणुप्पियाणं इड्ढी जुई जसे बले जाव परक्कमे लद्धे पत्ते अभिसमन्नागए । तं खामेमि णं देवाणुप्पिया ! खमंतुमरहंतु णं देवाणुप्पिया ! णाइ भुज्जो भुज्जो एवं करणयाए ।' त्ति कट्टु पंजलिउडे पायवडिए एयमट्ठं भुज्जो भुज्जो खामेइ, खामित्ता अरहन्नयस्स दुवे कुंडलजुयले दलयइ, दलइत्ता जामेव दिसिं पाउब्भूए तामेव पडिगए ।

'हे अर्हन्नक ! तुम धन्य हो । हे देवानुप्रिय ! तुम्हारा जीवन सफल है कि जिसको अर्थात् तुम को निर्ग्रन्थप्रवचन में इस प्रकार की प्रतिपत्ति लब्ध हुई है, प्राप्त हुई है और आचरण में लाने के कारण सम्यक् प्रकार से सन्मुख आई है । हे देवानुप्रिय ! देवों के इन्द्र और देवों के राजा शक्र ने सौधर्म कल्प में सौधर्मावतंसक नामक विमान में और सुधर्मा सभा में, बहुत-से देवों के मध्य में स्थित होकर महान् शब्दों से इस प्रकार कहा–इस प्रकार निस्सन्देह जम्बूद्वीप नामक द्वीप में, भरत क्षेत्र में, चम्पा नगरी में अर्हन्नक नामक श्रमणोपासक जीव अजीव आदि तत्त्वों का ज्ञाता है । उसे निश्चय ही कोई देव या दानव निर्ग्रन्थप्रवचन से चलायमान करने में यावत् सम्यक्त्व से च्युत करने में समर्थ नहीं है ।'

'तब हे देवानुप्रिय ! देवेन्द्र शक्र की इस बात पर मुझे श्रद्धा नहीं हुई। यह बात रुची नहीं । तब मुझे इस प्रकार का विचार उत्पन्न हुआ–'मैं जाऊँ और अर्हन्नक के समीप प्रकट होऊँ । पहले जानूँ कि अर्हन्नक को धर्म प्रिय है अथवा धर्म प्रिय नहीं है । यह दृढधर्मा है अथवा दृढधर्मा नहीं है ? यह शील व्रत गुणव्रत आदि से चलायमान होता है, यावत् उनका परित्याग करता

है, अथवा नहीं करता ? मैंने इस प्रकार विचार किया। विचार करके अवधि-ज्ञान का उपयोग लगाया। उपयोग लगा कर हे देवानुप्रिय ! मैंने जाना। जान कर ईशान कोण में जाकर उत्तरवैक्रिय करने के लिए वैक्रिय समुद्घात किया। पश्चात् उत्कृष्ट यावत् शीघ्र गति से जहां लवणसमुद्र था और जहां देवानुप्रिय (तुम) थे, वहां मैं आया। आकर मैंने देवानुप्रिय को उपसर्ग किया। मगर देवानुप्रिय भयभीत न हुए, त्रास को प्राप्त न हुए। अतः देवेन्द्र देवराज ने जो कहा था, वह अर्थ सत्य सिद्ध हुआ। मैंने देखा कि देवानुप्रिय को ऋद्धि-गुण-रूप समृद्धि, द्युति-तेजस्विता, यश, शारीरिक बल, यावत् पराक्रम लब्ध हुआ है, प्राप्त हुआ है और उसका भलीभांति सेवन किया गया है। तो हे देवानुप्रिय ! मैं आपको खमाता हूं। आप क्षमा करें। हे देवानुप्रिय ! पुनः पुनः मैं ऐसा नहीं करूंगा।' इस प्रकार कह कर दोनों हाथ जोड़ कर देव अर्हन्नक के पांवों में गिर गया और इस घटना के लिए बार-बार विनयपूर्वक क्षमायाचना करने लगा। क्षमायाचना करके अर्हन्नक को दो कुंडल-युगल भेंट किये। भेंट करके जिस दिशा से प्रकट हुआ था, उसी दिशा में लौट गया।

तए णं से अरहन्नए निरुवसग्गमिति कट्टु पडिमं पारेइ। तए णं ते अरहन्नगपामोक्खा जाव वाणियगा दक्खिणाणुकूलेणं वाएणं जेणेव गंभीरए पोयपट्टणे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता पोयं लंबेंति लंबित्ता सगडिसागडं सज्जेंति, सज्जित्ता तं गणिमं धरिमं मेज्ज [illegible] [illegible]सागडं जोएंति, [illegible] गच्छित्ता मिहि- [illegible] मोएइ, मोइत्ता मिहिलाए रायहाणीए तं महत्थं महग्घं महरिहं विउलं रायरिहं पाहुडं कुंडलजुयलं च गेण्हंति, गेण्हित्ता, मिहिलाए रायहाणीए अणुपविसंति, अणुपविसित्ता जेणेव कुंभए राया तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता करयल जाव कट्टु तं महत्थं दिव्वं कुंडलजुयलं उवणेंति जाव पुरओ ठवेंति।

तत्पश्चात् अर्हन्नक ने उपसर्गरहित जान कर प्रतिमा पारी अर्थात् कायोत्सर्ग पारा। तदनन्तर वे अर्हन्नक आदि यावत् नौकावणिक् दक्षिण दिशा के अनुकूल पवन के कारण जहां गम्भीर नामक पोतपट्टन था, वहां आये। आकर उस पोत (नौका या जहाज) को रोक रोक कर गाड़ी-गाड़े तैयार किये।

करके वह गणिम, धरिम, मेय और पारिच्छेद्य भांड को गाड़ी-गाड़ों में भरा। भर कर गाड़ी-गाड़े जोते। जोत कर जहां मिथिला नगरी थी, वहां आये। आकर मिथिला नगरी के बाहर उत्तम उद्यान में गाड़ी-गाड़े छोड़े। छोड़ कर मिथिला नगरी में जाने के लिए वह महान् अर्थ वाला, महामूल्य वाला, महान् जनों के योग्य, विपुल और राजा के योग्य भेंट और कुंडलों की जोड़ी ली। लेकर मिथिला नगरी में प्रवेश किया। प्रवेश करके जहां कुंभ राजा था, वहां आये। आकर दोनों हाथ जोड़ कर—मस्तक पर अंजलि करके यावत् वह महान् अर्थ वाली भेंट और वह दिव्य कुंडलयुगल राजा के समीप ले गये, यावत् राजा के सामने रख दिया।

तए णं कुंभए राया तेसिं संजत्तगाणं जाव पडिच्छइ, पडिच्छित्ता मल्लीं विदेहवररायकन्नं सद्दावेइ, सद्दावित्ता तं दिव्वं कुंडलजुयलं मल्लीए विदेहवररायकन्नगाए पिणद्धइ, पिणद्धित्ता पडिविसज्जेइ।

तत्पश्चात् कुंभ राजा ने उन नौकावणिकों की वह भेंट यावत् अंगीकार की। अंगीकार करके विदेह की उत्तम राजकुमारी मल्ली को बुलाया। बुला कर वह दिव्य कुंडलयुगल विदेह की श्रेष्ठ राजकुमारी मल्ली को पहनाया। पहना कर उसे विदा कर दिया।

तए णं से कुंभए राया ते अरहन्नगपामोक्खे जाव वाणियगे विपुलेणं असण० वत्थगंधमल्लालंकारेणं जाव उस्सुक्कं वियरेइ, वियरित्ता रायमग्गमोगाढेइ, आवासे वियरइ, पडिविसज्जेइ।

तत्पश्चात् कुंभ राजा ने उन अर्हन्नक आदि यावत् वणिकों का विपुल अशन आदि से तथा वस्त्र गंध, माला और अलंकार से सत्कार किया। यावत् शुल्क माफ कर दिया। राजमार्ग के मध्य में उनको उतारा दिया और फिर उन्हें विदा किया।

तए णं अरहन्नगसंजत्तगा जेणेव रायमग्गमोगाढे आवासे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता भंडववहरणं करेंति, करित्ता पडिभंडं गेण्हंति, गेण्हित्ता सगडिसागडं भरेंति, जेणेव गंभीरए पोयपट्टणे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता पोयवहणं सज्जेंति, सज्जित्ता भंडं संकामेंति, दक्खिणाणु० जेणेव चंपापोयट्ठाणे तेणेव पोयं लंबेंति, लंबित्ता सगडिसागडं सज्जेंति, सज्जित्ता तं गणिमं धरिमं मेज्जं पारिच्छेज्जं सगडी-

सागडं संकामेंति, संकामेत्ता जाव महत्थं पाहुडं दिव्वं च कुंडलजुयलं गेण्हंति, गेण्हित्ता जेणेव चंदच्छाए अंगराया तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता तं महत्थं जाव उवणेंति ।

तत्पश्चात् वे अर्हन्नक आदि सांयात्रिक वणिक्, जहां राजमार्ग के मध्य [illegible] करके [illegible] उसके [illegible] पोत- [illegible] दक्षिण देशा के अनुकूल वायु के कारण जहाँ चम्पा नगरी का पोतस्थान (बन्दरगाह) था, वहाँ आये । आकर पोत को रोक कर गाड़ी-गाड़े ठीक किये । ठीक करके गणिम, धरिम, मेय और परिच्छेद्य-चार प्रकार का भांड उनमें भरा । भर कर यावत् बड़ी भेंट और दिव्य कुंडलयुगल ग्रहण किया । ग्रहण करके जहाँ अंगराज चन्द्रच्छाय था, वहाँ आये । आकर वह बड़ी भेंट यावत् राजा के सामने रक्खी ।

तए णं चंदच्छाए अंगराया तं दिव्वं महत्थं च कुंडलजुयलं पडिच्छइ, पडिच्छित्ता ते अरहन्नगपामोक्खे एवं वयासी-'तुब्भे णं देवाणुप्पिया ! बहूणि गामागर० जाव आहिंडह, लवणसमुद्दं च अभिक्खणं अभिक्खणं पोयवहणेहिं ओगाहेह, तं अत्थियाइं भे केइ कहिंचि अच्छेरए दिट्ठपुव्वे ?'

तत्पश्चात् चन्द्रच्छाय अंगराज ने उस दिव्य एवं महार्थ कुंडलयुगल (आदि) को स्वीकार किया । स्वीकार करके उन अर्हन्नक आदि से इस प्रकार कहा-'हे देवानुप्रियो ! आप बहुत-से ग्रामों, आकरों आदि में भ्रमण करते हो तथा बार-बार लवणसमुद्र में जहाज द्वारा प्रवेश करते हो तो आपने किसी जगह कोई भी आश्चर्य पहले देखा है ?'

तए णं ते अरहन्नगपामोक्खा चंदच्छायं अंगरायं एवं वयासी-'एवं खलु सामी ! अम्हे इहेव चंपाए नयरीए अरहन्नगपामोक्खा बहवे संजत्तगा णावावाणियगा परिवसामो, तए णं अम्हे अन्नया कयाई गणिमं च धरिमं च मेज्जं च परिच्छेज्जं च तहेव अहीणमतिरित्तं जाव कुंभगस्स रण्णो उवणेमो । तए णं से कुंभए मल्लीए

रायवरकन्नाए तं दिव्वं कुंडलजुयलं पिणद्धेइ, पिणद्धित्ता पडिविसज्जेइ। तं एस णं सामी ! अम्हेहिं कुंभगरायभवणंसि मल्ली विदेहरायवरकन्ना अच्छेरए दिट्ठे, तं नो खलु अन्ना काइ तारिसिया देवकन्ना वा जाव जारिसिया णं मल्ली विदेहरायवरकन्ना।

तब उन अर्हन्नक आदि वणिकों ने चन्द्रच्छाय नामक अंग देश के राजा से इस प्रकार कहा—हे स्वामिन् हम अर्हन्नक आदि बहुत-से सांयात्रिक नौकावणिक् इसी चम्पा नगरी में निवास करते हैं। एक बार किसी समय हम गणिम, धरिम, मेय और परिच्छेद्य भाण्ड भर कर—इत्यादि सब पहले की भाँति ही न्यूनता-अधिकता के बिना कहना,—यावत् कुंभ राजा के पास पहुँचे और उसके सामने रक्खी। उस समय कुंभ राजा ने मल्ली नामक विदेहराज की श्रेष्ठ कन्या को वह दिव्य कुंडलयुगल पहनाया। पहना कर उसे विदा कर दिया। तो हे स्वामिन् हमने कुंभ राजा के भवन में विदेहराज की श्रेष्ठ कन्या मल्ली आश्चर्य रूप में देखी है। मल्ली नामक विदेहराज की श्रेष्ठ कन्या जैसी सुन्दर है, वैसी दूसरी कोई देव कन्या आदि भी नहीं है।

तए णं चंदच्छाए ते अरहन्नगपामोक्खे सक्कारेइ, सम्माणेइ, सक्कारित्ता सम्माणित्ता पडिविसज्जेइ। तए णं चंदच्छाए वाणियजणियहासे दूतं सद्दावेइ, जाव जइ वि य णं सा सयं रज्जसुक्का। तए णं से दूते हट्ठे जाव पहारेत्थ गमणाए।

तत्पश्चात् चन्द्रच्छाय राजा ने अर्हन्नक आदि का सत्कार-सन्मान किया। सत्कार-सन्मान करके विदा किया। तदनन्तर वणिकों के कथन से उत्पन्न हुआ है हर्ष जिसको ऐसे चन्द्रच्छाय ने दूत को बुलाकर कहा—इत्यादि सब पूर्ववत् के समान कहना। यावत् भले ही वह कन्या मेरे सारे राज्य के मूल्य की हो तो भी स्वीकार करना। दूत हर्षित होकर मल्ली कुमारी की मँगनी के लिए चल दिया।

ते णं काले णं ते णं समए णं कुणाला नामं जणवए होत्था। तत्थ णं सावत्थी नामं नयरी होत्था। तत्थ णं रुप्पी कुणालाहिवई नामं राया होत्था। तस्स णं रुप्पिस्स धुया धारिणीए देवीए अत्तया सुबाहू नामं दारिया होत्था सुकुमाल० रूवेण य जोव्वणेण य लावण्णेण य उक्किट्ठा उक्किट्ठसरीरा जाया यावि होत्था। तीसे णं सुबाहूए दारियाए अन्नया चाउम्मासियमज्जणए जाए यावि होत्था।

उस काल और उस समय में कुणाल नामक जनपद था। उस जनप में श्रावस्ती नामक नगरी थी। उसमें कुणाल देश का अधिपति रुक्मि नाम राजा था। उस रुक्मि राजा की पुत्री और धारिणीदेवी की कूँख से जन्म सुबाहु नामक कन्या थी। उसके हाथ-पैर आदि सब अवयव सुन्दर थे। व रूप में यौवन में और लावण्य में उत्कृष्ट थी और उत्कृष्ट शरीर वाली थी। इ सुबाहु बालिका का किसी समय चातुर्मासिक स्नान (जलक्रीड़ा) का उत्सव आय

तए णं से रुप्पी कुणालाहिवई सुबाहुए दारियाए चाउम्मासिय- मज्जणयं उवट्ठियं जाणइ, जाणित्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्त एवं वयासी-एवं खलु देवाणुप्पिया! सुबाहुए दारियाए कल्ल चाउम्मासियमज्जणए भविस्सइ, तं कल्लं तुब्भे णं रायमग्गमोगाढंसि चउक्कंसि (पुप्फमंडवंसि) जलथलयदसद्धवण्णमल्लं साहरेह, जाव सिरिदामगंडं ओलइंति।

तब कुणालाधिपति रुक्मि राजा ने सुबाहु बालिका के चातुर्मासि स्नान का उत्सव आया जाना। जान कर कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया। बुल [illegible] ने चातुर्मासि [illegible] (पुष्प मंड [illegible] श्री और ए श्रीदाम काण्ड (सुशोभित मालाओं का समूह) [illegible] यहाँ आज्ञा सु कर उन कौटुम्बिक पुरुषों ने इसी प्रकार कार्य किया।

तए णं रुप्पी कुणालाहिवई सुवण्णगारसेणिं सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी-'खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! रायमग्गमोगाढंसि पुप्फ- मंडवंसि णाणाविहपंचवण्णेहिं तंदुलेहिं णगरं आलिहइ। तस्स बहुमज्झ- देसभाए पट्टयं रएह।' रइत्ता जाव पच्चप्पिणंति।

तत्पश्चात् कुणाल देश के अधिपति रुक्मि राजा ने सु-वर्णकारों की श्रेण को बुलाया। उसे बुला कर कहा-'हे देवानुप्रियो! शीघ्र ही राजमार्ग के मध में, पुष्पमंडप में विविध प्रकार के पँचरंगे चावलों से नगर का आलेखन करो उसके ठीक मध्य भाग में एक पाट (बाजोठ) रक्खो।' यह सुन कर उन्होंने इ प्रकार कह कर आज्ञा वापिस लौटाई।

तए णं से रुप्पी कुणालाहिवई हत्थिखंधवरगए चाउरंगिणीए

सेणाए महया भड० अंतेउरपरियालसंपरिवुडे सुबाहुं दारियं पुरओ कट्टु जेणेव रायमग्गे, जेणेव पुप्फमंडवे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता हत्थिखंधाओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता पुप्फमंडवं अणुपविसइ, अणुपविसित्ता सीहासणवरगए पुरत्थाभिमुहे सन्निसन्ने।

तत्पश्चात् कुणालाधिपति रुक्मि हाथी के श्रेष्ठ स्कन्ध पर आरूढ हुआ। चतुरंगी सेना, बड़े-बड़े योद्धाओं और अंतःपुर के परिवार आदि से परिवृत हो सुबाहु कुमारी को आगे करके, जहाँ राजमार्ग था और जहाँ पुष्पमंडप था, आया। आकर हाथी के स्कन्ध से नीचे उतरा। उतर कर पुष्पमंडप में प्रवेश किया। प्रवेश करके पूर्व दिशा की ओर मुख करके उत्तम सिंहासन पर आसीन हुआ।

तओ णं ताओ अंतेउरियाओ सुबाहुं दारियं पट्टयंसि दुरुहेंति, दुरुहित्ता सेयपीयएहिं कलसेहिं ण्हाणेंति, ण्हाणित्ता सव्वालंकारविभूसियं करेंति, करित्ता पिउणो पायं वंदिउं उवणेंति।

तए णं सुबाहुदारिया जेणेव रुप्पी राया तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पायग्गहणं करेइ। तए णं से रुप्पी राया सुबाहुं दारियं अंके निवेसेइ, निवेसित्ता सुबाहुए दारियाए रूवेण य जोव्वणेण य लावण्णेण य जाव विम्हिए वरिसधरं सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी-'तुमं णं देवाणुप्पिया! मम दोच्चेणं बहूणि गामागरनगरगिहाणि अणुपविससि, तं अत्थियाइं ते कस्सइ रण्णो वा ईसरस्स वा कहिंचि एयारिसए मज्जणए दिट्ठपुव्वे, जारिसए णं इमीसे सुबाहुदारियाए मज्जणए?

तत्पश्चात् अन्तःपुर की स्त्रियों ने सुबाहु कुमारी को उस पाट पर बिठलाया। बिठला कर श्वेत और पीत अर्थात् चाँदी और सोने आदि के कलशों से उसे स्नान कराया। स्नान करा कर सब अलंकारों से विभूषित किया। फिर पिता के चरणों में प्रणाम करने के लिए लाईं।

तब सुबाहु कुमारी रुक्मि राजा के पास आई। आ करके उसने पिता के चरणों का स्पर्श किया।

उस समय रुक्मि राजा ने सुबाहु कुमारी को अपनी गोद में बिठा लिया। बिठा कर सुबाहु कुमारी के रूप, यौवन और [illegible]

...उसने वर्षधर को बुलाया। बुला कर इस प्रकार कहा-
...दौत्य कार्य से बहुत-से ग्रामों, आकरों, नगरों औ
...ो तुमने कहीं भी किसी राजा या ईश्वर (धनवान्)
...न महोत्सव) पहले देखा है, जैसा इस सुबाहु कुमा
का मज्जन-महोत्सव है ?'

तए णं से वरिसधरे रुप्पिं करयल० एवं वदासी–एवं खलु सामी
अहं अन्नया तुब्भे णं दोच्चेणं मिहिलं गए, तत्थ णं मए कुंभगस्स
रण्णो धूयाए, पभावईए देवीए अत्तयाए मल्लीए विदेहरायवरकन्नगा
मज्जणए दिट्ठे, तस्स णं मज्जणगस्स इमे सुबाहुए दारियाए मज्जण
सयसहस्सइमं पि कलं न अग्घेइ।

तत्पश्चात् वर्षधर (अन्तःपुर के रक्षक पंड-विशेष) ने रुक्मि राजा
हाथ जोड़ कर इस प्रकार कहा—'हे स्वामिन्! एक बार मैं आपके दूत के रू
में मिथिला गया था। मैंने वहाँ कुंभ राजा की पुत्री और प्रभावती देवी क
आत्मजा विदेहराज की उत्तम कन्या मल्ली का स्नानमहोत्सव देखा था। सुबा
कुमारी का यह मज्जन-उत्सव उस मज्जनमहोत्सव के लाखवें अंश को भी ना
पा सकता।

तए णं से रुप्पी राया वरिसधरस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म
सेसं तहेव मज्जणगजणियहासे दूतं सद्दावेइ। सद्दावेत्ता एवं वयासी-
जेणेव मिहिला नयरी तेणेव पहारेत्थ गमणाए।

तत्पश्चात् वर्षधर से यह अर्थ सुन कर और हृदय में धारण करके
मज्जन-महोत्सव का वृत्तांत सुनने से जनित हर्ष वाले रुक्मि राजा ने दूत क
बुलाया। शेष सब वृत्तांत पहले के समान समझना। दूत को बुलाकर इस प्रका
कहा—(मिथिला नगरी में जाकर मेरे लिए मल्ली कुमारी की मँगनी करो
जिसमें मैं सारा राज्य देना पड़े तो उसे भी देना स्वीकार करना, आदि) यह सु
कर दूत ने मिथिला नगरी जाने का निश्चय किया-चल दिया।

तेणं कालेणं तेणं समएणं कासी नामं जणवए होत्था। तत्थ
णं वाणारसी नामं नयरी होत्था। तत्थ णं संखे नामं राया कासीराय
होत्था।

उस काल और उस समय में काशी नामक जनपद था। उस जनपद में वाणारसी नामक नगरी थी। उसमें काशीराज शंख नामक राजा था।

तए णं तीसे मल्लीए विदेहरायवरकन्नगाए अन्नया कयाइं तस्स दिव्वस्स कुंडलजुयलस्स संधी विसंघडिए यावि होत्था।

तए णं कुंभए राया सुवन्नगारसेणिं सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी–'तुब्भे णं देवाणुप्पिया! इमस्स दिव्वस्स कुंडलजुयलस्स संधिं संघाडेह।'

तत्पश्चात् किसी समय विदेहराज की उत्तम कन्या मल्ली के उस दिव्य कुंडलयुगल का जोड़ खुल गया। तब कुंभ राजा ने सुवर्णकारों की श्रेणी को बुलाया और कहा–देवानुप्रियो! इस दिव्य कुंडलयुगल के जोड़ को सांध दो।

तए णं सा सुवण्णगारसेणी एयमट्ठं तह त्ति पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता तं दिव्वं कुंडलजुयलं गेण्हइ, गेण्हित्ता जेणेव सुवण्णगारभिसियाओ तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता सुवण्णगारभिसियासु णिवेसेइ, णिवेसित्ता बहूहिं आएहि य जाव परिणामेमाणा इच्छंति तस्स दिव्वस्स कुंडलजुयलस्स संधिं घडित्तए, नो चेव णं संचाएंति संघडित्तए।

तत्पश्चात् सुवर्णकारों की श्रेणी ने 'तथा–ठीक है' इस प्रकार कह कर इस अर्थ को स्वीकार किया। स्वीकार करके उस दिव्य कुंडलयुगल को ग्रहण किया। ग्रहण करके जहाँ सुवर्णकारों के स्थान (ओजार रखने के स्थान) थे, वहाँ आये। आकरके उन स्थानों पर कुंडलयुगल रक्खा। रख कर बहुत से उपायों से उस कुंडलयुगल को परिणत करते हुए उसका जोड़ सांधना चाहा, परन्तु उसे सांधने में समर्थ न हो सके।

तए णं सा सुवन्नगारसेणी जेणेव कुंभए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता करयल० वद्धावेत्ता एवं वयासी–'एवं खलु सामी! तुब्भे अम्हे सद्दावेह। सद्दावेत्ता जाव संधिं संघाडेत्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह। तए णं अम्हे तं दिव्वं कुंडलजुयलं गेण्हामो। जेणेव सुवण्णगारभिसियाओ जाव नो संचाएमो संघाडित्तए। तए णं अम्हे सामी! एयस्स दिव्वस्स कुंडलस्स अन्नं सरिसयं कुंडलजुयलं घडेमो।'

तत्पश्चात् वह सुवर्णकार श्रेणी, कुंभ राजा के पास आई। आकर दोनों हाथ जोड़ कर और जय-विजय शब्दों से बधा कर प्रकार कहा-'स्वामिन्! आज आपने हम लोगों को बुलाया था। बुला कर यह आदेश दिया था कि कुंडलयुगल की संधि जोड़ कर मेरी आज्ञा वापिस लौटाओ। तब हमने वह दिव्य कुंडलयुगल लिया। हम अपने स्थानों पर गये, बहुत उपाय किये, परन्तु इस संधि को जोड़ने के लिए शक्तिमान् न हो सके। अतएव हे स्वामिन्! हम इस दिव्य कुंडलयुगल सरीखा दूसरा कुंडलयुगल बना दें।'

तए णं से कुंभए राया तीसे सुवण्णगारसेणीए अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म आसुरुत्ते, तिवलियं भिउडिं निडाले साहट्टु एवं वयासी:-

'से केणं तुब्भे कलायाणं भवह? जे णं तुब्भे इमस्स कुंडलजुयलस्स नो संचाएह संधिं संघाडेत्तए? ते सुवण्णगारे निव्विसए आणवेइ।

सुवर्णकारों का कथन सुन कर और हृदय में धारण करके कुम्भराजा क्रुद्ध हो गया। ललाट में तीन सलवट डाल कर इस प्रकार कहने लगा:-'तुम कैसे कलाकार हो जो इस कुंडलयुगल का जोड़ भी सांध नहीं सकते? अर्थात् तुम लोग बड़े मूर्ख हो! ऐसा कह कर उन्हें देशनिर्वासन की आज्ञा दे दी।

तए णं ते सुवण्णगारा कुंभेणं रण्णा निव्विसया आणत्ता समाणा जेणेव साइं साइं गिहाइं तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता सभंडमत्तोवगरणमायाओ मिहिलाए रायहाणीए मज्झंमज्झेणं निक्खमंति। निक्खमित्ता विदेहस्स जणवयस्स मज्झंमज्झेणं जेणेव कासी जणवए, जेणेव वाणारसी नयरी तेणेव उवागच्छंति। उवागच्छित्ता अग्गुज्जाणंसि सगडीसागडं मोएंति, मोइत्ता महत्थं जाव पाहुडं गेण्हंति, गेण्हित्ता वाणारसीनयरीं मज्झंमज्झेणं जेणेव संखे कासीराया तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता करयल० जाव वद्धावेंति, वद्धावित्ता पाहुडं पुरओ ठावेइ, ठावित्ता संखरायं एवं वयासी:-

तत्पश्चात् कुंभ राजा द्वारा देश निर्वासन की आज्ञा पाये हुए वे स्वर्णकार अपने-अपने घर आये। आ करके अपने भांड, पात्र और उपकरण आदि

लेकर मिथिला नगरी के बीचोंबीच होकर निकले। निकल कर विदेह जनपद के मध्य में होकर जहाँ काशी जनपद था और जहाँ वाणारसी नगरी थी, वहाँ आये। वहाँ आकर अग्र (उत्तम) उद्यान में गाड़ी-गाड़े छोड़े। छोड़ कर महान् अर्थ वाला यावत् उपहार लेकर, वाणारसी नगरी के बीचोंबीच होकर जहां काशीराज शंख था वहां आये। आकर दोनों हाथ जोड़ कर यावत् जय-विजय शब्दों से बधाया। बधा कर वह उपहार राजा के सामने रक्खा। रख कर शंख राजा से इस प्रकार निवेदन किया—

'अम्हे णं सामी! मिहिलाओ नयरीओ कुंभएणं रण्णा निव्विसया आणत्ता समाणा इहं हव्वमागया, तं इच्छामो णं सामी! तुब्भं बाहुच्छायापरिग्गहिया निब्भया निरुव्विग्गा सुहं सुहेणं परिवसित्तए।'

तए णं संखे कासीराया ते सुवण्णगारे एवं वयासी—'किं णं तुब्भे देवाणुप्पिया! कुंभएणं रण्णा निव्विसया आणत्ता?'

तए णं ते सुवण्णगारा संखं एवं वयासी—'एवं खलु सामी! कुंभगस्स रण्णो धूयाए पभावईए देवीए अत्तयाए मल्लीए कुंडलजुयलस्स संधी विसंघडिए। तए णं से कुंभए सुवण्णगारसेणिं सद्दावेइ, सद्दाविता जाव निव्विसया आणत्ता।'

'हे स्वामिन्! राजा कुंभ के द्वारा मिथिला नगरी से निर्वासित हुए हम शीघ्र यहां आये हैं। हे स्वामिन्! हम आपकी भुजाओं की छाया ग्रहण किये हुए होकर अर्थात् आपके शरण में रह कर निर्भय और उद्वेग-रहित होकर सुखपूर्वक निवास करना चाहते हैं।'

तब काशीराज शंख ने उन सुवर्णकारों से कहा—देवानुप्रियो! कुंभ ने तुम्हें देश-निकाले की आज्ञा क्यों दी?'

तब सुवर्णकारों ने शंख राजा से इस प्रकार कहा—स्वामिन्! कुंभ की पुत्री और प्रभावती देवी की आत्मजा मल्ली कुमारी के कुंडलयुगल का जोड़ खुल गया था। तब कुंभ राजा ने सुवर्णकारों की श्रेणी को बुलाया, बुला कर (उसे सांधने के लिए कहा। हम उसे सांध न सके, अतः) यावत् देशनिर्वासन की आज्ञा दे दी।'

तए णं से संखे सुवण्णगारे एवं वयासी—केरिसिया णं देवाणुप्पिया! कुंभगस्स धूया पभावईए देवीए अत्तया मल्ली विदेहरायवरकन्ना?'

तए णं ते सुवण्णगारा संखरायं एवं वयासी–णो खलु सामी ! अण्णा काई तारिसिया देवकन्ना वा गंधव्वकन्ना वा जाव जारिसिया णं मल्ली विदेहरायवरकन्ना ।

तए णं कुंडलजुयलजणियहासे दूतं सद्दावेइ, जाव तहेव पहारेत्थ गमणाए ।

तत्पश्चात् शंख राजा ने सुवर्णकारों से कहा– देवानुप्रियो ! कुंभ राजा की पुत्री और प्रभावती की आत्मजा मल्ली विदेहराज की श्रेष्ठ कन्या कैसी है ?'

तब सुवर्णकारों ने शंखराज से कहा–'स्वामिन् ! जैसी विदेहराज की श्रेष्ठ कन्या मल्ली है, वैसी कोई देवकन्या अथवा गंधर्वकन्या भी नहीं है।'

तत्पश्चात् कुंडल की जोड़ी से जनित हर्ष वाले शंख राजा ने दूत को बुलाया। इत्यादि सब वृत्तान्त पूर्ववत् जानना; अर्थात् शंख राजा ने भी मल्ली कुमारी की मँगनी के लिए दूत भेज दिया और उससे कह दिया कि मल्ली कुमारी के शुल्क रूप में सारा राज्य देना पड़े तो दे देना। दूत ने मिथिला जाने का निश्चय कर लिया।

ते णं काले णं ते णं समए णं कुरुजणवए होत्था, हत्थिणाउरे नयरे, अदीणसत्तू नामं राया होत्था, जाव विहरइ ।

उस काल और उस समय में कुरु नामक जनपद था। उसमें हस्तिनापुर नगर था। अदीनशत्रु नामक वहां राजा था। यावत् वह सुखपूर्वक विचरता था।

तत्थ णं मिहिलाए कुंभगस्स पुत्ते पभावईए अत्तए मल्लीए अणुजायए मल्लदिन्नए नाम कुमारे जाव जुवराया यावि होत्था ।

तए णं मल्लदिन्ने कुमारे अन्नया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी–'गच्छह णं तुब्भे मम पमदवणंसि एगं महं चित्तसभं करेह अणेग०' जाव पच्चप्पिणंति ।

उस मिथिला नगरी में कुंभ राजा का पुत्र, प्रभावती का आत्मज और मल्ली कुमारी का अनुज मल्लदिन्न नामक कुमार यावत् युवराज था।

उस समय एक बार मल्लदिन्न कुमार ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया। बुलाकर इस प्रकार कहा–तुम जाओ और मेरे प्रमद वन (घर के उद्यान) में

एक बड़ी चित्रसभा का निर्माण करो, जो अनेक स्तंभों से युक्त हो, इत्यादि। यावत् उन्होंने ऐसा ही करके आज्ञा वापिस लौटा दी।

तए णं मल्लदिन्ने कुमारे चित्तगरसेणिं सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी-'तुब्भे णं देवाणुप्पिया! चित्तसभं हावभावविलासविब्बोयकलिएहिं रूवेहिं चित्तेह। चित्तित्ता जाव पच्चप्पिणह।'

तए णं सा चित्तगरसेणी तह त्ति पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता जेणेव सयाइं गिहाइं, तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता तूलियाओ वण्णए गेण्हंति, गेण्हित्ता जेणेव चित्तसभा तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता अणुपविसंति, अणुपविसित्ता भूमिभागे विरंचंति (विहिंचंति), विरंचित्ता (विहिंचित्ता) भूमिं सज्जेंति, सज्जित्ता चित्तसभं हावभाव चित्तेउं पयत्ता यावि होत्था।

तत्पश्चात् मल्लदिन्न कुमार ने 'चित्रकारों की श्रेणी को बुलाया। बुला इस प्रकार कहा-'देवानुप्रिया! तुम लोग चित्रसभा को हाव,* भाव, और बिब्बोक से युक्त रूपों से चित्रित करो। चित्रित करके यावत् मेरी वापिस लौटाओ।

तत्पश्चात् चित्रकारों की श्रेणी ने तथा-बहुत ठीक' इस प्रकार कुमार की आज्ञा शिरोधार्य की। फिर वे अपने-अपने घर गये। घर उन्होंने तूलिकाएँ लीं और रंग लिये। लेकर जहां चित्रसभा थी वहां आकर चित्रसभा में प्रवेश किया प्रवेश करके भूमि के विभागों का किया। विभाजन करके अपनी-अपनी भूमि को सज्जित किया-चित्रों बनाया। सज्जित करके चित्रसभा को हाव-भाव आदि से युक्त चि करने में लग गये।

तए णं एगस्स चित्तगरस्स इमेयारूवा चित्तगरलद्धी लद्ध अभिसमन्नागया-जस्स णं दुपयस्स वा चउप्पयस्स वा अप एगदेसमवि पासइ, तस्स णं देसाणुसारेणं तयाणुरूवं निव्वत्तेइ

* हाव-भाव आदि साधारणतया स्त्रियों की चेष्टाओं को कहते परस्पर अन्तर यह है-हाव अर्थात् मुख का विकार, भाव अर्थात् चित्त का वि अर्थात् नेत्र विकार और बिब्बोक अर्थात् इष्ट अर्थ की प्राप्ति से उत्पन्न अभिमान का भाव।

तब मल्लदिन्न ने धाय माता से इस प्रकार कहा-'माता ! मेरी गुरु और देवता के समान ज्येष्ठ भगिनी के, जिससे मुझे लज्जित होना चाहिए, सामने, चित्रकारों की बनाई इस सभा में प्रवेश करना क्या योग्य है ?'

तए णं अम्मधाई मल्लदिन्नं कुमारं एवं वयासी-'नो खलु पुत्ता ! एस मल्ली, विदेहवररायकन्ना चित्तगरएणं तयाणुरूवे निव्वत्तिए ।

तए णं मल्लदिन्ने कुमारे अम्मधाईए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म आसुरुत्ते एवं वयासी-'केस णं भो !. चित्तयरए अपत्थियपत्थिए जाव परिवज्जिए ? जेणं ममं जेट्ठाए भगिणीए गुरुदेवयभूयाए जाव निव्वत्तिए ? त्ति कट्टु तं चित्तगरं वज्झं आणवेइ ।

तब धाय माता ने मल्लदिन्न कुमार से इस प्रकार कहा-'हे पुत्र ! निश्चय ही यह साक्षात् मल्ली नहीं है; परन्तु यह विदेह की उत्तम कुमारी मल्ली चित्रकार ने उसके अनुरूप बनाई है-चित्रित की है ।'

तब मल्लदिन्न कुमार धाय माता के इस अर्थ को सुन कर और हृदय में धारण करके एकदम क्रुद्ध हो उठा और बोला-'कौन है वह चित्रकार मौत की इच्छा करने वाला, यावत् लज्जा बुद्धि आदि से रहित, जिसने गुरु और देवता के समान मेरी ज्येष्ठ भगिनी का यावत् चित्र बनाया है ?' इस प्रकार कह कर उसने चित्रकार के वध की आज्ञा दे दी ।

तए णं सा चित्तगरस्सेणी इमीसे कहाए लद्धट्ठा समाणा जेणेव मल्लदिन्ने कुमारे तेणेव उवागच्छइ । उवागच्छित्ता करयलपरिग्गहियं जाव वद्धावेइ, वद्धावित्ता एवं वयासी-

'एवं खलु सामी ! तस्स चित्तगरस्स इमेयारूवा चित्तगरलद्धी लद्धा पत्ता अभिसमन्नागया, जस्स णं दुपयस्स वा जाव णिव्वत्तेति, तं मा णं सामी ! तुब्भे तं चित्तगरं वज्झं आणवेह । तं तुब्भे णं सामी ! तस्स चित्तगरस्स अन्नं तयाणुरूवं दंडं निव्वत्तेह ।'

तत्पश्चात् चित्रकारों की वह श्रेणी इस कथा-वृत्तान्त का अर्थ सुन कर और समझ कर जहाँ मल्लदिन्न कुमार था, वहाँ आई । आकर दोनों हाथ जोड़ कर यावत् मस्तक पर अंजलि करके कुमार को वधाया । वधा कर इस प्रकार कहा-

तए णं मल्लदिन्ने कुमारे अन्नया ण्हाए अंतेउरपरियालसंपरिवुडे अम्मधाईए सद्धिं जेणेव चित्तसभा तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता चित्तसभं अणुपविसइ। अणुपविसित्ता हावभावविलासविब्बोयकलियाइं रूवाइं पासमाणे पासमाणे जेणेव मल्लीए विदेहवररायकन्नाए तयाणुरूवे निव्वत्तिए तेणेव पहारेत्थ गमणाए।

तए णं से मल्लदिन्ने कुमारे मल्लीए विदेहवररायकन्नाए तयाणुरूवं निव्वत्तियं पासइ, पासित्ता इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था- 'एस णं मल्ली विदेहवररायकन्न' त्ति कट्टु लज्जिए वीडिए विअडे सणियं सणियं पच्चोसक्कइ।

तत्पश्चात् किसी समय मल्लदिन्न कुमार स्नान करके, वस्त्राभूषण धारण करके, अन्तःपुर एवं परिवार सहित, धायमाता को साथ लेकर, जहाँ चित्रसभा थी, वहाँ आया। आकर चित्रसभा के भीतर प्रवेश किया। प्रवेश करके हाव, भाव, विलास और विब्बोक से युक्त रूपों (चित्रों) को देखता-देखता जहाँ विदेह की श्रेष्ठ राजकन्या मल्ली का, उसी के अनुरूप चित्र बना था, वहाँ जाने को तैयार हुआ।

तत्पश्चात् मल्लदिन्न कुमार ने विदेह की उत्तम राजकुमारी मल्ली का उसके अनुरूप बना हुआ चित्र देखा। देख कर उसे इस प्रकार का विचार उत्पन्न हुआ-'अरे, यह तो विदेहवरराजकन्या मल्ली है!' यह विचार आते ही वह लज्जित हो गया, व्रीडित हो गया और व्यर्दित हो गया; अर्थात् उसे अत्यन्त लज्जा उत्पन्न हुई। अतएव वह धीरे-धीरे वहाँ से हट गया।

तए णं मल्लदिन्नं अम्मधाई पच्चोसक्कंतं पासित्ता एवं वयासी- 'किं णं तुमं पुत्ता! लज्जिए वीडिए विअडे सणियं सणियं पच्चोसक्कइ?'

तए णं से मल्लदिन्ने अम्मधाइं एवं वयासी-'जुत्तं णं अम्मो! मम जेट्ठाए भगिणीए गुरुदेवयभूयाए लज्जणिज्जाए मम चित्तगरणिव्वत्तियं सभं अणुपविसित्तए?'

तत्पश्चात् हटते हुए मल्लदिन्न को देख कर धाय माता ने कहा-'हे पुत्र! तुम लज्जित, व्रीडित और व्यर्दित होकर धीरे-धीरे क्यों हटे?'

अनुसार उसका समग्र रूप चित्रित किया। चित्रित करके वह चित्रफलक (जिस पर चित्र बना था वह पट) अपनी काँख में दबा लिया। फिर महान् अर्थ वाला यावत उपहार ग्रहण किया। ग्रहण करके हस्तिनापुर नगर के मध्य में होकर अदीनशत्रु राजा के पास आया। आकर दोनों हाथ जोड़ कर उसे बधाया और बधा कर उपहार उसके सामने रख दिया। फिर चित्रकार ने कहा—स्वामिन्! मिथिला राजधानी में कुम्भ राजा के पुत्र और प्रभावती देवी के आत्मज मल्लदिन्न कुमार ने मुझे देश-निकाले की आज्ञा दी, इस कारण मैं शीघ्र यहाँ आया हूँ। हे स्वामिन्! आपकी बाहुओं की छाया से परिगृहीत होकर यावत मैं यहाँ बसना चाहता हूँ।

तए णं से अदीनसत्तू राया तं चित्तगरदारयं एवं वयासी–'किं णं तुमं देवाणुप्पिया! मल्लदिन्नेणं निव्विसए आणत्ते?'

तत्पश्चात् अदीनशत्रु राजा ने चित्रकारपुत्र से इस प्रकार कहा–'हे देवानुप्रिय! मल्लदिन्न कुमार ने तुम्हें किस कारण देशनिर्वासन की आज्ञा दी?

तए णं से चित्तयरदारए अदीणसत्तुरायं एवं वयासी–'एवं खलु सामी! मल्लदिन्ने कुमारे अण्णया कयाई चित्तगरसेणिं सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी–'तुब्भे णं देवाणुप्पिया! मम चित्तसभं' तं चेव सव्वं भाणियव्वं, जाव मम संडासगं छिंदावेइ, छिंदावित्ता निव्विसयं आणवेइ, तं एवं खलु सामी! मल्लदिन्नेणं कुमारेणं निव्विसए आणत्ते।'

तत्पश्चात् चित्रकारपुत्र ने अदीनशत्रु राजा से इस प्रकार कहा–'हे स्वामिन्! मल्लदिन्न कुमार ने एक बार किसी समय चित्रकारों की श्रेणी को बुला कर इस प्रकार कहा–'हे देवानुप्रियो! तुम मेरी चित्रसभा को चित्रित करो;' आदि सब वृत्तान्त पूर्ववत् कहना चाहिए, यावत् कुमार ने मेरा संडासक कटवा लिया। कटवा कर देशनिर्वासन की आज्ञा दे दी। इस प्रकार हे स्वामिन् मल्लदिन्न कुमार ने मुझे देशनिर्वासन की आज्ञा दी है।

तए णं अदीणसत्तू राया तं चित्तगरं एवं वयासी–से केरिसए णं देवाणुप्पिया! तुमे मल्लीए तदाणुरूवे रूवे निव्वत्तिए?'

तए णं से चित्तगरे कक्खंतराओ चित्तफलयं णीणेइ, णीणित्ता अदीणसत्तुस्स उवणेइ, उवणित्ता एवं वयासी–'एस णं सामी! मल्लीए विदेहरायवरकन्नाए तयाणुरूवस्स रूवस्स केइ ...ार

'स्वामिन्! निश्चय ही उस चित्रकार को इस प्रकार की चित्रकारलब्ध हुई, प्राप्त हुई और अभ्यास में आई है कि वह जिस किसी द्विपद के एक अवयव को देखता है, यावत् वह वैसा ही पूरा रूप बना देता अतएव हे स्वामिन्! आप उस चित्रकार के वध की आज्ञा मत दीजिए स्वामिन्! आप उस चित्रकार को कोई दूसरा योग्य दंड दे दीजिए।'

तए णं से मल्लदिन्ने तस्स चित्तगरस्स संडासगं छिंदावेइ, निव्विसयं आणवेइ।

तए णं से चित्तगरए मल्लदिन्नेणं निव्विसए आणत्ते समाणे सभंडमत्तोवगरणमायाए मिहिलाओ नयरीओ णिक्खमइ, णिक्खमित्ता विदेहं जणवयं मज्झंमज्झेणं जेणेव हत्थिणाउरे नयरे, जेणेव कुरुजणवए, जेणेव अदीणसत्तू राया, तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता भंडनिक्खेवं करेइ, करित्ता चित्तफलगं सज्जेइ, सज्जित्ता मल्लीए विदेहवरकन्नगाए पायंगुट्ठाणुसारेणं रूवं णिव्वत्तेइ, णिव्वत्तित्ता कक्खंतरंसि छुब्भइ, छुब्भइत्ता महत्थं जाव पाहुडं गेण्हइ, गेण्हित्ता हत्थिणाउरं नयरं मज्झंमज्झेणं जेणेव अदीणसत्तू राया तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता तं करयल जाव वद्धावेइ, वद्धावित्ता पाहुडं उवणेइ, उवणित्ता 'एवं खलु अहं सामी! मिहिलाओ रायहाणीओ कुंभगस्स रण्णो पुत्तेणं पभावईए देवीए अत्तएणं मल्लदिन्नेणं कुमारेणं निव्विसए आणत्ते समाणे इह हव्वमागए, तं इच्छामि णं सामी! 'तुब्भं बाहुच्छायापरिग्गहिए जाव परिवसित्तए।'

तत्पश्चात् मल्लदिन्न ने उस चित्रकार के संडासक (दाहिने अंगूठा और उसके पास की अंगुली) का छेद करवा दिया और उसे देशनिर्वासन की आज्ञा दे दी।

तत्पश्चात् मल्लदिन्न के द्वारा देशनिर्वासन की आज्ञा पाया हुआ चित्रकार अपने भांड, पात्र और उपकरण आदि लेकर मिथिला नगरी से निकला। निकल कर वह विदेह जनपद के मध्य में होकर जहाँ हस्तिनापुर नगर था, जहाँ कुरु नामक जनपद था और जहाँ अदीनशत्रु नामक राजा था, वहाँ आया। आकर उसने अपनी भांड आदि वस्तुएँ रक्खीं। रख कर एक चित्रफलक ठीक किया। ठीक करके विदेह की श्रेष्ठ राजकुमारी मल्ली के पैर के

अनुसार उसका समग्र रूप चित्रित किया। चित्रित करके वह चित्रफलक (जिस पर चित्र बना था वह पट) अपनी काँख में दबा लिया। फिर महान् अर्थ वाला यावत् उपहार ग्रहण किया। ग्रहण करके हस्तिनापुर नगर के मध्य में होकर अदीनशत्रु राजा के पास आया। आकर दोनों हाथ जोड़ कर उसे बधाया और बधा कर उपहार उसके सामने रख दिया। फिर चित्रकार ने कहा—स्वामिन्! मिथिला राजधानी में कुम्भ राजा के पुत्र और प्रभावती देवी के आत्मज मल्लदिन्न कुमार ने मुझे देश-निकाले की आज्ञा दी, इस कारण मैं शीघ्र यहाँ आया हूँ। हे स्वामिन्! आपकी बाहुओं की छाया से परिगृहीत होकर यावत् मैं यहाँ बसना चाहता हूँ।

तए णं से अदीनसत्तू राया तं चित्तगरदारयं एवं वयासी—'किं णं तुमं देवाणुप्पिया! मल्लदिन्नेणं निव्विसए आणत्ते?'

तत्पश्चात् अदीनशत्रु राजा ने चित्रकारपुत्र से इस प्रकार कहा-'हे देवानुप्रिय! मल्लदिन्न कुमार ने तुम्हें किस कारण देशनिर्वासन की आज्ञा दी?

तए णं से चित्तयरदारए अदीणसत्तुरायं एवं वयासी—'एवं खलु सामी! मल्लदिन्ने कुमारे अण्णया कयाई चित्तगरसेणिं सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी—'तुब्भे णं देवाणुप्पिया! मम चित्तसभं' तं चेव सव्वं भाणियव्वं, जाव मम संडासगं छिंदावेइ, छिंदावित्ता निव्विसयं [illegible]. तं एवं खलु सामी! मल्लदिन्नेणं कुमारेणं निव्विसए आणत्ते।'

पश्चात् चित्रकारपुत्र ने अदीनशत्रु राजा से इस प्रकार कहा-'हे स्वामिन्! मल्लदिन्न कुमार ने एक बार किसी समय चित्रकारों की श्रेणी को बुला कर इस प्रकार कहा-'हे देवानुप्रियो! तुम मेरी चित्रसभा को चित्रित करो;' आदि सब वृत्तान्त पूर्ववत् कहना चाहिए, यावत् कुमार ने मेरा संडासक कटवा दिया। कटवा कर देशनिर्वासन की आज्ञा दे दी। इस प्रकार हे स्वामिन् मल्लदिन्न कुमार ने मुझे देशनिर्वासन की आज्ञा दी है।

तए णं अदीणसत्तू राया तं चित्तगरं एवं वयासी—से केरिसए णं देवाणुप्पिया! तुमे मल्लीए तदाणुरूवे रूवे निव्वत्तिए?'

तए णं से चित्तगरे कक्खंतराओ चित्तफलयं णीणेइ, णीणित्ता अदीणसत्तुस्स उवणेइ, उवणित्ता एवं वयासी—'एस णं सामी! मल्लीए विदेहरायवरकन्नाए तयाणुरूवस्स रूवस्स केइ आगारभावपडोयारे निव्व-

त्तिए, णो खलु सक्का केणइ देवेण वा जाव मल्लीए विदेहरा
गाए तयाणुरूवे रूवे निव्वत्तित्तए।'

तत्पश्चात् अदीनशत्रु राजा ने उस चित्रकार से इस प्रकार
नुप्रिय ! तुमने मल्ली कुमारी का उसके अनुरूप चित्र कैसा बनाया य

तब चित्रकार ने अपनी काँख में से चित्रफलक निकाला।
अदीनशत्रु राजा के पास रख दिया। और रख कर कहा—हे
विदेहराज की श्रेष्ठ कन्या मल्ली का उसी के अनुरूप यह चित्र मैंने कु
भाव और प्रतिबिम्ब के रूप में चित्रित किया है। विदेहराज की
मल्ली का हूबहू रूप तो कोई देव अथवा दानव भी चित्रित नहीं कर

तए णं अदीणसत्तू राया पडिरूवजणियहासे दूयं सद्दा
वित्ता एवं वयासी—तहेव जाव पहारेत्थ गमणाए।

अर्थ—तत्पश्चात् चित्र को देख कर हर्ष उत्पन्न होने के क
शत्रु राजा ने दूत को बुलाया। बुला कर इस प्रकार कहा—(
मल्ली कुमारी की मँगनी करने के लिए भेजा) इत्यादि सब पू
कहना चाहिए। यावत् दूत जाने के लिए तैयार हुआ।

ते णं काले णं ते णं समए णं पंचाले जणवए, कंपि
नयरे होत्था। तत्थ णं जियसत्तू णामं राया होत्था पं...
तस्स णं जियसत्तुस्स धारिणीपामोक्खं देविसहस्सं ओरोहे होत्था।

उस काल और उस समय में पंचाल नामक जनपद में काम्पिल्य
नामक नगर था। वहाँ जितशत्रु नामक राजा था, वही पंचाल देश का अधि
था। उस जितशत्रु राजा के अन्तःपुर में एक हजार रानियाँ थीं।

तत्थ णं मिहिलाए चोक्खा नामं परिव्वाइया रिउव्वेय जाव
णिट्ठिया यावि होत्था।

तए णं सा चोक्खा परिव्वाइया मिहिलाए बहूणं राईसर
सत्थवाहपामईणं पुरओ दाणधम्मं च सोयधम्मं च तित्थाभिसे
आघवेमाणी पण्णवेमाणी उवदंसेमाणी विहरइ।

मिथिला नगरी में चोक्खा (चोक्षा) नामक परिव्राजिका रहती
किया परिव्राजिका मिथिला नगरी में बहुत-से राजा, ईश्वर (ऐ

शाली धनाढ्य या युवराज) यावत् सार्थवाह आदि के सामने दानधर्म, शौच-धर्म और तीर्थस्नान का कथन करती, प्रज्ञापना करती, प्ररूपणा करती और उपदेश करती हुई रहती थी।

तए णं सा चोक्खा परिव्वाइया अन्नया कयाई तिदंडं च कुंडियं च जाव धाउरत्ताओ य गिण्हइ, गिण्हित्ता परिव्वाइगावसहाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता पविरलपरिव्वाइया सद्धिं संपरिवुडा मिहिलं रायहाणिं मज्झंमज्झेणं जेणेव कुंभगस्स रण्णो भवणे, जेणेव कण्णंतेउरे, जेणेव मल्ली विदेहवररायकन्ना, तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता उदयपरिफासियाए, दब्भोवरि पच्चत्थुयाए भिसियाए निसियति, निसित्ता मल्लीए विदेहरायवरकन्नाए पुरओ दाणधम्मं च जाव विहरइ।

तत्पश्चात् एक बार किसी समय वह चोक्खा परिव्राजिका त्रिदण्ड, कुंडिका यावत् धातु (गेरू) से रंगे वस्त्र लेकर परिव्राजिकाओं के मठ से निकली। निकल कर थोड़ी-परिव्राजिकाओं के साथ घिरी हुई मिथिला राजधानी के मध्य में होकर जहाँ कुम्भ राजा का भवन था, जहाँ कन्याओं का अन्तःपुर था और जहाँ विदेह की उत्तम राजकन्या मल्ली थी, वहां आई। आकर भूमि पर पानी छिड़का, उस पर डाभ बिछाया और उस पर आसन रख कर बैठी। बैठ कर विदेहवरराजकन्या मल्ली के सामने दानधर्म आदि का उपदेश देती हुई विचरने लगी—उपदेश देने लगी।

तए णं सा मल्ली विदेहरायवरकन्ना चोक्खं परिव्वाइयं एवं वयासी—'तुब्भं णं चोक्खे! किंमूलए धम्मे पन्नत्ते?' तए णं सा चोक्खा परिव्वाइया मल्लिं विदेहरायवरकन्नं एवं वयासी अम्हं णं देवाणुप्पिए! सोयमूलए धम्मे पण्णवेमि, जं णं अम्हं किंचि असुई भवइ, तं णं उदएण य मट्टियाए जाव अविग्घेणं सग्गं गच्छामो।'

तब विदेहराजवरकन्या मल्ली ने चोक्खा परिव्राजिका से पूछा-'हे चोक्खा! तुम्हारे धर्म का मूल क्या कहा गया है?'

तब चोक्खा परिव्राजिका ने विदेहराजवरकन्या मल्ली को उत्तर दिया-देवानुप्रिये! मैं शौचमूलक धर्म का उपदेश करती हूँ। हमारे मत में जो कोई भी वस्तु अशुचि होती है, उसे जल से और मिट्टी से शुद्ध किया जाता है, यावत् इस धर्म का पालन करने से हम निर्विघ्न स्वर्ग जाते हैं।'

तए णं मल्ली विदेहरायवरकन्ना चोक्खं परिव्वाइयं एवं वयासी—'चोक्खा ! से जहानामए केइ पुरिसे रुहिरकयं वत्थं रुहिरेण चेव धोवेज्जा, अत्थि णं चोक्खा ! तस्स रुहिरकयस्स वत्थस्स रुहिरेणं धोव्वमाणस्स काई सोही ?'

'नो इणट्ठे समट्ठे ।'

तत्पश्चात् विदेहराजवरकन्या मल्ली ने चोक्खा परिव्राजिका से क[हा]— 'चोक्खा ! जैसे कोई अमुक नामधारी पुरुष रुधिर से लिप्त वस्त्र को रुधिर से ही धोवे, तो हे चोक्खा ! उस रुधिरलिप्त और रुधिर से ही धोये जाने वाले वस्त्र की शुद्धि होती है ?'

परिव्राजिका ने उत्तर दिया—'नहीं, यह अर्थ समर्थ नहीं, अर्थात् ऐसा नहीं हो सकता ।'

'एवामेव चोक्खा ! तुब्भे णं पाणाइवाएणं जाव मिच्छादंसणसल्लेणं नत्थि काई सोही, जहा व तस्स रुहिरकयस्स वत्थस्स रुहिरेणं चेव धोव्वमाणस्स ।'

मल्ली ने कहा—इसी प्रकार चोक्खा ! तुम्हारे मत में प्राणातिपात (हिंसा) से यावत् मिथ्यादर्शनशल्य से अर्थात् अठारह पापों के सेवन से निषेध न होने से कोई शुद्धि नहीं है, जैसे रुधिर से लिप्त और रुधिर से ही धोये जाने वाले वस्त्र की कोई शुद्धि नहीं होती ।

तए णं सा चोक्खा परिव्वाइया मल्लीए विदेहरायवरकन्नाए एवं वुत्ता समाणा संकिया कंखिया विइगिच्छिया भेयसमावण्णा जाया यावि होत्था । मल्लीए णो संचाएइ किंचिवि पामोक्खमाइक्खित्तए, तुसिणीया संचिट्ठइ ।

तत्पश्चात् विदेहराजवरकन्या मल्ली के ऐसा कहने पर उस चोक्खा परिव्राजिका को शंका उत्पन्न हुई, कांक्षा (अन्य धर्म की आकांक्षा) हुई, विचिकित्सा (अपने धर्म के फल में संदेह) हुई और वह भेद को प्राप्त हुई अर्थात् उसके मन में तर्क-वितर्क होने लगा । वह मल्ली को कुछ भी उत्तर देने में समर्थ नहीं हो सकी, अतएव मौन रह गई ।

तए णं तं चोक्खं मल्लीए बहुओ दासचेडीओ हीलेंति, निंदंति

खिंसंति, गरहंति, अप्पेगइया हेरुयालंति, अप्पेगइया मुहमक्कडिया करेंति, अप्पेगइया वग्घाडीओ करेंति, अप्पेगइया तज्जमाणीओ करेंति, अप्पेगइया तालेमाणीओ करेंति, अप्पेगइया निच्छुभंति।

तत्पश्चात् मल्ली की बहुत-सी दासियाँ चोक्खा परिव्राजिका की (जाति आदि प्रकट करके) हीलना करने लगीं, मन से निन्दा करने लगीं, खिंसा (वचन से निन्दा) करने लगीं, गर्हा (उसके सामने ही दोष कथन) करने लगीं, कितनीक दासियाँ उसे क्रोधित करने लगी—चिढ़ाने लगीं, कोई-कोई मुँह मटकाने लगीं, कोई-कोई उपहास करने लगीं, कोई उंगलियों से तर्जना करने लगीं, कोई ताड़ना करने लगीं और किसी-किसी ने अर्धचन्द्र देकर उसे बाहर कर दिया।

तए णं सा चोक्खा मल्लीए विदेहरायवरकन्नाए दासचेडियाहिं जाव गरहिज्जमाणी हीलिज्जमाणी आसुरुत्ता जाव मिसमिसेमाणा मल्लीए विदेहरायवरकन्नाए पओसमावज्जइ, भिसियं गेण्हइ, गेण्हित्ता कण्णंतेउराओ पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता मिहिलाओ निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता परिव्वाइयासंपरिवुडा जेणेव पंचालजणवए जेणेव कंपिल्लपुरे बहूणं राईसर जाव परूवेमाणी विहरइ।

तत्पश्चात् विदेहराज की उत्तम कन्या मल्ली की दासियों द्वारा यावत् गर्हा की गई और अवहेलना की गई वह चोक्खा एकदम क्रुद्ध हो गई और क्रोध से मिसमिसाती हुई विदेहराजवर कन्या मल्ली के प्रति द्वेष को प्राप्त हुई। उसने अपना आसन उठाया और कन्याओं के अन्तःपुर से निकल गई। वहाँ से निकल कर मिथिला नगरी से भी निकली और परिव्राजिकाओं के साथ जहाँ पंचाल जनपद था, जहाँ काम्पिल्यपुर नगर था वहाँ आई और बहुत-से राजाओं एवं ईश्वरों आदि के सामने यावत् अपने धर्म की प्ररूपणा करने लगी।

तए णं से जियसत्तू अन्नया कयाई अंतेउरपरियालसद्धिं संपरिवुडे एवं जाव विहरइ।

तए णं सा चोक्खा परिव्वाइयासंपरिवुडा जेणेव जियसत्तुस्स रन्नो भवणे, जेणेव जियसत्तू तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अणुपविसइ, अणुपविसित्ता जियसत्तुं जएणं विजएणं वद्धावेइ।

तए णं से जियसत्तू चोक्खं परिव्वाइयं एज्जमाणं पासइ, पासित्ता सीहासणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठित्ता चोक्खं परिव्वाइयं सक्कारेइ, संमाणेइ, सक्कारित्ता संमाणित्ता आसणेणं उवनिमंतेइ।

तत्पश्चात् जितशत्रु राजा एक बार किसी समय अपने अन्तःपुर के परिवार से परिवृत होकर यावत् बैठा था।

तत्पश्चात् परिव्राजिकाओं से परिवृत वह चोक्खा जहाँ जितशत्रु राजा का भवन था और जहाँ जितशत्रु राजा था, वहाँ आई। आकर भीतर प्रवेश किया। प्रवेश करके जय-विजय के शब्दों से जितशत्रु का अभिनन्दन किया—उसे बधाया।

तब जितशत्रु राजा ने चोक्खा परिव्राजिका को आते देखा। देख कर सिंहासन से उठा। उठ कर चोक्खा परिव्राजिका का सत्कार किया। सम्मान किया। सत्कार-सम्मान करके आसन से निमंत्रण किया—बैठने को आसन दिया।

तए णं सा चोक्खा उदगपरिफासियाए जाव भिसियाए निसि... जियसत्तुं रायं रज्जे य जाव अंतेउरे य कुसलोदंतं पुच्छइ। तए णं ... जियसत्तुस्स रण्णो दाणधम्मं च जाव विहरइ।

तत्पश्चात् वह चोक्खा परिव्राजिका जल छिड़क कर यावत् अपने ... । फिर उसने जितशत्रु राजा, राज्य यावत् अन्तःपुर के कुशल-समाचार ... उसके बाद चोक्खा ने जितशत्रु राजा को दानधर्म आदि का उपदेश कि...

तए णं से जियसत्तू अप्पणो ओरोहंसि जाव विम्हिए ... एवं वयासी—'तुमं णं देवाणुप्पिया! बहूणि गामागर ... बहूण य राईसर गिहाइं अणुपविससि, तं अत्थियाइं ते ... णो वा जाव एरिसए ओरोहे दिट्ठपुव्वे, जारिसए णं इमे ... है?'

तत्पश्चात् वह जितशत्रु राजा अपने रनवास में अर्थात् रनवास ... के सौन्दर्य आदि में विस्मय युक्त था, अतः उसने चोक्खा परिव्राजिका से कहा—'हे देवानुप्रिये! तुम बहुत-से गाँवों, आकरों आदि में यावत् ... हो और बहुत-से राजाओं एवं ईश्वरों के घरों में प्रवेश करती हो तो ... राजा आदि का ऐसा अन्तःपुर तुमने कभी पहले देखा है, जैसा मे... है?'

तए णं सा चोक्खा परिव्वाइया जियसत्तुं रायं (एवं वयासी) हसिं अवहसियं करेइ, करित्ता एवं वयासी–'एवं च सरिसए णं तुमे देवाणुप्पिया ! तस्स अगडदद्दुरस्स ।'

'केस णं देवाणुप्पिए ! से अगडदद्दुरे ?'

'जियसत्तू ! से जहानामए अगडदद्दुरे सिया, से णं तत्थ जाए त्थेव वुड्ढे अण्णं अगडं वा तलागं वा दहं वा सरं वा सागरं वा अपासमाणे एवं मण्णइ–'अयं चेव अगडे वा जाव सागरे वा ।'

तए णं तं कूवं अण्णे सामुद्दए दद्दुरे हव्वमागए। तए णं से कूव-द्दुरे तं सामुद्ददद्दुरं एवं वयासी–'से केस णं तुमं देवाणुप्पिया ! कत्तो ा इह हव्वमागए ?' तए णं से सामुद्दए दद्दुरे तं कूवदद्दुरं एवं वयासी–एवं खलु देवाणुप्पिया ! अहं सामुद्दए दद्दुरे ।

तए णं से कूवदद्दुरे तं सामुद्दयं दद्दुरं एवं वयासी–'के महालए णं वाणुप्पिया ! से समुद्दे ?'

तए णं से सामुद्दए दद्दुरे तं कूवदद्दुरं एवं वयासी–'महालए णं वाणुप्पिया ! समुद्दे ।'

तए णं से कूवदद्दुरे पाएणं लीहं कड्ढेइ, कड्ढित्ता एवं वयासी–ए महालए णं देवाणुप्पिया ! से समुद्दे ?'

'णो इणट्ठे समट्ठे, महालए णं से समुद्दे ।'

तए णं से कूवदद्दुरे पुरच्छिमिल्लाओ तीराओ उप्फिडित्ता णं च्छइ, गच्छित्ता एवं वयासी–ए महालए णं देवाणुप्पिया ! से समुद्दे ?

'णो इणट्ठे समट्ठे ।' तहेव ।

तब चोक्खा परिव्राजिका ने जितशत्रु राजा (से कहा) के प्रति मुस्करा कहा–'हे देवानुप्रिय ! इस प्रकार कहते हुए तुम उस कूप-मंडूक के मान हो ।'

जितशत्रु ने पूछा–देवानुप्रिय ! कौन-सा वह कूपमंडूक ?

चोक्खा बोली–जितशत्रु ! यथानामक अर्थात् कुछ भी नाम वाला

कुएँ का मेंढक था। वह मेंढक उसी कूप में उत्पन्न हुआ था, उसी में बड़ा था। उसने दूसरा कूप, तालाब, ह्रद, सर अथवा समुद्र देखा नहीं था। अतएव वह मानता था कि यही कूप है और यही सागर है—इसके सिवाय और कुछ भी नहीं है।

तत्पश्चात् किसी समय उस कूप में एक समुद्री मेंढक एकदम आ गया। तब कूप के मेंढक ने कहा- हे देवानुप्रिय ! तुम कौन हो? कहाँ से एकदम यहाँ आये हो? तब समुद्र के मेंढक ने कूप के मेंढक से कहा—'देवानुप्रिय ! मैं समुद्र का मेंढक हूं।'

तब कूप-मण्डूक ने समुद्रमण्डूक से कहा—'देवानुप्रिय ! वह समुद्र कितना बड़ा है?'

तब समुद्री मण्डूक ने कूपमण्डूक से कहा-'देवानुप्रिय समुद्र बड़ा है।'

तब कूपमण्डूक ने अपने पैर से एक लकीर खींची और कहा 'देवानुप्रिय ! क्या इतना बड़ा है?'

समुद्री मण्डूक बोला-'यह अर्थ समर्थ नहीं, अर्थात् समुद्र तो इससे बहुत बड़ा है।

तब कूपमण्डूक पूर्व दिशा के किनारे से उछल कर दूर गया और बोला-'देवानुप्रिय ! वह समुद्र क्या इतना बड़ा है?'

समुद्री मेंढक ने कहा-'यह अर्थ समर्थ नहीं।' इसी प्रकार (इससे अधिक कूद-कूद कर कूपमण्डूक ने समुद्र की विशालता के विषय में पूछा, पर समुद्र-मण्डूक हर बार उसी प्रकार उत्तर देता गया।)

एवामेव तुमं पि जियसत्तू ! अन्नेसिं बहूणं राईसर जाव सत्थवाहपभिईणं भज्जं वा भगिणिं वा धूयं वा सुण्हं वा अपासमाणे जाणेसि जारिसए मम चेव णं ओरोहे तारिसए णो अण्णस्स। तं एवं खलु जियसत्तू ! मिहिलाए नयरीए कुंभगस्स धूआ पभावईए अत्तिया मल्ली नामं ति रूवेण य जुव्वणेण जाव नो खलु अण्णा काई देवकन्ना वा जारिसिया मल्ली। विदेहवररायकण्णाए छिण्णस्स वि पायंगुट्ठगस्स इमे तवोरोहे सयसहस्सइमं पि कलं न अग्घइ त्ति कट्टु जामेव दिसं पाउब्भूया तामेव दिसं पडिगया।

'इसी प्रकार हे जितशत्रु ! दूसरे बहुत-से राजाओं एवं ईश्वरों

र्थवाह आदि की पत्नी, भगिनी, पुत्री अथवा पुत्रवधू को तुमने देखी नहीं। कारण समझते हो कि जैसा मेरा अन्तःपुर है, वैसा दूसरे का नहीं है। सो जितशत्रु ! मिथिला नगरी में कुंभ राजा की पुत्री और प्रभावती की आत्मजा ली नाम की कुमारी रूप और यौवन में जैसी है, वैसी दूसरी कोई देवकन्या रह भी नहीं है। विदेहराज की श्रेष्ठ कन्या के काटे हुए पैर के अंगुल के खवें अंश की बराबर भी तुम्हारा यह अन्तपुर नहीं है।' इस प्रकार कह कर परिव्राजिका जिस दिशा से प्रकट हुई थी आई थी, उसी दिशा में लौट गई।

तए णं जियसत्तू परिव्वाइयाजणियहासे दूयं सद्दावेइ, सद्दाविचा व पहारेत्थ गमणाए।

तत्पश्चात् परिव्राजिका के द्वारा उत्पन्न किये गये हर्ष वाले राजा जितशत्रु दूत को बुलाया। बुला कर पहले के समान ही सब कहा। यावत् उस दूत ने थिला जाने का निश्चय किया।

[इस प्रकार मल्ली कुमारी के पूर्वभव के साथी छहों राजाओं ने अपने-पने लिए कुमारी की मँगनी करने के लिए अपने-अपने दूत रवाना किये।]

तए णं तेसिं जियसत्तुपामोक्खाणं छण्हं राईणं दूया जेणेव मिहिला णेव पहारेत्थ गमणाए।

इस प्रकार उन जितशत्रु प्रभृति छहों राजाओं के दूत, जहाँ मिथिला गरी थी वहां जाने के लिए रवाना हो गये।

तए णं छप्पि य दूयगा जेणेव मिहिला तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता मिहिलाए अग्गुज्जाणंसि पत्तेयं पत्तेयं खंधावारनिवेसं करेंति, करित्ता मिहिलं रायहाणिं अणुपविसंति। अणुपविसित्ता जेणेव कुंभए राया तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता पत्तेयं पत्तेयं करयल० साणं साणं राईणं वयणाइं निवेदेंति।

तत्पश्चात् छहों दूत जहाँ मिथिला थी, वहाँ आये। आकर मिथिला के प्रधान उद्यान में सब ने अलग-अलग पड़ाव डाले। फिर मिथिला राजधानी में प्रवेश किया। प्रवेश करके कुम्भ राजा के पास आये। आकर प्रत्येक-प्रत्येक ने दोनों हाथ जोड़े और अपने-अपने राजाओं के वचन निवेदन किये। (मल्ली कुमारी की माँग की।)

तए णं से कुंभए राया तेसिं दूयाणं अंतिए एयमट्ठं सोच्चा आसुरुत्ते जाव तिवलियं भिउडिं एवं वयासी—'न देमि णं अहं तुब्भं मल्लिं विदेहरायवरकन्नं' ति कट्टु ते छप्पि दूते असक्कारिय असंमाणिय अवदारेणं णिच्छुभावेइ ।

तत्पश्चात् कुम्भ राजा उन दूतों से यह बात सुनकर एकदम क्रुद्ध हुआ यावत् ललाट पर तीन सल डाल कर उसने कहा—मैं तुम्हें (छह में से किसी भी राजा को) विदेहराज की उत्तम कन्या मल्ली नहीं देता। ऐसा कह कर छहों दूतों का सत्कार-सम्मान न करके उन्हें पीछे के द्वार से निकाल दिया।

तए णं जियसत्तुपामोक्खाणं छण्हं राईणं दूया कुंभएणं रण्णा असक्कारिया असम्माणिया अवदारेणं निच्छुभाविया समाणा जेणेव सगा सगा जाणवया, जेणेव सयाइं सयाइं णगराइं, जेणेव सगा सगा रायाणो तेणेव उवागच्छंति । उवागच्छित्ता करयलपरि० एवं वयासी—

[ ] कुम्भ राजा के द्वारा असत्कारित, असम्मानित और अपद्वार (पिछले द्वार) से निष्कासित वे छहों राजाओं के दूत जहां अपने-अपने जनपद थे, जहां अपने-अपने नगर थे और जहां अपने-अपने राजा थे, वहां पहुँचे। पहुँच कर हाथ जोड़ कर एवं मस्तक पर अंजलि करके इस प्रकार कहने लगे—

एवं खलु सामी ! अम्हे जियसत्तुपामोक्खाणं छण्हं राईणं दूया जमगसमगं चेव जेणेव मिहिला जाव अवदारेणं निच्छुभावेइ, तं न देइ णं सामी ! कुंभए राया मल्लिं विदेहवररायकन्नं, साणं साणं एयमट्ठं निवेदेंति ।

' इस प्रकार [illegible] न् ! हम जितशत्रु वगैरह छह राजाओं एक ही साथ जहां [illegible] मगरी थी, वहां पहुँचे। मगर यावत् कुम्भ ने सत्कार-सम्[illegible] रके हमें अपद्वार से निकाल दिया। स्वामिन् ! कुम्भ राज[illegible] राजवरकन्या मल्ली आप को नहीं देता।' अपने-अपने राजाओं [illegible] अर्थ-वृत्तान्त निवेदन किया।

तए णं ते जियसत्तुपामोक्खा छप्पि रायाणो तेसिं दूयाणं अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म आसुरुत्ता अण्णमण्णस्स दूयसंपेसणं करेंति एवं वयासीः—

'एवं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं छण्हं राईणं दूया जमगसमगं चेव जाव णिच्छूढा, तं सेयं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं कुंभगस्स जत्तं गिण्हित्तए' त्ति कट्टु अण्णमण्णस्स एयमट्ठं पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता ण्हाया सण्णद्धा हत्थिखंधवरगया सकोरेंटमल्लदामा जाव सेयवरचामराहिं० महयामहयाहयगयरहपवरजोहकलियाए चाउरंगिणीए सेणाए सद्धिं संपरिवुडा सव्विड्ढीए जाव रवेणं सएहिं सएहिं नगरेहिंतो जाव निग्गच्छंति, निग्गच्छित्ता एगयओ मिलायंति, मिलाइत्ता जेणेव मिहिला तेणेव पहारेत्थ गमणाए।

तत्पश्चात् वे जितशत्रु वगैरह छहों राजा उन दूतों से इस अर्थ को सुन कर और समझ कर एकदम कुपित हुए। उन्होंने एक दूसरे के पास दूत भेजे और इस प्रकार कहलाया—'हे देवानुप्रिय ! हम छहों राजाओं के दूत एक साथ (मिथिला पहुँचे और अपमानित करके) यावत् निकाल दिये गये। अतएव हे देवानुप्रिय ! हम लोगों को कुम्भ राजा की ओर प्रयाण करना (चढ़ाई करना) योग्य है।' इस प्रकार कह कर उन्होंने एक दूसरे की बात स्वीकार की। स्वीकार करके स्नान किया (वस्त्रादि धारण किये) सन्नद्ध हुए अर्थात् कवच आदि पहन कर तैयार हुए। हाथी के स्कंध पर आरूढ हुए। कोरंट वृक्ष के फूलों की माला वाला छत्र धारण किया। श्वेत चामर उन पर ढोरे जाने लगे। बड़े-बड़े घोड़ों, हाथियों, रथों और उत्तम योद्धाओं सहित [illegible] यावत् वाद्यों की ध्वनि [illegible] जगह इकट्ठे हुए। [illegible] यार हुए।

[illegible] बलवाउयं सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी—'खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! हयगय [illegible] सेण्णं सन्नाहेह।' जाव पच्चप्पिणंति।

तत्पश्चात् कुम्भ राजा ने इस कथा का अर्थ जान कर अर्थात् छह राजाओं की चढ़ाई का समाचार जान कर अपने सैनिक कर्मचारी (सेनापति) को बुलाया। बुला कर कहा—हे देवानुप्रिय ! शीघ्र ही घोड़ों हाथियों आदि से युक्त यावत् चतुरंगी सेना तैयार करो।' यावत् सेनापति ने सेना तैयार करके आज्ञा वापिस लौटाई।

तए णं कुंभए राया ण्हाए सण्णद्धे हत्थिखंधवरगए सकोरेंटमल्ल-

दामेणं छत्तेणं धारिज्जमाणेणं सेयवरचामराहिं महया० मिहिलं रा हाणिं मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता विदेहं जणवयं मज्झं मज्झेणं जेणेव देसग्गंते तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता खंधावारनिं करेइ, करित्ता जियसत्तुपामोक्खा छप्पि य रायाणो पडिवालेम जुज्झसज्जे पडिचिट्ठइ ।

तत्पश्चात् कुंभ राजा ने स्नान किया। कवच धारण करके सन्नद्ध श्रेष्ठ हाथी के स्कंध पर आरूढ़ हुआ। कोरंट के फूलों की माला का छत्र धा किया। उसके ऊपर श्रेष्ठ और श्वेत चामर ढोरे जाने लगे। यावत् मि चतुरंगी सेना के साथ मिथिला राजधानी के मध्य में होकर निकला। निक विदेह जनपद के मध्य में होकर जहाँ अपने देश का अंत (सीमा-भाग) था आया। आकर वहाँ पड़ाव डाला। पड़ाव डाल कर जितशत्रु प्रभृति छहों रा की प्रतीक्षा करता हुआ, युद्ध के लिए सज्ज होकर ठहर गया।

तए णं ते जियसत्तुपामोक्खा छप्पि य रायाणो जेणेव तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता कुंभएणं रण्णा सद्धिं संपलग्गा होत्था ।

तत्पश्चात् वे जितशत्रु प्रभृति छहों राजा, जहाँ कुंभ राजा थ आये। आकर कुंभ राजा के साथ युद्ध करने में प्रवृत्त हो गए।

तए णं ते जियसत्तुपामोक्खा छप्पि रायाणो कुंभयं र महियपवरवीरघाइयनिवडियचिंधद्धयपडागं किच्छप्पाणोवगयं दिसिं पडिसेहिंति ।

तए णं से कुंभए राया जियसत्तुपामोक्खेहिं छहिं राईहिं जाव पडिसेहिए समाणे अत्थामे अबले अवीरिए जाव अधारि कट्टु सिग्घं तुरियं जाव वेइयं जेणेव मिहिला णयरी तेणेव उ उवागच्छित्ता मिहिलं अणुपविसइ, अणुपविसित्ता मिहिलाए पिहेइ, पिहित्ता रोहसज्जे चिट्ठइ ।

तत्पश्चात् उन जितशत्रु प्रभृति छहों राजाओं ने कुंभ राज ... अर्थात् उसके सैन्य का हनन किया, मथन किया अर्थात् मा

दिया, उसके अत्युत्तम योद्धाओं का घात किया, उसकी चिह्न रूप ध्वजा और पताका को छिन्नभिन्न करके नीचे गिरा दिया। उसके प्राण संकट में पड़ गये। उसकी सेना चारों दिशाओं में भाग निकली।

तत्पश्चात् वह कुंभ राजा जितशत्रु आदि छह राजाओं के द्वारा हत, मानमर्दित यावत् जिसकी सेना चारों ओर भाग खड़ी हुई है ऐसा होकर, सामर्थ्यहीन, बलहीन, पराक्रमहीन यावत् शत्रुसेना का सामना करने में असमर्थ हो गया। अतः वह शीघ्रतापूर्वक, त्वरा के साथ यावत् वेग के साथ जहाँ मिथिला नगरी थी, वहाँ आया। मिथिला नगरी में प्रविष्ट हुआ और प्रविष्ट होकर उसने मिथिला के द्वारा बन्द कर लिये। द्वार बन्द करके किले का रोध करने में सज्ज होकर ठहरा।

तए णं ते जियसत्तुपामोक्खा छप्पि रायाणो जेणेव मिहिला तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता मिहिलं रायहाणिं णिस्संचारं णिरुचारं सव्वओ समंता ओरुंभित्ता णं चिट्ठंति।

तए णं कुंभए राया मिहिलं रायहाणिं रुद्धं जाणित्ता अब्भंतरियाए उवट्ठाणसालाए सीहासणवरगए तेसिं जियसत्तुपामोक्खाणं छण्हं राईणं छिद्दाणि य विवराणि य मम्माणि य अलभमाणे बहूहिं आएहि य उवाएहि य उप्पत्तियाहि य ४ बुद्धीहिं परिणामेमाणे परिणामेमाणे किंचि आयं वा उवायं वा अलभमाणे ओहयमणसंकप्पे जाव-झियायइ।

तत्पश्चात् जितशत्रु प्रभृति छहों नरेश जहाँ मिथिला नगरी थी, वहाँ आये। आकर मिथिला राजधानी को मनुष्यों के गमनागमन से रहित कर दिया, यहाँ तक कि कोट के ऊपर से भी आवागमन रोक दिया, अथवा मल त्यागने के लिए भी आना-जाना रोक दिया। वे नगरी को चारों ओर से घेर करके ठहरे।

तत्पश्चात् कुंभ राजा मिथिला राजधानी को घिरी जान कर आभ्यन्तर उपस्थानशाला (अन्दर की सभा) में श्रेष्ठ सिंहासन पर बैठा। वह जितशत्रु आदि छहों राजाओं के छिद्रों को, विवरों को और मर्म को पा नहीं सका। अतएव बहुत से आयों से, उपायों से तथा औत्पत्तिकी आदि चारों प्रकारों की बुद्धि से विचार करते-करते कोई भी आय या उपाय न पा सका। तब उसके मन का संकल्प क्षीण हो गया, यावत् वह आर्त्तध्यान करने लगा।

इमं च णं मल्ली विदेहरायवरकन्ना ण्हाया जाव बहूहिं खुज्जा॰ परिवुडा जेणेव कुंभए राया तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता कुंभगस्स पायग्गहणं करेइ। तए णं कुंभए राया मल्लिं विदेहरायवरकन्नं नो आढाइ, नो परियाणाइ, तुसिणीए संचिट्ठइ।

इधर विदेहराजवर कन्... किये, यावत् बहुत-सी कुब्जा ... था, वहाँ आई। आकर उसने कुंभ राजा के चरण ग्रहण किये-पर हुए ... कुंभ राजा ने विदेहराजवरकन्या मल्ली का आदर नहीं किया, उसे उसका आना भी मालूम नहीं हुआ, अतएव वह मौन ही रहा।

तए णं मल्ली विदेहरायवरकन्ना कुंभयं रायं एवं वयासी-'तुब्भे णं ताओ! अण्णया ममं एज्जमाणं जाव निवेसेह, किं णं तुब्भं अज्ज ओहयमणसंकप्पे जाव झियायह?'

तए णं कुंभए राया मल्लिं विदेहरायवरकन्नं एवं वयासी-'एवं खलु पुत्ता! तव कज्जे जियसत्तुपामोक्खेहिं छहिं राईहिं दूया संपेसिया, ते णं मए असक्कारिया जाव णिच्छूढा। तए णं ते जियसत्तुपामोक्खा तेसिं दूयाणं अंतिए एयमट्ठं सोच्चा परिकुविया समाणा मिहिलं रायहाणिं निस्संचारं जाव चिट्ठन्ति। तए णं अहं पुत्ता! तेसिं जियसत्तुपामोक्खाणं छण्हं राईणं अंतराणि अलभमाणे जाव झियामि।'

तत्पश्चात् विदेहराजवरकन्या मल्ली ने राजा कुम्भ से इस प्रकार कहा- 'हे तात! दूसरे समय मुझे आती देख कर आप यावत् गोद में बिठाते थे, परन्तु क्या कारण है कि आज आप अपहत मानसिक संकल्प वाले होकर चिन्ता कर रहे हैं?'

तब राजा कुम्भ ने विदेहराजवरकन्या मल्ली से इस प्रकार कहा- 'हे पुत्री! इस प्रकार तुम्हारे लिए-तुम्हारी मँगनी करने के लिए जितशत्रु प्रभृति छह राजाओं ने दूत भेजे थे। मैं ने उन दूतों को अपमानित करके यावत् निकलवा दिया। तब वे जितशत्रु वगैरह राजा उन दूतों से यह वृत्तान्त सुनकर कुपित हो गये। उन्होंने मिथिला राजधानी को गमनागमनहीन बना दिया है, यावत् वे चारों ओर घेरा डाल कर बैठे हैं। ... हे पुत्री! मैं उन जितशत्रु ...

तए णं सा मल्ली विदेहरायवरकन्ना कुंभयं रायं एवं वयासी—'मा णं तुब्भे ताओ ! ओहयमणसंकप्पा जाव झियायह, तुब्भे णं ताओ ! सिं जियसत्तुपामोक्खाणं छण्हं राईणं पत्तेयं पत्तेयं रहसियं दूयसंपेसे रेह, एगमेगं एवं वयह—'तव देमि मल्लिं विदेहरायवरकन्नं' ति कट्टु मिकालसमयंसि पविरलमणूसंसि निसंतंसि पडिनिसंतंसि पत्तेयं पत्तेयं मिहिलं रायहाणिं अणुप्पवेसेह। अणुप्पवेसित्ता गब्भघरएसु अणुप्प-सेह, मिहिलाए रायहाणीए दुवाराइं पिधेह, पिधित्ता रोहसज्जे चिट्ठह।'

तत्पश्चात् विदेहराजवरकन्या मल्ली ने राजा कुम्भ से इस प्रकार हा—'तात ! आप अवहत मानसिक संकल्प वाले होकर चिन्ता न कीजिए। तात ! आप उन जितशत्रु आदि छहों राजाओं में से प्रत्येक के पास गुप्त रूप दूत भेज दीजिए और प्रत्येक को यह कह दीजिए कि—'मैं विदेहराजवरकन्या दे देता हूँ।' ऐसा कह कर संध्याकाल के अवसर पर, जब विरले मनुष्य मनागमन करते हों और विश्राम के लिए अपने-अपने घरों में मनुष्य बैठे हों, स समय प्रत्येक-प्रत्येक राजा का मिथिला राजधानी के भीतर प्रवेश राइए। प्रवेश करा कर उन्हें गर्भगृह के अन्दर ले जाइए। फिर मिथिला जधानी के द्वार बंद करा दीजिए और नगरी के रोध में सज्ज होकर ठहरिए।

तए णं कुंभए राया एवं तं चेव जाव पवेसेइ, रोहसज्जे चिट्ठइ।

तत्पश्चात् राजा कुम्भ ने इसी प्रकार किया। यावत् छहों राजाओं का थिला के भीतर प्रवेश कराया। वह नगरी के रोध में सज्ज हो कर ठहरा।

तए णं जियसत्तुपामोक्खा छप्पि य रायाणो कल्लं पाउप्पभाया र जालंतरेहिं कणगमयं मत्थयछिड्डं पउमुप्पलपिहाणं पडिमं पासइ। एस णं मल्ली विदेहरायवरकन्न' त्ति कट्टु मल्लीए विदेहरायवरकन्नाए वे य जोव्वणे य लावण्णे य मुच्छिया गिद्धा जाव अज्झोववन्ना अणि-मिसाए दिट्ठीए पेहमाणा पेहमाणा चिट्ठंति।

तत्पश्चात् जितशत्रु आदि छहों राजा कल अर्थात् दूसरे दिन प्रातःकाल न्हें जिस मकान में ठहराया था उसके) जालियों में से कर स्वर्णमयी [illegible] पर छिद्र वाली और कमल के ढक्कन वाली मल्ली की प्रतिमा देखने लगे।' यही विदेहराज की श्रेष्ठ कन्या मल्ली है' ऐसा जान कर [illegible]

वरकन्या मल्ली के रूप यौवन और लावण्य में मूर्छित, गृद्ध यावत् अध्यु-
पपन्न होकर अनिमेष दृष्टि से बार-बार उसे देखने लगे।

तए णं सा मल्ली विदेहरायवरकन्ना ण्हाया जाव पायच्छित्ता
सव्वालंकारविभूसिया बहूहिं खुज्जाहिं जाव परिक्खित्ता जेणेव जाल-
घरए, जेणेव कणगपडिमा तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता तीसे
कणगपडिमाए मत्थयाओ तं पउमं अवणेइ। तए णं गंधे णिद्धावइ
से जहानामए अहिमडेइ वा जाव असुभतराए चेव।

तत्पश्चात् विदेहराजवरकन्या मल्ली ने स्नान किया, यावत् प्रायश्चित्त
किया। वह समस्त अलंकारों से विभूषित होकर बहुत-सी कुब्जा आदि दासियों
से यावत् परिवृत होकर जहाँ जालगृह था और जहाँ स्वर्ण की वह प्रतिमा थी
वहाँ आई। आकर उस स्वर्णप्रतिमा के मस्तक से वह कमल का ढक्कन हटा
दिया। ढक्कन हटाते ही उसमें से ऐसी दुर्गन्ध छूटी कि जैसे मरे साँप की दुर्गन्ध
हो, यावत् उससे भी अधिक अशुभ!

तए णं जियसत्तुपामोक्खा तेणं असुभेणं गंधेणं अभिभूया समाणा
सएहिं सएहिं उत्तरिज्जेहिं आसाइं पिहेंति, पिहित्ता परम्मुहा चिट्ठंति।

तए णं सा मल्ली विदेहरायवरकन्ना ते जियसत्तुपामोक्खे एवं
वयासी—'किं णं तुब्भं देवाणुप्पिया! सएहिं सएहिं उत्तरिज्जेहिं जाव
परम्मुहा चिट्ठह?'

तए णं ते जियसत्तुपामोक्खा मल्लिं विदेहरायवरकन्नं एवं वयासी—
'एवं खलु देवाणुप्पिए! अम्हे इमेणं असुभेणं गंधेणं अभिभूया समाणा
सएहिं सएहिं जाव चिट्ठामो।'

तत्पश्चात् जितशत्रु वगैरह ने उस अशुभ गंध से अभिभूत होकर-घबरा
कर अपने-अपने उत्तरीय वस्त्रों से मुँह ढँक लिया। मुँह ढँक कर वे मुख फेर
कर खड़े हो गये।

तब विदेहराजवरकन्या मल्ली ने उन जितशत्रु आदि से इस प्रकार कहा—
'देवानुप्रियो! किस कारण आप अपने-अपने उत्तरीय वस्त्र से मुँह ढँक कर
मुँह फेर कर खड़े हो गये?'

'मल्ली कुमारी ने पूर्वभव का स्मरण कराते हुए आगे कहा—'इस प्रकार हे देवानुप्रियो ! तुम और हम इससे पहले के तीसरे भव में, पश्चिम महाविदेह वर्ष में, सलिलावती विजय में, वीतशोका नामक राजधानी में महाबल आदि सातों-मित्र राजा थे। हम सातों साथ जन्मे थे, यावत् साथ ही दीक्षित हुए थे।

हे देवानुप्रियो ! उस समय इस कारण से मैं ने स्त्रीनामगोत्र कर्म का उपार्जन किया था—अगर तुम लोग एक उपवास करके विचरते थे, तो मैं बेला करके विचरती थी। शेष सब वृत्तान्त पूर्ववत् समझना चाहिए।

तए णं तुब्भे देवाणुप्पिया ! कालमासे कालं किच्चा जयंते विमाणे उववण्णा। तत्थ णं तुब्भे देसूणाइं बत्तीसाइं सागरोवमाइं ठिई। तए णं तुब्भे ताओ देवलोयाओ अणंतरं चयं चइत्ता इहेव जंबुद्दीवे दीवे जाव साइं साइं रज्जाइं उवसंपज्जित्ता णं विहरह।

तए णं अहं देवाणुप्पिया ! ताओ देवलोयाओ आउक्खएणं जाव दारियत्ताए पच्चायाया:—

किं थ तयं पम्हुट्ठं, जं थ तया भो जयंत पवरम्मि।
वुत्था समयनिबद्धं, देवा तं संभरह जाइं ॥ १ ॥

तत्पश्चात् हे देवानुप्रियो ! तुम कालमास में काल करके जयन्त विमान में उत्पन्न हुए। वहाँ तुम्हारी कुछ कम बत्तीस सागरोपम की स्थिति हुई। तत्पश्चात् तुम उस देवलोक से अनन्तर (तुरंत ही) शरीर त्याग करके—च्यवन करके—इसी जम्बूद्वीप नामक द्वीप में उत्पन्न हुए, यावत् अपने-अपने राज्य प्राप्त करके विचर रहे हो।

तत्पश्चात् मैं उस देवलोक से आयु का क्षय होने से कन्या के रूप में आई हूँ—जन्मी हूँ।

'क्या तुम वह भूल गये ? जिस समय हे देवानुप्रियो ! तुम जयन्त नामक अनुत्तर विमान में वास करते थे ? वहाँ रहते हुए 'हमें एक दूसरे को प्रतिबोध देना चाहिए' ऐसा परस्पर में संकेत किया था। तो तुम उस देवभव का स्मरण करो।'

तए णं तेसिं जियसत्तुपामोक्खाणं छण्हं रायाणं मल्लीए विदेहरायवरकन्नाए अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म सुभेणं परिणामेणं, पसत्थेणं

अज्झवसाणेणं, लेसाहिं विसुज्झमाणीहिं तयावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमेणं ईहावूह जाव सण्णिजाइस्सरणे समुप्पन्ने। एयमट्ठं सम्मं अभिसमागच्छंति।

तत्पश्चात् विदेहराज की उत्तम कन्या मल्ली से यह पूर्वभव का वृत्तान्त सुनने और हृदय में धारण करने से, शुभ परिणामों, प्रशस्त अध्यवसायों, विशुद्ध होती हुई लेश्याओं और जातिस्मरण को आच्छादित करने वाले कर्मों के क्षयोपशम के कारण, ईहा-अपोह (सद्भूत-असद्भूत धर्मों की पर्यालोचना) करने से जितशत्रु प्रभृति छहों राजाओं को ऐसा जातिस्मरण ज्ञान उत्पन्न हुआ कि जिससे वे संज्ञी अवस्था के अपने भव देख सकें। इस ज्ञान के उत्पन्न होने पर मल्ली कुमारी द्वारा कथित अर्थ को उन्होंने सम्यक् प्रकार से जान लिया।

तए णं मल्ली अरहा जियसत्तुपामोक्खे छप्पि रायाणो समुप्पण्ण-जाइसरणे जाणित्ता गब्भघराणं दाराइं विहाडावेइ। तए णं जियसत्तु-पामोक्खा जेणेव मल्ली अरहा तेणेव उवागच्छंति। तए णं महब्बल-पामोक्खा सत्त वि य (जियसत्तुपामोक्खा छप्पि य) बालवयंसा एगयओ अभिसमन्नागया यावि होत्या।

तत्पश्चात् मल्ली अरिहंत ने जितशत्रु प्रभृति छहों राजाओं को जातिस्मरण ज्ञान उत्पन्न हो गया जानकर गर्भगृहों के द्वार खुलवा दिये। तब जितशत्रु वगैरह छहों राजा मल्ली अरिहंत के पास आये। उस समय (पूर्वजन्म के) महाबल आदि सातों (अथवा इस भव के जितशत्रु आदि छहों) बालमित्रों का परस्पर मिलन हुआ।

तए णं मल्ली अरहा जियसत्तुपामोक्खे छप्पि य रायाणो एवं वयासी-'एवं खलु अहं देवाणुप्पिया। संसारभयउव्विग्गा जाव पव्व-यामि, तं तुब्भे णं किं करेह? किं वसह? जाव किं मे हियसामत्थे?'

तत्पश्चात् अरिहंत मल्ली ने जितशत्रु वगैरह छहों राजाओं से कहा-हे देवानुप्रियो! इस प्रकार निश्चित रूप से मैं संसार के भय से (जन्म-जरा-मरण से) उद्विग्न हुई हूँ, यावत् प्रव्रज्या अंगीकार करना चाहती हूं। तो आप क्या करेंगे? कैसे रहेंगे? आपके हृदय का सामर्थ्य कैसा है? अर्थात् भाव या उत्साह कैसा है?'

तए णं जियसत्तुपामोक्खा छप्पि य रायाणो मल्लि अरहं एवं वयासी–'जइ णं तुब्भे देवाणुप्पिया ! संसारभयउव्विग्गा जाव पव्वयह, अम्हाणं देवाणुप्पिया ! के अण्णे आलंबणे वा आहारे वा पडिबंधे वा ? जह चेव णं देवाणुप्पिया ! तुब्भे अम्हे इओ तच्चे भवग्गहणे बहुसु कज्जेसु य मेढी पमाणं जाव धम्मधुरा होत्था, तहा चेव णं देवाणुप्पिया ! इण्हिं पि जाव भविस्सह । अम्हे वि य णं देवाणुप्पिया ! संसारभयउव्विग्गा जाव भीया जम्ममरणाणं, देवाणुप्पियाणं सद्धिं मुंडा भवित्ता जाव पव्वयामो ।'

तत्पश्चात् जितशत्रु आदि छहों राजाओं ने मल्ली अरिहंत से इस प्रकार कहा–हे देवानुप्रिये ! अगर आप संसार के भय से उद्विग्न होकर यावत् दीक्षा लेती हो, तो हे देवानुप्रिये ! हमारे लिए दूसरा क्या आलंबन, आधार या प्रतिबंध है ? हे देवानुप्रिये ! जैसे आप इस भव से पूर्व के तीसरे भव में, बहुत कार्यों में मेढीभूत, प्रमाणभूत और धर्म की धुरा के रूप में थीं उसी प्रकार हे देवानुप्रिये ! अब (इस भव में) भी होओ । हे देवानुप्रिये ! हम भी संसार के भय से उद्विग्न हैं, यावत् जन्म-मरण से भीत हैं; अतएव देवानुप्रिया के साथ मुण्डित होकर यावत् दीक्षा ग्रहण करते हैं ।'

तए णं मल्ली अरहा ते जियसत्तुपामोक्खे एवं वयासी–'जं णं तुब्भे संसारभयउव्विग्गा जाव मए सद्धिं पव्वयह, तं गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया ! सएहिं सएहिं रज्जेहिं जेट्ठे पुत्ते रज्जे ठावेह, ठावेत्ता पुरिससहस्सवाहिणीओ सीयाओ दुरूहह । दुरूढा समाणा मम अंतियं पाउब्भवह ।

तत्पश्चात् अरिहंत मल्ली ने उन जितशत्रु प्रभृति राजाओं से कहा–'अगर तुम संसार के भय से उद्विग्न हुए हो, यावत् मेरे साथ दीक्षित होना चाहते हो तो जाओ देवानुप्रियो ! अपने-अपने राज्य में और ज्येष्ठ पुत्र को राज्य पर प्रतिष्ठित करो । प्रतिष्ठित करके हजार पुरुषों द्वारा वहन करने योग्य शिविकाओं पर आरूढ़ होओ । आरूढ़ होकर मेरे समीप आओ ।'

तए णं ते जियसत्तुपामोक्खा मल्लिस्स अरहओ एयमट्ठं पडिसुणेंति ।

तत्पश्चात् उन जितशत्रु प्रभृति राजाओं ने मल्ली अरिहंत के इस अर्थ को अंगीकार किया ।

तए णं मल्ली अरहा ते जियसत्तुपामोक्खे गहाय जेणेव कुंभए राया तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता कुंभगस्स पाएसु पाडेइ।

तए णं कुंभए राया ते जियसत्तुपामोक्खे विपुलेणं असणपाण-खाइमसाइमेणं पुप्फवत्थगंधमल्लालंकारेणं सक्कारेइ, सम्माणेइ, जाव पडिविसज्जेइ।

तत्पश्चात् मल्ली अरहन्त उन जितशत्रु वगैरह को साथ लेकर जहाँ कुम्भ राजा था, वहाँ आई। आकर उन्हें कुम्भ राजा के चरणों में नमस्कार कराया।

तब कुम्भ राजा ने उन जितशत्रु वगैरह का विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम से तथा पुष्प, वस्त्र, गंध, माल्य और अलंकारों से सत्कार किया, सन्मान किया। सत्कार-सन्मान करके यावत् उन्हें विदा किया।

तए णं जियसत्तुपामोक्खा कुंभएणं रण्णा विसज्जिया समाणा जेणेव साइं साइं रज्जाइं, जेणेव नयराइं, तेणेव उवागच्छंति। उवागच्छित्ता सयाइं रज्जाइं उवसंपज्जित्ता विहरंति।

तत्पश्चात् कुम्भ राजा द्वारा विदा किये हुए जितशत्रु आदि जहाँ अपने-अपने राज्य थे, जहाँ अपने-अपने नगर थे, वहाँ आये। आकर अपने-अपने राज्यों को भोगते हुए विचरने लगे।

तए णं मल्ली अरहा 'संवच्छरावसाणे निक्खमिस्सामि' त्ति मणं पहारेइ।

तत्पश्चात् अरिहन्त मल्ली ने अपने मन में ऐसी धारणा की कि—'एक वर्ष के अन्त में मैं दीक्षा ग्रहण करूँगी।'

ते णं काले णं ते णं समएणं सक्कस्सासणं चलइ। तए णं सक्के देविंदे देवराया आसणं चलियं पासइ, पासित्ता ओहिं पउंजइ, पउंजित्ता मल्लिं अरहं ओहिणा आभोएइ, आभोइत्ता इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था:—'एवं खलु जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे मिहिलाए रायहाणीए कुंभगस्स रण्णो मल्ली अरहा निक्खमिस्सामि त्ति मणं पहारेइ।

उस काल और उस समय में शक्रेन्द्र का आसन चलायमान हुआ। तब देवेन्द्र देवराज शक्र ने अपना आसन चलायमान हुआ देखा। देख कर-

अवधिज्ञान से जाना। जान कर इन्द्र को इस प्रकार का विचार उत्पन्न हुआ- जम्बूद्वीप नामक द्वीप में, भारत वर्ष में, मिथिला राजधानी में कुंभ राजा की (पुत्री) मल्ली अरहन्त ने एक वर्ष के अन्त में 'दीक्षा लूँगी' ऐसा विचार किया है।

'तं जीयमेयं तीयपच्चुप्पन्नमणागयाणं सक्काणं देविंदाणं देवरायाणं-अरहंताणं भगवंताणं निक्खममाणाणं इमेयारूवं अत्थसंपयाणं दलित्तए। तं जहा—

तिण्णेव य कोडिसया, अट्ठासीइं च होंति कोडीओ।
असिइं च सयसहस्सा, इंदा दलयंति अरहाणं॥

(शक्रेन्द्र ने आगे विचार किया—) तो अतीत काल, वर्तमान काल और भविष्यत् काल के शक्र देवेन्द्र देवराजों का यह परम्परागत आचार है कि-अरिहन्त भगवंत जब दीक्षा अंगीकार करने को हों, तो उन्हें इतनी अर्थ सम्पदा (दान देने के लिए) देनी चाहिए। वह इस प्रकारः—

'तीन सौ करोड़ अट्ठासी करोड़ और अस्सी लाख द्रव्य (स्वर्ण-मोहरें) इन्द्र अरिहंतों को देते हैं।'

एवं संपेहेइ, संपेहित्ता वेसमणं देवं सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी- 'एवं खलु देवाणुप्पिया! जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे जाव असीइं च सयसहस्साइं दलइत्तए, तं गच्छह णं देवाणुप्पिया! जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे कुंभगभवणंसि इमेयारूवं अत्थसंपयाणं साहराहि, साहरित्ता खिप्पामेव मम एयमाणत्तियं पच्चप्पिणाहि।'

शक्रेन्द्र ने ऐसा विचार किया। विचार करके उसने वैश्रमण देव को बुलाया और बुला कर कहा-'देवानुप्रिय! जम्बूद्वीप नामक द्वीप में, भारतवर्ष में, यावत् तीन सौ अठासी करोड़ और अस्सी लाख देना उचित है। सो हे देवानुप्रिय! तुम जाओ और जम्बू द्वीप में, भारतवर्ष में, कुंभ राजा के भवन में इतने द्रव्य का संहरण करो-इतना धन लेकर डाल दो। संहरण करके शीघ्र ही मेरी यह आज्ञा वापिस सौंपो।'

तए णं से वेसमणे देवे सक्केणं देविंदेणं देवरन्ना एवं वुत्ते समाणे हट्ठ० करयल जाव पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता जंभए देवे सद्दावेइ, सद्दा

...विसा एवं वयासी–'गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया ! जंबुद्दीवं दी...
...भारहं वासं मिहिलं रायहाणिं, कुंभगस्स रण्णो भवणंसि तिन्नेव ...
...कोडिसया, अट्ठासीयं च कोडीओ असीइं च सयसहस्साइं अयमेयारू...
अत्थसंपयाणं साहरह, साहरित्ता मम एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह।'

तत्पश्चात् वैश्रमण देव, शक्र देवेन्द्र देवराज के इस प्रकार कहने प... हुआ। हाथ जोड़ कर उसने यावत् आज्ञा स्वीकार की। स्वीकार कर... देवों को बुलाया। बुला कर उनसे इस प्रकार कहा–'देवानुप्रियो! तु... द्वीप में, भारतवर्ष में और मिथिला राजधानी में जाओ और कुंभ राज... भवन में तीन सौ करोड़ और अठासी करोड़ अस्सी लाख अर्थ सम्प्रदान क... करो, अर्थात् इतनी सम्पत्ति वहाँ पहुँचा दो। संहरण करके यह आज्ञ... वापिस लौटाओ।'

तए णं ते जंभगा देवा वेसमणेणं जाव सुणेत्ता उत्तरपुरच्छिम... भागं अवक्कमंति, अवक्कमित्ता जाव उत्तरवेउव्वियाइं रूवाइं वि... ति, विउव्वित्ता ताए उक्किट्ठाए जाव वीइवयमाणा जेणेव जंबु... दीवे, भारहे वासे, जेणेव मिहिला रायहाणी, जेणेव कुंभगस्स... भवणे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता कुंभगस्स रण्णो भव... तिन्नि कोडिसया जाव साहरंति। साहरित्ता जेणेव वेसमणे देवे... उवागच्छंति, उवागच्छित्ता करयल जाव पच्चप्पिणंति।

तत्पश्चात् वे जृंभक देव, वैश्रमण देव की आज्ञा सुन कर उत्तरपू... में गये। आकर उत्तरवैक्रिय रूपों की विकुर्वणा की। विकुर्वणा करके दे... उत्कृष्ट गति से जाते हुए जहाँ जम्बूद्वीप नामक द्वीप था, भरत क्षेत्र था... मिथिला राजधानी थी और जहाँ कुंभ राजा का भवन था, वहाँ पहुँचे... कर कुंभ राजा के भवन में तीन सौ करोड़ आदि पूर्वोक्त द्रव्यसम्पत्ति... दी। पहुंचा कर वे जृंभक देव, वैश्रमण देव के पास आये और उसक... वापिस लौटाई।

तए णं से वेसमणे देवे जेणेव सक्के देविंदे देवराया तेणेव उवा... इ। उवागच्छित्ता करयल जाव पच्चप्पिणइ।

तत्पश्चात् वह वैश्रमण देव जहाँ शक्र देवेन्द्र देवराज था, वहाँ आया।... र दोनों हाथ जोड़कर यावत् उसने इन्द्र की आज्ञा वापिस सौंपी।

तए णं मल्ली अरहा कल्लाकल्लिं जाव मागहओ पायरासो त्ति बहूणं सणाहाणं य अणाहाण य पंथियाण य पहियाण य करोडियाण य कप्पडियाण य एगमेगं हिरण्णकोडिं अट्ठ य अणूणाई सयसहस्साइं इमेयारूवं अत्थसंपदाणं दलयइ ।

तत्पश्चात मल्ली अरिहंत ने प्रतिदिन प्रातःकाल से प्रारंभ करके मगध देश के प्रातराश (प्रातःकालीन भोजन) के समय तक अर्थात् दोपहर तक बहुत-से सनाथों, अनाथों, पांथिकों-निरन्तर मार्ग पर चलने वाले पथिकों राहगीरों अथवा किसी के द्वारा किसी प्रयोजन से भेजे गये पुरुषों करोटिक-कपाल हाथ में लेकर भिक्षा माँगने वालों, कार्पटिक-कंथा कौपीन गेरुये धारण करने वालों अथवा कपट से भिक्षा माँगने वालों अथवा इस प्रकार के भिक्षुकविशेषों को पूरी एक करोड़ और आठ लाख स्वर्णमोहरें में देना आरंभ किया ।

तए णं से कुंभए राया मिहिलाए रायहाणीए तत्थ तत्थ तहिं तहिं देसे देसे बहूओ महाणससालाओ करेइ । तत्थ णं बहवे मणुया दिन्नभइभत्तवेयणा विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडेंति । उवक्खडित्ता जे जहा आगच्छंति तंजहा—पंथिया वा, पहिया वा, करोडिया वा, कप्पडिया वा, पासंडत्था वा, गिहत्था वा, तस्स य आसत्थस्स वीसत्थस्स सुहासणवरगयस्स तं विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं परिभाएमाणा परिवेसेमाणा विहरंति ।

तत्पश्चात् कुम्भ राजा ने मिथिला राजधानी में तत्र तत्र अर्थात् विभिन्न मुहल्लों या उपनगरों में, तहिं तहिं अर्थात् महामार्गों में तथा अन्य अनेक स्थानों में, देशे देशे अर्थात् त्रिक चतुष्क आदि स्थानों-स्थानों में बहुत-सी भोजनशालाएं बनवाई । उन भोजनशालाओं में बहुत-से मनुष्य, जिन्हें भृति-धन, भक्त-भोजन और वेतन-मूल्य दिया जाता था, विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम भोजन बनाते थे । बना करके जो लोग जैसे-जैसे आते जाते थे जैसे कि पांथिक (निरन्तर रास्ता चलने वाले), पथिक (मुसाफिर), करोटिक (कपाल खोपड़ी लेकर भीख मांगने वाले), कार्पटिक (कंथा, कौपीन या कषायवस्त्र धारन करने वाले), पाखण्डी (साधु, बाबा, सन्यासी) अथवा गृहस्थ, उन्हें आश्वासन देकर, विश्राम देकर और सुखद आसन पर बिठाकर विपुल अशन पान खाद्य और स्वाद्य दिया जाता था, परोसा जाता था। वे मनुष्य वहां भोजन आदि देते हुए रहते थे ।

तए णं मिहिलाए सिंघाडग जाव बहुजणो अण्णमण्णस्स एव-माइक्खइ-'एवं खलु देवाणुप्पिया ! कुंभगस्स रण्णो भवणंसि सव्वकाम-गुणियं किमिच्छियं विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं बहूणं समणाण य जाव परिवेसिज्जइ ।'

> वरवरिया घोसिज्जइ, किमिच्छियं दिज्जए बहुविहीयं ।
> सुर-असुर-देव-दाणव-नरिंदमहियाण निक्खमणे ॥

तत्पश्चात् मिथिला राजधानी में शृङ्गाटक, त्रिक आदि मार्गों में बहुत-से लोग परस्पर इस प्रकार कहने लगे—'हे देवानुप्रियो ! कुम्भ राजा के भवन में सर्वकामगुणित अर्थात् सब प्रकार के रूप रस गंध और स्पर्श वाले मनो-वांछित रसपर्याय वाला तथा इच्छानुसार दिया जाने वाला विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम आहार बहुत-से श्रमणों आदि को यावत् परोसा जाता है। तात्पर्य यह है कि कुम्भ राजा द्वारा जगह-जगह भोजनशालाएँ खुलवा देने और भोजनदान देने की सर्वत्र चर्चा होने लगी।

' वैमानिक, भवनपति, ज्योतिष्क और व्यन्तर देवों तथा नरेन्द्रों अर्थात् चक्रवर्ती आदि राजाओं द्वारा पूजित तीर्थंकरों की दीक्षा के अवसर पर वरवरिका की घोषणा कराई जाती है, और याचकों को यथेष्ट दान दिया जाता है। अर्थात् 'जिसे जो वरदान माँगना हो वो माँगो' ऐसी घोषणा करवा दी जाती है और 'तुम्हें क्या चाहिए, तुम्हें क्या चाहिए' इस प्रकार पूछ कर याचक की इच्छा के अनुसार दान दिया जाता है।

तए णं मल्ली अरहा संवच्छरेणं तिण्णि कोडिसया अट्ठासीइं च होंति कोडीओ असिइं च सयसहस्साइं इमेयारूवं अत्थसंपयाणं दलइत्ता निक्खमामि त्ति मणं पहारेइ ।

तत्पश्चात् अरिहंत मल्ली ने तीन सौ करोड़, अठासी करोड़ और अस्सी लाख जितनी अर्थसम्पदा दान देकर 'मैं दीक्षा ग्रहण करूँ' ऐसा मन में निश्चय किया।

तेणं कालेणं तेणं समएणं लोगंतिया देवा बंभलोए कप्पे रिट्ठे विमाणपत्थडे सएहिं सएहिं विमाणेहिं, सएहिं सएहिं पासाय-वडिंसएहिं, पत्तेयं पत्तेयं चउहिं सामाणियसाहस्सीहिं, तिहिं परिसाहिं, सत्तहिं अणिएहिं, सत्तहिं अणियाहिवईहिं, सोलसहिं

(कट)क्षों के शब्द सहित यावत् श्रेष्ठ वस्त्र धारण करके, दोनों हाथ जोड़कर, इष्ट (यावत्) वाणी से इस प्रकार बोले:—

'बुज्झाहि भयवं! लोगनाहा! पवत्तेहि धम्मतित्थं, जीवाणं हियसुहनिस्सेयसकरं भविस्सइ' त्ति कट्टु दोच्चं पि तच्चं पि एवं वयंति। (ता) मल्लिं अरहं वंदंति नमंसंति, वंदित्ता नमंसित्ता जामेव दिसिं (पा)उब्भूया तामेव दिसिं पडिगया।

'हे लोकनाथ! हे भगवन्! बूझो-बोध पाओ। धर्मतीर्थ की प्रवृत्ति (करो)। वह धर्मतीर्थ जीवों के लिए हितकारी, सुखकारी और निःश्रेयसकारी (मोक्षकारी) होगा।' इस प्रकार कह कर दूसरी बार और तीसरी बार भी इसी (प्रका)र कहा। कह कर अरहन्त मल्ली को वन्दना की, नमस्कार किया। वन्दना (औ)र नमस्कार करके जिस दिशा से आये थे, उसी दिशा में लौट गये।

तए णं मल्ली अरहा तेहिं लोगंतिएहिं देवेहिं संबोहिए समाणे (जे)णेव अम्मापियरो तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता करयल-'इच्छामि (णं) अम्मयाओ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए मुंडे भवित्ता जाव पव्वइत्तए।'

'अहासुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबंधं करेह।'

तत्पश्चात् लौकान्तिक देवों द्वारा संबोधित हुए मल्ली अरहन्त जहाँ माता-(पि)ता थे, वहाँ आये। आकर दोनों हाथ जोड़कर कहा-'हे माता-पिता! आपकी (आज्ञा) से मुंडित होकर यावत् प्रव्रज्या ग्रहण करने की मेरी इच्छा है।'

तब माता-पिता ने कहा-'हे देवानुप्रिये! जैसे सुख उपजे वैसा करो। (प्रति)बंध-विलम्ब मत करो।'

तए णं कुंभए राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं (व)यासी-'खिप्पामेव अट्ठसहस्सं सोवण्णियाणं जाव भोमेज्जाणं त्ति। (अ)न्नं च महत्थं जाव तित्थयराभिसेयं उवट्ठवेह।' जाव उवट्ठवेंति।

तत्पश्चात् कुंभ राजा ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया। बुला कर कहा-(शीघ्र) ही एक हजार आठ सुवर्णकलश यावत् एक हजार आठ मिट्टी के कलश (ला)ओ। इसके अतिरिक्त महान् अर्थ वाली यावत् तीर्थंकर के अभिषेक की सब (साम)ग्री उपस्थित करो।' यह सुन कर कौटुम्बिक पुरुषों ने वैसा ही किया, (अभि)षेक की समस्त सामग्री तैयार कर दी।

ते णं काले णं ते णं समए णं चमरे असुरिंदे जाव अच्चुअ-वसाणा आगया।

उस काल और उस समय चमर नामक असुरेन्द्र से लेकर अच्युत स्वर्ग तक के इन्द्र-सभी अर्थात् चौंसठ इन्द्र वहाँ आ गये।

तए णं सक्के देविंदे देवराया आभिओगिए देवे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी-'खिप्पामेव अट्ठसहस्सं सोवण्णियाणं कलसाणं जाव अन्नं च तं विउलं उवट्ठवेह।' जाव उवट्ठवेंति। ते वि कलसा ते चेव कलसे अणुपविट्ठा।

तब देवेन्द्र देवराज शक्र ने आभियोगिक देवों को बुलाया। बुलाकर इस प्रकार कहा-शीघ्र ही एक हजार आठ स्वर्णकलश आदि यावत् दूसरी अभिषेक के योग्य सामग्री उपस्थित करो। यह सुन कर आभियोगिक देवों ने सब सामग्री उपस्थित की। ये देवों के कलश उन्हीं मनुष्यों के कलशों में (देव माया से) समा गये।

तए णं से सक्के देविंदे देवराया कुंभराया य मल्लिं अरहं सीहासणंसि पुरत्थाभिमुहं निवेसेइ, अट्ठसहस्सेणं सोवण्णियाणं जाव अभिसिंचइ।

तत्पश्चात् देवेन्द्र देवराज शक्र और कुंभ राजा ने मल्ली अरहन्त को पूर्वाभिमुख बिठलाया। फिर सुवर्ण आदि के एक हजार आठ कलशों से अभिषेक किया।

तए णं मल्लिस्स भगवओ अभिसेए वट्टमाणे अप्पेगइया देवा मिहिलं च सब्भिंतरं बाहिरियं जाव सव्वओ समंता परिधावंति।

तत्पश्चात् जब मल्ली भगवान् का अभिषेक हो रहा था, उस समय कोई-कोई देव मिथिला नगरी के भीतर और बाहर यावत् सब दिशाओं में दौड़ने लगे इधर-उधर फिरने लगे।

ए णं जाव

ं सद्दावेइ। सद्दाविता

।' ते उवट्ठवेंति।

तत्पश्चात् कुंभ राजा ने दूसरी बार उत्तर दिशा में आकर यावत् भगवान् मल्ली को सर्व अलंकारों से विभूषित किया। विभूषित करके कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया। बुला कर इस प्रकार कहा-'शीघ्र ही मनोरमा नाम की शिबिका (तैयार करके) लाओ।'

तए णं सक्के देविंदे देवराया आभिओगिए देवे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी—'खिप्पामेव अणेगखंभं जाव मणोरमं सीयं उवट्ठवेह।' जाव सा वि सीया तं चेव सीयं अणुपविट्ठा।

तत्पश्चात् देवेन्द्र देवराज शक्र ने आभियोगिक देवों को बुलाया। बुलाकर उनसे कहा-शीघ्र ही अनेक खंभों वाली यावत् मनोरमा नामक शिबिका उपस्थित करो।' तब वे देव भी मनोरमा शिबिका लाये और वह शिबिका भी उसी मनुष्यों की शिबिका में समा गई।

तए णं मल्ली अरहा सीहासणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठित्ता जेणेव मणोरमा सीया तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता मणोरमं सीयं अणुपयाहिणी करेमाणा मणोरमं सीयं दुरूहइ। दुरूहित्ता सीहासणवरगए पुरत्थाभिमुहे सन्निसन्ने।

तत्पश्चात् मल्ली अरहन्त सिंहासन से उठे। उठ कर जहाँ मनोरमा शिबिका थी, उधर आये। आकर मनोरमा शिबिका की प्रदक्षिणा करके मनोरमा शिबिका पर आरूढ़ हुए। आरूढ़ होकर पूर्व दिशा की ओर मुख करके सिंहासन पर विराजमान हुए।

तए णं कुंभए राया अट्ठारस सेणिप्पसेणिओ सद्दावेइ। सद्दावित्ता एवं वयासी—'तुब्भे णं देवाणुप्पिया! ण्हाया जाव सव्वालंकारविभूसिया मल्लिस्स सीयं परिवहह।' जाव परिवहंति।

तत्पश्चात् कुम्भ राजा ने अठारह जातियों-उपजातियों को बुलवाया। बुलवा कर कहा—'हे देवानुप्रियो! तुम लोग स्नान करके यावत् सर्व अलंकारों से विभूषित होकर मल्ली कुमारी की शिबिका वहन करो।' यावत् उन्होंने शिबिका वहन की।

तए णं सक्के देविंदे देवराया मणोरमाए दक्खिणिल्लं उवरिल्लं बाहं गेण्हइ, ईसाणे उत्तरिल्लं उवरिल्लं बाहं गेण्हइ, चमरे

हेट्ठिल्लं, बली उत्तरिल्लं हेट्ठिल्लं। अवसेसा देवा जहारिहं मणोरमं सीयं परिवहंति।

तत्पश्चात् शक्र देवेन्द्र देवराज ने मनोरमा शिबिका की दक्षिण तरफ की ऊपरी बाहा ग्रहण की (वहन की), ईशान इन्द्र ने उत्तर तरफ की ऊपरी बाहा ग्रहण की, चमरेन्द्र ने दक्षिण तरफ की नीचली बाहा ग्रहण की। शेष देवों ने यथायोग्य उस मनोरमा शिबिका को वहन किया।

पुव्विं उक्खित्ता माणुस्सेहिं, तो हट्ठरोमकूवेहिं।
पच्छा वहंति सीयं, असुरिंदसुरिंदनागेंदा ॥ १ ॥
चलचवलकुंडलधरा, सच्छंदविउव्वियाभरणधारी।
देविंददाणविंदा, वहन्ति सीयं जिणिंदस्स ॥ २ ॥

जिनके रोमकूप (रोंगटे) हर्ष के कारण विकस्वर हो गये हैं ऐसे मनुष्यों ने सर्वप्रथम यह शिबिका उठाई। उसके बाद असुरेन्द्र, सुरेन्द्र और नागेन्द्र ने उसे वहन किया ॥ १ ॥

चलायमान चपल कुण्डलों को धारण करने वाले तथा अपनी इच्छा के अनुसार विक्रिया से बनाये हुए आभरणों को धारण करने वाले देवेन्द्रों और दानवेन्द्रों ने जिनेन्द्र देव की शिबिका वहन की।

तए णं मल्लिस्स अरहओ मणोरमं सीयं दुरूढस्स इमे अट्ठट्ठमंगलया अहाणुपुव्वीए, एवं निग्गमो जहा जमालिस्स।

तत्पश्चात् मल्ली अरहंत जब मनोरमा शिबिका पर आरूढ हुए, उस समय उनके आगे आठ-आठ मंगल अनुक्रम से चले। भगवतीसूत्र में वर्णित जमालि के निर्गमन की तरह यहाँ मल्ली अरहंत के निर्गमन का वर्णन समझ लेना चाहिए।

तए णं मल्लिस्स अरहओ निक्खममाणस्स अप्पेगइया देवा मिहिलं नयरिं आसियसंमज्जियं अब्भिंतरवासविहिगाहा जाव परिधावंति।

तत्पश्चात् मल्ली अरहन्त जब दीक्षा धारण करने के लिए निकले तो किन्हीं-किन्हीं देवों ने मिथिला नगरी को पानी से सींच दी, साफ कर दी, भीतर तथा बाहर की विधि करके यावन चारों ओर दौड़ धूप करने लगे। (यह वर्णन राजप्रश्नीय आदि सूत्रों से जान लेना चाहिए।)

तए णं मल्ली अरहा जेणेव सहस्संबवणे उज्जाणे, जेणेव असोग-वरपायवे, तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सीयाओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता आभरणालंकारं पभावई पडिच्छइ।

तत्पश्चात् मल्ली अरहंत जहाँ सहस्राम्रवन नामक उद्यान था, और जहाँ श्रेष्ठ अशोकवृक्ष था वहाँ आये। आकर शिबिका से नीचे उतरे। नीचे उतर कर समस्त आभरणों का त्याग किया। प्रभावती देवी ने वह आभरण ग्रहण किये।

तए णं मल्ली अरहा सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं करेइ। तए णं सक्के देविंदे देवराया मल्लिस्स केसे पडिच्छइ। पडिच्छित्ता खीरोदगसमुद्दे पक्खिवइ।

तए णं मल्ली अरहा 'णमोऽत्थु णं सिद्धाणं' ति कट्टु सामाइय-चरित्तं पडिवज्जइ।

तत्पश्चात् मल्ली अरिहन्त ने स्वयं ही पंचमुष्टिक लोच किया। तब शक्रेन्द्र देवराज ने मल्ली के केशों को ग्रहण किया। ग्रहण करके क्षीरोदक समुद्र में प्रक्षेप कर दिया।

तत्पश्चात् मल्ली अरिहन्त ने 'नमोऽत्थु णं सिद्धाणं' अर्थात् 'सिद्धों को नमस्कार हो' इस प्रकार कह कर सामायिक चारित्र अंगीकार किया।

जं समयं च णं मल्ली अरहा चरित्तं पडिवज्जइ, तं समयं च णं देवाणं माणुसाण य णिग्घोसे तुरियणिणायगीयवाइयनिग्घोसे य सक्कस्स वयणसंदेसेणं णिलुक्के यावि होत्था। जं समयं च णं मल्ली अरहा सामाइयं चरित्तं पडिवन्ने तं समयं च णं मल्लिस्स अरहओ माणुस-धम्माओ उत्तरिए मणपज्जवनाणे समुप्पन्ने।

जिस समय अरहंत मल्ली ने चारित्र अंगीकार किया, उस समय देवों ... की ध्वनि, और गाने-बजाने ... गया। अर्थात् शक्रेन्द्र ने सब ... । भगवान् चारित्र अंगीकार करते समय पूर्ण मौनपूर्वक ... । जिस समय मल्ली अरहन्त ने सामायिक चारित्र अंगीकार किया, उसी समय मल्ली अरहन्त को मनुष्य धर्म से ऊपर का अर्थात् साधारण मनुष्यों को न होने वाला-लोकोत्तर, अथवा मनुष्य क्षेत्र संबंधी उत्तम,

ज्ञान (मनुष्य क्षेत्र-अढ़ाई द्वीप में स्थित संज्ञी जीवों के मन के पर्यायों को साक्षात् जानने वाला ज्ञान) उत्पन्न हो गया।

मल्ली णं अरहा जेसे हेमंताणं दोच्चे मासे चउत्थे पक्खे पोस सुद्धे, तस्स णं पोससुद्धस्स एक्कारसीपक्खे णं पुव्वण्हकालसमयंसि अट्ठमेणं भत्तेणं अपाणएणं, अस्सिणीहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं तिहिं इत्थीसएहिं अब्भिंतरियाए परिसाए, तिहिं पुरिससएहिं बाहिरियाए परिसाए सद्धिं मुंडे भवित्ता पव्वइए।

मल्ली अरहन्त ने हेमन्त ऋतु के दूसरे मास में, चौथे पखवाड़े में अर्थात् पौष मास के शुद्ध (शुक्ल) पक्ष में और पौष मास के शुद्ध पक्ष की एकादशी के पक्ष में अर्थात् अर्द्ध भाग में (रात्रि का भाग छोड़ कर दिन में), पूर्वाह्न काल के समय में, निर्जल अष्टमभक्त तप करके, अश्विनी नक्षत्र के साथ चन्द्र का योग प्राप्त होने पर, तीन सौ आभ्यन्तर परिषद् की स्त्रियों के साथ और तीन सौ बाह्य परिषद् के पुरुषों के साथ मुंडित होकर दीक्षा अंगीकार की।

मल्लिं अरहं इमे अट्ठ णायकुमारा अणुपव्वइंसु, तं जहा-

णंदे य णंदिमित्ते, सुमित्त बलमित्त भाणुमित्ते य।
अमरवइ अमरसेणे महसेणे चेव अट्ठमए॥

मल्ली अरहन्त का अनुसरण करके यह आठ ज्ञात कुमार दीक्षित हुए। वह इस प्रकार हैं:—

(१) नन्द (२) नन्दिमित्र (३) सुमित्र (४) बलमित्र (५) भानुमित्र (६) अमरपति (७) अमरसेन और (८) आठवें महासेन। इन आठ ज्ञातकुमारों (इक्ष्वाकुवंशी राजकुमारों) ने दीक्षा अंगीकार की।

तए णं से भवणवई ४ मल्लिस्स अरहओ निक्खमणमहिमं करेंति, करित्ता जेणेव नंदीसरवरे० अट्ठाहियं करेंति, करित्ता जाव पडिगया।

तत्पश्चात् भवनपति, व्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक-इन चार निकाय के देवों ने मल्ली अरहन्त का दीक्षा-महोत्सव किया। महोत्सव करके जहाँ नन्दीश्वर द्वीप था, वहाँ गये। जाकर अष्टाह्निका महोत्सव किया। महोत्सव करके यावत् अपने-अपने स्थान पर लौट गये।

तए णं मल्ली अरहा जं चेव दिवसं पव्वइए तस्सेव दि[illegible]

घावरण्हकालसमयंसि असोगवरपायवस्स अहे पुढविसिलापट्टयंसि हासणवरगयस्स सुहेणं परिणामेणं, पसत्थेहिं अज्झवसाणेणं, पसत्थाहिं साहिं विसुज्झमाणीहिं तयावरणकम्मरयविकरणकरं अपुव्वकरणं णुपविट्ठस्स अणंते जाव केवलनाणदंसणे समुप्पन्ने ।

तत्पश्चात् मल्ली अरहन्त, जिस दिन दीक्षा अंगीकार की, उसी दिन के पराहकाल के समय अर्थात् दिन के अन्तिम भाग में, श्रेष्ठ अशोक वृक्ष के चे, पृथ्वीशिलापट्टक के ऊपर बैठे हुए थे; उस समय शुभ परिणामों के कारण, शस्त अध्यवसाय के कारण तथा विशुद्ध एवं प्रशस्त लेश्याओं के कारण, आवरण (ज्ञानावरण और दर्शनावरण) कर्म की रज को दूर करने वाले, पूर्व करण (आठवें गुणस्थान) को प्राप्त हुए अरहन्त मल्ली को अनन्त वत् केवल-ज्ञान और केवलदर्शन की उत्पत्ति हुई।

तेणं कालेणं तेणं समएणं सव्वदेवाणं आसणाइं चलंति । मोसढा, सुणेंति, अट्ठाहियमहिमा नंदीसरे, जामेव दिसिं पाउब्भूया मेव दिसिं पडिगया । कुंभए वि निग्गच्छइ ।

उस काल और उस समय में सब देवों के आसन चलायमान हुए । तब सब वहां आये । सब ने धर्मोपदेश श्रवण किया । नंदीश्वर द्वीप में जाकर अष्टाहिका महोत्सव किया । फिर जिस दिशा से प्रकट हुए थे, उसी दिशा में लौट गये । कुम्भ राजा भी वन्दना करने के लिए निकला ।

तए णं ते जियसत्तुपामोक्खा छप्पि य रायाणो जेट्ठपुत्ते रज्जे विता पुरिससहस्सवाहिणीयाओ दुरूढा सव्विड्ढीए जाव रवेणं णेव मल्ली अरहा जाव पज्जुवासंति ।

तत्पश्चात् वे जितशत्रु वगैरह छहों राजा अपने-अपने ज्येष्ठ पुत्रों को ज्य पर स्थापित करके, हजार पुरुषों द्वारा वहन की जाने वाली शिविकाओं आरूढ होकर समस्त ऋद्धि (पूरे ठाठ) के साथ यावत् गीत-वादित्र के ब्दों के साथ जहाँ मल्ली अरहन्त थे, यावत् वहाँ आकर उनकी उपासना रने लगे ।

तए णं मल्ली अरहा तीसे महइ महालियाए कुंभगस्स रण्णो तेसिं जियसत्तुपामोक्खाणं धम्मं कहेइ । परिसा जामेव दिसिं

तामेव दिसिं पडिगया । कुंभए समणोवासए जाए, पडिगए, पभावई य समणोवासिया जाया, पडिगया ।

तत्पश्चात् मल्ली अरहन्त ने उस बड़ी भारी परिषद् को, कुम्भ राजा को और उन जितशत्रु प्रभृति राजाओं को धर्म का उपदेश दिया । परिषद् जिस दिशा से आई थी, उसी दिशा में लौट गई । कुम्भ राजा श्रमणोपासक हुआ, वह भी लौट गया । प्रभावती श्रमणोपासिका हुई । वह भी वापिस चली गई।

तए णं जियसत्तुपामोक्खा छप्पि य रायाणो धम्मं सोच्चा आलित्ते णं भंते ! जाव पव्वइया । चोद्दसपुव्विणो, अणंते केवले, सिद्धा

तत्पश्चात् जितशत्रु आदि छहों राजाओं ने धर्म श्रवण करके कहा- 'भगवन् ! यह संसार आदीप्त है, प्रदीप्त है' इत्यादि । यावत् वे दीक्षित हो गए । चौदह पूर्वों के ज्ञानी हुए, फिर अनन्त केवल ज्ञान प्राप्त करके यावत् सिद्ध हुए ।

तए णं मल्ली अरहा सहस्संबवणाओ निक्खमइ, निक्खमित्ता बहिया जणवयविहारं विहरइ ।

तत्पश्चात् मल्ली अरहन्त सहस्राम्रवन उद्यान से बाहर निकले । निकल कर जनपद में विहार करने लगे ।

मल्लिस्स णं अरहओ भिसग (किंसुय) पामोक्खा अट्ठावीसं गणा अट्ठावीसं गणहरा होत्था । मल्लिस्स णं अरहओ चत्तालीसं समणसाहस्सीओ उक्कोसियाओ, बंधुमतीपामोक्खाओ पणपण्णं अज्जियासाहस्सीओ उक्कोसिया अज्जिया होत्था । मल्लिस्स णं अरहओ सावयाणं एगा सयसाहस्सीओ चुलसीइं च सहस्सा उक्कोसिया सावया होत्था । मल्लिस्स णं अरहओ सावियाणं तिन्नि सयसाहस्सीओ पण्णट्ठिं च सहस्सा संपया होत्था । मल्लिस्स णं अरहओ छस्सया चोद्दसपुव्वीणं, वीससया ओहिनाणीणं, बत्तीसं सया केवलणाणीणं, पणतीसं सया वेउव्वियाणं, अट्ठसया मणपज्जवणाणीणं, चोद्दससया वाईणं, वीसं सया अणुत्तरोववाइयाणं (संपया होत्था) ।

मल्ली अरहन्त के भिषक (या किंशुक) आदि अट्ठाईस गण

...ठाईस गणधर थे। मल्ली अरहन्त की चालीस हजार साधुओं की उत्कृष्ट सम्पदा थी। बंधुमती आदि पचपन हजार आर्यिकाओं की सम्पदा थी। मल्ली अरहंत की एक लाख चौरासी हजार श्रावकों की उत्कृष्ट संपदा थी। मल्ली अरहंत की तीन लाख पैंसठ हजार श्राविकाओं की उत्कृष्ट सम्पदा थी। मल्ली अरहंत की छहसौ चौदहपूर्वी साधुओं की, दो हजार अवधिज्ञानी, बत्तीस सौ केवलज्ञानी, पैंतीस सौ वैक्रियलब्धिधारी, आठ सौ मनःपर्यायज्ञानी, चौदह सौ वादी और बीस सौ अनुत्तरौपपातिक (सर्वार्थसिद्ध विमान में जाकर फिर एक भव लेकर मोक्ष जाने वाले) साधुओं की संपदा थी।

मल्लिस्स अरहओ दुविहा अंतगडभूमी होत्था। तंजहा—जुगंतकरभूमी, परियायंतकरभूमी य। जाव वीसइमाओ पुरिसजुगाओ जुयंतकरभूमी, दुवासपरियाए अंतमकासी।

मल्ली अरहंत के तीर्थ में दो प्रकार की अन्त-कर भूमि हुई। वह इस प्रकार-युगान्तकर भूमि और पर्यायान्तकर भूमि। इनमें से शिष्य-प्रशिष्य आदि पुरुषों रूप युगों तक अर्थात् बीसवें पाट तक युगांतकर भूमि हुई, अर्थात् बीसवें पाट तक साधुओं ने मुक्ति प्राप्त की। (बीसवें पाट के पश्चात् उनके तीर्थ में किसी ने मोक्ष प्राप्त नहीं किया।) और दो वर्ष का पर्याय होने पर अर्थात् मल्ली अरहंत को केवलज्ञान प्राप्त किये दो वर्ष व्यतीत हो जाने पर पर्यायान्तकर भूमि हुई-भवपर्याय का अन्त करने वाले-मोक्ष जाने वाले साधु हुए। (इससे पहले कोई जीव मोक्ष नहीं गया।)

मल्ली णं अरहा पणुवीसं धणूणि उड्ढं उच्चत्तेणं, वण्णेणं पियंगुसमवण्णे, समचउरंससंठाणे, वज्जरिसभनारायसंघयणे, मज्झदेसे सुहं सुहेणं विहरित्ता जेणेव संमेए पव्वए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता संमेयसेलसिहरे पाओवगमणमणुववन्ने।

मल्ली अरहंत पच्चीस धनुष ऊँचे थे। उनके शरीर का वर्ण प्रियंगु के समान था। समचतुरस्र संस्थान और वज्रऋषभनाराच संहनन था। वह मध्यदेश में सुखे-सुखे विचर कर जहाँ सम्मेदशिखर पर्वत था, वहाँ आये आकर उन्होंने सम्मेदशैल के शिखर पर पादोपगमन अनशन अंगीकार कर लिया।

मल्ली णं एगं वाससयं आगारवासमज्झे पणपण्णं वाससहस्साइं वाससयऊणाइं केवलिपरियागं पाउणित्ता पणपण्णं वाससहस्साइं सव्वाउयं पालइत्ता जे से गिम्हाणं पढमे मासे दोच्चे पक्खे चित्तसुद्धे, तस्स

णं चेत्तसुद्धस्स चउत्थीए भरणीए णक्खत्तेणं अद्धरत्तकालसमयंसि पंचहि अज्जियासएहिं अब्भिंतरियाए परिसाए, पंचहिं अणगारसएहिं बाहिरियाए परिसाए, मासिएणं भत्तेणं अपाणएणं वग्घारियपाणी खीणे वेयणिज्जे आउए नामे गोए सिद्धे। एवं परिनिव्वाणमहिमा भाणियव्वा जहा जंबुद्दीवपण्णत्तीए, नंदीसरे अट्ठाहियाओ, पडि-
गयाओ।

मल्ली अरहंत एक सौ वर्ष गृहवास में रहे। सौ वर्ष कम पचपन हजार वर्ष केवलीपर्याय पाल कर, इस प्रकार कुल पचपन हजार वर्ष की आयु पूर्ण कर ग्रीष्म ऋतु के प्रथम मास, दूसरे पक्ष अर्थात् चैत्र मास के शुक्ल पक्ष में, चैत्रमास के शुक्ल पक्ष की चौथ तिथि में, भरणी नक्षत्र के साथ चन्द्रमा का योग होने पर, अर्द्धरात्रि के समय आभ्यन्तर परिषद् की पाँच सौ साध्वियों और बाह्य परिषद् के पाँच सौ साधुओं के साथ, निर्जल एक मास के अनशन पूर्वक दोनों हाथ लम्बे रखकर, वेदनीय आयु नामक और गोत्र कर्मों के क्षीण होने पर सिद्ध हुए। इस प्रकार जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति में वर्णित निर्वाणमहोत्सव यहाँ भी कहना चाहिए। फिर देवों ने नन्दीश्वर द्वीप में जाकर अष्टाह्निक महोत्सव किया। महोत्सव करके अपने-अपने स्थान पर चले गये।

[टीकाकार द्वारा वर्णित निर्वाणकल्याणक का महोत्सव संक्षेप में इस प्रकार है:-जिस समय तीर्थंकर भगवान् का निर्वाण हुआ सो शक्र इन्द्र का आसन चलायमान हुआ। अवधिज्ञान का उपयोग लगाने से उसे निर्वाण की घटना का ज्ञान हुआ। उसी समय वह सपरिवार सम्मेदशिखर पर्वत पर आया। भगवान् के निर्वाण के कारण उसे खेद हुआ। आँखों से आँसू बहने लगे। उसने भगवान् के शरीर की तीन प्रदक्षिणाएँ कीं। फिर उस शरीर से थोड़ी दूर ठहर गया। इसी प्रकार सब इन्द्रों ने किया।

तत्पश्चात् शक्रेन्द्र ने अपने आभियोगिक देवों से वन में से गोशीर्ष के काष्ठ मँगवाये। तीन चिताएँ रची गईं। क्षीर सागर से जल मँगवाया गया। उस जल से भगवान् को स्नान कराया गया। गोशीर्ष चन्दन के रस का शरीर पर लेप किया गया। हंस जैसा धवल और कोमल वस्त्र शरीर पर डाल दिया। फिर शरीर को सर्व अलंकारों से अलंकृत किया गया।

गणधरों और साधुओं के शरीर का अन्य देवों ने इसी प्रकार किया।

तत्पश्चात् शक्र इन्द्र ने आभियोगिक देवों से तीन शिविकाएँ बनवाईं उनमें से एक शिविका पर भगवान् का शरीर स्थापित किया और उसे चित के समीप ले जाकर चिता पर रक्खा। अन्य देवों ने गणधरों तथा साधुओं क शरीर को दो शिविकाओं में रख कर दो चिताओं पर रक्खा। तत्पश्चात् अग्नि कुमार देवों ने शक्रेन्द्र की आज्ञा से तीनों चिताओं में अग्निकाय की विकुर्वणा की और वायुकुमार देवों ने वायु की विकुर्वणा की। अन्य देवों ने तीन चिताओं में अगर, लोभान, धूप, घी और मधु आदि के घड़े के घड़े डाले। अन्त में, जब शरीर भस्म हो चुके तब, मेघकुमार देवों ने उन चिताओं को क्षीर सागर के जल से शान्त कर दिया।

तत्पश्चात् शक्रेन्द्र ने प्रभु के शरीर की दाहिनी तरफ की ऊपर की दाढ़ ग्रहण की। ईशानेन्द्र ने बायीं ओर की ऊपर की दाढ़ ली। चमरेन्द्र ने दाहिने ओर की नीचे की और बलीन्द्र ने बायीं ओर की नीचे की दाढ़ ग्रहण की। अन्य देवों ने अन्यान्य अंगोपांगों की अस्थियाँ ले लीं। तत्पश्चात् तीनों चिताओं के स्थान पर बड़े-बड़े स्तूप बनाये और निर्वाणमहोत्सव किया।

सब तीर्थंकरों के निर्वाण का-अंतिम संस्कार का वर्णन इसी प्रकार समझना चाहिए।]

एवं खलु जम्बू! समणेणं भगवया महावीरेणं अट्ठमस्स नायज्झ-यणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते त्ति बेमि।

श्री सुधर्मा स्वामी कहते हैं-इस प्रकार निश्चय ही, हे जम्बू! श्रमण भगवान् महावीर ने आठवें ज्ञाताध्ययन का यह अर्थ प्ररूपण किया है। मैंने जो सुना, वही कहता हूँ।

नवम माकन्दी अध्ययन

जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स णायज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते, नवमस्स णं भंते ! णायज्झयणस्स समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ?

श्री जम्बू स्वामी ने श्री सुधर्मा स्वामी से प्रश्न किया—हे भगवन् ! श्रमण यावत् निर्वाण को प्राप्त भगवान् महावीर ने आठवें ज्ञात-अध्ययन का यह (पूर्वोक्त) अर्थ कहा है, तो हे भगवन् ! नौवें ज्ञात-अध्ययन का श्रमण यावत् निर्वाणप्राप्त भगवान् महावीर ने क्या अर्थ प्ररूपण किया है ?

एवं खलु जंबू ! ते णं काले णं ते णं समए णं चंपा नामं नयरी होत्था । तीसे णं चंपाए नयरीए कोणिए नामं राया होत्था ।

तत्थ णं चंपाए नयरीए बहिया उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए पुण्णभद्दे नामं चेइए होत्था ।

श्री सुधर्मा स्वामी ने उत्तर दिया—इस प्रकार हे जम्बू ! उस काल और उस समय में चम्पा नामक नगरी थी । उस चम्पा नगरी में कोणिक राजा था ।

उस चम्पा नगरी के बाहर उत्तरपूर्व-ईशान-दिक्कोण में पूर्णभद्र नामक चैत्य था ।

तत्थ णं माकंदी नामं सत्थवाहे परिवसइ, अड्ढे । तस्स णं भद्दा नामं भारिया होत्था । तीसे णं भद्दाए भारियाए अत्तया दुवे सत्थवाहदारया होत्था । तंजहा—जिणपालिए य जिणरक्खिए य । तए णं तेसिं मागंदियदारगाणं अन्नया कयाई एगयओ इमेयारूवे मिहो कहा-समुल्लावे समुप्पज्जित्था—

उस चम्पा नगरी में माकंदी नामक सार्थवाह निवास करता था । [illegible] था । उसकी भद्रा नामक भार्या थी । उस भद्रा भार्या के [illegible] (आत्मज) दो सार्थवाहपुत्र थे । उनके नाम इस

जिनपालित और जिनरक्षित। तत्पश्चात् ये दोनों माकंदीपुत्र एक बार किसी समय इकट्ठे हुए तो उनमें आपस में इस प्रकार कथासमुल्लाप (वार्तालाप) हुआ:—

'एवं खलु अम्हे लवणसमुद्दं पोयवहणेणं एक्कारस वारा ओगाढा, सव्वत्थ वि य णं लद्धट्ठा कयकज्जा अणहसमग्गा पुणरवि नियघरं हव्वमागया। तं सेयं खलु अम्हं देवाणुप्पिया! दुवालसमं पि लवण-समुद्दं पोयवहणेणं ओगाहित्तए।' त्ति कट्टु अण्णमण्णस्सेयमट्ठं पडि-सुणेंति, पडिसुणित्ता जेणेव अम्मापियरो तेणेव उवागच्छंति, उवा-गच्छित्ता एवं वयासीः—

'हम लोगों ने पोतवहन (जहाज) से लवणसमुद्र को ग्यारह बार अवगाहन किया है। सभी बार हम लोगों ने अर्थ (धन) की प्राप्ति की, करने योग्य कार्य किये और फिर शीघ्र बिना विघ्न के अपने घर आ गये। तो हे देवानुप्रिय! बारहवीं बार भी पोतवहन से लवण समुद्र में अवगाहन करना हमारे लिए अच्छा रहेगा।' इस प्रकार विचार करके उन्होंने परस्पर इस अर्थ (विचार) को स्वीकार किया। स्वीकार करके जहाँ माता-पिता थे, वहाँ आये और आकर इस प्रकार बोलेः—

'एवं खलु अम्हे अम्मयाओ! एक्कारस वारा तं चेव जाव नियगं घरं हव्वमागया, तं इच्छामो णं अम्मयाओ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणा दुवालसमं लवणसमुद्दं पोयवहणेणं ओगाहित्तए।'

तए णं ते मागंदियदारए अम्मापियरो एवं वयासी—'इमे ते जाया! अज्जग० जाव परिभाएत्तए, तं अणुहोह ताव जाया! विउले माणुस्सए इड्ढीसक्कारसमुदए। किं भे सपच्चवाएणं निरालंबणेणं लवणसमुद्दोत्तारेणं? एवं खलु पुत्ता! दुवालसमी जत्ता सोवसग्गा यावि भवइ। तं मा णं तुब्भे दुवे पुत्ता! दुवालसमं पि लवणसमुद्दं जाव ओगाहेह, मा हु तुब्भं सरीरस्स वावत्ती भविस्सइ।

तत्पश्चात् माता-पिता ने उन माकंदीपुत्रों से इस प्रकार कहा-हे पुत्रों! यह तुम्हारे बाप-दादा आदि के द्वारा उपार्जित प्रचुर धन है, जो यावत् ... पर्याप्त है। अतएव पुत्रो! ...

ऋद्धि-सत्कार के मनुष्य वाले भोगों को भोगो। विघ्न-बाधाओं से युक्त और जिसमें कोई आलंबन नहीं, ऐसे लवणसमुद्र में उतरने से क्या लाभ है? हे पुत्रो! बारहवीं (बार की) यात्रा सोपसर्ग (कष्टकारी) भी होती है। अतएव हे पुत्रो! तुम दोनों बारहवीं बार लवणसमुद्र में प्रवेश मत करो, जिससे तुम्हारे शरीर की व्यापत्ति (विनाश या पीड़ा) न हो।

तए णं मागंदियदारगा अम्मापियरो दोच्चं पि तच्चं पि एवं वयासी–'एवं खलु अम्हे अम्मयाओ! एक्कारस वारा लवणसमुद्दं ओगाहित्तए।'

तत्पश्चात् माकंदीपुत्रों ने माता-पिता से दूसरी बार और तीसरी बार इस प्रकार कहा–'हे माता-पिता! हमने ग्यारह बार लवणसमुद्र में प्रवेश किया है, बारहवीं बार प्रवेश करने की हमारी इच्छा है।' इत्यादि।

तए णं ते मागंदीदारए अम्मापियरो जाहे नो संचाएंति बहूहिं आघवणाहि य पन्नवणाहि य आघवित्तए वा पन्नवित्तए वा, ताहे अकामा चेव एयमट्ठं अणुजाणित्था।

तत्पश्चात् माता-पिता जब उन माकंदीपुत्रों को सामान्य कथन और विशेष कथन के द्वारा, सामान्य या विशेष रूप से समझाने में समर्थ न हुए; तब इच्छा न होने पर भी उन्होंने उस बात की अनुमति दे दी।

तए णं ते मागंदियदारगा अम्मापिऊहिं अब्भणुण्णाया समाणा गणिमं च धरिमं च मेज्जं च पारिच्छेज्जं च जहा अरहण्णगस्स जाव लवणसमुद्दं बहूइं जोयणसयाइं ओगाढा। तए णं तेसिं मागंदियदारगाणं अणेगाइं जोयणसयाइं ओगाढाणं समाणाणं अणेगाइं उप्पाइयसयाइं पाउब्भूयाइं।

... ये माता-पिता की अनुमति पाये हुए माकंदीपुत्र, गणिम, ... -चार प्रकार का माल जहाज में भर कर अर्हन्नक ... अनेक सैकड़ों योजन तक चले गये। तत्पश्चात् उन सैकड़ों योजन तक अवगाहन कर जाने पर सैकड़ों उत्पात

जाव थणियसद्दे कालियवाए तत्थ

यह उत्पात इस प्रकार थे—अकाल में गर्जना होने लगी, यावत् अकाल में स्तनित शब्द (गहरी गर्जना की ध्वनि) होने लगी। प्रतिकूल तेज हवा चलने लगी।

तए णं सा णावा तेणं कालियवाएणं आहुणिज्जमाणी आहुणिज्ज-माणी संचालिज्जमाणी संचालिज्जमाणी संखोभिज्जमाणी संखोभिज्जमाणी सलिलतिक्खवेगेहिं आयट्टिज्जमाणी आयट्टिज्जमाणी कोट्टिमंसि कर-तलाहते विव तेंदूसए तत्थेव तत्थेव ओवयमाणी य उप्पयमाणी य, उप्पयमाणीविव धरणीयलाओ सिद्धविज्जाविज्जाहरकन्नगा, ओवयमाणी-विव गगणतलाओ भट्ठविज्जा विज्जाहरकन्नगा, विपलायमाणीविव महागरुलवेगवित्तासिया भुयगवरकन्नगा, धावमाणीविव महाजणरसिय-सद्दवित्तत्था ठाणभट्ठा आसकिसोरी, णिगुंजमाणीविव गुरुजणदिट्ठा-वराहा सुयणकुलकन्नगा, घुम्ममाणीविव वीचीपहारसततालिया, गलियलंबणाविव गगणतलाओ, रोयमाणीविव सलिलगंठिविप्पइरमाण-थोरंसुवाएहिं णववहू उवरतभत्तुया, विलवमाणीविव परचक्करायाभि-रोहिया परममहब्भयाभिदुया महापुरवरी, झायमाणीविव कवडच्छोमप्प-ओगजुत्ता जोगपरिव्वाइया, णिसासमाणीविव महाकंतारविणिग्गय-परिस्संता परिणयवया अम्मया, सोयमाणीविव तवचरणखीणपरिभोगा चयणकाले देववरवहू, संचुण्णियकट्ठकूवरा, भग्गमेढिमोडियसहस्समाला, सूलाइयवंकपरिमासा, फलहंतरतडतडेंतफुट्टंतसंधिवियलंतलोहकीलिया, सव्वंगवियंभिया, परिसडियरज्जुविसरंतसव्वगत्ता, आमगमल्लगभूया, अकयपुण्णजणमणोरहो विव चिंतिज्जमाणगुरुई, हाहाकयकण्णधार-नावियवाणियगजणकम्मगारविलविया, णाणाविहरयणपणियसंपुण्णा, बहूहिं पुरिससएहिं रोयमाणेहिं कंदमाणेहिं सोयमाणेहिं तिप्पमाणेहिं विलवमाणेहिं एगं महं अंतोजलगयं गिरिसिहरमासायइत्ता संभग्गकूव-तोरणा मोडियझयदंडा वलयसयखंडिया करकरस्स तत्थेव विद्दवं उवगया।

तत्पश्चात् वह नौका (पोतवहन) प्रतिकूल तूफानी वायु से बार

काँपने लगी, बार-बार एक जगह से दूसरी जगह चलायमान होने लगी, बार बार संक्षुब्ध होने लगी-नीचे डूबने लगी, जल के तीक्ष्ण वेग से बार-बार टकराने लगी, हाथ से भूतल पर पछाड़ी हुई गेंद के समान जगह-जगह नीची ऊँची होने लगी। जिसे विद्या सिद्ध हुई है ऐसी विद्याधर-कन्या जैसे पृथ्वीतल से ऊपर उछलती है उसी प्रकार वह ऊपर उछलने लगी और विद्या से भ्रष्ट विद्याधर-कन्या जैसे आकाशतल से नीचे गिरती है, उसी प्रकार वह नौका भी नीचे गिरने लगी। जैसे महान् गरुड़ के वेग से त्रास पाई नाग की उत्तम कन्या भय की मारी भागती है, उसी प्रकार वह भी इधर-उधर दौड़ने लगी। जैसे अपने स्थान से बिछुड़ी हुई बछेरी बहुत लोगों के (बड़ी भीड़ के) कोलाहल से त्रस्त होकर इधर-उधर भागती है, उसी प्रकार वह भी इधर-उधर दौड़ने लगी। माता-पिता के द्वारा जिसका अपराध (दुराचार) जान लिया गया है, ऐसी सज्जन-पुरुष के कुल की कन्या के समान नीचे नमने लगी। तरंगों के सैकड़ों प्रहारों से ताड़ित होकर वह थरथराने लगी। जैसे बिना आलंबन की वस्तु आकाश से नीचे गिरती है, उसी प्रकार वह नौका भी नीचे गिरने लगी। जिसका पति मर गया हो ऐसी नवविवाहिता वधू जैसे आँसू बहाती है, उसी प्रकार पानी से भींगी ग्रन्थियों (जोड़ों) में से झरने वाली जलधारा के कारण वह नौका भी अश्रुपात-सा करती प्रतीत होने लगी। पर चक्री (शत्रु) राजा के द्वारा आक्रान्त (घिरी हुई) और इस कारण घोर महा भय से पीड़ित किसी उत्तम महानगरी के समान वह नौका विलाप करती हुई सी प्रतीत होने लगी। कपट (वेशपरिवर्तन) से किये प्रयोग (परवंचना रूप व्यापार) से युक्त, योग साधने वाली परिव्राजिका जैसे ध्यान करती है, उसी प्रकार वह भी कभी-कभी स्थिर हो जाने के कारण ध्यान करती-सी जान पड़ती थी। किसी बड़े जंगल में से चल कर निकली हुई और थकी हुई बड़ी उम्र वाली माता (पुत्रवती स्त्री) जैसे हाँफती है, उसी प्रकार वह नौका भी निश्वास-से छोड़ने लगी, या नौकारूढ लोगों के निश्वास के कारण नौका भी निश्वास छोड़ती-सी दिखाई देने लगी। तपश्चरण के फल स्वरूप प्राप्त स्वर्ग के भोग क्षीण होने पर जैसे श्रेष्ठ देवी अपने च्यवन के समय शोक करती है, उसी प्रकार वह नौका भी शोक-सा करने लगी, अर्थात् नौका पर सवार लोग शोक करने लगे। उसके काष्ठ और मुखभाग चूर-चूर हो गये। उसकी मेढ़ी[1] भंग हो गई और माल[2] सहसा मुड़ गई, या सहस्रों मनुष्यों की आधार भूत माल मुड़ गई। वह नौका पर्वत के शिखर पर चढ़ जाने के कारण ऐसी मालूम होने लगी मानों शूली पर चढ़ गई हो। उसे जल का स्पर्श

१-एक बड़ा और मोटा लट्ठा, जो सब पटियों का आधार होता है।

२-मनुष्यों के बैठने का ऊपरी भाग।

बक (बांका) होने लगा, अर्थात् नौका बांकी हो गई। एक दूसरे के साथ जुड़े पटियों में तड़-तड़ शब्द होने लगा, उनके जोड़ टूटने लगे, लोहे की कीलें निकल गई, उसके सब भाग अलग-अलग हो गये। उसके पटियों के साथ बँधी रस्सियाँ गीली होकर (गल कर) टूट गईं, अतएव उसके सब हिस्से बिखर गये। वह कच्चे सिकोरे जैसी हो गई-पानी में विलीन हो गई। अभागे मनुष्य के मनोरथ के समान वह अत्यन्त चिन्तनीय हो गई। नौका पर आरूढ़ कर्णधार, मल्लाह, वणिक और कर्मचारी हाय-हाय करके विलाप करने लगे। वह नाना प्रकार के रत्नों और मालों से भरी हुई थी। इस विपदा के समय सैकड़ों मनुष्य रुदन करने लगे-रुदन शब्द के साथ अश्रुपात करने लगे, आक्रन्दन करने लगे, शोक करने लगे, भय के कारण उनका पसीना झरने लगा, वे विलाप करने लगे, आर्तध्वनि करने लगे। उसी समय जल के भीतर विद्यमान एक बड़े पर्वत के शिखर के साथ टकरा कर नौका का मस्तूल और तोरण भग्न हो गया और ध्वजदंड मुड़ गया। नौका के वलय जैसे सैकड़ों टुकड़े हो गये। वह नौका 'कड़ाक' का शब्द करके उसी जगह नष्ट हो गई, अर्थात् डूब गई।

तए णं तीए णावाए भिज्जमाणीए बहवे पुरिसा विपुलपडियभंड-मायाए अंतोजलम्मि णिमज्जा यावि होत्था। तए णं मागंदियदारगा छेया दक्खा पत्तट्ठा कुसला मेहावी निउणसिप्पोवगया बहुसु पोतवहण-अमूढा अमूढहत्था एगं महं फलग-

तत्पश्चात् उस नौका के भग्न होकर डूब जाने पर बहुत-से लोग बहुत-से रत्नों, भांडों और माल के साथ जल में डूब गये। दोनों माकन्दीपुत्र चतुर, ... बहुत-से पोत ... और फुर्तीले

जंसि च णं पदेसंसि से पोयवहणे विवन्ने, तंसि च णं पदेसंसि एगे महं रयणदीवे णामं दीवे होत्था। अणेगाइं जोयणाइं आयाम-विक्खंभेणं, अणेगाइं जोयणाइं परिक्खेवेणं, नानादुमखंडमंडिउद्देसे सस्सिरीए पासाईए दंसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे।

तस्स णं बहुमज्झदेसभाए तत्थ णं महं एगे पासायवडेंसए होत्था

अब्भुग्गयमूसियए जाव सस्सिरीभूयरूवे पासाईए दंसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे ।

जिस प्रदेश में वह पोतवहन नष्ट हुआ था, उसी प्रदेश में-उसके पास ही, एक रत्नद्वीप नामक बड़ा द्वीप था । वह अनेक योजन लम्बा-चौड़ा और अनेक योजन के घेरे वाला था । उसके प्रदेश अनेक प्रकार के वृक्षों के वनों से मंडित थे । वह द्वीप सुन्दर सुषमा वाला प्रसन्नता उत्पन्न करने वाला, दर्शनीय, मनोहर और प्रतिरूप था अर्थात् दर्शकों को नये-नये रूप में दिखाई देता था ।

उस द्वीप के एकदम मध्यभाग में एक उत्तम प्रासाद था । उसकी ऊँचाई प्रकट थी-वह बहुत ऊँचा था । वह भी सश्रीक, प्रसन्नताप्रदायी दर्शनीय, मनोहर रूप वाला और प्रतिरूप था ।

तत्थ णं पासायवडेंसए रयणद्दीवदेवया नामं देवया परिवसइ-पावा, चंडा, रुद्दा, खुद्दा, साहसिया ।

तस्स णं पासायवडेंसयस्स चउद्दिसिं चत्तारि वणसंडा किण्हा, किण्होभासा ।

उस उत्तम प्रासाद में रत्नद्वीपदेवता नाम की एक देवी रहती थी । वह पापिनी, चंडा-अति पापिनी, भयंकर, तुच्छ स्वभाव वाली और साहसिक थी । (इस देवी के शेष विशेषण विजय चोर के समान जान लेने चाहिए ।)

उस उत्तम प्रासाद की चारों दिशाओं में चार वनखंड थे । वे श्याम वर्ण वाले और श्याम कान्ति वाले थे (यहाँ वनखण्ड के अन्य विशेषण जान लेने चाहिए ।)

तए णं ते मागंदियदारगा तेणं फलयखंडेणं उवुज्झमाणा उवुज्झमाणा रयणदीवंतेणं संवूढा यावि होत्था ।

तत्पश्चात् वे दोनों माकन्दीपुत्र (जिनपालित और जिनरक्षित) पटिये के सहारे तिरते-तिरते रत्नद्वीप के समीप आ पहुँचे ।

तए णं ते मागंदियदारगा थाहं लभंति, लभित्ता मुहुत्तंतरं आसासंति, आससित्ता फलगखंडं विसज्जेंति, विसज्जित्ता रयणदीवं उत्तरंति, उत्तरित्ता फलाणं मग्गणगवेसणं करेंति, करित्ता फलाइं गेण्हंति, गेण्हित्ता आहारेंति, आहारित्ता णालिएराणं मग्गणगवेसणं करेंति,

नालिएरतेल्लेणं अण्णमण्णस्स रणीओ ओगाहिंति, ओगाहित्ता जलमज्जणं करेंति, करित्ता जाव पच्चुत्तरंति, पच्चुत्तरित्ता पुढविसिला-पट्टयंसि निसीयंति, निसीइत्ता आसत्था वीसत्था सुहासणवरगया चंपा-नयरिं अम्मापिउआपुच्छणं च लवणसमुद्दोत्तारं च कालियवायसमुत्थणं च पोयवहणविवत्तिं च फलयखंडस्स आसायणं च रयणदीवुत्तारं च अणुचिंतेमाणा अणुचिंतेमाणा ओहयमणसंकप्पा जाव झियाएंति ।

ने पड़ी भर कर रत्न-) की। फिर फलों को ग्रहण किया। ग्रहण करके फल खाये। खाकर नारियलों की मार्गणा-गवेषणा की। नारियल फोड़े। फिर उनके तेल से दोनों ने आपस में मालिश की। मालिश करके बावड़ी में प्रवेश किया। प्रवेश करके स्नान किया। स्नान करके बावड़ी से बाहर निकले। एक पृथ्वी-शिला रूप पाट पर बैठे। बैठ कर शान्त हुए, विश्राम लिया और श्रेष्ठ सुखासन पर आसीन हुए। वहाँ बैठे-बैठे चम्पा नगरी, माता-पिता से आज्ञा लेना, लवणसमुद्र में उतरना, तूफानी वायु का उत्पन्न होना, नौका का भग्न होकर डूब जाना, पटिया का टुकड़ा मिल जाना और अन्त में रत्न द्वीप में आना, इन सब बातों का बार-बार विचार करते हुए भग्नमनः-संकल्प होकर चिन्ता में डूब गये।

तए णं सा रयणदीवदेवया ते मागंदियदारए ओहिणा आभोएइ, आभोइत्ता असिफलगवग्गहत्था सत्तट्ठतालप्पमाणं उड्ढं वेहासं उप्पयइ, उप्पइत्ता ताए उक्किट्ठाए जाव देवगईए वीइवयमाणी वीइवयमाणी जेणेव मागंदियदारए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता आसुरुत्ता मागं-दियदारए खरफरुसनिट्ठुरवयणेहिं एवं वयासी:—

तत्पश्चात् उस रत्नद्वीप की देवी ने उन माकंदी पुत्रों को अवधिज्ञान से देखा। देख कर उसने हाथ में ढाल और तलवार ली। सात-आठ ताड़ जितनी ऊँचाई पर आकाश में उड़ी। उड़ कर उत्कृष्ट यावत् देवगति से चलती-चलती जहाँ माकंदीपुत्र थे, वहाँ आई। आकर तत्काल कुपित हुई और माकंदी पुत्रों को तीखे, कठोर और निष्ठुर वचनों से इस प्रकार कहने लगी:—

'हं भो मागंदियदारगा ! अप्पत्थियपत्थिया ! जइ णं तुब्भे मए सद्धिं विउलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणा विहरह, तो मे अत्थि जीवियं, अहण्णं तुब्भे मए सद्धिं विउलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणा नो विहरह, तो मे इमेणं नीलुप्पलगवलगुलिय जाव खुरधारेणं असिणा रत्तगंडमंसुयाइं माउयाहिं उवसोहियाइं तालफलाणीव सीसाइं एगंते एडेमि।'

'अरे माकंदी के पुत्रो ! अप्रार्थित (मौत) की इच्छा करने वालो ! यदि तुम मेरे साथ विपुल कामभोग भोगते हुए रहोगे तो तुम्हारा जीवन है-तुम जीते बचोगे, और यदि तुम मेरे साथ विपुल कामभोग भोगते हुए नहीं रहोगे तो इस नील कमल, भैंस के सींग और नील द्रव्य की गुटिका (गोली) के समान काली और छुरे की धार के समान तीखी तलवार से तुम्हारे इन मस्तकों को ताड़फल की तरह काट कर एकान्त में डाल दूंगी, जो गंडस्थलों को और दाढ़ी-मूछों को लाल करने वाले हैं और मूछों से सुशोभित हैं, अथवा जो माता आदि के द्वारा सँवार कर सुशोभित किये हुए केशों से शोभायमान हैं।'

तए णं ते मागंदियदारगा रयणदीवदेवयाए अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म भीया संजायभया करयल जाव एवं वयासी—जं णं देवाणुप्पिया वइस्ससि तस्स आणाउववायवयणनिद्देसे चिट्ठिस्सामो।

तत्पश्चात् वे माकंदीपुत्र रत्नद्वीप की देवी से यह अर्थ सुन कर और हृदय में धारण करके भयभीत हुए। उन्हें भय उत्पन्न हुआ। उन्होंने दोनों हाथ जोड़ कर इस प्रकार कहा-'देवानुप्रिया जो कहेंगी, हम आपकी आज्ञा, उपपात सेवा, वचन-आदेश और निर्देश (कार्य करने) में तत्पर रहेंगे।' अर्थात् आपके सभी आदेशों का पालन करेंगे।

तए णं सा रयणद्दीवदेवया ते मागंदियदारए गेण्हइ, गेण्हित्ता जेणेव पासायवडेंसए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता असुभपुग्गलावहारं करेइ, करित्ता सुभपोग्गलपक्खेवं करेइ, करित्ता पच्छा तेहिं सद्धिं विउलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणी विहरइ। कल्लाकल्लिं च अमयफलाइं उवणेइ।

तत्पश्चात् रत्नद्वीप की देवी ने उन माकन्दी के पुत्रों को ग्रहण किया। ग्रहण करके जहाँ अपना उत्तम प्रासाद था, वहाँ आई। आकर अशुभ पुद्गलों को दूर किया और शुभ पुद्गलों का प्रक्षेपण किया और फिर उनके साथ विपुल

काम-भोगों का सेवन करने लगी। प्रतिदिन उनके लिए अमृत जैसे मधुर फल लाने लगी।

तए णं सा रयणदीवदेवया सक्कवयणसंदेसेणं सुट्ठिएणं लवणाहिवइणा लवणसमुद्दे तिसत्तखुत्तो अणुपरियट्टियव्वे त्ति जं किंचि तत्थ तणं वा पत्तं वा कट्ठं वा कयवरं वा असुइं पूइयं दुरभिगंधमचोक्खं तं सव्वं आहुणिय आहुणिय तिसत्तखुत्तो एगंते एडेयव्वं ति कट्टु णिउत्ता।

तत्पश्चात् रत्नद्वीप की उस देवी को शक्रेन्द्र के वचन-आदेश से, सुस्थित नामक लवणसमुद्र के अधिपति देव ने कहा-'तुम्हें इक्कीस बार लवणसमुद्र का चक्कर काटना है। वह इसलिए कि वहाँ जो कुछ भी तृण (घास) पत्ता, काष्ठ, कचरा, अशुचि (अपवित्र वस्तु), सड़ी-गली वस्तु या दुर्गंधित वस्तु आदि गंदी चीज हो, वह सब इक्कीस बार हिला-हिला कर, समुद्र से निकाल कर एक तरफ डाल देना।' इस प्रकार कह कर उस देवी को समुद्र की सफाई के कार्य में नियुक्त किया।

तए णं सा रयणदीवदेवया ते मागंदियदारए एवं वयासी-एवं खलु अहं देवाणुप्पिया! सक्कवयणसंदेसेणं सुट्ठिएणं लवणाहिवइणा तं चेव जाव णिउत्ता। तं जाव अहं देवाणुप्पिया! लवणसमुद्दे जाव एडेमि जाव तुब्भे इहेव पासायवडिंसए सुहंसुहेणं अभिरममाणा चिट्ठह। जइ णं तुब्भे एयंसि अंतरंसि उव्विग्गा वा, उस्सुया वा, उप्पुया वा भवेज्जाह, तो णं तुब्भे पुरच्छिमिल्लं वणसंडं गच्छेज्जाह।

तत्पश्चात् उस रत्नद्वीप की देवी ने उन माकन्दीपुत्रों से कहा-'हे देवानुप्रियो! मैं शक्रेन्द्र के वचनादेश (आज्ञा) से, सुस्थित नामक लवणसमुद्र के अधिपति देव द्वारा यावत् (पूर्वोक्त प्रकार से सफाई के कार्य में) नियुक्त की गई हूं। सो हे देवानुप्रियो! मैं जब तक लवणसमुद्र में से यावत् कचरा आदि दूर करने जाऊँ, तब तक तुम इसी उत्तम प्रसाद में आनन्द के साथ रमण करते हुए रहना। यदि तुम इस बीच में ऊब जाओ, उत्सुक होओ, या कोई उपद्रव हो, तो तुम पूर्वदिशा के वनखण्ड में चले जाना।

तत्थ णं दो उऊ सया साहीणा, तंजहा-पाउसे य वासारत्ते य।

तत्थ उ—

कंदलसिलिंधदंतो णिउरवरपुप्फपीवरकरो,
कुडयज्जुणणीवसुरभिदाणो, पाउसउउगयवरो साहीणो ॥

तत्थ य—

सुरगोवमणिविचित्तो, दरदुदुकुलरसियउज्झररवो ।
बरहिणविंदपरिणद्धसिहरो, वासाउउपव्वतो साहीणो ॥ २

तत्थ णं तुब्भे देवाणुप्पिया ! बहुसु वावीसु य जाव सरस
पासु बहुसु आलीघरएसु य मालीघरएसु य जाव कुसुमघर
सुहंसुहेणं अभिरममाणा विहरेज्जाह ।

उस पूर्वदिशा के वनखण्ड में दो ऋतुएँ सदा स्वाधीन हैं-विद्यमा
हैं। वे यह हैं-प्रावृप् ऋतु अर्थात आषाढ़ और श्रावण का मौसिम तथा व
अर्थात भाद्रपद और आश्विन का मौसिम। उनमें से-(उस वनखण्ड में
प्रावृप ऋतु रूपी हाथी स्वाधीन है। कंदल-नवीन लताएँ और सिलिंध्र
फोड़ा उस प्रावृप्-हाथी के दांत हैं। निउर नामक वृक्ष के उत्तम पुष्प ही
उत्तम सूंड़ है। कुटज, अर्जुन और नीप वृक्षों के पुष्प ही उसका सुगंधि
जल है। (यह सब वृक्ष प्रावृप् ऋतु में फूलते हैं, किन्तु उस वनखण्ड
फूले रहते हैं। इस कारण प्रावृप् को वहाँ सदा स्वाधीन कहा है।) औ
वनखण्ड में वर्षाऋतु रूपी पर्वत भी सदा स्वाधीन-विद्यमान रहता है,
वह इन्द्र गोप (सावन की डोकरी) रूपी पद्मराग आदि मणियों से
वर्ण वाला रहता है, और उसमें मेंढकों के समूह के शब्द रूपी झरने क
होती रहती है। वहाँ मयूरों के समूह सदैव शिखरों पर विचरते रहते हैं।

हे देवानुप्रियो ! उस पूर्व दिशा के उद्यान में तुम बहुतमी बा
में, यावत् बहुत-सी सरोवरों की श्रेणियों में, बहुत-से लतामण्डपों में,
के मंडपों में यावत् बहुत-से पुष्पमंडपों में सुखे-सुखे रमण करते हुए
व्यतीत करना।

जइ णं तुब्भे एत्थ वि उव्विग्गा वा उस्सुया उप्पुया वा भ
तो णं तुब्भे उत्तरिल्लं वणसंडं गच्छेज्जाह। तत्थ णं दो उ
साहीणा, तंजहा-सरदो य हेमंतो य।

तत्थ उ—

सणसत्तवण्णकउओ, नीलुप्पलपउमनलिणसिंगो।
सारसचक्कवायरवितघोसो, सरयउऊगोवती साहीणो ॥ १ ॥

तत्थ य—

सियकुंदधवलजोण्हो, कुसुमितलोद्धवणसंडमंडलतलो।
तुसारदगधारपीवरकरो, हेमंतउऊ-ससी सया साहीणो ॥ २ ॥

अगर तुम वहाँ भी ऊब जाओ, उत्सुक हो जाओ या कोई उपद्रव हो
ाय-भय हो जाय, तो तुम उत्तर दिशा के वनखण्ड में चले जाना। वहाँ दो
ुएँ सदा स्वाधीन हैं। वे यह हैं—शरद् और हेमन्त। उनमें से शरद्
कार्तिक और मार्गशीर्ष) इस प्रकार है:—

शरद् ऋतु रूपी गोपति-वृषभ सदा स्वाधीन है। सन और सप्तच्छद
ों के पुष्प उसका ककुद (काँधला) है, नीलोत्पल पद्म और नलिन उसके
ग हैं, सारस और चक्रवाक पक्षियों का कूजन ही उसका घोष (दलांक) है।
र्म-हेमन्तऋतु रूपी चन्द्रमा उस वन में सदा स्वाधीन है। श्वेत कुन्द के फूल
सकी धवल ज्योत्स्ना—चाँदनी है। प्रफुल्लित लोध्र वाला वनप्रदेश उसका
डलतल (बिम्ब) है और तुषार के जलबिन्दु की धाराएँ उसकी स्थूल
रणें हैं।

तत्थ णं तुब्भे देवाणुप्पिया! वावीसु य जाव विहराहि।

हे देवानुप्रियो! तुम उत्तर दिशा के उस वनखण्ड में यावत् क्रीड़ा करना।

जइ णं तुब्भे तत्थ वि उव्विग्गा वा जाव उस्सुया वा भवेज्जाह,
ो णं तुब्भे अवरिल्लं वणसंडं गच्छेज्जाह। तत्थ णं दो उऊ साहीणा,
जहा—वसंते य गिम्हे य। तत्थ उ—

सहकारचारुहारो, किंसुयकण्णियारासोगमउडो।
ऊसियतिलगबउलायवत्तो, वसंतउऊणरवई साहीणो ॥ १ ॥

तत्थ य—

पाडलसिरीससलिलो, मलियावासंतियधवलवेलो।
सीयलसुरभिअनलमगरचरिओ, गिम्हउऊसागरो साहीणो ॥२॥

यदि तुम उत्तर दिशा के वनखण्ड में भी उद्विग्न हो जाओ, यावत्

मुझ से मिलने के लिए उत्सुक हो जाओ, तो तुम पश्चिम दिशा के वनखण्ड में चले जाना। उस वनखण्ड में भी दो ऋतुएँ सदा स्वाधीन हैं। वे यह हैं— वसन्त और ग्रीष्म। उसमें—

वसन्त ऋतु रूपी राजा सदा विद्यमान रहता है। वसन्त-राजा के आम्र के पुष्पों का मनोहर हार है, किंशुक (पलाश), कर्णिकार (कनेर) और अशोक के पुष्पों का मुकुट है तथा ऊँचे-ऊँचे तिलक और बकुल के वृक्षों का छत्र है।

और उसमें—

उस वनखण्ड में ग्रीष्मऋतु रूपी सागर सदा विद्यमान रहता है। वह ग्रीष्म-सागर पाटल और शिरीष के पुष्पों रूपी जल से परिपूर्ण रहता है। मल्लिका और वासन्तिकी लताओं के कुसुम ही उसकी उज्ज्वल वेला-ज्वार हैं। उसमें जो शीतल और सुरभित पवन है, वही मगरों का विचरण है।

जइ णं तुब्भे देवाणुप्पिया! तत्थ वि उव्विग्गा उस्सुया भवेज्जाह, तओ तुब्भे जेणेव पासायवडिंसए तेणेव उवागच्छेज्जाह, उवागच्छित्ता ममं पडिवालेमाणा पडिवालेमाणा चिट्ठेज्जाह। मा णं तुब्भे दक्खिणिल्लं वणसंडं गच्छेज्जाह। तत्थ णं महं एगे उग्गविसे चंडविसे घोरविसे महाविसे; अइकायमहाकाए जहा तेयनिसग्गे मसिमहिसामूसाकालए नयणविसरोसपुण्णे अंजणपुंजनियरप्पगासे रत्तच्छे जमलजुयलचंचल-चलंतजीहे धरणियलवेणिभूए उक्कडफुडकुडिलजडिलकक्खडवियड-फडाडोवकरणदच्छे लोहागारधम्ममाणधमधमेंतघोसे अणागलियचंड-तिव्वरोसे समुहिं तुरियं चवलं धमधमंतदिट्ठीविसे सप्पे य परिवसइ। मा णं तुब्भं सरीरगस्स वावत्ती भविस्सइ।

देवानुप्रियो! यदि तुम वहाँ भी ऊब जाओ या उत्सुक हो जाओ तो इस उत्तम प्रासाद में ही आ जाना। यहाँ आकर मेरी प्रतीक्षा करते-करते यहीं ठहरना। दक्षिण दिशा के वनखण्ड की तरफ मत चले जाना।

दक्षिण दिशा के वनखण्ड में एक बड़ा सर्प रहता है। उसका विष उग्र अर्थात् दुर्जर है, प्रचण्ड अर्थात् शीघ्र ही फैल जाता है, घोर है अर्थात् परम्परा से हजार मनुष्यों का घातक है, उसका विष महान् है, अर्थात् जम्बूद्वीप प्रमाण शरीर हो तो उसमें भी फैल सकता है अन्य सब सर्पों से बड़ा शरीर

शरीर बड़ा है। इस सर्प के अन्य विशेषण 'जहा तयनिभगो' अर्थात् गोशालक [illegible]

[illegible] की भट्टी में धौंका जाने वाला लोहा जैसे धम-धम शब्द करता है, उसी प्रकार वह सर्प भी ऐसा ही 'धम-धम' शब्द करता रहता है। उसके, प्रचंड एवं तीव्र [illegible] ...मता एवं चपलता [illegible], अर्थात् वह जिसे [illegible] ...हीं ऐसा न हो कि [illegible]

ते मागंदियदारए दोच्चं पि तच्चं पि एवं वदइ, वदित्ता वेउव्विय-समुग्घाएणं समोहणइ, समोहणित्ता ताए उक्किट्ठाए लवणसमुद्दं तिसत्तखुत्तो अणुपरियट्टेउं पयत्ता यावि होत्था।

रत्नद्वीप की देवी ने यह बात दो बार और तीन बार उन माकन्दीपुत्रों से कही। कह कर उसने वैक्रिय समुद्घात से विक्रिया की। विक्रिया करके उत्कृष्ट-तावली देवगति से इक्कीस बार लवणसमुद्र का चक्कर काटने के लिए प्रवृत्त हो गई।

तए णं ते मागंदियदारया तओ मुहुत्तंतरस्स पासायवडिंसए सइं वा रइं वा धिइं वा अलभमाणा अण्णमण्णं एवं वयासी—एवं खलु देवाणुप्पिया! रयणदीवदेवया अम्हे एवं वयासी—एवं खलु अहं सक्कवयणसंदेसेणं सुट्ठिएणं लवणाहिवइणा जाव वावत्ती भविस्सइ तं सेयं खलु अम्हं देवाणुप्पिया! पुरच्छिमिल्ले वणसंडं गमित्तए।' अण्णमण्णस्स एयमट्ठं पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता जेणेव पुरच्छिमिल्ले वणसंडे तेणेव उवागच्छंति। उवागच्छित्ता तत्थ णं वावीसु य जाव अभिरममाणा आलीघरएसु य जाव विहरंति।

तत्पश्चात् वे माकन्दीपुत्र देवी के चले जाने पर एक मुहूर्त में ही (थोड़ी ही देर में) उस उत्तम प्रासाद में सुखद स्मृति, रति और धृति नहीं पाते हुए आपस में इस प्रकार कहने लगे-'देवानुप्रिय ! रत्नद्वीप की देवी ने हमसे इस प्रकार कहा है कि-शक्रेन्द्र के वचनादेश से लवणसमुद्र के अधिपति देव सुस्थित ने मुझे यह कार्य सौंपा है, यावत् तुम दक्षिण दिशा के वनखण्ड में मत जाना, ऐसा न हो कि तुम्हारे शरीर का विनाश हो जाय।' तो हे देवानुप्रिय ! हमें पूर्व दिशा के वनखण्ड में चलना चाहिए।' दोनों भाइयों ने आपस के इस विचार अंगीकार किया। वे पूर्व दिशा के वनखण्ड में आये। आकर उस वन के अं वावड़ी आदि में यावत् क्रीड़ा करते हुए वल्ली मंडप आदि में यावत् वि करने लगे।

तए णं ते मागंदियदारगा तत्थ वि सइं वा जाव अलभमा जेणेव उत्तरिल्ले वणसंडे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता तत्थ वावीसु य जाव आलीघरएसु य विहरंति।

तत्पश्चात् वे माकंदीपुत्र वहाँ भी सुखद स्मृति यावत् शान्ति न पाते उत्तर दिशा के वनखण्ड में गये। वहाँ जाकर, वावड़ियों में यावत् वल्लीमंड विहार करने लगे।

तए णं ते मागंदियदारया तत्थ वि सइं वा जाव अलभमा जेणेव पच्चत्थिमिल्ले वणसंडे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता विहरंति।

तत्पश्चात् वे माकंदीपुत्र वहाँ भी सुखद स्मृति यावत् शान्ति न हुए पश्चिम दिशा के वनखण्ड में गये। जाकर यावत् विहार करने लगे।

तए णं ते मागंदियदारया तत्थ वि सइं वा जाव अलभम अण्णमण्णं एवं वदासी-एवं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हे रयणदीवे एवं वयासी-'एवं खलु अहं देवाणुप्पिया ! सक्कस्स वयणसं सुट्ठिएण लवणाहिवइणा जाव मा णं तुब्भं सरीरगस्स वा भविस्सइ।' तं भवियव्वं एत्थ कारणेणं। तं सेयं खलु अम्हं दा णिल्लं वणसंडं गमित्तए, त्ति कट्टु अण्णमण्णस्स एयमट्ठं पडिसु ... जेणेव दक्खिणिल्ले वणसंडे तेणेव पहारेत्थ गमणाए

तब वे माकंदीपुत्र वहाँ भी स्मृति यावत् शान्ति न पाते हुए आपस में इस प्रकार कहने लगे—'हे देवानुप्रिय ! रत्नद्वीप की देवी ने हमसे ऐसा कहा है कि—'देवानुप्रियो ! शक्र के वचनादेश से लवणाधिपति सुस्थित ने मुझे समुद्र की स्वच्छता के कार्य में नियुक्त किया है। यावत् तुम दक्षिण दिशा के वनखण्ड में मत जाना। कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारे शरीर का विनाश हो जाय।' तो इसमें कोई कारण होना चाहिए। अतएव हमें दक्षिण दिशा के वनखण्ड में भी जाना चाहिए।' इस प्रकार कह कर उन्होंने एक दूसरे के इस विचार को स्वीकार किया। स्वीकार करके उन्होंने दक्षिण दिशा के वनखण्ड में जाने का संकल्प किया—रवाना हुए।

तए णं गंधे निद्धाति से जहानामए अहिमडेइ वा जाव अणिट्ठतराए चेव।

तए णं ते मागंदियदारया तेणं असुभेणं गंधेणं अभिभूया समाणा सएहिं सएहिं उत्तरिज्जेहिं आसाइं पिहेंति, पिहित्ता जेणेव दक्खिणिल्ले वणसंडे तेणेव उवागया।

तत्पश्चात् दक्षिण दिशा से दुर्गंध फूटने लगी, जैसे कोई साँप का मृत कलेवर हो, यावत् उससे भी अधिक अनिष्ट दुर्गंध आने लगी।

तत्पश्चात् उन माकंदीपुत्रों ने उस अशुभ दुर्गंध से घबरा कर अपने-अपने उत्तरीय वस्त्रों से मुँह ढँक लिये। मुँह ढँक कर वे दक्षिण दिशा के वनखण्ड में पहुँचे।

तत्थ णं महं एगं आघायणं पासंति, पासित्ता अट्ठियरासिसतसंकुलं भीमदरिसणिज्जं एगं च तत्थ सूलाइतयं पुरिसं कलुणाइं विस्सराइं कट्ठाइं कुव्वमाणं पासंति, पासित्ता भीया जाव संजायभया जेणेव सूलाइयपुरिसे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता तं सूलाइयं पुरिसं एवं वयासी—'एस णं देवाणुप्पिया ! कस्साघायणे ? तुमं च णं के कओ वा इहं हव्वमागए ? केण वा इमेयारूवं आवइं पाविए ?'

वहाँ उन्होंने एक बड़ा वधस्थान देखा। देख कर सैकड़ों हाड़ों के समूह से व्याप्त और देखने में भयंकर उस स्थान पर शूली पर चढ़ाये हुए एक पुरुष को करुण, विरस और कष्टमय शब्द करते देखा। उसे देख कर वे डर

उन्हें बड़ा भय उत्पन्न हुआ। फिर वे, जहाँ शूली पर चढ़ाया पुरुष था, वहाँ पहुँचे और शूली पर चढ़े पुरुष से इस प्रकार बोले-'हे देवानुप्रिय! यह वधस्थान किसका है? तुम कौन हो? किसलिए यहाँ आये थे? किसने तुम्हें इस विपत्ति को पहुंचाया है?

तए णं से सूलाइयपुरिसे मागंदियदारए एवं वयासी-'एस णं देवाणुप्पिया! रयणदीवदेवयाए आघायणे, अहण्णं देवाणुप्पिया! जंबुद्दीवाओ भारहाओ वासाओ कागंदीए आसवाणियए विपुलं पणियभंडमायाए पोतवहणेणं लवणसमुद्दं ओयाए। तए णं अहं पोयवहणविवत्तीए निब्बुड्डभंडसारे एगं फलगखंडं आसाएमि। तए णं अहं उवुज्झमाणे उवुज्झमाणे रयणदीवंतेणं संवूढे। तए णं सा रयणदीवदेवया ममं ओहिणा पासइ, पासित्ता ममं गेण्हइ, गेण्हित्ता मए सद्धिं विपुलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणी विहरइ। तए णं सा रयणदीवदेवया अन्नया कयाई अहालहुसगंसि अवराहंसि परिकुविया समाणी ममं एयारूवं आवइं पावेइ। तं ण णज्जइ णं देवाणुप्पिया! तुम्हं पि इमेसिं सरीरगाणं का मण्णे आवई भविस्सइ?'

तब शूली पर चढ़े उस पुरुष ने माकन्दीपुत्रों से इस प्रकार कहा-'हे देवानुप्रियो! यह रत्नद्वीप की देवी का वधस्थान है। देवानुप्रियो! जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में स्थित काकंदी नगरी का निवासी अश्वों का व्यापारी हूं। मैं बहुत-से अश्व और भाण्डोपकरण पोतवहन में भर कर लवणसमुद्र में चला। तत्पश्चात् पोतवहन के भंग हो जाने से मेरा सब उत्तम भाण्डोपकरण डूब गया। मुझे पटिया का एक टुकड़ा मिल गया। उसी के सहारे तिरता-तिरता मैं रत्नद्वीप के समीप आ पहुँचा। उसी समय रत्नद्वीप की देवी ने मुझे अवधिज्ञान से देखा। देख कर उसने मुझे ग्रहण कर लिया, वह मेरे साथ विपुल कामभोग भोगने लगी।

तत्पश्चात् रत्नद्वीप की वह देवी एक बार, किसी समय, एक छोटे से अपराध पर अत्यन्त कुपित हो गई और उसी ने मुझे इस विपदा में पहुंचाया है। हे देवानुप्रियो! नहीं मालूम तुम्हारे इस शरीर को भी कौन-सी आपत्ति प्राप्त होगी?'

तए णं ते मागंदियदारया तस्स सूलाइयगस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म बलियतरं भीया जाव संजातभया सूलाइयं पुरिसं एवं

वयासी-'कहं णं देवाणुप्पिया ! अम्हे रयणदीवदेवयाए हत्थाओ साहत्थिं णित्थरिज्जामो ।'

तत्पश्चात् वह माकन्दीपुत्र शूली पर चढ़े उस पुरुष से यह अर्थ (वृत्तांत) सुन कर और हृदय में धारण करके और अधिक भयभीत हो गए और उनके मन में भय उत्पन्न हो गया। तब उन्होंने शूली पर चढ़े पुरुष से इस प्रकार कहा-'देवानुप्रिय ! हम लोग रत्नद्वीप की देवता के हाथ से, किस प्रकार अपने हाथ से-अपने-आप निस्तार पाएँ-छुटकारा पा सकते हैं ?'

तए णं से सूलाइयए पुरिसे ते मागंदियदारगे एवं वयासी-एस णं देवाणुप्पिया ! पुरच्छिमिल्ले वणसंडे सेलगस्स जक्खस्स जक्खाययणे सेलए नामं आसरूवधारी जक्खे परिवसइ।

तए णं से सेलए जक्खे चोद्दसट्ठमुद्दिट्ठपुण्णमासिणीसु आगयसमए पत्तसमए महया महया सद्देणं एवं वयइ-'कं तारयामि ? कं पालयामि ?'

तत्पश्चात् शूली पर चढ़े पुरुष ने उन माकन्दीपुत्रों से कहा-'देवानुप्रियो ! इस पूर्व दिशा के वनखण्ड में शैलक यक्ष का यक्षायतन है। उसमें अश्व का रूप धारण किये शैलक नामक यक्ष निवास करता है।

वह शैलक यक्ष चौदस, अष्टमी, अमावस्या और पूर्णिमा के दिन आगत समय और प्राप्त समय होकर अर्थात् एक नियत समय आने पर जोर के शब्द कह कर इस प्रकार बोलता है-'किसको तारूँ ? किसको पालूँ ?'

तं गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया ! पुरच्छिमिल्लं वणसंडं सेलगस्स जक्खस्स महरिहं पुप्फच्चणियं करेह, करित्ता जण्णुपायवडिया पंजलिउडा विणएणं पज्जुवासमाणा चिट्ठह ।

जाहे णं से सेलए जक्खे आगयसमए एवं वएज्जा-'कं तारयामि ? कं पालयामि ?' ताहे तुब्भे वदह-'अम्हे तारयाहि, अम्हे पालयाहि ।' सेलए भे जक्खे परं रयणदीवदेवयाए हत्थाओ साहत्थिं णित्थारेज्जा । अण्णहा भे न याणामि इमेसिं सरीरगाणं का मण्णे आवई भविस्सइ ।

तो हे देवानुप्रियो ! तुम लोग पूर्व दिशा के वनखण्ड में जाना और शैलक यक्ष की महान् जनों के योग्य पुष्पों से पूजा करना। पूजा करके घुटने और

जोयणाइं दंडं निस्सरइ, दोच्चं पि तच्चं पि वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहणइ, समोहणित्ता एगं महं आसरूवं विउव्वइ। विउव्वित्ता ते मागंदियदारए एवं वयासी—'हं भो मागंदियदारया ! आरुह णं देवाणुप्पिया ! मम पिट्ठंसि।'

तत्पश्चात् शैलक यक्ष उत्तर पूर्व दिशा में गया। वहाँ जाकर उसने वैक्रिय समुद्घात करके संख्यात योजन का दंड किया। दूसरी बार और तीसरी बार भी वैक्रिय समुद्घात से विक्रिया की। समुद्घात करके एक बड़े अश्व के रूप की विक्रिया और फिर माकन्दीपुत्रों से इस प्रकार कहा-हे माकन्दीपुत्रो! देवानुप्रियो! मेरी पीठ पर चढ़ जाओ।'

तए णं ते मागंदियदारए हट्ठतुट्ठ सेलगस्स जक्खस्स पणामं करेंति, करित्ता सेलगस्स पिट्ठिं दुरूढा।

तए णं से सेलए ते मागंदियदारए दुरूढे जाणित्ता सत्तट्ठतालप्पमाणमेत्ताइं उड्ढं वेहायं उप्पयइ, उप्पइत्ता य ताए उक्किट्ठाए तुरियाए देवयाए देवगईए लवणसमुद्दं मज्झंमज्झेणं जेणेव जंबुद्दीवे दीवे, जेणेव भारहे वासे, जेणेव चंपानयरी तेणेव पहारेत्थ गमणाए।

तब माकंदीपुत्रों ने हर्षित और सन्तुष्ट होकर शैलक यक्ष को प्रणाम किया। प्रणाम करके वे शैलक की पीठ पर आरूढ़ हो गये।

तत्पश्चात् अश्वरूपधारी शैलक यक्ष माकंदीपुत्रों को पीठ पर आरूढ़ हुआ जान कर सात-आठ ताड़ के बराबर ऊँचा आकाश में उड़ा। उड़ कर उत्कृष्ट, शीघ्रता वाली देव संबंधी दिव्य गति से लवणसमुद्र के बीचोंबीच होकर जिधर जम्बूद्वीप था, भरत क्षेत्र था और जिधर चम्पा नगरी थी, उसी ओर रवाना हो गया।

तए णं सा रयणदीवदेवया लवणसमुद्दं तिसत्तखुत्तो अणुपरियट्टइ, जं तत्थ तणं वा जाव एडइ, एडित्ता जेणेव पासायवडेंसए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता ते मागंदियदारया पासायवडेंसए अपासमाणी जेणेव पुरच्छिमिल्ले वणसंडे जाव सव्वओ समंता मग्गणगवेसणं करेइ, तेसिं मागंदियदारगाणं कत्थइ सुइं वा अलभमाणी जेणेव उत्तरिल्ले ..., एवं चेव पच्चत्थिमिल्ले वि जाव अपासमाणी ओहिं

पउंजइ, पउंजित्ता ते मागंदियदारए सेलएणं सद्धिं लवणसमुद्दं मज्झं-मज्झेणं वीइवयमाणे वीइवयमाणे पासइ, पासित्ता आसुरुत्ता असि-खेडगं गेण्हइ, गेण्हित्ता सत्तट्ठ जाव उप्पयइ, उप्पइत्ता ताए उक्किट्ठाए वेगेणं मागंदियदारगा तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता एवं वयासी—

तत्पश्चात् रत्नद्वीप की देवी ने लवणसमुद्र के चारों तरफ इक्कीस चक्कर लगा कर, उसमें जो कुछ भी तृण आदि था, वह सब यावत् दूर किया। दूर करके अपने उत्तम प्रासाद में आई। आकर माकंदीपुत्रों को उत्तम प्रासाद में न देख कर पूर्व दिशा के वनखण्ड में गई वहाँ सब जगह उसने मार्गणा-गवेषणा की। गवेषणा करने पर उन माकंदीपुत्रों की कहीं भी श्रुति आदि न पाती हुई उत्तर दिशा के वनखंड में गई। इसी प्रकार पश्चिम के वनखंड में भी गई, पर वे कहीं दिखाई न दिये। तब उसने अवधिज्ञान का प्रयोग किया। प्रयोग करके उसने माकंदीपुत्रों को शैलक के साथ लवणसमुद्र के बीचोंबीच होकर चले जाते देखा। देखते ही वह तत्काल क्रुद्ध हुई। उसने ढाल-तलवार ली और सात-आठ ताड़ जितनी ऊँचाई पर आकाश में उड़ कर उत्कृष्ट एवं शीघ्र गति करके जहाँ माकंदीपुत्र थे, वहाँ आई। आकर इस प्रकार कहने लगीः—

'हं भो मागंदियदारगा! अपत्थियपत्थिया! किं णं तुब्भे जाणह ममं विप्पजहाय सेलएणं जक्खेणं सद्धिं लवणसमुद्दं मज्झंमज्झेणं वीई-वयमाणा? तं एवमवि गए जइ णं तुब्भे ममं अवयक्खह तो भे अत्थि जीवियं, अहण्णं णावयक्खह तो भे इमेण नीलुप्पलगवल जाव एडेमि।

अरे माकंदी के पुत्रो! अरे मौत की कामना करने वालो! क्या तुम

[illegible]

तुम मेरी अपेक्षा रखते हो तो तुम जीवित रहोगे, और यदि मेरी अपेक्षा न रखते होओ तो इस नील कमल एवं भैंस के सींग जैसी काली तलवार से यावत् तुम्हारा मस्तक काट कर फेंक दूंगी।

तए णं ते मागंदियदारए रयणद्दीवदेवयाए अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म अभीया अतत्था अणुव्विग्गा अक्खुभिया असंभंता रयणद्दीव-देवयाए एयमट्ठं नो आढंति, नो परियाणंति, नो अवयक्खंति,

णित्यक्क । छिण्ण निक्किव अकयण्णुय सिढिलभाव निल्लज्ज लुक्ख अकलुण जिणरक्खिय ! मज्झं हिययरक्खगा ॥ ४ ॥

हे होल ! वसुल गोल[1] हे नाथ ! हे दयित (प्यारे !) हे प्रिय ! हे रमण हे कान्त (मनोहर) ! हे स्वामिन् (अधिपति) ! हे निर्घृण (मुझ स्नेहवती का त्याग करने के कारण निर्दय) ! हे नित्यक्क (अकस्मात् मेरा परित्याग करने के कारण अवसर को न जानने वाले) ! हे स्त्यान (मेरे हार्दिक राग से भी तेरा हृदय आर्द्र न हुआ, अतएव कठोर हृदय) ! हे निष्कृप (दयाहीन) ! हे अकृतज्ञ ! हे शिथिलभाव (अकस्मात् मेरा त्याग कर देने के कारण ढीले मन वाले) ! हे निर्लज्ज (मुझे स्वीकार करके त्याग देने के कारण लज्जाहीन) ! हे रूक्ष (स्नेहहीन हृदय वाले) ! हे अकरुण ! जिनरक्षित ! हे मेरे हृदय के रक्षक (वियोग व्यथा से फटते हुए हृदय को फिर अंगीकार करके बचाने वाले) ! ॥ ४ ॥

न हु जुज्जसि एक्कियं अणाहं अबंधवं तुज्झ चलणओवायकारिं उज्झिउमहण्णं । गुणसंकर ! अहं तुमे विहूणा ण समत्था वि जीविउं खणं पि ॥ ५ ॥

मुझ अकेली, अनाथ, बान्धवविहीन, तुम्हारे चरणों की सेवा करने वाली और अधन्या (हतभागिनी) को त्याग देना तुम्हारे लिए योग्य नहीं है । हे गुणों के समूह ! तुम्हारे बिना मैं क्षण भर भी जीवित रहने में समर्थ नहीं हूँ ॥ ५ ॥

इमस्स उ अणेगझसमगरविविधसावयसयाउलघरस्स । रयणागरस्स मज्झे अप्पाणं वहेमि तुज्झ पुरओ एहि, णियत्ताहि जइ सि कुविओ खमाहि एक्कावराहं मे ॥ ६ ॥

अनेक सैकड़ों मत्स्य मगर और विविध क्षुद्र जलचर प्राणियों से व्याप्त गृह रूप या मत्स्य आदि के घर-स्वरूप इस रत्नाकर के मध्य में तुम्हारे सामने मैं अपना वध करती हूँ । (अगर तुम ऐसा नहीं चाहते तो) आओ, वापिस लौट चलो । अगर तुम कुपित हो गये हो तो मेरा एक अपराध क्षमा करो ॥ ६ ॥

तुज्झ य विगयघणविमलससिमंडलगारसस्सिरीयं सारयनवकमलकुमुदकुवलयविमलदलनिकरसरिसनिभं । नयणं (निभनयणं) वयणं पिवासागयाए सद्धा मे पेच्छिउं जे अवलोएहि ता इओ ममं णाह ! जा ते पेच्छामि वयणकमलं ॥ ७ ॥

---

१ ह ... [illegible]

तुम्हारा मुख मेघ-विहीन विमल चन्द्रमा के समान है। तुम्हारे नेत्र शरदऋतु के सद्य:विकसित कमल (सूर्य विकासी), कुमुद (चन्द्रविकासी) और कुवलय (नील कमल) के पत्तों के समान अत्यन्त शोभायमान हैं। ऐसे नेत्र वाले तुम्हारे मुख के दर्शन की प्यास (इच्छा) से मैं यहाँ आई हूँ। तुम्हारे मुख को देखने की मेरी अभिलाषा है। हे नाथ! तुम इस ओर मुझे देखो, जिससे मैं तुम्हारा मुख-कमल देख लूँ॥ ७॥

एवं सप्पणयसरलमहुराइं पुणो पुणो कलुणाइं।
वयणाइं जंपमाणी सा पावा मग्गओ समण्णेइ पावहियया ॥८॥

इस प्रकार प्रेम पूर्ण, सरल और मधुर वचन बार-बार बोलती हुई वह पापिनी और पापपूर्ण हृदय वाली देवी मार्ग में उसके पीछे-पीछे चलने लगी ॥ ८ ॥

तए णं से जिणरक्खिए चलमणे तेणेव भूसणरवेणं कण्णसुहमणो-हरेणं तेहि य सप्पणयसरलमहुरभणिएहिं संजायविउणराए रयणदीवस्स ...

...विलियं।

तत्पश्चात् पूर्वोक्त कानों को सुख देने वाले और मन को हरण करने वाले भूषणों के शब्द से तथा उन प्रणययुक्त, सरल और मधुर वचनों से जिन-रक्षित का मन चलायमान हो गया। उसे पहले की अपेक्षा उस पर दुगुना राग उत्पन्न हो गया। वह रत्नद्वीप की देवी के सुन्दर स्तन, जघन, मुख, हाथ, पैर और नेत्र के लावण्य को, रूप (शरीर के सौन्दर्य) को और यौवन की लक्ष्मी (शोभा-सुन्दरता) को स्मरण करने लगा। उसके द्वारा हर्ष या उतावली के साथ किये गये आलिंगनों को, बिब्बोकों (चेष्टाओं) को, विलासों (नेत्र के विकारों) को, विहसित (मुस्कराहट) को, कटाक्षों को, कामक्रीडाजनित निःश्वासों को, स्त्री के इच्छित अंग के मर्दन को, उपललित (विशेष प्रकार की क्रीडा) को, स्थित (गोद में या भवन में बैठने) को, गति को, प्रणय कोप को तथा प्रसादित (कुपित को रिझाने) को, स्मरण करते हुए जिनरक्षित की मति राग से मोहित हो गई। वह विवश हो गया—अपने पर काबू न रख सका,

कर्म के अधीन हो गया और वह लज्जा के साथ, पीछे की ओर, उसके मुख की तरफ देखने लगा।

तए णं जिणरक्खियं समुप्पन्नकलुणभावं मच्चुगलत्थल्लणोल्लियमइं अवयक्खंतं तहेव जक्खे य सेलए जाणिऊण सणियं सणियं उव्विहइ नियगपिट्ठाहि विगयसत्थं (ड्ढे)।

तत्पश्चात् जिनरक्षित को देवी पर अनुराग उत्पन्न हुआ, अतएव मृ रूपी राक्षस ने उसके गले में हाथ डाल कर उसकी मति फेर दी, अर्थात् उस बुद्धि मृत्यु की तरफ जाने की हो गई। उसने देवी की ओर देखा, यह बात शैल यक्ष ने अवधिज्ञान से जान ली और स्वस्थता से रहित उसको धीरे-धीरे अप पीठ से फेंक दिया।

तए णं सा रयणदीवदेवया निस्संसा कलुणं जिणरक्खियं सक लुसा सेलगपिट्ठाहि उवयंतं 'दास ! मओसि' त्ति जंपमाणी, अप सागरसलिलं, गेण्हिय बाहाहिं आरसंतं उड्ढं उव्विहइ। अंबरत ओवयमाणं च मंडलग्गेण पडिच्छित्ता नीलुप्पलगवलअयसिप्पगासे असिवरेणं खंडाखंडिं करेइ, करित्ता तत्थ विलवमाणं तस्स य सरस वहियस्स घेत्तूण अंगमंगाइं सरुहिराइं उक्खित्तबलिं चउद्दिसिं करेइ पंजली पहिट्ठा।

तत्पश्चात् उस निर्दय और पापिनी रत्नद्वीप की देवी ने दयनीय जिन रक्षित को शैलक की पीठ से गिरता देख कर कहा—'रे दास ! तू मरा।' इ प्रकार कह कर, समुद्र के जल तक पहुँचने से पहले ही, दोनों हाथों से पकड़ चिल्लाते हुए जिनरक्षित को ऊपर उछाला। जब वह नीचे की ओर आने तो उसे तलवार की नोंक पर झेल लिया। नील कमल, भैंस के सींग अलसी के फूल के समान श्याम रंग की श्रेष्ठ तलवार से विलाप करते हुए टुकड़े-टुकड़े कर डाले। टुकड़े-टुकड़े करके अभिमान-रस से वध किये जिनरक्षित के रुधिर से व्याप्त अंगोपांगों को ग्रहण करके, दोनों हाथों की करके, हर्षित होकर उसने उत्क्षिप्त-बलि-देवता को उद्देश्य करके आकाश में हुई बलि की तरह, चारों दिशाओं को बलिदान दिया।

एवामेव समणाउसो ! जो अम्हं निग्गंथाण वा निग्गंथीण ५ पव्वइए समाणे पुणरवि माणुस्सए कामभोगे आसायइ,

पीहेइ, अभिलसइ, से णं इह भवे चेव बहूणं समणाणं बहूणं समणीणं बहूणं सावयाणं बहूणं सावियाणं जाव संसारं अणुपरियट्टिस्सइ, जहा वा से जिणरक्खिए ।

छलिओ अवयक्खंतो, निरावयक्खो गओ अविग्घेणं ।
तम्हा पवयणसारे, निरावयक्खेण भवियव्वं ॥ १ ॥
भोगे अवयक्खंता, पडंति संसार-सायरे घोरे ।
भोगेहिं निरवयक्खा, तरंति संसारकंतारं ॥ २ ॥

इसी प्रकार हे आयुष्मन् श्रमणो ! जो हमारे निर्ग्रंथ या निर्ग्रंथी के समीप प्रव्रजित होकर, फिर से मनुष्य संबंधी कामभोगों का आश्रय लेता है, याचना करता है, स्पृहा करता है अर्थात् कोई बिना माँगे कामभोग के पदार्थ दे दे, ऐसी अभिलाषा करता है, या दृष्ट अथवा अदृष्ट शब्दादिक के भोग की इच्छा करता है, वह मनुष्य इसी भव में बहुत-से साधुओं, बहुत-सी साध्वियों, बहुत-से श्रावकों और बहुत-सी श्राविकाओं द्वारा निन्दनीय होता है, यावत् अनन्त संसार में परिभ्रमण करता है । उसकी दशा जिनरक्षित जैसी है ।

पीछे देखने वाला जिनरक्षित छला गया और पीछे नहीं देखने वाला जिनपाल निर्विघ्न अपने स्थान पर पहुँच गया । अतएव प्रवचनसार (चारित्र) में आसक्तिरहित होना चाहिए, अर्थात् चारित्रवान् को अनासक्त रह कर चारित्र का पालन करना चाहिए ॥ १ ॥

चारित्र ग्रहण करके भी जो भोगों की इच्छा करते हैं, वे घोर संसार-सागर में गिरते हैं और जो भोगों की इच्छा नहीं करते, वे संसार रूपी कान्तार को पार कर जाते हैं ॥ २ ॥

तए णं सा रयणद्दीवदेवया जेणेव जिणपालिए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता बहूहिं अणुलोमेहि य पडिलोमेहि य खरमहुरसिंगारेहिं कलुणेहि य उवसग्गेहि य जाहे नो संचाएइ चालित्तए वा खोभित्तए वा विप्परिणामित्तए वा, ताहे संता तंता परितंता निव्विण्णा समाणा जामेव दिसिं पाउब्भूया तामेव दिसं पडिगया ।

तत्पश्चात् वह रत्नद्वीप की देवी जिनपालित के पास आई । आकर बहुत-से अनुकूल, प्रतिकूल, कठोर, मधुर, शृङ्गार वाले और करुणा जनक उपसर्गों द्वारा जब उसे चलायमान करने, क्षुब्ध करने एवं मन को पलटने में

तब वह मन में थक गई, शरीर से थक गई सर्वथा ग्लानि को प्राप्त हुई और अतिशय खिन्न हो गई। तब जिस दिशा से आई थी, उसी दिशा में लौट गई।

तए णं से सेलए जक्खे जिणपालिएणं सद्धिं लवणसमुद्दं मज्झमज्झेणं वीईवयइ, वीईवइत्ता जेणेव चंपा नयरी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता चंपाए नयरीए अग्गुज्जाणंसि जिणपालियं पिट्ठाओ ओयारेइ, ओयारित्ता एवं वयासी:—

'एस णं देवाणुप्पिया! चंपा नयरी दीसइ' त्ति कट्टु जिणपालियं आपुच्छइ, आपुच्छित्ता जामेव दिसिं पाउब्भूए तामेव दिसिं पडिगए।

तत्पश्चात् वह शैलक यक्ष, जिनपालित के साथ, लवण समुद्र के बीचोंबीच होकर चला। चल कर जहाँ चम्पा नगरी थी, वहाँ आया। आकर चम्पा नगरी के बाहर श्रेष्ठ उद्यान में जिनपालित को अपनी पीठ से नीचे उतारा। उतार कर उसने इस प्रकार कहा-हे देवानुप्रिय! देखो, यह चम्पा नगरी दिख रही है। यह कह कर उसने जिनपालित से छुट्टी ली। छुट्टी लेकर जिधर से आया था, उधर ही लौट गया।'

तए णं जिणपालिए चंपं अणुपविसइ, अणुपविसित्ता जेणेव सए गिहे, जेणेव अम्मापियरो, तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता अम्मापिऊणं रोयमाणे जाव विलवमाणे जिणरक्खियवावत्तिं निवेदेइ।

तए णं जिणपालिए अम्मापियरो मित्तणाइ जाव परियणेणं सद्धिं रोयमाणा बहूइं लोइयाइं मयकिच्चाइं करेन्ति, करित्ता कालेणं विगयसोया जाया।

तत्पश्चात् जिनपालित ने और उसके माता-पिता ने मित्र, ज्ञाति स्वजन यावत् परिवार के साथ रोते-रोते बहुत से लौकिक मृतकृत्य किये। मृतकृत्य करके वे कुछ समय बाद शोकरहित हुए।

तए णं जिणपालियं अन्नया कयाइ सुहासणवरगयं अम्मापियरो एवं वयासी-'कहं णं पुत्ता! जिणरक्खिए कालगए?'

तत्पश्चात् एक बार किसी समय सुखासन पर बैठे जिनपालित से उसके माता-पिता ने इस प्रकार प्रश्न किया—'हे पुत्र! जिनरक्षित किस प्रकार (मृत्यु) को प्राप्त हुआ?'

तए णं जिणपालिए अम्मापिऊणं लवणसमुद्दोत्तारं च कालियवाय-समुत्थणं च पोयवहणविवत्तिं च फलगखंडआसायणं च रयणदीवुत्तारं च रयणदीवदेवयागिहं च भोगविभूइं च रयणदीवदेवयाअप्पयाणं च सूलाइयपुरिसदरिसणं च सेलगजक्खआरूहणं च रयणदीवदेवयाउव-सग्गं च जिणरक्खियविवत्तिं च लवणसमुद्दउत्तरणं च चंपागमणं च सेलगजक्खआपुच्छणं च जहाभूयमवितहमसंदिद्धं परिकहेइ।

तब जिनपालित ने माता-पिता से अपना लवण समुद्र में प्रवेश करना, तूफानी हवा का उठना, पोतवहन का नष्ट होना, पटिया का टुकड़ा मिलना, रत्नद्वीप में जाना, रत्नद्वीप की देवी के घर जाना, वहाँ के भोगों का वैभव, रत्नद्वीप की देवी का समुद्र की सफाई के लिए जाना, शूली पर चढ़े पुरुष को देखना, शैलक यक्ष की पीठ पर आरूढ होना, रत्नद्वीप की देवी द्वारा उपसर्ग होना, जिनरक्षित का मरण होना, लवणसमुद्र को पार करना, चम्पा में आना और शैलक यक्ष के द्वारा छुट्टी लेना, आदि सर्व वृत्तान्त ज्यों का त्यों, सत्य और असंदिग्ध कह सुनाया।

तए णं जिणपालिए जाव अप्पसोगे जाव विउलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरइ।

तत्पश्चात् जिनपालित यावत् शोक रहित होकर यावत् विपुल कामभोग भोगता हुआ रहने लगा।

ते णं काले णं ते णं समए णं समणे भगवं महावीरे जाव जेणेव चंपा नयरी, जेणेव पुण्णभद्दे चेइए, तेणेव समोसढे। परिसा निग्गया। कूणिओ वि राया निग्गओ। जिणपालिए धम्मं सोच्चा पव्वइए। एक्कारसअंगविऊ, मासिएणं भत्तेणं जाव सोहम्मे कप्पे देवत्ताए उव-वन्ने, दो सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता, जाव महाविदेहे सिज्झिहिइ।

उस काल और उस समय में श्रमण भगवान् महावीर, जहाँ चम्पा नगरी थी और जहाँ पूर्णभद्र चैत्य था, वहाँ पधारे। भगवान् को वन्दना करने के लिए परिषद् निकली। कूणिक राजा भी निकला। जिनपालित ने धर्मोपदेश श्रवण करके दीक्षा अंगीकार की। क्रमशः ग्यारह अंग के ज्ञाता होकर, अन्त में एक मास का अनशन करके यावत् सौधर्म कल्प में देव के रूप में उत्पन्न हुए।

दो सागरोपम की उनकी स्थिति कही गई है। वहाँ से च्यवन करके या
विदेह क्षेत्र में जन्म लेकर सिद्धि प्राप्त करेगा।

एवामेव समणाउसो! जाव माणुस्सए कामभोगे णो
आसाइ, से णं जाव वीइवइस्सइ, जहा वा से जिणपालिए।

इसी प्रकार हे आयुष्मान् श्रमणो! जो मनुष्य यावत् मनुष्य संबंधी
भोगों की (दीक्षित होकर) पुनः अभिलाषा नहीं करता, वह जिनपालि
भाँति यावत् संसार-समुद्र को पार करेगा।

एवं खलु जंबू! समणेणं भगवया महावीरेणं नवमस्स नाय
यणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते त्ति बेमि॥

इस प्रकार हे जम्बू! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने नौवें
अध्ययन का यह अर्थ प्ररूपण किया है। जैसा मैंने सुना है, उसी प्रकार
कहता हूँ। (ऐसा सुधर्मा स्वामी ने जम्बू स्वामी से कहा।)

अध्ययन का उपनय

इस संसार में रत्नद्वीप की देवी के समान अविरति है। लाभार्थी माकं
पुत्रों के समान संसारी जीव हैं। जैसे माकंदीपुत्रों को शूली पर चढ़ा पुरुष
का मार्ग बताने वाला मिला, उसी प्रकार संसार के दुखी जीवों को सद्गुरु
प्राप्ति होती है। वह गुरु अविरति से जीवों को विरत करते हैं। जैसे माकंदी
को लवणसमुद्र पार करके अपने घर पहुँचना था, उसी प्रकार संसारी
संसार-सागर पार करके निर्वाण प्राप्त करना है। जैसे जिनरक्षित वि
होकर शैलक की पीठ से गिरा, उसी प्रकार कोई-कोई जीव चारित्र
होकर अपना जीव नष्ट करते हैं। किन्तु जो जीव जिनपालित के समा
में दृढ़ रहते हैं और अविरति के वशीभूत नहीं होते, वे अपने घर
पहुँच कर सुखी होते हैं।

दशम चन्द्र-अध्ययन

जइ णं भंते ! समणेणं भगवया महावीरेणं णवमस्स नायज्झ-यणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते, दसमस्स णायज्झयणस्स समणेणं भगव महावीरेणं के अट्ठे पण्णत्ते ?

श्री जम्बू स्वामी श्रीसुधर्मा स्वामी से प्रश्न करते हैं-'भगवन् ! यदि श्र भगवान् महावीर ने नौवें ज्ञात-अध्ययन का यह अर्थ कहा है, तो दसवें ज्ञ अध्ययन का श्रमण भगवान् महावीर ने क्या अर्थ कहा है ?'

एवं खलु जंबू ! ते णं काले णं ते णं समए णं रायगिहे ण णयरे होत्था। तत्थ णं रायगिहे णयरे सेणिए णामं राया होत्थ तस्स णं रायगिहस्स नयरस्स बहिया उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए ए णं गुणसीलए णामं चेइए होत्था।

श्रीसुधर्मा स्वामी उत्तर देते हैं-'हे जम्बू ! इस प्रकार निश्चय ही उस और उस समय में राजगृह नामक नगर था। उस राजगृह नगर में श्रे नामक राजा था। उस राजगृह नगर के बाहर उत्तर-पूर्व दिशा-ईशान को में गुणशील नामक चैत्य-उद्यान था।

ते णं काले णं ते णं समए णं समणे भगवं महावीरे पुव्वाणुपु चरमाणे, गामाणुगामं दूइज्जमाणे, सुहं सुहेणं विहरमाणे, जेणेव गु सीलए चेइए तेणेव समोसढे। परिसा निग्गया। सेणिओ वि र निग्गओ। धम्मं सोचा परिसा पडिगया।

उस काल और उस समय में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी अनु से विचरते हुए, एक ग्राम से दूसरे ग्राम जाते हुए, सुखे-सुखे विहार करते जहाँ गुणशील चैत्य था, वहीं पधारे। भगवान् की वन्दना-उपासना कर लिए परिषद् निकली। श्रेणिक राजा भी निकला। धर्मोपदेश सुन कर प लौट गई।

तए णं गोयमसामी समणं भगवं महावीरं एवं वयासी-'कहं णं भंते ! जीवा वड्ढंति वा हायंति वा ?'

तत्पश्चात् गौतम स्वामी ने श्रमण भगवान् महावीर से इस प्रकार कहा (प्रश्न किया)-'भगवन् ! जीव किस प्रकार वृद्धि को प्राप्त होते हैं और किस प्रकार हानि को प्राप्त होते हैं ?' (जीव शाश्वत, अनादि और अनन्त हैं, अतएव उनकी संख्या में वृद्धि-हानि नहीं होती। एक-एक जीव असंख्यात-असंख्यात प्रदेश वाला है। उसके प्रदेशों में भी कभी वृद्धि-हानि नहीं होती। तथापि गौतम स्वामी ने वृद्धि-हानि के कारणों के संबंध में प्रश्न किया है। अतएव इस प्रश्न का आशय गुणों के विकास और ह्रास से है। जीव के गुणों का विकास ही जीव की वृद्धि और गुणों का ह्रास ही जीव की हानि है।)

गोयमा ! से जहाणामए बहुलपक्खस्स पडिवयाचंदे पुण्णिमाचंदं पणिहाय हीणे वण्णेणं, हीणे सोम्मयाए, हीणे निद्धयाए, हीणे कंतीए, एवं दित्तीए जुत्तीए छायाए पभाए ओयाए लेस्साए मंडलेणं, तयाणंतरं च णं बीयाचंदे पाडिवयं चंदं पणिहाय हीणतराए वण्णेणं जाव मंडलेणं, तयाणंतरं च णं तइयाचंदे बिइयाचंदं पणिहाय हीणतराए वण्णेणं जाव मंडलेणं, एवं खलु एएणं कमेणं परिहायमाणे परिहायमाणे जाव अमावस्साचंदे चाउद्दसिचंदं पणिहाय नट्ठे वण्णेणं जाव नट्ठे मंडलेणं। एवामेव समणाउसो ! जो अम्हं निग्गंथो वा निग्गंथी वा जाव पव्वइए समाणे हीणे खंतीए एवं मुत्तीए गुत्तीए अज्जवेणं मद्दवेणं लाघवेणं सच्चेणं तवेणं चियाए अकिंचणयाए बंभचेरवासेणं, तयाणंतरं च णं हीणे हीणतराए खंतीए जाव हीणतराए बंभचेरवासेणं, एवं खलु एएणं कमेणं परिहीयमाणे परिहीयमाणे णट्ठे खंतीए जाव णट्ठे बंभचेरवासेणं।

भगवान, गौतम स्वामी के प्रश्न का उत्तर देते हैं-'हे गौतम ! जैसे कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा का चन्द्र, पूर्णिमा के चन्द्र की अपेक्षा वर्ण (शुक्लता) से हीन होता है, सौम्यता से हीन होता है, स्निग्धता (अरूक्षता) से हीन होता है, कान्ति (मनोहरता) से हीन होता है, इसी प्रकार दीप्ति (चमक) से, युक्ति (आकाश के साथ संयोग) से, छाया (प्रतिबिम्ब या शोभा) से, प्रभा (उदय काल में कान्ति की स्फुरणा) से, ओजस (दाहशमन आदि करने के सामर्थ्य)

...से, लेश्या (किरणरूप लेश्या) से और मंडल (गोलाई) से हीन होता है। इसी प्रकार कृष्णपक्ष की द्वितीया का चन्द्रमा, प्रतिपद् के चन्द्रमा की अपेक्षा ... हीन ... होता है। तत्पश्चात् तृतीया का ... यावत् मंडल से हीन होता ...

इसी प्रकार हे आयुष्मन् श्रमणो ! जो हमारा साधु या साध्वी प्रव्रजित ...कर क्षान्ति-क्षमा से हीन होता है, इसी प्रकार मुक्ति (निर्लोभता) से, आर्जव ...मार्दव से, लाघव से, सत्य से, तप से, त्याग से, आकिंचन्य से और ब्रह्मचर्य ...अर्थात् दस मुनिधर्मों से हीन होता है, वह उसके पश्चात् क्षान्ति से हीन और ...धिक हीन होता जाता है, यावत् ब्रह्मचर्य से भी हीन अतिहीन होता जाता ... इस प्रकार इसी क्रम से हीन-हीनतर होते हुए उसके क्षमा आदि गुण नष्ट ...जाते हैं, यावत् उसका ब्रह्मचर्य भी नष्ट हो जाता है।

...से जहा वा सुक्कपक्खस्स पाडिवयाचंदे अमावासाए चंदं पणिहाय ...हिए वण्णेणं जाव अहिए मंडलेणं, तयाणंतरं च णं विइयाचंदे पडि...यचंदं पणिहाय अहियपराए वण्णेणं जाव अहियतराए मंडलेणं। ...खलु एएणं कमेणं परिवुड्ढेमाणे जाव पुण्णिमाचंदे चाउद्दसिं चंदं ...णिहाय पडिपुण्णे वण्णेणं जाव पडिपुण्णे मंडलेणं।

एवामेव समणाउसो ! जाव पव्वइए समाणे अहिए खंतीए जाव ...चेरवासेणं, तयाणंतरं च णं अहिययराए खंतीए जाव बंभचेरवासेणं। ...खलु एएणं कमेणं परिवड्ढेमाणे पडिवड्ढेमाणे जाव पडिपुण्णे ...चेरवासेणं, एवं खलु जीवा वड्ढंति वा हायंति वा।

इसी प्रकार हे आयुष्मन् श्रमण ! जो हमारा साधु या साध्वी यावत् ...त होकर क्षमा से अधिक-वृद्धि प्राप्त होता है, यावत् ब्रह्मचर्य से अधिक ...है, तत्पश्चात् वह क्षमा से यावत् ब्रह्मचर्य से और अधिक-अधिक होता है। ...प ही इस क्रम से बढ़ते-बढ़ते यावत् वह क्षमा आदि एवं ब्रह्मचर्य से परिपूर्ण ...जाता है। इस प्रकार जीव वृद्धि को और हानि को प्राप्त होते हैं। तात्पर्य ...के सद्गुरु की उपासना से, निरन्तर प्रमादहीन रहने से तथा

कर्म के विशिष्ट क्षयोपशम से क्षमा आदि गुणों की वृद्धि होती है और क्रम वृद्धि होते-होते अन्त में वे गुण पूर्णता को प्राप्त होते हैं।

एवं खलु जंबू ! समणेणं भगवया महावीरेणं दसमस्स णायज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते त्ति बेमि।

इस प्रकार हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने दसवें अध्ययन का यह अर्थ कहा है। मैंने जैसा सुना, वैसा ही मैं कहता हूँ।

उपनय

इस अध्ययन का उपनय स्पष्ट है। चन्द्रमा के स्थान पर साधु समझना चाहिए। प्रमाद साधु-चन्द्रमा के लिए राहु के समान है। जैसे चन्द्रमा पूर्ण होकर भी क्रमशः हानि को प्राप्त होता-होता सर्वथा क्षीण हो जाता है, उसी प्रकार गुणों से प्रतिपूर्ण साधु भी कुशील जनों के संसर्ग आदि से चारित्र-हीन होता होता अन्ततः चारित्र से सर्वथा हीन हो जाता है। किन्तु हीन गुण वाला भी सुशील साधु का संसर्ग आदि पाकर क्रमशः पूर्ण गुणों वाला बन जाता है।
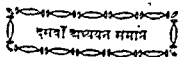
दसवाँ अध्ययन समाप्त

ग्यारहवाँ दावद्रव-अध्ययन

जइ णं भंते ! दसमस्स णायज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते, एक्कारसस्स णं भंते ! समणेणं भगवया महावीरेणं के अट्ठे पण्णत्ते ?

जम्बू स्वामी अपने गुरु श्रीसुधर्मा स्वामी से प्रश्न करते हैं—'भगवन् यदि दसवें ज्ञात-अध्ययन का श्रमण भगवान् महावीर ने यह अर्थ कहा है, तो हे भगवन् ! ग्यारहवें अध्ययन का श्रमण भगवान् महावीर ने क्या अर्थ कहा है ?'

एवं खलु जंबू ! ते णं काले णं ते णं समए णं रायगिहे णामं णयरे होत्था । तत्थ णं रायगिहे णयरे सेणिए णामं राया होत्था । तस्स णं रायगिहस्स णयरस्स बहिया उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए एत्थ णं गुणसीलए णामं चेइए होत्था ।

इस प्रकार हे जम्बू ! उस काल और उस समय में, राजगृह नामक नगर था। उस राजगृह नगर में श्रेणिक नामक राजा था । उस राजगृह नगर के बाहर उत्तरपूर्व दिशा में गुणशील नामक उद्यान था ।

ते णं काले णं ते णं समए णं समणे भगवं महावीरे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे जाव गुणसीलए णामं चेइए तेणेव समोसढे । राया निग्गओ, परिसा निग्गया, धम्मो कहिओ, परिसा पडिगया ।

उस काल और उस समय में श्रमण भगवान् महावीर अनुक्रम से विचरते हुए, यावत् गुणशील नामक उद्यान में समवसृत हुए-आये । वन्दना करने के लिए राजा श्रेणिक निकला । भगवान् ने धर्म का उपदेश दिया । जनसमूह वापिस लौट गया ।

तए णं गोयमे समणं भगवं महावीरं एवं वयासी—'कहं णं भंते ! जीवा आराहगा वा विराहगा वा भवंति ?'

तत्पश्चात् गौतम ने श्रमण भगवान् महावीर से कहा—'भगवन् ! जीव किस प्रकार आराधक अथवा विराधक होते हैं ?'

गोयमा ! से जहाणामए एगंसि समुद्दकूलंसि दावद्दवा नामं रुक्खा पण्णत्ता–किण्हा जाव निउरंबभूया पत्तिया पुप्फिया फलिया हरियग रिज्जमाणा सिरीए अईव उवसोभेमाणा उवसोभेमाणा चिट्ठंति।

भगवान् उत्तर देते हैं–'हे गौतम ! जैसे एक समुद्र के किनारे दावद्रव नामक वृक्ष कहे गये हैं। वे कृष्ण वर्ण वाले यावत् निकुरंब (गुच्छा) रूप हैं। पत्तों वाले, फूलों वाले, फलों वाले, अपनी हरियाली के कारण मनोहर और श्री से अत्यन्त शोभित–शोभित होते हुए स्थित हैं।

जया णं दीविच्चगा ईसिं पुरेवाया पच्छावाया मंदावाया महावाया वायंति, तदा णं बहवे दावद्दवा रुक्खा पत्तिया जाव चिट्ठंति। अप्पेगइया दावद्दवा रुक्खा जुन्ना झोडा परिसडियपंडुपत्तपुप्फफला सुक्करुक्खओ विव मिलायमाणा चिट्ठंति।

जब द्वीप संबंधी ईषत् पुरोवात अर्थात् कुछ–कुछ स्निग्ध अथवा पूर्व दिशा संबंधी वायु, पथ्यवात अर्थात् सामान्यतः वनस्पति के लिए हितकारक या पछाही वायु, मंद (धीमी–धीमी) वायु और महावात–प्रचण्डवायु चलती है, तब बहुत–से दावद्रव नामक वृक्ष पत्रयुक्त यावत् होकर खड़े रहते हैं। उनमें से कोई–कोई दावद्रव वृक्ष जीर्ण जैसे हो जाते हैं, झोड अर्थात् सड़े पत्तों वाले हो जाते हैं, अतएव वे खिरे हुए पीले पत्तों पुष्पों और फलों वाले हो जाते हैं और सूखे पेड़ों की तरह मुरझाते हुए खड़े रहते हैं।

एवामेव समणाउसो ! जे अम्हं निग्गंथो वा निग्गंथी वा जाव पव्वइए समाणे बहूणं समणाणं, बहूणं समणीणं, बहूणं सावयाणं बहूणं सावियाणं सम्मं सहइ जाव अहियासेइ, बहूणं अण्णउत्थियाणं बहूणं गिहत्थाणं नो सम्मं सहइ जाव नो अहियासेइ, एस णं मए पुरिसे देसविराहए पण्णत्ते समणाउसो !

इसी प्रकार हे आयुष्मन् श्रमणो ! हमारा जो साधु या साध्वी यावत् दीक्षित होकर बहुत–से साधुओं बहुत–सी साध्वियों, बहुत–से श्रावकों और बहुत–सी श्राविकाओं के प्रतिकूल वचनों को सम्यक् प्रकार से सहन करता है, विशेष रूप से सहन करता है, किन्तु बहुत–से अन्य तीर्थिकों के तथा ... दुर्वचन को सम्यक् प्रकार से सहन नहीं करता है यावत् विशेष रूप

से सहन नहीं करता है, ऐसे पुरुष को, हे आयुष्मन् श्रमणो ! मैंने देश विराधक कहा है।

जया णं सामुद्दगा ईसिं पुरेवाया पच्छावाया मंदावाया महावाया वायंति, तया णं बहवे दावद्दवा रुक्खा जुण्णा झोडा जाव मिलायमाणा मिलायमाणा चिट्ठंति । अप्पेगइया दावद्दवा रुक्खा पत्तिया पुप्फिया जाव उवसोभेमाणा उवसोभेमाणा चिट्ठंति ।

जब समुद्र संबंधी ईषत्पुरोवात, पथ्य या पश्चात् वात, मंदवात, और महावात बहती है, तब बहुत-से दावद्रव वृक्ष जीर्ण-से हो जाते हैं, झोड हो जाते हैं, यावत् मुरझाते-मुरझाते खड़े रहते हैं। किन्तु कोई-कोई दावद्रव वृक्ष पत्रित, पुष्पित यावत् अत्यन्त शोभायमान होते हुए रहते हैं।

एवामेव समणाउसो ! जो अम्हं निग्गंथो वा निग्गंथी वा पव्वइए समाणे बहूणं अण्णउत्थियाणं, बहूणं गिहत्थाणं सम्मं सहइ, बहूणं समणाणं, बहूणं समणीणं, बहूणं सावयाणं, बहूणं सावियाणं नो सम्मं सहइ, एस णं मए पुरिसे देसाराहए पण्णत्ते समणाउसो !

इसी प्रकार हे आयुष्मन् श्रमणो ! जो हमारा साधु अथवा साध्वी दीक्षित होकर बहुत-से अन्य तीर्थिकों के और बहुत-से गृहस्थों के दुर्वचन सम्यक् प्रकार से सहन करता है और बहुत-से साधुओं, बहुत-सी साध्वियों, बहुत-से श्रावकों तथा बहुत-सी श्राविकाओं के दुर्वचन सम्यक् प्रकार से सहन नहीं करता, उस पुरुष को मैंने देशाराधक कहा है आयुष्मान् श्रमणो !

जया णं नो दीविच्चगा णो सामुद्दगा ईसिं पुरेवाया पच्छावाया जाव महावाया वायंति, तए णं सव्वे दावद्दवा रुक्खा झोडा जाव मिलायमाणा मिलायमाणा चिट्ठंति ।

जब द्वीप संबंधी और समुद्र संबंधी एक भी ईषत् पुरोवात, पथ्य या पश्चात् वात, यावत् महावात नहीं बहती, तब सब दावद्रव वृक्ष जीर्ण सरीखे हो जाते हैं, यावत् मुरझाये-मुरझाये रहते हैं।

एवामेव समणाउसो ! जाव पव्वइए समाणे बहूणं समणाणं बहूणं समणीणं बहूणं सावयाणं बहूणं सावियाणं बहूणं

बहूणं गिहत्थाणं नो सम्मं सहइ, एस णं मए पुरिसे सव्व पएणत्ते समणाउसो !

इसी प्रकार हे आयुष्मान् श्रमणो ! जो हमारा साधु या साध्वी प्रव्रजित होकर बहुत-से साधुओं, बहुत-सी साध्वियों, बहुत-से श्रावकों, बहुत-सी श्राविकाओं, बहुत-से अन्य तीर्थियों एवं बहुत-से गृहस्थों के दुर्वचन को सम्यक् प्रकार से सहन नहीं करता, उस पुरुष को, हे आयुष्मान्! मैंने सर्वविराधक कहा है।

जया णं दीविच्चगा वि सामुद्दगा वि ईसिंपुरेवाया पच्छा जाव वायंति, तदा णं सव्वे दावद्दवा रुक्खा पत्तिया जाव चिट्ठं

जब द्वीप संबंधी भी और समुद्र संबंधी भी ईषत् पुरोवात, पश्चात्-वात, यावत् बहती हैं, तब सभी दावद्रव वृक्ष पत्रित पुष्पित यावत् सुशोभित रहते हैं।

एवामेव समणाउसो ! जे अम्हं पव्वइए समाणे बहूणं स बहूणं समणीणं बहूणं सावयाणं बहूणं सावियाणं बहूणं अन्नउ बहूणं गिहत्थाणं सम्मं सहइ, एस णं मए पुरिसे सव्वाराहए समणाउसो ! एवं खलु गोयमा ! जीवा आराहगा वा विराह भवंति ।

हे आयुष्मान् श्रमणो ! इसी प्रकार जो हमारा साधु या साध्वी श्रमणों के, बहुत-सी श्रमणियों के, बहुत-से श्रावकों के, बहुत-सी श्रा के, बहुत-से अन्य तीर्थिकों के और बहुत-से गृहस्थों के दुर्वचन सम्य से सहन करता है, उस पुरुष को मैंने सर्वाराधक कहा है आयुष्मान् श

इस प्रकार हे गौतम ! जीव आराधक और विराधक होते हैं।

एवं खलु जम्बू ! समणेणं भगवया महावीरेणं एक्कार अयमट्ठे पण्णत्ते, त्ति बेमि ।

श्रीसुधर्मा स्वामी अपने उत्तर का उपसंहार करते हुए कहते हैं-हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर ने ग्यारहवें ज्ञात-अध्ययन का यह मैंने सुना, वैसा ही कहता हूँ।

उपनय

इस अध्ययन में वर्णित दावद्रव वृक्षों के समान साधु हैं। द्वीप की वायु के समान स्वपक्षी साधु आदि के वचन, समुद्री वायु के समान अन्य तीर्थियों के वचन और पुष्प-फल आदि के समान मोक्षमार्ग की आराधना समझना चाहिए। पुष्प आदि के नाश के समान मोक्षमार्ग की विराधना समझना चाहिए।

जैसे द्वीप की वायु के संसर्ग से वृक्षों की समृद्धि बताई, उसी प्रकार साधर्मी के दुर्वचन सहने से मोक्षमार्ग की आराधना और दुर्वचन न सहने से विराधना समझना चाहिए। अन्य तीर्थियों के दुर्वचन न सहन करने से मोक्षमार्ग की अल्प-विराधना होती है। जैसे समुद्री वायु से पुष्प आदि की थोड़ी समृद्धि और बहुत असमृद्धि बताई, उसी प्रकार परतीर्थियों के दुर्वचन सहन करने और स्वपक्ष के सहन न करने से थोड़ी आराधना और बहुत विराधना होती है। दोनों के दुर्वचन सहन न करके क्रोध आदि करने से सर्वथा विराधना और सहन करने से सर्वथा आराधना होती है। अतएव साधु को सभी के दुर्वचन क्षमाभाव से सहन करने चाहिए।

ग्यारहवाँ अध्ययन समाप्त
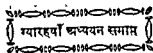
बारहवाँ उदक ज्ञाताध्ययन
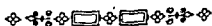
जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं एक्कारसमस्स नायज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते, बारसमस्स णं नायज्झयणस्स के अट्ठे पण्णत्ते?

श्री जम्बू स्वामी, श्रीसुधर्मा स्वामी के प्रति प्रश्न करते हैं-'भगवन् यदि श्रमण भगवान् महावीर ने ग्यारहवें ज्ञात-अध्ययन का यह अर्थ कहा तो बारहवें ज्ञात-अध्ययन का क्या अर्थ कहा है?'

एवं खलु जंबू ! ते णं कालेणं ते णं समए णं चंपा णामं णयरी होत्था। पुण्णभद्दे चेइए। तीसे णं चंपाए णयरीए जियसत्तू णामं राया होत्था। तस्स णं जियसत्तुस्स रन्नो धारिणी नामं देवी होत्था, अहीणा जाव सुरूवा। तस्स णं जियसत्तुस्स रन्नो पुत्ते धारिणीए अत्तए अदीणसत्तू णामं कुमारे जुवराया वि होत्था सुबुद्धी अमच्चे जाव रज्जधुराचिंतए समणोवासए अहिगयजीवाजीवे।

श्रीसुधर्मा स्वामी उत्तर देते हैं-हे जम्बू ! उस काल और उस समय में चम्पा नामक नगरी थी। उसके बाहर पूर्णभद्र नामक चैत्य था। उस चम्पा नगरी में जितशत्रु नामक राजा था। जितशत्रु राजा की धारिणी नामक रानी थी, वह परिपूर्ण पाँचों इन्द्रियों वाली यावत् सुन्दर रूप वाली थी। जितशत्रु राजा का पुत्र और धारिणी देवी का आत्मज अदीन शत्रु नामक कुमार युवराज था। सुबुद्धि नामक मंत्री था। वह यावत् राज्य की धुरा का चिन्तक श्रमणोपासक और जीव-अजीव आदि तत्त्वों का ज्ञाता था।

तीसे णं चंपाए णयरीए बहिया उत्तरपुरच्छिमेणं एगे फरिहोदए यावि होत्था, मेयवसामंसरुहिरपूयपडलपोच्चडे मयगकलेवरसंछण्णे अमणुण्णे वण्णेणं जाव फासेणं। से जहानामए अहिमडेइ वा गोमडेइ वा जाव मयकुहियविणट्ठकिमिणवावण्णदुरभिगंधे किमिजालाउले संसत्ते असुइविगयबीभत्थदरिसणिज्जे, भवेयारूवे सिया ? णो इणट्ठे समट्ठे, एत्तो अणिट्ठतराए चेव जाव गंधेणं पण्णत्ते।

चम्पा नगरी के बाहर उत्तरपूर्व (ईशान) दिशा में एक खाई का पानी था। वह चर्बी, नसों, मांस, रुधिर और पीव के समूह से युक्त था। मृतक-शरीरों से व्याप्त था। वर्ण से यावत् स्पर्श से अमनोज्ञ था। वह जैसे कोई सर्प का मृत कलेवर हो, गाय का कलेवर हो, यावत् मरे हुए, सड़े हुए, गले हुए, कीड़ों से व्याप्त और जानवरों के खाये हुए किसी मृत कलेवर के समान दुर्गन्ध वाला था! कृमियों के समूह से परिपूर्ण था। जीवों से भरा हुआ था। अशुचि, विकृत और बीभत्स-डरावना दिखाई देता था। क्या वह ऐसे स्वरूप वाला था? नहीं, यह अर्थ समर्थ नहीं। वह जल इससे भी अधिक अनिष्ट यावत् गंध आदि ...... पानी इससे भी अधिक अमनोज्ञ रूप, रस,

तए णं से जियसत्तू राया अण्णया कयाइ ण्हाए कयबलिकम्मे जाव अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरे बहूहिं राईसर जाव सत्थवाहपभिईहिं सद्धिं भोयणवेलाए सुहासणवरगए विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं जाव विहरइ, जिमियभुत्तुत्तराए जाव सुईभूए, तंसि विपुलंसि असण जाव जायविम्हए ते बहवे ईसर जाव पभिईए एवं वयासी—

तत्पश्चात् वह जितशत्रु राजा एक बार किसी समय स्नान करके, बलिकर्म (गृहदेवता का पूजन) करके, यावत् अल्प किन्तु बहुमूल्य आभरणों से शरीर को अलंकृत करके, अनेक राजा ईश्वर यावत् सार्थवाह आदि के साथ, भोजन के समय पर, सुखद आसन पर बैठ कर, विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम भोजन जीम रहा था। यावत् भोजन जीमने के अनन्तर, हाथ-मुँह धोकर शुचि हो कर, उस विपुल अशन पान आदि भोजन के विषय में वह विस्मय को प्राप्त हुआ। अतएव उन बहुत-से ईश्वर यावत् सार्थवाह आदि से इस प्रकार कहने लगा—

'अहो णं देवाणुप्पिया! इमे मणुण्णे असणं पाणं खाइमं साइमं वण्णेणं उववेए जाव फासेणं उववेए अस्सायणिज्जे विस्सायणिज्जे पीणणिज्जे दीवणिज्जे दप्पणिज्जे मयणिज्जे बिंहणिज्जे सव्विंदियगाय-पल्हायणिज्जे।

'अहो देवानुप्रियो! यह मनोज्ञ अशन, पान, खादिम और स्वादिम उत्तम वर्ण से युक्त है यावत् उत्तम स्पर्श से युक्त है, अर्थात् इसका रूप, रस, गंध और स्पर्श सभी कुछ श्रेष्ठ है, यह आस्वादन करने योग्य है, विशेष रूप से

करने योग्य है। पुष्टि कारक है, बल को दीप्त करने वाला है, दर्प उत्पन्न करने वाला है, काम-मद का जनक है और बलवर्धक है तथा समस्त इन्द्रियों को और गात्र को विशिष्ट आह्लाद उत्पन्न करने वाला है।'

तए णं ते बहवे ईसर जाव पभिइओ जियसत्तुं एवं वयासी-'तहेव णं सामी! जं णं तुब्भे वदह। अहो णं इमे मणुण्णे असणं पाणं खाइमं साइमं वण्णेणं उववेए जाव पल्हायणिज्जे।

तत्पश्चात् बहुत-से ईश्वर यावत् सार्थवाह प्रभृति जितशत्रु से इस प्रकार कहने लगे-'आप जो कहते हैं, बात वैसी ही है। अहा, यह मनोज्ञ अशन, पान, खादिम और स्वादिम उत्तम वर्ण से युक्त है, यावत् विशिष्ट आह्लादजनक है।'

तए णं जितसत्तू सुबुद्धिं अमच्चं एवं वयासी-'अहो णं सुबुद्धी! इमे मणुण्णे असणं पाणं खाइमं साइमं जाव पल्हायणिज्जे।'

तए णं सुबुद्धी जियसत्तुस्सेयमट्ठं नो आढाइ, जाव तुसिणीए संचिट्ठइ।

तत्पश्चात् जितशत्रु राजा ने सुबुद्धि अमात्य से कहा-'अहो सुबुद्धि! यह मनोज्ञ अशन, पान, खादिम और स्वादिम उत्तम वर्णादि से युक्त और यावत् समस्त इन्द्रियों को एवं गात्र को विशिष्ट आह्लादजनक है।'

तब सुबुद्धि अमात्य ने जितशत्रु के इस अर्थ (कथन) का आदर (अनुमोदन) नहीं किया। यावत् वह चुप रहा।

तए णं जियसत्तुणा सुबुद्धी दोच्चं पि तच्चं पि एवं वुत्ते समाणे जियसत्तुं रायं एवं वयासी-'नो खलु सामी! अहं एयंसि मणुण्णंसि असणपाणखाइमसाइमंसि केइ विम्हए। एवं खलु सामी! सुब्भिसद्दा वि पुग्गला दुब्भिसद्दत्ताए परिणमंति, दुब्भिसद्दा वि पोग्गला सुब्भिसद्दत्ताए परिणमंति। सुरूवा वि पोग्गला दुरूवत्ताए परिणमंति, दुरूवा वि पोग्गला सुरूवत्ताए परिणमंति। सुब्भिगंधा वि पोग्गला दुब्भिगंधत्ताए परिणमंति, दुब्भिगंधा वि पोग्गला सुब्भिगंधत्ताए परिणमंति। सुरसा वि पोग्गला दुरसत्ताए परिणमंति, दुरसा वि पोग्गला सुरसत्ताए परिणमंति। सुहफासा वि पोग्गला दुहफासत्ताए परिणमंति, दुहफासा

वि पोग्गला सुहफासत्ताए परिणमंति । पओगवीससापरिणया वि य णं सामी ! पोग्गला पण्णत्ता ।'

जितशत्रु राजा के द्वारा दूसरी बार और तीसरी बार भी इसी प्रकार कहने पर सुबुद्धि अमात्य ने जितशत्रु राजा से इस प्रकार कहा—'स्वामिन् ! मैं इस मनोज्ञ अशन, पान, खादिम और स्वादिम में कुछ भी विस्मित नहीं हूँ। हे स्वामिन् ! सुरभि (उत्तम-शुभ) शब्द वाले भी पुद्गल दुरभि (अशुभ) शब्द के रूप में परिणत हो जाते हैं और दुरभि शब्द वाले पुद्गल भी सुरभि शब्द के रूप में परिणत हो जाते हैं। उत्तम रूप वाले पुद्गल भी खराब रूप के रूप में परिणत हो जाते हैं और खराब रूप वाले पुद्गल उत्तम रूप के रूप में परिणत हो जाते हैं। सुरभि गंध वाले भी पुद्गल दुरभि गंध के रूप में परिणत हो जाते हैं और दुरभि गंध वाले पुद्गल भी सुरभि गंध के रूप में परिणत हो जाते हैं। सुन्दर रस वाले भी पुद्गल खराब रस के रूप में परिणत होते हैं और खराब रस वाले भी सुन्दर रस के रूप में परिणत हो जाते हैं। शुभ स्पर्श वाले भी पुद्गल अशुभ स्पर्श वाले पुद्गल बन जाते हैं और अशुभ स्पर्श वाले पुद्गल भी शुभ स्पर्श वाले बन जाते हैं। हे स्वामिन् ! सब पुद्गलों में प्रयोग (जीव के प्रयत्न) से और विस्रसा (स्वाभाविक रूप से) परिणमन होता ही रहता है।

तए णं से जियसत्तू सुबुद्धिस्स अमच्चस्स एवमाइक्खमाणस्स एव- मट्ठं नो आढाइ, नो परियाणइ, तुसिणीए संचिट्ठइ।

उस समय राजा जितशत्रु ने ऐसा कहते हुए सुबुद्धि अमात्य के इस कथन का आदर नहीं किया, अनुमोदन नहीं किया और वह चुपचाप बना रहा।

तए णं से जियसत्तू अण्णया कयाई ण्हाए आसखंधवरगए महया भडचडगरपहगरवाहणियाए निज्जायमाणे तस्स फरिहोदगस्स अदूर- सामंतेणं वीईवयइ।

तए णं जियसत्तू राया तस्स फरिहोदगस्स असुभेणं गंधेणं अभि- भूए समाणे सएणं उत्तरिज्जेणं आसगं पिहेइ, एगंतं अवक्कमइ, ते बहवे ईसर जाव पभिइओ एवं वयासी—'अहो णं देवाणुप्पिया ! इमे फरिहो- दए अमणुण्णे वण्णेणं गंधेणं रसेणं फासेणं। से जहानामए अहिमडे इ वा जाव अमणामतराए चेव।'

तत्पश्चात् एक बार किसी समय जितशत्रु स्नान करके, (विभूषित होकर) उत्तम अश्व की पीठ पर सवार होकर, बहुत भटों सुभटों के साथ, घुड़सवारी के लिए निकला और उसी खाई के पानी के पास पहुँचा।

तत्पश्चात् जितशत्रु राजा ने खाई के पानी की अशुभ गंध से घबरा कर अपने उत्तरीय वस्त्र से मुँह ढँक लिया। वह एक तरफ चला गया और साथ के राजा ईश्वर यावत् सार्थवाह वगैरह से इस प्रकार कहने लगा-'अहो देवानुप्रियो! यह खाई का पानी वर्ण, गंध, रस और स्पर्श से अमनोज्ञ-अत्यन्त अशुभ है। जैसे किसी सर्प का मृत कलेवर हो, यावत् उससे भी अधिक अमनोज्ञ है।'

तए णं ते बहवे राईसरपभिइ जाव एवं वयासी—'तहेव णं तं सामी! जं णं तुब्भे एवं वयह, अहो णं इमे फरिहोदए अमणुण्णे वण्णेणं गंधेणं रसेणं फासेणं से जहा नामए अहिमडे इ वा जाव अमणामतराए चेव।'

तत्पश्चात् वे राजा ईश्वर यावत् सार्थवाह आदि इस प्रकार बोले-'हे स्वामिन् आप जो ऐसा कहते हैं सो सत्य ही है कि-अहो! यह खाई का पानी वर्ण, गंध, रस और स्पर्श से अमनोज्ञ है। यह ऐसा अमनोज्ञ है, जैसे साँप का मृतक कलेवर हो, यावत् उससे भी अधिक अतीव अमनोज्ञ है।

तए णं से जियसत्तू सुबुद्धिं अमच्चं एवं वयासी—'अहो णं सुबुद्धी! इमे फरिहोदए अमणुण्णे वण्णेणं से जहानामए अहिमडेइ वा जाव अमणामतराए चेव।

तए णं सुबुद्धी अमच्चे जाव तुसिणीए संचिट्ठइ।

तत्पश्चात् अर्थात् राजा, ईश्वर आदि ने जब जितशत्रु की हाँ में हाँ मिलादी तब, राजा जितशत्रु ने सुबुद्धि अमात्य से इस प्रकार कहा-'अहो सुबुद्धि! यह खाई का पानी वर्ण आदि से अमनोज्ञ है, जैसे किसी सर्प आदि का मृत कलेवर हो, यावत् उससे भी अधिक अत्यन्त अमनोज्ञ है।'

तब सुबुद्धि अमात्य यावत् मौन रहा।

तए णं से जियसत्तू राया सुबुद्धिं अमच्चं दोच्चं पि तच्चं पि एवं ...—'अहो णं तं चेव।'

१। तए णं से सुबुद्धी अमच्चे जियसत्तुणा रण्णा दोच्चं पि तच्चं पि एवं वुत्ते समाणे एवं वयासी—'नो खलु सामी ! अम्हं एयंसि फरिहो-दयंसि केइ विम्हए । एवं खलु सामी ! सुब्भिसद्दा वि पोग्गला दुब्भि-सद्दत्ताए परिणमंति, तं चेव जाव पओगवीससापरिणया वि य णं सामी ! पोग्गला पएणत्ता ।

तत्पश्चात् जितशत्रु राजा ने सुबुद्धि अमात्य से दूसरी बार और तीसरी बार भी इसी प्रकार कहा—'अहो सुबुद्धि यह खाई का पानी अमनोज्ञ है' इत्यादि पूर्ववत्।

तब सुबुद्धि अमात्य ने जितशत्रु के दूसरी बार और तीसरी बार ऐसा कहने पर इस प्रकार कहा—'हे स्वामिन् ! मुझे इस खाई के पानी के विषय में—इसके मनोज्ञ या अमनोज्ञ होने में कोई विस्मय नहीं है। क्योंकि शुभ शब्द के पुद्गल भी अशुभ रूप से परिणत हो जाते हैं, इत्यादि पहले के समान सब कथन यहाँ समझ लेना चाहिए, यावत् मनुष्य के प्रयत्न से और स्वाभाविक रूप से भी पुद्गलों में परिणमन होता रहता है; ऐसा कहा है।

तए णं जितसत्तू राया सुबुद्धिं अमच्चं एवं वयासी—मा णं तुमं देवाणुप्पिया ! अप्पाणं च परं च तदुभयं च बहूहि य असब्भावुब्भा-वणाहि मिच्छत्ताभिणिवेसेण य वुग्गाहेमाणे वुप्पाएमाणे विहराहि ।

तत्पश्चात् जितशत्रु राजा ने सुबुद्धि अमात्य से इस प्रकार कहा—'देवानु-प्रिय ! तुम अपने आपको, दूसरे को और स्व-पर दोनों को, असत् वस्तु या वस्तुधर्म की उद्भावना करके अर्थात् असत् को सत् के रूप में प्रकट करके और मिथ्या अभिनिवेश (दुराग्रह) करके भ्रम में मत डालो, चतुर मत समझो।'

तए णं सुबुद्धिस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था—'अहो णं जितसत्तू संते तच्चे तहिए अवितहे सब्भूते जिणपण्णत्ते भावे णो उवलभइ, तं सेयं खलु मम जियसत्तुस्स रण्णो संताणं तच्चाणं तहियाणं अवितहाणं सब्भूताणं जिणपएणत्ताणं भावाणं अभिगमणट्ठयाए एयमट्ठं उवाइणावेत्तए ।'

जितशत्रु की बात सुनने के पश्चात् सुबुद्धि को इस प्रकार का अध्यवसाय—विचार—उत्पन्न हुआ—अहो, जितशत्रु राजा सत् (विद्यमान) तत्त्वरूप (वास्त-

थिक), तथ्य (सत्य) अवितथ (अमिथ्या) और सद्भूत (विद्यमान स्वभाव वाले) जिन भगवान् द्वारा प्ररूपित भावों को नहीं जानता—नहीं अंगीकार करता। अतएव मेरे लिए यह श्रेयस्कर होगा कि मैं जितशत्रु राजा को सत्, तत्त्वरूप, तथ्य, अवितथ और सद्भूत जिनेन्द्रप्ररूपित भावों (अर्थों) को समझाऊँ और इस बात को अंगीकार कराऊँ।

एवं संपेहेइ, संपेहित्ता पच्चइएहिं पुरिसेहिं सद्धिं अंतरावणाओ नवए घडयपडए पगेण्हइ, पगेण्हित्ता संझाकालसमयंसि पविरलमणुस्संसि निसंतपडिनिसंतंसि जेणेव फरिहोदए तेणेव उवागए, उवागइत्ता तं फरिहोदयं गेण्हावेइ, गेण्हावित्ता नवएसु घडएसु गालावेइ, गालावित्ता नवएसु घडएसु पक्खिवावेइ, पक्खिवावित्ता लंछियमुद्दिए करावेइ, करावित्ता सत्तरत्तं परिवसावेइ, परिवसावित्ता दोच्चं पि नवएसु घडएसु गालावेइ, गालावित्ता नवएसु घडएसु पक्खिवावेइ, पक्खिवावित्ता सज्जक्खारं पक्खिवावेइ, पक्खिवावित्ता लंछियमुद्दिए कारवेइ, कारवित्ता सत्तरत्तं परिवसावेइ, परिवसावित्ता तच्चं पि नवएसु घडएसु जाव संवसावेइ।

सुबुद्धि अमात्य ने इस प्रकार विचार किया। विचार करके विश्वासपात्र पुरुषों से खाई के मार्ग के बीच की कुंभार की दुकान से नये घड़ों का समूह (बहुत-से कोरे घड़े) लिये। घड़े लेकर जब कोई विरले मनुष्य चल रहे थे और जब लोग अपने-अपने घरों में विश्राम लेने लगे, थे, ऐसे संध्याकाल अवसर पर जहाँ खाई का पानी था, वहाँ आया। आकर खाई का वह पानी ग्रहण करवाया। ग्रहण करवा कर उसे नये घड़ों में छनवाया,* छनवाकर नये घड़ों में डलवाया। डलवा कर उन घड़ों को लांछित-मुद्रित करवाया, अर्थात् मुँह बंद करके उन पर निशान लगवा कर मोहर लगवाई, फिर सात रात्रि-दिन उन्हें रहने दिया। सात रात्रि-दिन के बाद उस पानी को दूसरी बार कोरे घड़ों में छनवाया और नये घड़ों में डलवाया। डलवा कर उनमें ताजा राख डलवाई और फिर उन्हें लांछित-मुद्रित करवा दिया। सात रात-दिन तक उन्हें रहने दिया। सात रात-दिन रखने के बाद फिर तीसरी बार नवीन घड़ों में वह पानी डलवाया, यावत् सात रात-दिन उसे रहने दिया।

*गलवाया-छनवाया।

एवं खलु एएणं उवाएणं अंतरा गलावेमाणे, अंतरा पक्खिवावेमाणे, अंतरा य विपरिवसावेमाणे विपरिवसावेमाणे सत्तसत्तराइंदिया विपरिवसावेइ।

तए णं से फरिहोदए सत्तमसत्तयंसि परिणममाणंसि उदयरयणे जाए यावि होत्था-अच्छे पत्थे जच्चे तणुए फलिहवण्णाभे वण्णेणं उववेए, गंधेणं उववेए, रसेणं उववेए, फासेणं उववेए, आसायणिज्जे जाव सव्विंदियगायपल्हायणिज्जे।

इस तरह इस उपाय से बीच-बीच में गलवाया, बीच-बीच में कोरे घड़ों में डलवाया और बीच-बीच में रखवाया जाता हुआ वह पानी सात-सात रात्रि-दिन तक रख छोड़ा जाता था।

तत्पश्चात् वह खाई का पानी सात सप्ताह में परिणत होता हुआ उदक-रत्न (उत्तम जल) बन गया। वह स्वच्छ, पथ्य-आरोग्यकारी, जात्य (उत्तम जाति का), हल्का हो गया; मनोज्ञ वर्ण से युक्त, गंध से युक्त, रस से युक्त और स्पर्श से युक्त, आस्वादन करने योग्य यावत् सब इन्द्रियों तथा गात्र को अति आह्लाद उत्पन्न करने वाला हो गया।

तए णं सुबुद्धी अमच्चे जेणेव से उदयरयणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता करयलंसि आसाएइ, आसाइत्ता तं उदयरयणं वण्णेणं उववेयं, गंधेणं उववेयं, रसेणं उववेयं, फासेणं उववेयं, आसायणिज्जं जाव सव्विंदियगायपल्हायणिज्जं जाणित्ता हट्ठतुट्ठे बहूहिं उदगसंभारणिज्जेहिं दव्वेहिं संभारेइ, संभारित्ता जियसत्तुस्स रण्णो पाणियघरियं सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी—'तुमं च णं देवाणुप्पिया! इमं उदगरयणं गेण्हाहि, गेण्हित्ता जियसत्तुस्स रण्णो भोयणवेलाए उवणेज्जासि।'

तत्पश्चात् सुबुद्धि अमात्य उस उदकरत्न के पास पहुँचा। पहुँच कर हथेली में लेकर उसका आस्वादन किया। आस्वादन करके उसे मनोज्ञ वर्ण से युक्त, गंध से युक्त, रस से युक्त, स्पर्श से युक्त, आस्वादन करने योग्य यावत् सब इन्द्रियों को और गात्र को अति आह्लादजनक जान कर हृष्ट-तुष्ट हुआ। फिर उसने जल को संवारने (सुस्वादु बनाने) वाले द्रव्यों से उसे संवारा-सुगन्धित और सुशीतल बनाया। संवार कर जितशत्रु राजा के

के कर्मचारी को बुलवाया। बुलवा कर कहा-'देवानुप्रिय! तुम यह उदकरत्न लो। इसे लेकर राजा जितशत्रु के भोजन की वेला में उन्हें देना।'

तए णं से पाणियघरए सुबुद्धिस्स एयमट्ठं पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता तं उदयरयणं गिण्हइ, गिण्हित्ता जियसत्तुस्स रण्णो भोयणवेलाए उवट्ठवेइ।

तए णं से जियसत्तू राया तं विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं आसाएमाणे जाव विहरइ।

जिमियभुत्तुत्तराए यावि य णं जाव परमसुइभूए तंसि उदयरयणे जायविम्हए ते बहवे राईसर जाव एवं वयासी-'अहो णं देवाणुप्पिया! इमे उदयरयणे अच्छे जाव सव्विंदियगायपल्हायणिज्जे।'

तए णं बहवे राईसर जाव एवं वयासी-'तहेव णं सामी! जं णं तुब्भे वयह, जाव एवं चेव पल्हायणिज्जे।'

तत्पश्चात् जलगृह के उस कर्मचारी ने सुबुद्धि के इस अर्थ को अंगीकार किया। अंगीकार करके वह उदकरत्न ग्रहण किया और ग्रहण करके जितशत्रु राजा के भोजन की वेला में उपस्थित किया।

तत्पश्चात् जितशत्रु राजा उस विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम का आस्वादन करता हुआ विचर रहा था। जीम चुकने के अनन्तर अत्यन्त शुचि-स्वच्छ होकर जलरत्न का पान करने से राजा को विस्मय हुआ। उसने बहुत-से राजा, ईश्वर आदि से यावत् कहा-'अहो देवानुप्रियो! यह उदकरत्न स्वच्छ है यावत् समस्त इन्द्रियों को और गात्र को अह्लाद उत्पन्न करने वाला है।'

तब वे बहुत-से राजा, ईश्वर आदि यावत् इस प्रकार कहने लगे-'स्वामिन्! जैसा आप कहते हैं, बात ऐसी ही है। यह जलरत्न यावत् आह्लादजनक है।'

तए णं जियसत्तू राया पाणियघरियं सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी-'एस णं तुब्भे देवाणुप्पिया! उदयरयणे कओ आसाइए?'

तए णं पाणियघरिए जियसत्तुं एवं वयासी-'एस णं सामी! मए सुबुद्धिस्स अंतियाओ आसाइए।'

तए णं जियसत्तू राया सुबुद्धिं अमच्चं सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी–'अहो णं सुबुद्धी ! केणं कारणेणं अहं तव अणिट्ठे ५, जेणं तुमं मम कल्लाकल्लिं भोयणवेलाए इमं उदयरयणं न उवट्ठवेसि ? तए णं देवाणुप्पिया ! उदयरयणे कओ उवलद्धे ?'

तए णं सुबुद्धी जियसत्तुं एवं वयासी–'एस णं सामी ! से फरिहोदए।'

तए णं से जियसत्तू सुबुद्धिं एवं वयासी–'केणं कारणेणं सुबुद्धी ! एस से फरिहोदए ?'

तए णं सुबुद्धी जियसत्तुं एवं वयासी–'एवं खलु सामी ! तुम्हे तया मम एवमाइक्खमाणस्स ४ एयमट्ठं नो सद्दहह, तए णं मम इमेयारूवे अज्झत्थिए ६–'अहो णं जियसत्तू संते जाव भावे नो सद्दहइ, नो पत्तियइ, नो रोएइ, तं सेयं खलु ममं जियसत्तुस्स रण्णो संताणं जाव सब्भूयाणं जिणपन्नत्ताणं भावाणं अभिगमणट्ठयाए एयमट्ठं उवाइणावेत्तए। एवं संपेहेमि, संपेहित्ता तं चेव जाव पाणियघरियं सद्दावेमि, सद्दावित्ता एवं वदामि–'तुमं णं देवाणुप्पिया ! उदगरयणं जियसत्तुस्स रण्णो भोयणवेलाए उवणेहि।' तं एएणं कारणेणं सामी ! एस से फरिहोदए।'

तत्पश्चात् राजा जितशत्रु ने जलगृह के कर्मचारी को बुलवाया और बुला कर पूछा–देवानुप्रिय ! तुमने यह जल-रत्न कहाँ से पाया ?'

तब जलगृह के कर्मचारी ने जितशत्रु से कहा–'स्वामिन् ! यह जलरत्न मैं सुबुद्धि अमात्य के पास से पाया है।,

तत्पश्चात् राजा जितशत्रु ने सुबुद्धि अमात्य को बुलाया और उससे इस प्रकार कहा–'अहो सुबुद्धि ! किस कारण से मैं तुम्हें अनिष्ट, अकान्त अप्रिय, अमनोज्ञ और अमनआम हूँ, जिससे तुम मेरे लिए प्रतिदिन, भोजन के समय यह उदकरत्न नहीं भेजते ? देवानुप्रिय ! तुमने यह उदकरत्न कहाँ से पाया है ?

तब सुबुद्धि अमात्य ने जितशत्रु से कहा–'स्वामिन् ! यह वही खाई का पानी है।'

तब जितशत्रु ने सुबुद्धि से कहा—'हे सुबुद्धि ! किस कारण से यह वही खाई का पानी है ?'

तब सुबुद्धि ने जितशत्रु से कहा—हे स्वामिन् ! उस समय अर्थात् खाई के पानी का वर्णन करते समय मैंने आपको पुद्गलों का परिणमन कहा था, परन्तु आपने उस पर श्रद्धा नहीं की थी। तब मेरे मन में इस प्रकार का अध्यवसाय उत्पन्न हुआ—अहो ! जितशत्रु राजा सत् यावत् भावों पर श्रद्धा नहीं करता, प्रतीति नहीं करता, रुचि नहीं रखता, अतएव मेरे लिए यह श्रेयस्कर है कि जितशत्रु राजा को सत् यावत् सद्भूत जिनभाषित भावों को समझा कर, पुद्गलों के परिणमन रूप अर्थ को अंगीकार कराऊँ।' मैंने ऐसा विचार किया। यावत् विचार करके पहले कहे अनुसार पानी को सँवार कर तैयार किया। यावत् आपके जलगृह के कर्मचारी को बुलाया और उससे कहा—देवानुप्रिय ! यह उदकरत्न तुम भोजन की वेला राजा जितशत्रु को देना।' इस कारण हे स्वामिन् ! यह वही खाई का पानी है।'

तए णं जियसत्तू राया सुबुद्धिस्स अमच्चस्स एवमाइक्खमाणस्स ४ एयमट्ठं नो सद्दहइ, नो पत्तियइ, नो रोएइ, असद्दहमाणे अपत्तियमाणे अरोयमाणे अब्भितरट्ठाणिज्जे पुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी—'गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया ! अंतरावणाओ नवघडए पडए य गेण्हह जाव उदगसंभारणिज्जेहिं दव्वेहिं संभारेह।' ते वि तहेव संभारेंति, संभारित्ता जियसत्तुस्स उवणेंति।

तए णं जियसत्तू राया तं उदगरयणं करतलंसि आसाएइ, आसायणिज्जं जाव सव्विंदियगायपल्हायणिज्जं जाणित्ता सुबुद्धिं अमच्चं सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी—'सुबुद्धी ! एए णं तुमे संता तच्चा जाव सब्भूया भावा कओ उवलद्धा ?'

तए णं सुबुद्धी जियसत्तुं एवं वयासी—'एए णं सामी ! मए संता जाव भावा जिणवयणाओ उवलद्धा।'

तत्पश्चात् जितशत्रु राजा ने सुबुद्धि अमात्य के कहे पूर्वोक्त अर्थ पर श्रद्धा न की, प्रतीति न की और रुचि न की। श्रद्धा न करते हुए, प्रतीति न करते हुए और रुचि न करते हुए उसने अपनी अभ्यन्तर परिषद् के पुरुषों को बुलाया। उन्हें बुला कर कहा—'देवानुप्रियो ! तुम जाओ और खाई के जल के

लाने वाली कुंभार की दुकान से नये घड़े लाओ और यावत् जल को सँवारने-सुन्दर बनाने वाले द्रव्यों से उस जल को सँवारो।' उन पुरुषों ने राजा के कथनानुसार पूर्वोक्त विधि से जल को सँवारा और सँवार कर वे जितशत्रु के समीप लाये।

तब जितशत्रु राजा ने उस उदकरत्न को हथेली में लेकर आस्वादन किया। उसे आस्वादन करने योग्य यावत् सब इन्द्रियों को और गात्र को आह्लादकारी जान कर सुबुद्धि अमात्य को बुलाया। बुला कर इस प्रकार कहा-सुबुद्धि! तुमने यह सत्, तथ्य यावत् सद्भूत भाव (पदार्थ) कहाँ से जाने?'

तब सुबुद्धि ने जितशत्रु से कहा-'स्वामिन्! मैंने यह सत् यावत् भाव जिन भगवान् के वचन से जाने हैं।'

तए णं जियसत्तू सुबुद्धिं एवं वयासी-'इच्छामि णं देवाणुप्पिया! तव अंतिए जिणवयणं निसामेत्तए।'

तए णं सुबुद्धी जियसत्तुस्स विचित्तं केवलिपन्नत्तं चाउज्जामं धम्मं परिकहेइ, तमाइक्खइ, जहा जीवा बज्झंति जाव पंच अणुव्वयाइं।

तत्पश्चात् जितशत्रु राजा ने सुबुद्धि से कहा-'देवानुप्रिय! तो मैं तुमसे जिनवचन सुनना चाहता हूँ।'

तब सुबुद्धि मंत्री ने जितशत्रु राजा को केवली-भाषित चातुर्याम रूप अद्भुत धर्म कहा। जिस प्रकार जीव कर्म बंध करते हैं, यावत पाँच अणुव्रत हैं, इत्यादि धर्म का कथन किया।

तए णं जियसत्तू सुबुद्धिस्स अंतिए धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ सुबुद्धिं अमच्चं एवं वयासी-'सद्दहामि णं देवाणुप्पिया! निग्गंथं पावयणं जाव से जहेयं तुब्भे वयह, तं इच्छामि णं तव अंतिए पंचाणुव्वइयं सत्त सिक्खावइयं जाव उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए।'

'अहासुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबंधं करेह।'

तत्पश्चात् जितशत्रु राजा ने सुबुद्धि अमात्य से धर्म सुन कर और मन में धारण करके, हर्षित और संतुष्ट होकर सुबुद्धि अमात्य से कहा-देवानुप्रिय! मैं निर्ग्रन्थ प्रवचन पर श्रद्धा करता हूँ। जैसा तुम कहते हो वह वैसा ही

मैं तुम से पाँच अणुव्रतों और सात शिक्षाव्रतों को यावत् ग्रहण करके विचरने की अभिलाषा करता हूँ।'

(तब सुबुद्धि प्रधान ने कहा-) हे देवानुप्रिय ! जैसे सुख उपजे वैसा करो, प्रतिबंध मत करो।

तए णं से जियसत्तू राया सुबुद्धिस्स अमच्चस्स अंतिए पंचाणुव्वइयं जाव दुवालसविहं सावयधम्मं पडिवज्जइ। तए णं जियसत्तू समणोवासए अभिगयजीवाजीवे जाव पडिलाभेमाणे विहरइ।

तत्पश्चात् जितशत्रु राजा ने सुबुद्धि अमात्य से पाँच अणुव्रत वाले (और सात शिक्षाव्रत वाले) यावत् बारह प्रकार का श्रावकधर्म अंगीकार किया। तत्पश्चात् जितशत्रु श्रावक हो गया, जीव-अजीव का ज्ञाता हो गया, यावत् निर्ग्रन्थ साधु-साध्वियों को आहार आदि का प्रतिलाभ देता हुआ रहने लगा।

ते णं काले णं ते णं समए णं थेरा जेणेव चंपा णयरी जेणेव पुण्णभद्देचेइए तेणेव समोसढे, जियसत्तू राया सुबुद्धी य निग्गच्छइ। सुबुद्धी धम्मं सोच्चा जं णवरं जियसत्तुं आपुच्छामि जाव पव्वयामि। अहासुहं देवाणुप्पिया !

उस काल और उस समय में, जहाँ चंपा नगरी और पूर्णभद्र चैत्य था, वहाँ स्थविर पधारे। जितशत्रु राजा और सुबुद्धि उनको वन्दना करने के लिए [illegible] जितशत्रु राजा [illegible] तब [illegible]

[illegible]

मुनि ने कहा-देवानुप्रिय ! जैसे सुख उपजे वैसा करो।'

तए णं सुबुद्धी अमच्चे जेणेव जियसत्तू राया तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता एवं वयासी-'एवं खलु सामी ! मए थेराणं अंतिए धम्मे निसंते, से वि य धम्मे इच्छियपडिच्छिए ३, तए णं अहं सामी ! संसारभउव्विग्गे जाव इच्छामि णं तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे जाव पव्वइत्तए।'

तए णं जियसत्तू राया सुबुद्धिं अमच्चं एवं वयासी-अच्छासु ताव देवाणुप्पिया ! कइवयाइं वासाइं जाव भुंजमाणा तओ पच्छा एगयओ थेराणं अंतिए मुंडे भवित्ता जाव पव्वइस्सामो।

तत्पश्चात् सुबुद्धि अमात्य जितशत्रु राजा के पास गया और बोला–
! मैंने स्थविर मुनि से धर्मोपदेश श्रवण किया है और उस धर्म की
पुनः इच्छा की है। इस कारण हे स्वामिन्! मैं संसार के भय से
हुआ हूं तथा जन्म-मरण से भयभीत हुआ हूं। यावत् आपकी आज्ञा
यावत् प्रव्रज्या ग्रहण करना चाहता हूँ।'

तब जितशत्रु राजा ने सुबुद्धि अमात्य से इस प्रकार कहा–देवानुप्रिय!

तए णं सुबुद्धी अमच्चे जियसत्तुस्स रण्णो एयमट्ठं पडिसुणेइ।
। तस्स जियसत्तुस्स रन्नो सुबुद्धिणा सद्धिं विपुलाइं माणुस्सगाइं
गाइं पच्चणुब्भवमाणस्स दुवालस वासाइं वीइक्कंताइं।

ते णं काले णं ते णं समए णं थेरागमणं, तए णं जियसत्तू धम्मं
एवं जं नवरं देवाणुप्पिया! सुबुद्धिं आमंतेमि, जेट्ठपुत्तं रज्जे
, तए णं तुब्भं जाव पव्वयामि। 'अहासुहं देवाणुप्पिया!'

तए णं जियसत्तू राया जेणेव सए गिहे (तेणेव) उवागच्छइ, उवा-
त्ता सुबुद्धिं सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी–'एवं खलु मए
णं जाव पव्वज्जामि, तुमं णं किं करेसि?'

तए णं सुबुद्धी जियसत्तुं एवं वयासी–'जाव के अन्ने आहारे वा
पव्वयामि।'

' तब सुबुद्धि अमात्य ने जितशत्रु राजा के इस अर्थ को स्वीकार कर लिया।
श्चात् सुबुद्धि प्रधान के साथ, जितशत्रु राजा को मनुष्य संबंधी कामभोग
ते हुए बारह वर्ष व्यतीत हो गये।

तत्पश्चात् उस काल और उस समय में स्थविर मुनि का आगमन
। तब जितशत्रु धर्मोपदेश सुन कर प्रतिबोध पाया किन्तु उसने कहा हे
नुप्रिय! मैं सुबुद्धि अमात्य को दीक्षा के लिए आमंत्रित करता हूं और ज्येष्ठ
को राजसिंहासन पर स्थापित करता हूं, तदन्तर आपके निकट दीक्षा अंगी-
र करूंगा।' तब स्थविर मुनि ने कहा–'देवानुप्रिय! जैसे तुम्हें सुख उपजे
ही करो।'

दीक्षा अंगीकार करने के अनन्तर सुबुद्धि मुनि ने भी ग्यारह अंगों का अध्ययन किया। बहुत वर्षों तक दीक्षा पर्याय पाली और अन्त में एक मास की संलेखना करके सिद्धि पाई।

एवं खलु जंबू! समणेणं भगवया महावीरेणं बारसमस्स णायज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते, त्ति बेमि।

श्री सुधर्मा स्वामी, जम्बू स्वामी से कहते हैं—इस प्रकार हे जम्बू! श्रमण भगवान् महावीर ने बारहवें ज्ञात-अध्ययन का यह (उपर्युक्त) अर्थ कहा है। मैंने जैसा सुना, वैसा कहा।

उपनय

जो मिथ्यादृष्टि हैं, जो पाप में आसक्त हैं और जो गुणहीन हैं, वे भी सत्संग से खाई के जल के समान उज्ज्वल, पवित्र और गुणवान् बन जाते हैं।

बारहवाँ अध्ययन समाप्त

तए णं सा सूमालिया अज्जा सरीरबउसा जाया यावि होत्था, अभिक्खणं अभिक्खणं हत्थे धोवेइ, पाए धोवेइ, सीसं धोवेइ, मुहं धोवेइ, थणंतराइं धोवेइ, कक्खंतराइं धोवेइ, गोज्झंतराइं धोवेइ, जत्थ णं ठाणं वा सेज्जं वा निसीहियं वा चेएइ, तत्थ वि य णं पुव्वामेव उदएणं अब्भुक्खइत्ता तओ पच्छा ठाणं वा सेज्जं वा चेएइ।

तत्पश्चात् वह सुकुमालिका आर्या शरीर बकुशा हो गई, अर्थात् शरीर की शोभा करने में आसक्त हो गई। वह बार-बार हाथ धोती, पैर धोती, मस्तक धोती, मुँह धोती, स्तनान्तर (छाती) धोती, बगलें धोती तथा गुप्त अंग धोती थी। जिस स्थान पर वह खड़ी होती या कायोत्सर्ग करती, सोती, स्वाध्याय करती, वहाँ भी पहले ही जमीन पर जल छिड़कती थी और फिर खड़ी होती कायोत्सर्ग करती, सोती या स्वाध्याय करती थी।

तए णं ताओ गोवालियाओ अज्जाओ सूमालियं अज्जं एवं वयासी—'एवं खलु देवाणुप्पिए! अज्जे! अम्हे समणीओ निग्गंथीओ ईरियासमियाओ जाव बंभचेरधारिणीओ। नो खलु कप्पइ अम्हं सरीरबाउसियाए होत्तए, तुमं च णं अज्जे! सरीरबाउसिया अभिक्खणं अभिक्खणं हत्थे धोवसि जाव चेएसि, तं तुमं णं देवाणुप्पिए! तस्स ठाणस्स आलोएहि जाव पडिवज्जाहि।

तब उन गोपालिका आर्या ने सुकुमालिका आर्या से इस प्रकार कहा—देवानुप्रिये! आर्ये! हम निर्ग्रन्थ साध्वियाँ हैं, ईर्यासमिति से सम्पन्न यावत् ब्रह्मचारिणी हैं। हमें शरीर बकुश होना नहीं कल्पता, किन्तु हे आर्ये! तुम शरीरबकुशा हो गई हो, बार-बार हाथ धोती हो, यावत् फिर स्वाध्याय आदि करती हो। अतएव देवानुप्रिये! तुम बकुशचारित्र रूप स्थान की आलोचना करो, यावत् प्रायश्चित्त अंगीकार करो।

तए णं सूमालिया गोवालियाणं अज्जाणं एयमट्ठं नो आढाइ, नो परिजाणइ, अणाढायमाणी अपरिजाणमाणी विहरइ। तए णं ताओ अज्जाओ सूमालियं अज्जं अभिक्खणं अभिक्खणं अभिहीलंति जाव परिभवंति, अभिक्खणं अभिक्खणं एयमट्ठं निवारेंति।

तब सुकुमालिका आर्या ने गोपालिका आर्या के इस अर्थ (कथन) का आदर नहीं किया, उसे अंगीकार नहीं किया। वरन् अनादर करती हुई और

स्वीकार करती हुई विचरने लगी। तत्पश्चात् दूसरी आर्याएँ सुकुमालिका आर्या को बार-बार अवहेलना करने लगीं; यावत् अनादर करने लगीं और बार-बार इस अर्थ (अनाचार) के लिए रोकने लगीं।

तए णं तीसे सूमालियाए समणीहिं निग्गंथीहिं हीलिज्जमाणीए जाव वारिज्जमाणीए इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था-'जया णं अहं अगारवासमज्झे वसामि, तया णं अहं अप्पवसा, जया णं अहं मुंडे भवित्ता पव्वइया, तया णं अहं परवसा, पुव्विं च णं ममं समणीओ आढायंति, इयाणिं नो आढायंति, तं सेयं खलु मम कल्लं पाउप्पभायाए गोवालियाणं अंतियाओ पडिणिक्खमित्ता पाडिएक्कं उवस्सगं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए' त्ति कट्टु एवं संपेहेइ, संपेहित्ता कल्लं पाउप्पभायाए गोवालियाणं अज्जाणं अंतियाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता पाडिएक्कं उवस्सगं उवसंपज्जित्ता णं विहरइ।

निर्ग्रन्थ श्रमणियों द्वारा अवहेलना की गई और रोकी गई उस सुकुमालिका के मन में इस प्रकार का विचार यावत् उत्पन्न हुआ-'जब मैं गृहस्थवास में बसती थी, तब मैं स्वाधीन थी। जब मैं मुंडित होकर दीक्षित हुई तब मैं पराधीन हो गई। पहले यह श्रमणियाँ मेरा आदर करती थीं किन्तु अब आदर [illegible] होने पर गोपालिका के पास से निकल कर, [illegible]

[illegible]

तए णं सा सूमालिया अज्जा [illegible] अनिवारिया सच्छंदमई अभिक्खणं अभिक्खणं हत्थे धोवेइ, जाव चेएइ, तत्थ वि य णं पासत्था, [illegible] कुसीला, कुसील- विहारी, [illegible] यागं पाउणइ, अद्धमासियाए संलेहणाए तस्स ठाणस्स अणालोइयअपडिक्कंता कालमासे कालं किच्चा ईसाणे कप्पे अण्णयरंसि विमाणंसि देवगणियत्ताए उववण्णा। तत्थेगइयाणं देवीणं नव पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। तत्थ णं सूमालियाए देवीए नव पलिओवमाइं ठिई पन्नत्ता।

तत्पश्चात् कोई हटकने-मना करने वाला न होने से, रोकने वाला न होने से सुकुमालिका स्वच्छंदबुद्धि होकर बार-बार हाथ धोने लगी यावत् जल छिड़क कर स्थान आदि करने लगी। तिस पर भी वह पार्श्वस्थ अर्थात् शिथिलाचारिणी हो गई। पार्श्वस्थ की तरह विहार करने-रहने लगी। वह अवसन्न हो गई अर्थात् ज्ञान दर्शन और चारित्र के विषय में आलसी हो गई और आलस्यमय विहार वाली हो गई। कुशीला अर्थात् अनाचार का सेवन करने वाली और कुशीलों के समान व्यवहार करने वाली हो गई। संसक्ता अर्थात् ऋद्धि, रस और साता रूप गारवों में आसक्त और संसक्त विहारिणी हो गई। इस प्रकार उसने बहुत वर्षों तक साध्वी-पर्याय का पालन किया। अन्त में अर्ध मास की संलेखना करके, अपने अनुचित आचरण की आलोचना और प्रतिक्रमण किये बिना ही काल-मास में काल करके ईशान कल्प में, किसी विमान में देवगणिका के रूप में उत्पन्न हुई। वहाँ किन्हीं-किन्हीं देवियों की नौ पल्योपम की स्थिति कही गई है। सुकुमालिका देवी की भी नौ पल्योपम की स्थिति कही गई है।

ते णं काले णं ते णं समए णं इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे पंचालेसु जणवएसु कंपिल्लपुरे नामं नगरे होत्था। वन्नओ। तत्थ णं दुवए नामं राया होत्था, वन्नओ। तस्स णं चुलणी देवी, धट्ठज्जुणे कुमारे जुवराया।

उस काल और उस समय में, इसी जम्बू द्वीप नामक द्वीप में, भरत क्षेत्र में, पंचाल देश में काम्पिल्यपुर नामक नगर था। उसका वर्णन कहना चाहिए। वहाँ द्रुपद राजा था। उसका वर्णन कहना चाहिए। द्रुपद राजा की चुलनी नामक पटरानी थी और धृष्टद्युम्न नामक कुमार युवराज था।

तए णं सा सूमालिया देवी ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं जाव चइत्ता इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे पंचालेसु जणवएसु कंपिल्लपुरे नयरे दुपयस्स रण्णो चुलणीए देवीए कुच्छिंसि दारियत्ताए पच्चायाया। तए णं सा चुलणी देवी नवण्हं मासाणं जाव दारियं पयाया।

तत्पश्चात् सुकुमालिका देवी उस देवलोक से, आयु का क्षय करके यावत् ... में, पंचाल ... द्रुपद ... में लड़की के ... ने ... यावत् पुत्री ...

तए णं तीसे दारियाए निव्वत्तबारसाहियाए इमं एयारूवं नाम-
—जम्हा णं एसा दारिया दुवयस्स रण्णो धूया चुलणीए देवीए
या, तं होउ णं अम्हं इमीसे दारियाए नामधिज्जे दोवई। तए णं
अम्मापियरो इमं एयारूवं गुण्णं गुणनिप्फन्नं नामधेज्जं करिंति
ई।

तत्पश्चात् बारह दिन व्यतीत हो जाने पर उस बालिका का ऐसा नाम
गया—क्योंकि यह बालिका द्रुपद राजा की पुत्री है और चुलनी रानी की
जा है, अतः हमारी इस बालिका का नाम द्रौपदी हो। तब उसके माता-
ने इस प्रकार का यह गुण वाला एवं गुणनिष्पन्न नाम द्रौपदी रक्खा।

तए णं सा दोवई दारिया पंचधाइपरिग्गहिया जाव गिरिकंदर-
व इव चंपगलया निवायनिव्वाघायंसि सुहंसुहेणं परिवड्ढइ। तए
दोवई रायवरकन्ना उम्मुक्कबालभावा जाव उक्किट्ठसरीरा
यावि होत्था।

तत्पश्चात् पाँच धायों द्वारा ग्रहण की हुई वह द्रौपदी दारिका पर्वत की
में स्थित चम्पकलता के समान वायु आदि के व्याघात से रहित होकर
कि बढ़ने लगी। तत्पश्चात् वह श्रेष्ठ राजकन्या बाल्यावस्था से मुक्त हो
वत् उत्कृष्ट शरीर वाली भी हो गई।

तए णं तं दोवई रायवरकन्नं अण्णया कयाइ अंतेउरियाओ ण्हायं
विभूसियं करेंति, करित्ता दुवयस्स रण्णो पायवंदिउं पेसंति। तए
दोवई रायवरकन्ना जेणेव दुवए राया तेणेव उवागच्छइ, उवा-
त्ता दुवयस्स रण्णो पायग्गहणं करेइ।

तत्पश्चात् राजवरकन्या द्रौपदी को एक बार अन्तःपुर की रानियों ने स्नान
यावत् सर्व अलंकारों से विभूषित किया। फिर द्रुपद राजा के चरणों की
करने के लिए उसके पास भेजा। तब श्रेष्ठ राजकुमारी द्रौपदी द्रुपद राजा
गई। वहाँ आकर उसने द्रुपद राजा के चरणों का स्पर्श किया।

तए णं से दुवए राया दोवइं दारियं अंके निवेसेइ, निवेसित्ता
ए रायवरकन्नाए रूवेण य जोव्वणेण य लावण्णेण य जाय-

एवं वयासी—'जस्स णं अहं पुत्ता!

कर आओ। वहाँ तुम पुत्रों सहित पाण्डु राजा को, उनके पुत्र युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन नकुल और सहदेव को, सौ भाइयों समेत दुर्योधन को, गांगेय, विदुर, द्रोण, जयद्रथ, शकुनि, क्लीव (कर्ण) और अश्वत्थामा को दोनों हाथ जोड़ कर यावत् मस्तक पर अंजलि करके, उसी प्रकार (पहले के समान) कहना यावत् समय पर स्वयंवर में पधारिए।

तए णं से दूए एवं वयासी, जहा वासुदेवे, नवरं भेरी नत्थि, जाव जेणेव कंपिल्लपुरे नयरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए।

तत्पश्चात् दूत ने हस्तिनापुर जाकर उसी प्रकार कहा। तब जैसा कृष्ण

एएणव कमेणं तच्चं दूयं चंपानयरिं, तत्थ णं तुमं कण्हं अंगरायं, सेल्लं, नंदिरायं, करयल तहेव जाव समोसरह।

इसी क्रम से तीसरे दूत को चम्पा नगरी भेजा और उससे कहा-'तुम वहाँ जाकर अंगराज कृष्ण को, शैल्लक राजा को और नंदिराज को दोनों हाथ जोड़ कर यावत् कहना कि स्वयंवर में पधारिए।'

चउत्थं दूयं सुत्तिमइं नयरिं, तत्थ णं तुमं सिसुपालं दमघोससुयं पंचभाइसयसंपरिवुडं करयल तहेव जाव समोसरह।

चौथा दूत शुक्तिमती नगरी भेजा और उसे आदेश दिया-'तुम दमघोष के पुत्र और पाँच सौ भाइयों से परिवृत्त शिशुपाल राजा को हाथ जोड़ कर, इसी प्रकार कहना, यावत् पधारिए।'

पंचमगं दूयं हत्थिसीसनगरं, तत्थ णं तुमं दमदंतं नाम रायं करयल तहेव जाव समोसरह।

पाँचवाँ दूत हस्तीशीर्ष नगर भेजा और कहा-'तुम दमदंत राजा को हाथ जोड़ कर उसी प्रकार कहना यावत् पधारिए।'

छट्ठं दूयं महुरं नयरिं, तत्थ णं तुमं धरं रायं करयल तहेव जाव समोसरह।

सव्विड्ढीए कंपिल्लपुराओ निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता जेणेव ते वासुदेव पामोक्खा बहवे रायसहस्सा तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता ताई वासुदेवपामुक्खाइं अग्घेण य पज्जेण य सक्कारेइ, सम्माणेइ, सक्कारित्ता सम्माणित्ता तेसिं वासुदेवपामुक्खाणं पत्तेयं पत्तेयं आवासे वियरइ।

तत्पश्चात् द्रुपद राजा वासुदेव प्रभृति बहुत से हजारों राजाओं का आगमन जान कर, प्रत्येक राजा के स्वागत करने के लिए, हाथी के स्कंध पर आरूढ़ होकर यावत् सुभटों के परिवार से परिवृत होकर, अर्घ्य (पूजा की सामग्री) और पाद्य (पैर धोने के लिए पानी) लेकर, सम्पूर्ण ऋद्धि के साथ, कांपिल्यपुर से बाहर निकला। निकल कर जिधर वासुदेव आदि बहुसंख्यक हजारों राजा थे, उधर गया। वहाँ जाकर उन वासुदेव प्रभृति का अर्घ्य और पाद्य से सत्कार-सन्मान किया। सत्कार-सन्मान करके उन वासुदेव आदि को अलग-अलग आवास दिये।

तए णं ते वासुदेवपामोक्खा जेणेव सया सया आवासा तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता हत्थिखंधाहिंतो पच्चोरुहंति, पच्चोरुहित्ता पत्तेयं खंधावारनिवेसं करेंति, करित्ता सए सए आवासे अणुपविसंति, अणुपविसित्ता सएसु सएसु आवासेसु आसणेसु य सयणेसु य सन्निसन्ना य संतुयट्टा य बहूहिं गंधव्वेहि य नाडएहि य उवगिज्जमाणा य उवनच्चिज्जमाणा य विहरंति।

तत्पश्चात् वे वासुदेव प्रभृति नृपति अपने-अपने आवासों में पहुँचे। पहुँच कर हाथियों के स्कंध से नीचे उतरे। उतर कर सब ने अपने-अपने पड़ाव डाले और अपने-अपने आवासों में प्रविष्ट हुए। आवासों में प्रवेश करके अपने-अपने आवासों में, आसनों पर बैठे और शय्याओं पर सोये हुए, बहुत-से गंधर्वों से गान कराते हुए और नटों से नाटक करवाते हुए विचरण करने लगे।

तए णं से दुवए राया कंपिल्लपुरं नगरं अणुपविसइ, अणुपविसित्ता विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेइ, उवक्खडावित्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी—'गच्छह णं तुब्भे ... विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं सुरं च मज्जं च ...

य सीधुं च पसण्णं च सुबहुपुप्फवत्थगंधमल्लालंकारं च वासुदेवपामोक्खाणं रायसहस्साणं आवासेसु साहरह।' ते वि साहरंति।

तत्पश्चात् अर्थात् सब आगन्तुक अतिथि राजाओं को यथास्थान ठहरा कर द्रुपद राजा ने कांपिल्यपुर नगर में प्रवेश किया। प्रवेश करके विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम भोजन तैयार करवाया। फिर कौटुम्बिक पुरुषों को बुला कर कहा—'देवानुप्रियो! तुम जाओ और वह विपुल अशन, पान, खादिम, स्वादिम, [1]सुरा, मद्य, मांस, सीधु और प्रसन्ना तथा प्रचुर पुष्प, वस्त्र, गंध, मालाएँ एवं अलंकार वासुदेव आदि हजारों राजाओं के आवासों में ले जाओ।' यह सुन कर वे वह सब वस्तुएँ ले गये।

तए णं ते वासुदेवपामुक्खा तं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं जाव पसन्नं च आसाएमाणा आसाएमाणा विहरंति, जिमियभुत्तुत्तरागया वि य णं समाणा आयंता जाव सुहासणवरगया बहूहिं गंधव्वेहिं जाव विहरंति।

तत्पश्चात् वासुदेव आदि राजा उस विपुल अशन, पान, खादिम, स्वादिम, यावत् प्रसन्ना का पुनः पुनः आस्वादन करते हुए विचरने लगे। भोजन करने के पश्चात् आचमन करके यावत् सुखद आसनों पर आसीन होकर बहुत-से गंधर्वों से संगीत कराते हुए यावत् विचरने लगे।

तए णं से दुवए राया पुव्वावरण्हकालसमयंसि कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी—'गच्छह णं तुमे देवाणुप्पिया! कंपिल्लपुरे संघाडग जाव पहे वासुदेवपामुक्खाण य रायसहस्साणं [illegible] महया सद्देणं जाव उग्घोसेमाणा [illegible] देवाणुप्पिया! कल्लं पाउप्पभाए [illegible] दोवईए अच्चयाए धट्ठज्जुण्णस्स भगिणीए दोवईए रायवरकण्णाए सयंवरे भविस्सइ, तं तुब्भे णं देवाणुप्पिया!

1-सुरा, मद्य, सीधु और प्रसन्ना, यह मदिरा की ही जातियाँ हैं। स्वयंवर में सभी प्रकार के राजा और उनके सैनिक आदि आये थे। द्रुपद राजा ने उन सबका उनकी आवश्यक वस्तुओं से सत्कार किया। इससे यह नहीं समझना चाहिए कि कृष्णजी [illegible] थे। यह वर्णन सामान्य रूप से है।

तत्पश्चात् धृष्टद्युम्न कुमार ने पाँचों पाण्डवों को और राजवर कन्या द्रौपदी को चार घंटाओं वाले अश्वरथ पर आरूढ़ किया और काम्पिल्यपुर नगर के मध्य में होकर यावत् अपने भवन में प्रवेश किया।

तए णं दुवए राया ते पंच पंडवे दोवइं रायवरकन्नं पट्टयं दुरुहेइ, दुरुहित्ता सेयापीएहिं कलसेहिं मज्जावेइ, मज्जावित्ता अग्गिहोमं करावे पंचण्हं पंडवाणं दोवईए य पाणिग्गहणं करावेइ।

तत्पश्चात् द्रुपद राजा ने पाँचों पाण्डवों को तथा राजवर कन्या द्रौपदी को पट्ट पर आसीन किया। आसीन करके श्वेत और पीत अर्थात् चाँदी और सोने के कलशों से स्नान कराया। स्नान करवा कर अग्नि-होम करवाया। फिर पाँचों पाण्डवों का द्रौपदी के साथ पाणिग्रहण कराया।

तए णं से दुवए राया दोवईए रायवरकन्नगाए इमं एयारू पीइदाणं दलयइ, तंजहा—अट्ठ हिरण्णकोडीओ जाव अट्ठ पेसणकारीओ दासचेडीओ, अन्नं च विपुलं धणकणग जाव दलयइ।

तए णं से दुवए राया ताइं वासुदेवपामोक्खाइं विपुलेणं असणपाण- खाइमसाइमेणं वत्थगंध जाव पडिविसज्जेइ।

तत्पश्चात् द्रुपद राजा ने राजवर कन्या द्रौपदी को यह इस प्रकार का प्रीतिदान (दहेज) दिया—आठ करोड़, हिरण्य आदि यावत् आठ प्रेषण कारिणी (इधर-उधर जाने-आने का काम करने वाली) दास चेटियाँ। इनके अतिरिक्त अन्य भी बहुत-सा धन, कनक आदि यावत् प्रदान किया।

तत्पश्चात् द्रुपद राजा ने उन वासुदेव प्रभृति राजाओं को, विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम तथा वस्त्र, गंध और अलंकार आदि से सत्कार करके विदा किया।

तए णं से पंडू राया तेसिं वासुदेवपामोक्खाणं बहूणं रायसहस्साणं करयल जाव एवं वयासी—एवं खलु देवाणुप्पिया! हत्थिणाउरे नयरे पंचण्हं पंडवाणं दोवईए य देवीए कल्लाणकरे भविस्सइ, तं तुब्भे णं देवाणुप्पिया! ममं अणुगिण्हमाणा अकालपरिहीणं समोसरह।

तत्पश्चात् पाण्डु राजा ने उन वासुदेव प्रभृति बहुत हजार राजाओं से हाथ जोड़ कर यावत् इस प्रकार कहा—'देवानुप्रियो! हस्तिनापुर नगर में पाँच

पाण्डवों और द्रौपदी देवी का कल्याणकारण महोत्सव (मांगलिक क्रिया) होगा। अतएव देवानुप्रियो! तुम सब मुझ पर अनुग्रह करके यथा समय-विलंब किये बिना पधारना।'

तए णं वासुदेवपामोक्खा पत्तेयं पत्तेयं जाव पहारेत्थ गमणाए।

तत्पश्चात् वे वासुदेव आदि नृपतिगण अलग-अलग यावत् गमन करने के लिए उद्यत हुए।

तए णं पंडुराया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी—'गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया! हत्थिणाउरे पंचण्हं पंडवाणं पंच पासायवडिंसए कारेह, अब्भुग्गयमूसिय वण्णओ जाव पडिरूवे।

तए णं ते कोडुंबियपुरिसा पडिसुणेंति जाव करावेंति। तए णं से पंडुए पंचहिं पंडवेहिं दोवईए देवीए सद्धिं हयगयसंपरिवुडे कंपिल्लपुराओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता जेणेव हत्थिणाउरे तेणेव उवागए।

तत्पश्चात् पाण्डु राजा ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुला कर इस प्रकार आदेश दिया-'देवानुप्रियो! तुम जाओ और हस्तिनापुर में पाँच पाण्डवों के लिए उत्तम प्रासाद बनवाओ, वे प्रासाद खूब ऊँचे हों और सात भूमि (मंजिल) के हों, इत्यादि वर्णन यहाँ कहना चाहिए, यावत् अत्यन्त मनोहर हों।

तब कौटुम्बिक पुरुषों ने यह आदेश अंगीकार किया, यावत् उसी प्रकार प्रासाद बनवाये। तब पाण्डु राजा पाँचों पाण्डवों और द्रौपदी देवी के साथ अश्वसेना, गजसेना आदि से परिवृत होकर कांपिल्यपुर नगर से निकला। चल कर जहाँ हस्तिनापुर था, वहाँ आ पहुँचा।

तए णं पंडुराया तेसिं वासुदेवपामोक्खाणं आगमणं जाणित्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी—'गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया! हत्थिणाउरस्स नयरस्स बहिया वासुदेवपामोक्खाणं बहूणं रायसहस्साणं आवासे कारेह अणेगखंभसय०' तहेव जाव पच्चप्पिणंति।

तत्पश्चात् पाण्डु राजा ने उन वासुदेव आदि राजाओं का आगमन जान कर कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया और उनसे कहा-'देवानुप्रियो! तुम जाओ और हस्तिनापुर नगर के बाहर वासुदेव आदि बहुत हजार राजाओं के लिए आवास तैयार कराओ जो अनेक सैकड़ों स्तंभों आदि से युक्त हों, इत्यादि के

कौटुम्बिक पुरुष उसी प्रकार आज्ञा का पालन करके यावत् आज्ञा वापिस करते हैं।

तए णं ते वासुदेवपामोक्खा बहवे रायसहस्सा जेणेव हत्थिणाउरे नयरे तेणेव उवागच्छंति। तए णं से पंडुराया तेसिं वासुदेवपामोक्खाणं आगमणं जाणित्ता हट्ठतुट्ठे ण्हाए कयबलिकम्मे जहा दुपए जाव जहा-रिहं आवासे दलयइ। तए णं ते वासुदेवपामुक्खा बहवे रायसहस्सा जेणेव सयाइं सयाइं आवासाइं तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता तहेव जाव विहरंति।

तत्पश्चात् वे वासुदेव वगैरह बहुत हजार राजा नगर में आये। तब पाण्डु राजा उन वासुदेव आदि राजाओं का आगमन जान कर हर्षित और संतुष्ट हुआ। उसने स्नान किया, बलिकर्म किया और द्रुपद राजा के समान उनके सामने जाकर सत्कार किया, यावत् उन्हें यथायोग्य आवास दिये। तब वे वासुदेव आदि बहुत हजारों राजा जहाँ अपने-अपने आवास थे, वहाँ गये और उसी प्रकार (पहले कहे अनुसार संगीत-नाटक आदि से मनोविनोद करते हुए) यावत् विचरने लगे।

तए णं से पंडुराया हत्थिणाउरं नयरं अणुपविसइ, अणुपविसित्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी–'तुब्भे णं देवाणुप्पिया! विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं' तहेव जाव उवणेंति।

तए णं ते वासुदेवपामोक्खा बहवे राया ण्हाया कयबलिकम्मा तं विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं तहेव जाव विहरंति।

तत्पश्चात् पाण्डु राजा ने हस्तिनापुर नगर में प्रवेश किया। प्रवेश करके कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया और कहा'-हे देवानुप्रियो! तुम विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम तैयार कराओ।' उन कौटुम्बिक पुरुषों ने उसी प्रकार किया यावत् वे भोजन तैयार करवा कर ले गये। तब उन वासुदेव आदि बहुत-से राजाओं ने स्नान एवं बलिकार्य करके उस विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम का आहार किया और उसी प्रकार (पहले कहे अनुसार) विचरने लगे।

तए णं से पंडुराया पंच पंडवे दोवइं च देविं पट्टयं दुरूहेइ, दुरूहित्ता सेयापीएहिं कलसेहिं ण्हावेंति, ण्हावित्ता कल्लाणकरं करेंति।

करित्ता ते वासुदेवपामोक्खे बहवे रायसहस्से विपुलेणं असणपाण-खाइमसाइमेणं पुप्फवत्थेणं सक्कारेइ, सम्माणेइ, सक्कारित्ता सम्माणित्ता जाव पडिविसज्जेइ। तए णं ताइं वासुदेवपामोक्खाइं बहूहिं जाव पविसिपाइं।

तत्पश्चात् पांडु राजा ने पाँच पाण्डवों को तथा द्रौपदी देवी को पाट पर बिठलाया। बिठला कर श्वेत और पीत कलशों से उनका अभिषेक किया–उन्हें नहलाया। फिर कल्याणकर उत्सव किया। उत्सव करके उन वासुदेव आदि बहुत हजार राजाओं का विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम से तथा पुष्पों और वस्त्रों से सत्कार किया, सन्मान किया। सत्कार-सन्मान करके यावत् उन्हें विदा किया। तब वे वासुदेव वगैरह बहुत-से राजा यावत् अपने-अपने नगरों को लौट गये।

तए णं ते पंच पंडवा दोवईए देवीए सद्धिं अंतो अंतेउरपरियाल सद्धिं कल्लाकल्लिं वारं वारेणं ओरालाइं भोगभोगाइं जाव विहरइ।

तत्पश्चात् वे पाँचों पाण्डव, द्रौपदी देवी के साथ, अन्तःपुर के परिवार सहित, एक-एक दिन वारी के अनुसार उदार काम भोग भोगते हुए यावत् रहने लगे।

तए णं से पंडुराया अन्नया कयाइं पंचहिं पंडवेहिं कोंतीए देवीए दोवईए देवीए य सद्धिं अंतो अंतेउरपरियाल सद्धिं संपरिवुडे सीहासण-वरगए यावि होत्था।

उस समय पाण्डु राजा एक बार किसी समय पाँच पाण्डवों, कुन्ती देवी और द्रौपदी देवी के साथ तथा अन्तःपुर के अन्दर के परिवार के साथ परिवृत होकर श्रेष्ठ सिंहासन पर आसीन होकर विचर रहे थे।

इमं च णं कच्छुल्लणारए दंसणेणं इअभद्दए विणीए अंतो अंतो य कलुसहियए मज्झत्थोवत्थिए य अल्लीणसोमपियदंसणे सुरूवे अमइल-सगलपरिहिए कालमियचम्मउत्तरासंगरइयवत्थे दंडकमंडलुहत्थे जडाम-उडदित्तसिरए जन्नोवइयगणेत्तियमुंजमेहलवागलधरे हत्थकयकच्छभीए पियगंधव्वे धरणिगोयरप्पहाणे, संचरणावरणओवयणउप्पयणिलेसणीसु य संकामणिअभिओगपण्णत्तिगमणीथंभणीसु य बहुसु विज्जाहरीसु

विज्जासु विसुयजसे इट्ठे रामस्स य केसवस्स य पज्जुन्न-पईव-संब-अनिरुद्ध-निसढ-उम्मुय-सारण-गयसुमुह-दुम्मुहाईण जायवाणं अद्धुट्ठाण कुमारकोडीणं हिययदइए संथवए कलहजुद्धकोलाहलपिए भंडणाभिलासी बहुसु य समरेसु य संपराएसु य दंसणरए समंतओ कलहं सदक्खिणं अणुगवेसमाणे असमाहिकरे दसारवरवीरपुरिसतिलोक्कबलवगाणं आमंतेऊण तं भगवतीं ए (प) क्कमणिं गगणगमणदच्छं उप्पइओ गगणमभिलंघयंतो गामागरनगरखेडकब्बडमडंबदोणमुहपट्टणसंवाहसहस्समंडियं थिमियमेइणीतलं वसुहं ओलोइंतो रम्मं हत्थिणाउरं उवागए पंडुरायभवणंसि अइवेगेण समोवइए।

इधर कच्छुल्ल नामक नारद वहाँ आ पहुँचे। वे देखने में अत्यन्त भद्र और विनीत जान पड़ते थे, परन्तु भीतर से उनका हृदय कलुषित था। ब्रह्मचर्य व्रत के धारक होने से वे मध्यस्थता को प्राप्त थे। आश्रित जनों को उनका दर्शन प्रिय लगता था। उनका रूप मनोहर था। उन्होंने उज्ज्वल एवं सकल (अखंड अथवा शकल अर्थात् वस्त्र खंड) पहन रक्खा था। काला मृगचर्म उत्तरासंग के रूप में वक्षस्थल में धारण किया था। हाथ में दंड और कमण्डलु था। जटा रूपी मुकुट से उनका मस्तक देदीप्यमान था। उन्होंने यज्ञोपवीत एवं रुद्राक्ष की माला के आभरण, मूंज की कटि मेखला और वल्कल वस्त्र धारण किये थे। उनके हाथ में कच्छपी नामकी वीणा थी। उन्हें संगीत से प्रीति थी। आकाश में गमन करने की शक्ति होने से वे पृथ्वी पर बहुत कम गमन करते थे। संचरणी (चलने की), आवरणी (ढँकने की), अवतरणी (नीचे उतरने की), उत्पतनी (ऊँचे उड़ने की), श्लेषणी (चिपट जाने की), संक्रामणी (दूसरे के शरीर में प्रवेश करने की), अभियोगिनी (सोना चांदी आदि बनाने की), प्रज्ञप्ति (परोक्ष वृत्तान्त को बतला देने की), गमनी (दुर्गम स्थान में भी जा सकने की) और स्तंभिनी (स्तब्ध कर देने की) आदि बहुत-सी विद्याधरों संबंधी विद्याओं में प्रवीण होने से उनकी कीर्ति फैली हुई थी। वे बलदेव और वासुदेव के प्रेमपात्र थे। प्रद्युम्न, प्रदीप, साम्ब, अनिरुद्ध, निषध, उन्मुख, सारण, गजसुकुमाल, सुमुख और दुर्मुख आदि यादवों के साढ़े तीन करोड़ कुमारों के हृदय के इष्ट थे और उनके द्वारा प्रशंसनीय थे। कलह (वाग्युद्ध), युद्ध (शस्त्रों का समर) और कोलाहल उन्हें प्रिय था। वे भांड के समान वचन बोलने के अभिलाषी थे। अनेक समर और सम्पराय (युद्ध विशेष) देखने के रसिया थे। चारों ओर दक्षिणा देकर (दान देकर) भी कलह की खोज किया करते थे,

उमणाभस्स रण्णो सुनामे नाम पुत्ते जुवराया यावि होत्था। तए णं
पउमनाभे राया अंतो अंतेउरंसि ओरोहसंपरिवुडे सिंहासणवरगए
विहरइ।

उस काल और उस समय में, धातकीखण्ड नामक द्वीप में, पूर्व* दिशा
रत के दक्षिणार्ध भरतक्षेत्र में अमरकंका नामक राजधानी थी। उस अमर-
का राजधानी में पद्मनाभ नामक राजा था। वह, महान् हिमवन्त पर्वत के
मान सार वाला था, इत्यादि पूर्ववत् वर्णन समझना चाहिए। उस पद्मनाभ
जा के अन्तःपुर में सात सौ रानियाँ थीं। उसके पुत्र का नाम सुनाभ था।
युवराज भी था। (जिस समय का यह वर्णन है) उस समय पद्मनाभ राजा
तःपुर में अपनी रानियों के साथ उत्तम सिंहासन पर बैठा था।

तए णं से कच्छुल्लणारए जेणेव अमरकंका रायहाणी, जेणेव
मनाभस्स भवणे, तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पउमनाभस्स रन्नो
णंसि झत्ति वेगेणं समोवइए।

तए णं से पउमणाभे राया कच्छुल्लं नारयं एज्जमाणं पासइ,
सित्ता आसणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठित्ता अग्घेणं जाव आसणेणं
णिमंतेइ।

तत्पश्चात् कच्छुल्ल नारद जहाँ अमरकंका राजधानी थी और जहाँ पद्म-
का भवन था, वहाँ आये। आकर पद्मनाभ राजा के भवन में, वेगपूर्वक,
ता के साथ उतरे।

उस समय पद्मनाभ राजा ने कच्छुल्ल नारद को आता देखा। देख कर
आसन से उठा। उठ कर अर्घ्य से उनकी पूजा की, यावत् आसन पर बैठने
लए आमंत्रित किया।

तए णं से कच्छुल्लणारए उदयपरिफोसियाए दब्भोवरिपच्चुत्थुयाए
भिसियाए निसीयइ, जाव कुसलोदंतं आपुच्छइ।

तत्पश्चात् कच्छुल्ल नारद ने जल से छिड़काव किया, फिर दर्भ बिछा कर
पर आसन बिछाया और फिर वे उस आसन पर बैठे। बैठने के बाद
कुशल-समाचार पूछे।

● धातकी खण्ड द्वीप [illegible] की [illegible] है। [illegible]
[illegible] के दक्षिणी भाग में अमरकंका राजधानी थी।

ते णं काले णं ते णं समए णं हत्थिणाउरे जुहिट्ठिले राया दो
ईए देवीए सद्धिं आगासतलंसि सुहपसुत्ते यावि होत्था।

उस काल और उस समय में, हस्तिनापुर नगर में, युधिष्ठिर राजा द्रौप
देवी के साथ महल की छत पर सुख से सोया हुआ था।

तए णं से पुव्वसंगतिए देवे जेणेव जुहिट्ठिले राया, जेणेव दोव
देवी, तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता दोवईए देवीए ओसोवणि
दलयइ, दलइत्ता दोवई देविं गिण्हइ, गिण्हित्ता ताए उक्किट्ठाए जा
जेणेव अमरकंका, जेणेव पउमणाभस्स भवणे, तेणेव उवागच्छइ, उवा
गच्छित्ता पउमणाभस्स भवणंसि असोगवणियाए दोवई देविं ठावे
ठावित्ता ओसोवणिं अवहरइ, अवहरित्ता जेणेव पउमणाभे तेणेव उवा
गच्छइ, उवागच्छित्ता एवं वयासी—'एस णं देवाणुप्पिया मए हत्थिणा
उराओ दोवई देवी इह हव्वमाणीय तव असोगवणियाए चिट्ठइ, अतो
परं तुमं जाणसि' त्ति कट्टु जामेव दिसिं पाउब्भूए तामेव दिसिं
पडिगए।

तब वह पूर्वसंगतिक देव जहाँ राजा युधिष्ठिर था और जहाँ द्रौपदी देवी
थी, वहाँ पहुँचा। पहुँच कर उसने द्रौपदी देवी को अवस्वापिनी निद्रा दी अवस्वा
पिनी निद्रा में सुला दिया। फिर द्रौपदी देवी को ग्रहण करके उत्कृष्ट देवगति से
अमरकंका राजधानी में पद्मनाभ के भवन में आ पहुँचा। आकर पद्मनाभ के
भवन में, अशोकवाटिका में, द्रौपदी देवी को रख दिया। रख कर अवस्वापिनी
निद्रा का संहरण किया। संहरण करके जहाँ पद्मनाभ था, वहाँ आया। आकर
इस प्रकार बोला—'देवानुप्रिय ! मैं हस्तिनापुर से द्रौपदी देवी को शीघ्र ही यहाँ
ले आया हूँ। वह तुम्हारी अशोकवाटिका में है। इससे आगे तुम जानो।' इस
कह कर वह देव जिस ओर से आया था, उसी ओर लौट गया।

तए णं सा दोवई देवी तओ मुहुत्तंतरस्स पडिबुद्धा समाणी तं
भवणं असोगवणियं च अपच्चभिजाणमाणी एवं वयासी—नो खलु
अम्हं एसे सए भवणे, णो खलु एसा अम्हं सगा असोगवणिया, तं
ण णज्जइ णं अहं केणइ देवेण वा, दाणवेण वा, किंपुरिसेण वा, किं
रेण वा, महोरगेण वा, गंधव्वेण वा, अन्नस्स रण्णो असोगवणियं
त्ति कट्टु ओहयमणसंकप्पा जाव झियायइ।

उसके पश्चात् थोड़ी देर में द्रौपदी देवी की निद्रा भंग हुई। वह उस अशोक-
का को पहचान न सकी। तब मन ही मन कहने लगी-यह भवन मेरा अपना
है, यह अशोकवाटिका मेरी अपनी नहीं है। न जाने किसी देव ने, दानव
पुरुष ने, किन्नर ने, महोरग ने या गंधर्व ने किसी दूसरे राजा की अशोक-
का में मेरा संहरण किया है! इस प्रकार विचार करके वह भग्नमनोरथ

तए णं से पउमणाभे राया ण्हाए जाव सव्वालंकारविभूसिए
उरपरियालसंपरिवुडे जेणेव असोगवणिया, जेणेव दोवई देवी,
उवागच्छइ। उवागच्छित्ता दोवइं देविं ओहयमणसंकप्पं जाव
यमाणी पासइ, पासित्ता एवं वयासी-'किं णं तुमं देवाणुप्पिए!
मणसंकप्पा जाव झियाहि? एवं खलु तुमं देवाणुप्पिए! मम
संगतिएणं देवेणं जंबुदीवाओ दीवाओ, भारहाओ वासाओ,
णाउराओ नयराओ, जुहिट्ठिलस्स रण्णो भवणाओ साहरिया,
णं तुमं देवाणुप्पिए! ओहयमणसंकप्पा जाव झियाहि। तुमं
सद्धिं विउलाइं भोगभोगाइं जाव विहराहि।'

तत्पश्चात् राजा पद्मनाभ स्नान करके, यावत् समस्त अलंकारों से विभू-
षित तथा अन्तःपुर के परिवार से परिवृत्त होकर, जहाँ अशोकवाटिका
र जहाँ द्रौपदी देवी थी, वहाँ आया। आकर उसने द्रौपदी देवी को भग्न-
र एवं चिन्ता करती देख कर कहा-हे देवानुप्रिये! तुम भग्नमनोरथ होकर
क्यों कर रही हो? देवानुप्रिये! मेरा पूर्वसंगतिक देव तुम्हें [illegible]
वर्ष से, हस्तिनापुर नगर से और युधिष्ठिर राजा के भवन से [illegible]
या है। अतएव देवानुप्रिये! तुम हतमनःसंकल्प होकर [illegible]
रे साथ विपुल भोगोपभोग भोगती हुई रहो।

तए णं सा दोवई देवी पउमणाभं एवं वयासी-'एवं खलु [illegible]
या! जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे बारवईए नयरीए [illegible]
देवे ममप्पियभाउए परिवसइ, तं जइ णं से छण्हं [illegible]
व्वमागच्छइ, तए णं अहं देवाणुप्पिया! [illegible]
आणाओवायवयणनिद्देसे चिट्ठिस्सामि।'

तब द्रौपदी देवी ने पद्मनाभ से इस प्रकार कहा-'देवानुप्रिय ! जम्बूद्वीप में, भारत वर्ष में, द्वारवती नगरी में कृष्ण नामक वासुदेव मेरे स्वामी के भ्राता रहते हैं। सो यदि छह महीनों तक वे मुझे लेने के लिए यहाँ नहीं आएँगे तो मैं, हे देवानुप्रिय ! तुम्हारी आज्ञा, उपाय, वचन और निर्देश में रहूँगी, अर्थात् आप जो कहेंगे, वही करूँगी।'

तए णं से पउमे राया दोवईए एयमट्ठं पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता दोवइं देविं कण्णंतेउरे ठवेइ। तए णं सा दोवई देवी छट्ठंछट्ठेणं अणिक्खित्तेणं आयंबिलपरिग्गहिएणं तवोकम्मेणं अप्पाणं भावेमाणी विहरइ।

तब पद्मनाभ राजा ने द्रौपदी के इस अर्थ को अंगीकार किया। अंगीकार करके द्रौपदी देवी को कन्याओं के अन्तःपुर में रख दिया। तत्पश्चात् द्रौपदी देवी निरन्तर षष्ठभक्त और पारणा में आयंबिल के तपःकर्म से आत्मा को भावित करती हुई विचरने लगी।

तए णं से जुहिट्ठिले राया तओ मुहुत्तंतरस्स पडिबुद्धे समाणे दोवइं देविं पासे अपासमाणो सयणिज्जाओ उट्ठेइ, उट्ठित्ता दोवईए देवीए सव्वओ समंता मग्गणगवेसणं करेइ, करित्ता दोवईए देवीए कत्थइ सुइं वा खुइं वा पवित्तिं वा अलभमाणे जेणेव पंडुराया तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पंडुरायं एवं वयासी—

इधर द्रौपदी का हरण हो जाने के पश्चात्, थोड़ी देर में युधिष्ठिर राजा जागे। वे द्रौपदी देवी को अपने पास न देखते हुए शय्या से उठे। उठ कर सब तरफ द्रौपदी देवी की मार्गणा-गवेषणा करने लगे। किन्तु द्रौपदी देवी की कहीं भी श्रुति (शब्द), क्षुति (छींक वगैरह) या प्रवृत्ति (खबर) न पाकर जहाँ पाण्डु राजा थे, वहाँ पहुँचे। वहाँ पहुँच कर पाण्डु राजा से इस प्रकार बोले—

एवं खलु ताओ ! ममं आगासतलगंसि पसुत्तस्स पासाओ दोवई देवी न णज्जइ केणइ देवेण वा, दाणवेण वा, किंनरेण वा, महोरगेण वा, गंधव्वेण वा, हिया वा, णीया वा, अवक्खित्ता वा ! इच्छामि णं ताओ ! दोवईए देवीए सव्वओ समंता मग्गणगवेसणं कयं।

'इस प्रकार हे तात ! मैं आकाशतल (अगाशी) पर सो रहा था। मेरे पास से द्रौपदी देवी को न जाने देव, दानव, किन्नर, महोरग अथवा गंधर्व हर

हर गया, ले गया या खींच ले गया ? तो हे तात ! मैं चाहता हूँ कि द्रौपदी देवी की सब तरफ मार्गणा-गवेषणा की जाय।'

तए णं से पंडुराया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी—'गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया ! हत्थिणाउरे नयरे सिंघाडग-तिय-चउक्क-चच्चर-महापह-पहेसु महया महया सद्देणं उग्घोसेमाणा उग्घोसेमाणा एवं वदह—'एवं खलु देवाणुप्पिया ! जुहिट्ठिल्लस्स रण्णो आगासतलगंसि सुहपसुत्तस्स पासाओ दोवई देवी न णज्जइ केणइ देवेण वा, दाणवेण वा, किंपुरिसेण वा, किन्नरेण वा, महोरगेण वा, गंधव्वेण वा हिया वा नीया वा अवक्खित्ता वा ? तं जो णं देवाणुप्पिया ! दोवईए देवीए सुइं वा खुइं वा पवित्तिं वा परिकहेइ तस्स णं पंडुराया [illegible] त्ति कट्टु घोसणं घोसावेह, घोसा-[illegible]' तए णं ते कोडुंबियपुरिसा जाव पच्चप्पिणंति।

तत्पश्चात् पाण्डु राजा ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया और बुला कर यह आदेश दिया—'देवानुप्रियो ! हस्तिनापुर नगर में शृङ्गाटक, त्रिक, चतुष्क, चत्वर, महापथ और पथ आदि में जोर-जोर के शब्दों से घोषणा करते-करते इस प्रकार कहो—'इस प्रकार निश्चय ही हे देवानुप्रियो (लोगो) आकाशतल (अगासी) पर सुख से सोये हुए युधिष्ठिर राजा के पास से द्रौपदी देवी को न [illegible] गंधर्व देवता ने हरण किया [illegible] ! जो कोई द्रौपदी देवी की [illegible] पाण्डु राजा विपुल सम्पदा [illegible] करो। घोषणा करके मेरी यह [illegible] उसी प्रकार घोषणा करके [illegible]

[illegible] कत्थइ सुइं वा जाव अलभमाणे कोंतीं देविं सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी—'गच्छह णं तुमं देवाणुप्पिये ! बारवइं नयरिं कण्हस्स वासुदेवस्स एयमट्ठं णिवेदेहि। कण्हे परं वासुदेवे दोवईए देवीए मग्गणगवेसणं करेज्जा, अन्नहा न नज्जइ दोवईए देवीए सुइं वा खुइं वा पवित्तिं वा उवलभेज्जा।'

पूर्वोक्त घोषणा कराने के पश्चात् भी पाण्डु राजा द्रौपदी देवी की कहीं भी श्रुति यावत् समाचार न पा सके तो कुन्ती देवी को बुला कर इस प्रकार बोले- हे देवानुप्रिये ! तुम द्वारवती (द्वारिका) नगरी जाओ और कृष्ण वासुदेव को यह अर्थ निवेदन करो। कृष्ण वासुदेव ही द्रौपदी देवी की मार्गणा-गवेषणा करेंगे, अन्यथा द्रौपदी देवी की श्रुति, क्षुति या प्रवृत्ति अपने को मालूम हो, ऐसा नहीं जान पड़ता। अर्थात् हम लोग द्रौपदी का पता नहीं पा सकते, केवल कृष्ण ही उसका पता लगा सकते हैं।

तए णं कोंती देवी पंडुरण्णा एवं वुत्ता समाणी जाव पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता ण्हाया कयबलिकम्मा हत्थिखंधवरगया हत्थिणाउरं नयरं मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता कुरुजणवयं मज्झंमज्झेणं जेणेव सुरट्ठजणवए, जेणेव बारवई णयरी, जेणेव अग्गुज्जाणे, तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता हत्थिखंधाओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी-'गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया ! जेणेव बारवई णयरी, बारवइं णयरिं अणुपविसह, अणुपविसित्ता कण्हं वासुदेवं करयल एवं वयह-'एवं खलु सामी ! तुब्भं पिउच्छा कोंती देवी हत्थिणाउराओ नयराओ इह हव्वमागया तुब्भं दंसणं कंखति।'

पाण्डु राजा के द्वारिका जाने के लिए कहने पर कुन्ती देवी ने उनकी बात यावत् स्वीकार करके नहा-धोकर' बलिकर्म करके वह हाथी के स्कंध पर आरूढ़ होकर हस्तिनापुर नगर के मध्य में होकर निकली। निकल कर कुरु देश के बीचोंबीच होकर जहाँ सौराष्ट्र जनपद था, जहाँ द्वारवती नगरी थी और नगर के बाहर श्रेष्ठ उद्यान था, वहां आई। आकर हाथी के स्कंध से नीचे उतरी। उतर कर कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया और उनसे इस प्रकार कहा- 'देवानुप्रियो ! तुम जहां द्वारिका नगरी है वहां जाओ। द्वारिका नगरी के भीतर प्रवेश करो। प्रवेश करके कृष्ण वासुदेव को दोनों हाथ जोड़ कर इस प्रकार कहना-हे स्वामिन्! आपके पिता की बहिन (भुआ) कुन्ती देवी हस्तिनापुर नगर से यहां शीघ्र आई हैं और तुम्हारे दर्शन की इच्छा करती हैं-तुमसे मिलना चाहती हैं।'

तए णं ते कोडुंबियपुरिसा जाव कहेंति। तए णं कण्हे वासुदेवे कोडुंबियपुरिसाणं अंतिए सोच्चा णिसम्म हत्थिखंधवरगए हयगय जाव-रहे य मज्झंमज्झेणं जेणेव कोंती देवी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता

हत्थिखंधाओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता कोंतीए देवीए पायग्गहणं करेइ,
करित्ता कोंतीए देवीए सद्धिं हत्थिखंधं दुरूहइ, दुरूहित्ता बारवईए नग-
रीए मज्झंमज्झेणं जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता
सयं गिहं अणुपविसइ।

तत्पश्चात् कौटुम्बिक पुरुषों ने यावत् कृष्ण वासुदेव के पास जाकर कुन्ती
देवी का आगमन कहा। तब कृष्ण वासुदेव कौटुम्बिक पुरुषों के पास से कुन्ती
देवी के आगमन का समाचार सुन कर; हाथी के स्कंध पर आरूढ़ होकर घोड़ों-
हाथियों आदि की सेना के साथ यावत् द्वारवती नगरी के मध्यभाग में होकर
जहाँ कुन्ती देवी थी, वहाँ आये। आकर हाथी के स्कंध से नीचे उतरे। नीचे
उतर कर उन्होंने कुन्ती देवी के चरण ग्रहण किये-पैर छुए। फिर कुन्ती देवी
के साथ हाथी के स्कंध पर आरूढ़ हुए। आरूढ़ होकर द्वारवती नगरी के मध्य-
भाग में होकर जहाँ अपना महल था, वहाँ आये। आकर अपने महल में
प्रवेश किया।

तए णं से कण्हे वासुदेवे कोंतीं देवीं ण्हायं कयबलिकम्मं जिमिय-
भुत्तरागयं जाव सुहासणवरगयं एवं वयासी—'संदिसउ णं पिउच्छा
किमागमणपओयणं?'

कुन्ती देवी जब स्नान करके, बलिकर्म करके और भोजन कर चुकने
पश्चात् यावत् सुखासन पर बैठी, तब कृष्ण वासुदेव ने इस प्रकार कहा—
पितृभगिनी! कहिए, आपके यहाँ आने का क्या प्रयोजन है?'

तए णं सा कोंती देवी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी—'एवं ख[लु]
पुत्ता! हत्थिणाउरे णयरे जुहिट्ठिल्लस्स आगासतले सुहपसुत्तस्स दो[वई]
देवी पासाओ ण णज्जइ केणइ अवहिया जाव अवक्खित्ता वा,
इच्छामि णं पुत्ता! दोवईए देवीए मग्गणगवेसणं कयं।'

तत्पश्चात् कुन्ती देवी ने कृष्ण वासुदेव से इस प्रकार कहा—'हे पु[त्र!]
हस्तिनापुर नगर में, युधिष्ठिर आकाशतल (अगासी) पर सुख से सो रहा [था]
उसके पास से द्रौपदी देवी को न जाने कौन अपहरण कर ले गया अथवा [illegible]
खींच ले गया। अतएव हे पुत्र! मैं चाहती हूँ कि द्रौपदी देवी की मार्गणा-[illegible]
षणा करो।'

तए णं से कण्हे वासुदेवे कोंतिं पिउच्छिं एवं वयासी-'जं नवरं पिउच्छा ! दोवईए देवीए कत्थइ सुई वा जाव लभामि तो णं अहं पायालाओ वा भवणाओ वा अद्धभरहाओ वा समंतओ दोवइं साहत्थिं उवणेमि' त्ति कट्टु कोंतीं पिउच्छिं सक्कारेइ, सम्माणेइ जाव पडिविसज्जेइ।

तत्पश्चात् कृष्ण वासुदेव ने अपनी पितृभागिनी कुन्ती से कहा-'विशेष बात यह है बुआजी ! अगर मैं कहीं भी द्रौपदी देवी की श्रुति (शब्द) आदि पाऊँ, तो मैं पाताल से, भवन में से या अर्धभरत में से, सभी जगह से, अपने हाथ से ले आऊँगा।' इस प्रकार कह कर उन्होंने कुन्ती बुआ का सत्कार किया, सन्मान किया, यावत् उन्हें विदा किया।

तए णं सा कोंती देवी कण्हेणं वासुदेवेणं पडिविसज्जिया समाणी जामेव दिसं पाउब्भूआ तामेव दिसिं पडिगया।

कृष्ण वासुदेव से यह आश्वासन पाने के पश्चात् कुन्ती देवी, उनसे विदा होकर जिस दिशा से आई थी, उसी दिशा में लौट गई।

तए णं से कण्हे वासुदेवे कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी-'गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया ! बारवइं नयरिं' एवं जहा पंडू तहा घोसणं घोसावेइ, जाव पच्चप्पिणंति, पंडुस्स जहा।

कुन्ती देवी के लौट जाने पर कृष्ण वासुदेव ने अपने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया। बुला कर उनसे कहा-'देवानुप्रियो ! तुम द्वारिका नगरी में जाओ' इस प्रकार जैसे पाण्डु राजा ने घोषणा करवाई थी, उसी प्रकार कृष्ण वासुदेव ने भी करवाई। यावत् उनकी आज्ञा कौटुम्बिक पुरुषों ने वापिस की। सब वृत्तान्त पाण्डु राजा के समान कहना चाहिए।

तए णं से कण्हे वासुदेवे अन्नया अंतो अंतेउरगए ओरोहे जाव विहरइ। इमं च णं कच्छुल्लए जाव समोवइए जाव णिसीइत्ता कण्हं वासुदेवं कुसलोदंतं पुच्छइ।

तत्पश्चात् किसी समय कृष्ण वासुदेव अन्तःपुर के अन्दर अपनी रानियों के साथ रहे हुए थे। उसी समय वह कच्छुल्ल नारद यावत् उतरे। यावत् बैठ कर कृष्ण वासुदेव से कुशल वृत्तान्त पूछा।

तए णं से कण्हे वासुदेवे कच्छुल्लं णारयं एवं वयासी-'तुमं णं देवाणुप्पिया ! बहूणि गामागर जाव अणुपविससि, तं अत्थि याइं ते कहिं वि दोवईए देवीए सुई वा जाव उवलद्धा ?' तए णं से कच्छुल्ले णारए कण्हं वासुदेवं एवं वयासी-'एवं खलु देवाणुप्पिया ! अन्नया धायईसंडे दीवे पुरत्थिमद्धं दाहिणड्ढभरहवासं अमरकंकारायहाणिं गए, तत्थ णं मए पउमनाभस्स रण्णो भवणंसि दोवई देवी जारिसिया दिट्ठपुव्वा यावि होत्था ।'

तए णं कण्हे वासुदेवे कच्छुल्लं णारयं एवं वयासी-'तुब्भं चेव णं देवाणुप्पिया ! एवं पुव्वकम्मं ।'

तए णं से कच्छुल्लनारए कण्हेणं वासुदेवेणं एवं वुत्ते समाणे उप्पयणिं विज्जं आवाहेइ, आवाहित्ता जामेव दिसिं पाउब्भूए तामेव दिसिं पडिगए ।

तत्पश्चात् कृष्ण वासुदेव ने कच्छुल्ल नारद से इस प्रकार कहा-'देवानुप्रिय ! तुम बहुत-से ग्रामों, आकरों, नगरों आदि में प्रवेश करते हो । तो किसी जगह द्रौपदी देवी की श्रुति आदि कुछ मिली है ?' तब, कच्छुल्ल नारद ने कृष्ण वासुदेव से इस प्रकार कहा-'हे देवानुप्रिय ! एक बार मैं धातकीखण्ड द्वीप में, [illegible] अमरकंका नामक राजधानी में गया था । [illegible] जैसी देखी थी ।'

तब कृष्ण वासुदेव ने कच्छुल्ल नारद से इस प्रकार कहा-'देवानुप्रिय ! यह तुम्हारी ही करतूत जान पड़ती है ।'

कृष्ण वासुदेव के द्वारा इस प्रकार कहने पर कच्छुल्ल नारद ने उत्पतनी विद्या का स्मरण किया । स्मरण करके जिस दिशा से आये थे, उसी दिशा में लौट गये ।

तए णं से कण्हे वासुदेवे दूयं सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं [illegible] गच्छह णं तुमं देवाणुप्पिया ! हत्थिणाउरं, पंडुस्स [illegible] निवेदेहि-'एवं खलु देवाणुप्पिया ! धायइसंडे दीवे [illegible] कंकाए रायहाणीए पउमनाभभवणंसि दोवईए देवीए [illegible]

तं गच्छंतु पंच पंडवा चाउरंगिणीए सेणाए सद्धिं संपरिवुडा पुरच्छिम-वेयालीए ममं पडिवालेमाणा चिट्ठंतु।'

तत्पश्चात् कृष्ण वासुदेव ने दूत को बुलाया। बुला कर उससे कहा-'देवानुप्रिय ! तुम हस्तिनापुर जाओ और पाण्डु राजा को यह अर्थ निवेदन करो कि-'हे देवानुप्रिय ! धातकी खण्ड द्वीप में, पूर्वार्ध भाग में, अमरकंका राजधानी में, पद्मनाभ राजा के भवन में द्रौपदी देवी का पता लगा है। अतएव पाँचों पाण्डव चतुरंगिणी सेना के साथ परिवृत होकर रवाना हों और पूर्व दिशा के वेतालिक* (लवणसमुद्र के किनारे) पर मेरी प्रतीक्षा करें।'

तए णं दूए जाव भणइ-'पडिवालेमाणा चिट्ठह।' ते वि जाव चिट्ठंति।

तत्पश्चात् दूत ने जाकर यावत् उसी प्रकार कहा कि-'प्रतीक्षा करते रहें।' तब पांचों पाण्डव वहां जाकर यावत् कृष्ण वासुदेव की प्रतीक्षा करने लगे।

तए णं से कण्हे वासुदेवे कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी-'गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया ! सन्नाहियं भेरिं ताडेह।' ते वि तालेंति।

तत्पश्चात् कृष्ण वासुदेव ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया। बुला कर कहा-'देवानुप्रियो ! तुम जाओ और सान्नाहिक (सामरिक) भेरी बजाओ।' यह सुन कर कौटुम्बिक पुरुषों ने भेरी बजाई।

तए णं तीसे सण्णाहियाए भेरीए सद्दं सोच्चा समुद्दविजयपामोक्खा दस दसारा जाव छप्पण्णं बलवयसाहस्सीओ सन्नद्धबद्ध जाव गहियाउहपहरणा अप्पेगइया हयगया जाव वग्गुरापरिक्खित्ता जेणेव सभा सुहम्मा, जेणेव कण्हे वासुदेवे तेणेव उवागच्छति, उवागच्छित्ता करयल जाव वद्धावेंति।

तत्पश्चात् सान्नाहिक भेरी की ध्वनि सुन कर समुद्रविजय आदि दस दसार यावत् छप्पन हजार बलवान् योद्धा, कवच पहन कर, तैयार होकर, आयुध और प्रहरण ग्रहण करके, कोई-कोई घोड़ा पर सवार होकर, कोई हाथी आदि पर सवार होकर, सुभटों के समूह के साथ जहां कृष्ण वासुदेव की सुधर्मा सभा थी और जहां कृष्ण वासुदेव थे, वहां आये। आकर हाथ जोड़ कर यावत् उनका अभिनन्दन किया।

*समुद्र की वेल चढ़ कर गंगा नदी में मिलती है, वह स्थान।

तए णं कण्हे वासुदेवे हत्थिखंधवरगए सकोरंटमल्लदामेणं छत्तेणं [illegible]रिज्जमाणेणं सेयवरचामराहिं उद्धुव्वमाणीहिं महया हयगयरहपवरजोहचडगर-करेणं वारवईए णयरीए मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता [जे]णेव पुरच्छिमवेयाली तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पंचहिं पंडवेहिं [सद्धिं] एगयओ मिलइ, मिलित्ता खंधावारणिवेसं करेइ, करित्ता पोस-[हसा]लं अणुपविसइ, अणुपविसित्ता सुट्ठियं देवं मणसि करेमाणे करे-[माणे] चिट्ठइ।

तत्पश्चात् कृष्ण वासुदेव श्रेष्ठ हाथी के स्कंध पर आरूढ़ हुए। कोरंट वृक्ष [के फू]लों की मालाओं से युक्त छत्र उनके मस्तक के ऊपर धारण किया गया। [दोनों] पार्श्वों में उत्तम श्वेत चामर ढोरे जाने लगे। वे बड़े-बड़े अश्वों, गजों, [और] [illegible] के मध्य भाग में [illegible] वहाँ आये। वहाँ [illegible] डाल कर पौषध-[शाला] में प्रवेश किया। प्रवेश करके सुस्थित देव का मनमें पुनः चिन्तन करते स्थित हुए।

तए णं कण्हस्स वासुदेवस्स अट्ठमभत्तंसि परिणममाणंसि सुट्ठिओ [जाव] आगओ—'भण देवाणुप्पिया! जं मए कायव्वं।'

तए णं से कण्हे वासुदेवे सुट्ठियं देवं एवं वयासी—'एवं खलु देवाणु-[प्पि]या! दोवई देवी जाव पउमनाभस्स रण्णो भवणंसि साहरिया, तं [तु]मं देवाणुप्पिया! मम पंचहिं पंडवेहिं सद्धिं अप्पछट्ठस्स छण्हं [रहा]णं लवणसमुद्दे मग्गं वियरेहि। जं णं अहं अमरकंकारायहाणिं दोव-देवीए कूवं गच्छामि।'

तत्पश्चात् कृष्ण वासुदेव का अष्टमभक्त पूरा होने पर सुस्थित देव यावत् [उनके] समीप आया। उसने कहा—'देवानुप्रिय! कहिए, मुझे क्या करना है?'

तब कृष्ण वासुदेव ने सुस्थित देव से इस प्रकार कहा—'हे देवानुप्रिय! [द्रौप]दी देवी यावत् पद्मनाभ राजा के भवन में हरण की गई है, अतएव तुम हे [देवा]नुप्रिय! पाँच पाण्डवों सहित छठे मेरे छह रथों को लवणसमुद्र में मार्ग दो, [जि]से मैं (पाण्डवों सहित) अमरकंका राजधानी में द्रौपदी देवी को [वापिस ला]ने के लिए जाऊँ।'

संखसद्दं सुणेइ । तए णं तस्स कविलस्स वासुदेवस्स इमेयारूवे अज्झ-त्थिए समुप्पज्जित्था–'किं मण्णे धायइसंडे दीवे भारहे वासे दोच्चे वासु-देवे समुप्पण्णे, जस्स णं अयं संखसद्दे ममं पिव मुहवायपूरिए वियंभइ ?' कविले वासुदेवे सद्दाइं सुणेइ ।

उस काल और उस समय में मुनिसुव्रत नामक अरिहन्त चम्पा नगरी के पूर्णभद्र चैत्य में पधारे। कपिल वासुदेव ने उनसे धर्मोपदेश श्रवण किया। उसी समय मुनिसुव्रत अरिहन्त से धर्मश्रवण करते-करते कपिल वासुदेव ने कृष्ण वासुदेव के पांचजन्य शंख का शब्द सुना। तब कपिल वासुदेव के चित्त में इस प्रकार का विचार उत्पन्न हुआ–'क्या धातकीखंड द्वीप के भारत वर्ष में दूसरा वासुदेव उत्पन्न हो गया है ? जिसके शंख का शब्द ऐसा फैल रहा है, जैसे मेरे मुख की वायु से पूरित हुआ हो–मैं ने बजाया हो।' कपिल वासुदेव ने शंख का ऐसा शब्द सुना।

मुणिसुव्वए अरहा कविलं वासुदेवं एवं वयासी–'से णूणं ते कविला ! वासुदेवा ! मम अंतिए धम्मं णिसामेमाणस्स संखसद्दं आकण्णित्ता इमेयारूवे अज्झत्थिए समुप्पण्णे–'किं मण्णे जाव वियं-भइ, से नूणं कविला ! वासुदेवा ! अयमट्ठे समट्ठे ?' 'हंता अत्थि !'

मुनिसुव्रत अरिहंत ने कपिल वासुदेव से कहा–'हे कपिल वासुदेव ! मेरे पास धर्म-श्रवण करते हुए तुम्हें यह विचार आया है कि–क्या इस भरतक्षेत्र में ... जिसके शंख का यह शब्द फैल रहा है, आदि; ... कथन) सत्य है ?' (कपिल वासुदेव ने ...

'नो खलु कविला ! ... एवं भूयं वा, भवइ वा, भविस्सइ वा जण्णं एगे खेत्ते, एगे जुगे, एगे समए दुवे अरहंता वा चक्कवट्टी वा बलदेवा वा वासुदेवा वा उप्पज्जिंसु वा उप्पज्जिंति वा उप्पज्जिस्संति वा । एवं खलु वासुदेवा ! जंबूद्दीवाओ दीवाओ भारहाओ वासाओ हत्थिणाउरनयराओ पंडुस्स रण्णो सुण्हा पंचण्हं पंडवाणं भारिया दोवई देवी तव पउमणाभस्स रण्णो पुव्वसंगतिएणं देवेणं ... साहरिया । ... णं से कण्हे वासुदेवे पंचहिं पंडवेहिं सद्धिं

...र एक वासुदेव दूसरे वासुदेव को देखें। तब भी तुम लवणसमुद्र के मध्य ...में होकर जाते हुए कृष्ण वासुदेव के श्वेत एवं पीत ध्वजा के अग्रभाग ...ख सकोगे।'

तए णं से कविले वासुदेवे मुणिसुव्वयं वंदइ, नमंसइ, वंदित्ता ...मंसित्ता हत्थिखंधं दुरूहइ, दुरुहित्ता सिग्घं सिग्घं जेणेव वेलाउले ...णेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता कण्हस्स वासुदेवस्स लवणसमुद्दं ... इवयमाणस्स सेयापीयाइं धयग्गाइं पासइ, पासित्ता ... णं मम सरिसपुरिसे उत्तमपुरिसे कण्हे वासुदेवे लवण-... मेणं वीईवयइ' त्ति कट्टु पंचयन्नं संखं परामुसइ मुह-...वायपूरियं करेइ।

तए णं से कण्हे वासुदेवे कविलस्स वासुदेवस्स संखसद्दं आय-...णेइ, आयण्णित्ता पंचयन्नं जाव पूरियं करेइ। तए णं दो वि वासुदेवा संखसद्दसामायारिं करेंति।

तत्पश्चात् कपिल वासुदेव ने मुनिसुव्रत तीर्थंकर को वन्दन और नमस्कार किया। वन्दन-नमस्कार करके वह हाथी के स्कंध पर आरूढ हुए। आरूढ होकर जल्दी-जल्दी जहाँ वेलाकूल (लवण समुद्र का किनारा) था, वहाँ आये। वहाँ आकर लवणसमुद्र के मध्य में होकर जाते हुए कृष्ण वासुदेव की श्वेत पीत ध्वजा का अग्रभाग देखा। देख कर वह कहने लगे-'यह मेरे समान पुरुष हैं, यह पुरुषोत्तम कृष्ण वासुदेव हैं जो लवणसमुद्र के मध्य में होकर जा रहे हैं।' ऐसा कह कर कपिल वासुदेव ने अपना पाञ्चजन्य शंख हाथ में लिया और उसे अपने मुख की वायु से पूरित किया-फूंका।

तब कृष्ण वासुदेव ने कपिल वासुदेव के शंख का शब्द सुना। सुन कर उन्होंने भी अपने पाञ्चजन्य को यावत् मुख की वायु से पूरित किया। उस समय दोनों वासुदेवों ने शंख शब्द की समाचारी की, अर्थात् शंख के शब्द द्वारा मिलाप किया।

तए णं से कविले वासुदेवे जेणेव अमरकंका तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अमरकंकं रायहाणिं संभग्गतोरणं जाव पासइ, पासित्ता पउमणाभं एवं वयासी-'किण्णं देवाणुप्पिया! एसा अमरकंका राय-हाणी ... जाव सन्निवडिया?'

मग्गणगवेसणं करेंति, करित्ता एगट्ठियाए णावाए गंगामहानदिं उत्तरंति, उत्तरित्ता अण्णमण्णं एवं वयंति—'पहू णं देवाणुप्पिया ! कण्हे वासुदेवे गंगामहाणदिं बाहाहिं उत्तरित्तए ? उदाहु णो पभू उत्तरित्तए ?' त्ति कट्टु एगट्ठियाओ नावाओ णूमेंति, णूमित्ता कण्हं वासुदेवं पडिवालेमाणा पडिवालेमाणा चिट्ठंति।

इधर वासुदेव लवणसमुद्र के मध्य भाग से जाते हुए गंगा नदी के पास आये। तब उन्होंने पाँच पाण्डवों से कहा—'देवानुप्रियो ! तुम लोग जाओ। जब तक गंगा महानदी को उतरो, तब तक मैं लवणसमुद्र के अधिपति सुस्थित देव से मिल लेता हूँ।'

तब वे पाँचों पाण्डव, कृष्ण वासुदेव के ऐसा कहने पर जहाँ गंगा महानदी थी, वहाँ आये। आकर एक नौका की खोज की। खोज कर उस नौका से गंगा महानदी उतरे। उतर कर परस्पर इस प्रकार कहने लगे—'देवानुप्रिय ! कृष्ण वासुदेव गंगा महानदी को अपनी भुजाओं से पार करने में समर्थ हैं अथवा समर्थ नहीं हैं ? (चलो, इस बात की परीक्षा करें) ऐसा कह कर उन्होंने वह नौका छिपा दी। छिपा कर कृष्ण वासुदेव की प्रतीक्षा करते हुए स्थित रहे।

तए णं से कण्हे वासुदेवे सुट्ठियं लवणाहिवइं पासइ, पासित्ता जेणेव गंगा महाणदी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता एगट्ठियाए सव्वओ समंता मग्गणगवेसणं करेइ, करित्ता एगट्ठियं णावं अपासमाणे एगाए बाहाए रहं सतुरगं ससारहिं गेण्हइ, एगाए बाहाए गंगं महाणदिं बासट्ठिं जोयणाइं अद्धजोयणं च विच्छिन्नं उत्तरिउं पयत्ते यावि होत्था, तए णं से कण्हे वासुदेवे गंगामहाणईए बहुमज्झदेसभागं संपत्ते समाणे संते तंते परितंते बद्धसेए जाए यावि होत्था।

तत्पश्चात् कृष्ण वासुदेव लवणाधिपति सुस्थित देव से मिले। मिल कर जहाँ गंगा महानदी थी, वहाँ आये। वहाँ आकर उन्होंने सब तरफ नौका की खोज की पर खोज करने पर भी नौका दिखाई नहीं दी। तब उन्होंने अपनी एक भुजा से अश्व और सारथी सहित रथ ग्रहण किया और दूसरी भुजा से बासठ [illegible] गंगा महानदी

[illegible] हुत [illegible]

हो गये। उन्हें पसीना आ गया। इस प्रकार वे थक गये।

तब कृष्ण वासुदेव के इस प्रकार कहने पर पाँच पाण्डवों ने कृष्ण वासुदेव से कहा-'देवानुप्रिय ! आपके द्वारा विसर्जित होकर अर्थात् आज्ञा पाकर हम लोग जहाँ गंगा महानदी थी, वहाँ आये। वहाँ आकर हमने नौका की खोज की। यावत् उस नौका से पार उतर कर आपके बल की परीक्षा करने के लिए हमने नौका छिपा दी। फिर आपकी प्रतीक्षा करते हुए हम यहाँ ठहरे हैं।'

तए णं कण्हे वासुदेवे तेसिं पंचण्हं पंडवाणं एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म आसुरत्ते जाव तिवलियं एवं वयासी-'अहो णं जया मए लवणसमुद्दं दुवे जोयणसयसहस्सा विच्छिन्नं वीईवइत्ता पउमणाभं हयमहिय जाव पडिसेहित्ता अमरकंका संभग्गा दोवई साहत्थिं उवणीया, तया णं तुब्भेहिं मम माहप्पं ण विण्णायं, इयाणिं जाणिस्सह !' त्ति कट्टु लोहदंडं परामुसइ, पंचण्हं पंडवाणं रहे चूरेइ, चूरित्ता णिव्विसए आणवेइ, आणवित्ता तत्थ णं रहमद्दणे नामं कोड्डे णिविट्ठे।

पाँच पाण्डवों का यह अर्थ (उत्तर) सुन कर और समझ कर कृष्ण वासुदेव कुपित हो उठे। उनकी तीन बल वाली भृकुटि ललाट पर चढ़ गई। वह बोले-'ओह, जब मैं ने दो लाख योजन विस्तीर्ण लवणसमुद्र को पार करके पद्मनाभ को हत और मथित करके, यावत् पराजित करके अमरकंका राजधानी को तहसनहस किया और अपने हाथों द्रौपदी लाकर तुम्हें सौंपी, तब तुम्हें मेरा माहात्म्य नहीं मालूम हुआ ! अब तुम मेरा माहात्म्य जान लोगे !' इस प्रकार कह कर उन्होंने हाथ में एक लोहदण्ड लिया और पाण्डवों के रथों को चूर-चूर कर दिया। रथ चूर-चूर करके उन्हें देशनिर्वासन की आज्ञा दी। फिर उस स्थान पर रथमर्दन नाम कोट स्थापित किया-रथमर्दन तीर्थ की स्थापना की।

तए णं से कण्हे वासुदेवे जेणेव सए खंधावारे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सएणं खंधावारेणं सद्धिं अभिसमन्नागए यावि होत्था। तए णं से कण्हे वासुदेवे जेणेव बारवई नयरी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता बारवइं णयरिं अणुपविसइ।

तत्पश्चात् कृष्ण वासुदेव जहाँ अपनी सेना का पड़ाव (छावनी) था, वहाँ आये। आकर अपनी सेना के साथ मिल गये। तत्पश्चात् कृष्ण वासुदेव जहाँ द्वारिका नगरी थी, वहाँ आये। आकर द्वारिका नगरी में प्रविष्ट हुए।

तए णं ते पंच पंडवा जेणेव हत्थिणाउरे णयरे तेणेव उ॰

तए णं से पंडू राया कोंतिं देविं सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी–'गच्छ णं तुमं देवाणुप्पिया ! बारवइं, कण्हस्स वासुदेवस्स णिवेदेहि–एवं खलु देवाणुप्पिया ! तुम्हे पंच पंडवा णिव्विसया आणत्ता, तुमं च णं देवाणुप्पिया ! दाहिणड्ढभरहस्स सामी, तं संदिसंतु णं देवाणुप्पिया ! ते पंच पंडवा कयरं दिसिं वा विदिसिं वा गच्छंतु ?'

तत्पश्चात् पाण्डु राजा ने कुन्ती देवी को बुला कर कहा–'देवानुप्रिये ! तुम द्वारिका जाओ और कृष्ण वासुदेव से निवेदन करो कि–'इस प्रकार हे देवानुप्रिय ! तुमने पांच पाण्डवों को देशनिर्वासन की आज्ञा दी है, किन्तु हे देवानुप्रिय ! तुम तो समग्र दक्षिणार्ध भरत क्षेत्र के अधिपति हो। अतएव हे देवानुप्रिय ! आदेश दो कि पाँच पाण्डव किस दिशा अथवा किस विदिशा में जाएँ ?

तए णं सा कोंती पंडुणा एवं वुत्ता समाणी हत्थिखंधं दुरूहइ, दुरूहित्ता जहा हेट्ठा जाव–'संदिसंतु णं पिउत्था ! किमागमणपओयणं ?'

तए णं सा कोंती कण्हं वासुदेवं एवं वयासी–'एवं खलु पुत्ता ! ... सया आणत्ता, तुमं च णं दाहिणड्ढभरह जाव ...

पाण्डु राजा के इस प्रकार कहने पर हाथी के स्कंध पर ... हर पहले कहे अनुसार द्वारिका पहुँची। अग्र उद्यान में ठहरीं। कृष्ण वासुदेव को सूचना करवाई। कृष्ण स्वागत के लिए आये। उन्हें महल में ले गये। यावत् पूछा–'हे पितृभगिनी ! आज्ञा कीजिए, आपके आने का क्या प्रयोजन है ?'

तब कुन्ती देवी ने कृष्ण वासुदेव से कहा–'हे पुत्र ! तुमने पाँचों पाण्डवों को देश-निकाले का आदेश दिया है और तुम दक्षिणार्ध भरतक्षेत्र के स्वामी हो, तो बतलाओ वे किस दिशा या विदिशा में जाएँ ?'

तए णं से कण्हे वासुदेवे कोंतिं देविं एवं वयासी–'अपूईवयणा ... पिउत्था ! उत्तमपुरिसा वासुदेवा बलदेवा चक्कवट्टी, तं गच्छंतु ... देवाणुप्पिए ! पंच पंडवा दाहिणिल्लं वेयालिं, तत्थ पंडुमहुरं णिवेसंतु ... ममं अदिट्ठसेवगा भवंतु।' त्ति कट्टु सक्कारेइ, सम्माणेइ, जाव पडि... विसज्जेइ।

नामधेज्जं पंडुसेणे। तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो नाम-धेज्जं करेइ पंडुसेण त्ति।

तत्पश्चात् एक बार किसी समय द्रौपदी देवी गर्भवती हुई। तत्पश्चात् द्रौपदी देवी ने भी यावत् पूर्ण होने पर सुन्दर रूप वाले और सुकुमार बालक को जन्म दिया। बारह दिन व्यतीत हो जाने पर उस बालक के माता-पिता को ऐसा विचार उत्पन्न हुआ कि-क्योंकि हमारा यह बालक पाँच पाण्डवों का पुत्र है और द्रौपदी देवी का आत्मज है, अतः इस बालक का नाम 'पाण्डुसेन' होना चाहिए। तत्पश्चात् उस बालक के माता-पिता ने उसका 'पाण्डुसेन' नाम रक्खा।

ते णं काले णं ते णं समए णं धम्मघोसा थेरा समोसढा। परिसा निग्गया। पंडवा निग्गया, धम्मं सोच्चा एवं वयासी-'जं णवरं देवाणुप्पिया! दोवइं देविं आपुच्छामो, पंडुसेणं च कुमारं रज्जे ठावेमो, तओ पच्छा देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता जाव पव्वयामो।' अहासुहं देवाणुप्पिया!'

उस काल और उस समय में धर्मघोष स्थविर पधारे। उन्हें वन्दना करने के लिए परिषद् निकली। पाण्डव भी निकले। धर्म श्रवण करके उन्होंने स्थविर [illegible] हम दीक्षित होना [illegible] कुमार को राज्य [illegible] यावत् प्रव्रज्या [illegible] तुम्हें सुख उपजे, [illegible] करो।'

तए णं ते पंच पंडवा जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता दोवइं देविं सद्दावेंति, सद्दावित्ता एवं वयासी-'एवं खलु देवाणुप्पिए! अम्हेहिं थेराणं अंतिए धम्मे णिसंते जाव पव्वयामो, तुमं देवाणुप्पिये! किं करेसि?'

तए णं सा दोवई देवी ते पंच पंडवे एवं वयासी-'जइ णं तुब्भे देवाणुप्पिया! संसारभउव्विग्गा पव्वयह, ममं के अण्णे आलंबे वा जाव भविस्सइ? अहं पि य णं संसारभउव्विग्गा देवाणुप्पिएहिं सद्धिं पव्वइस्सामि।'

तत्पश्चात् पाँचों पाण्डव जहाँ अपना घर था, वहाँ आये। आकर उन्होंने द्रौपदी देवी को बुलाया और उससे कहा–'देवानुप्रिये! हमने स्थविर साधु से धर्म सुना है, यावत् हम प्रव्रज्या ग्रहण कर रहे हैं। देवानुप्रिये! तुम्हें क्या करना है?'

तब द्रौपदी देवी ने पाँच पाण्डवों से कहा– देवानुप्रियो! यदि तुम संसार के भय से उद्विग्न होकर प्रव्रजित होते हो तो मेरा दूसरा कौन अवलम्बन यावत् होगा? अतएव मैं भी संसार के भय से उद्विग्न होकर देवानुप्रियों के साथ दीक्षा अंगीकार करूँगी।'

तए णं पंच पंडवा पंडुसेणस्स अभिसेओ जाव राया जाए जाव रज्जं पसाहेमाणे विहरइ। तए णं ते पंच पंडवा दोवई य देवी अन्नया कयाइं पंडुसेणं रायाणं आपुच्छंति।

तए णं से पंडुसेणे राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी–'खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! निक्खमणाभिसेयं जाव उव-वेह। पुरिससहस्सवाहिणीओ सिवियाओ उवट्ठवेह।' जाव पचोरुहंति। जेणेव थेरा तेणेव, आलित्ते णं जाव समणा जाया। चोद्दसपुव्वाइं अहिज्जंति, अहिज्जित्ता बहूणि वासाणि छट्ठट्ठमदसमदुवालसेहिं मासद्ध-मासखमणेहिं अप्पाणं भावेमाणा विहरंति।

तत्पश्चात् पाँच पाण्डवों ने पाण्डुसेन का राज्याभिषेक किया। यावत् पांडुसेन राजा हो गया, यावत् राज्य का पालन करने लगा। तब किसी समय एक बार पाँच पांडवों ने और द्रौपदी देवी ने पांडुसेन राजा से दीक्षा की अनुमति मांगी।

तब पांडुसेन राजा ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया और उनसे कहा– 'देवानुप्रियो! शीघ्र ही दीक्षा-महोत्सव की यावत् तैयारी करो और हजार पुरुषों द्वारा वहन करने योग्य शिविकाएँ तैयार करो। शेष वृत्तान्त पूर्ववत् समझना चाहिए, यावत् वे शिविकाओं पर आरूढ़ होकर चले और स्थविर मुनि के स्थान के पास पहुँच कर शिविकाओं से नीचे उतरे। उतर कर स्थविर मुनि के निकट पहुँचे। वहाँ जाकर स्थविर से निवेदन किया–'भगवन्! यह संसार जल रहा है', यावत् पाँचों पाण्डव श्रमण बन गये। चौदह पूर्वों का अध्ययन किया। अध्ययन करके बहुत वर्षों तक बेला, तेला, चौला, पचोला तथा अर्द्धमासखमण मासखमण आदि तपस्या द्वारा आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे।

तए णं सा दोवई देवी सीयाओ पच्चोरुहइ, जाव पव्वइया सुव्वयाए अज्जाए सिस्सिणीयत्ताए दलयति, इक्कारस अंगाई अहिज्जइ, अहिज्जित्ता बहूणि वासाणि छट्ठट्ठमदसमदुवालसेहिं जाव विहरइ।

तत्पश्चात् द्रौपदी देवी शिविका से उतरी, यावत् दीक्षित हुई। वह सुव्रता आर्या को शिष्या के रूप में सौंप दी गई। उसने ग्यारह अंगों का अध्ययन किया। अध्ययन करके बहुत वर्षों तक वह षष्ठभक्त, अष्टमभक्त, दशमभक्त और द्वादशभक्त आदि तप करती हुई विचरने लगी।

तए णं थेरा भगवंतो अन्नया कयाई पंडुमहुराओ णयरीओ सहस्संबवणाओ उज्जाणाओ पडिणिक्खमंति, पडिणिक्खमित्ता बहिया जणवयविहारं विहरंति।

तत्पश्चात् एक बार किसी समय स्थविर भगवंत पाण्डु मथुरा नगरी के सहस्राम्रवन नामक उद्यान से निकले। निकल कर बाहर जनपद में विचरण करने लगे।

तेणं कालेणं तेणं समएणं अरिहा अरिट्ठनेमी जेणेव सुरट्ठाजणवए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सुरट्ठाजणवयंसि संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ। तए णं बहुजणो अन्नमन्नस्स एवमाइक्खइ–'एवं खलु देवाणुप्पिया! अरिहा अरिट्ठनेमी सुरट्ठाजणवए जाव विहरइ। तए णं से जुहिट्ठिल्लपामोक्खा पंच अणगारा बहुजणस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा अन्नमन्नं सद्दावेंति, सद्दावित्ता एवं वयासीः–

'एवं खलु देवाणुप्पिया! अरहा अरिट्ठनेमी पुव्वाणुपुव्विं जाव विहरइ, तं सेयं खलु अम्हं थेरा आपुच्छित्ता अरहं अरिट्ठनेमिं वंदणाए गमित्तए।' अन्नमन्नस्स एयमट्ठं पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता जेणेव थेरा भगवंतो तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता थेरे भगवंते वंदंति, नमंसंति, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी–'इच्छामो णं तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणा अरहं अरिट्ठनेमिं जाव गमित्तए।'

'अहासुहं देवाणुप्पिया!'

उस काल और उस समय में अरिहन्त अरिष्टनेमि जहाँ सुराष्ट्र जनपद था, वहाँ आये। आकर सुराष्ट्र जनपद में संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे। उस समय बहुत जन परस्पर इस प्रकार कहने लगे कि-'हे देवानुप्रियो! तीर्थंकर अरिष्टनेमि सुराष्ट्र जनपद में यावत् विचर रहे हैं।' तब युधिष्ठिर प्रभृति पाँचों अनगारों ने बहुत जनों से यह वृत्तान्त सुन कर एक दूसरे को बुलाया और कहा-'देवानुप्रियो! अरिहन्त अरिष्टनेमि अनुक्रम से विचरते हुए यावत् सुराष्ट्र जनपद में पधारे हैं, अतएव स्थविर भगवंत से पूछ कर तीर्थंकर अरिष्टनेमि को वन्दना करने के लिए जाना हमारे लिए श्रेयस्कर है।' परस्पर की यह बात सब ने स्वीकार की। स्वीकार करके वे जहाँ स्थविर भगवंत थे, वहाँ गये। जाकर स्थविर भगवान् को वन्दन-नमस्कार किया। वन्दन-नमस्कार करके उनसे कहा-'भगवन्! आपकी आज्ञा पाकर हम अरिहंत अरिष्टनेमि को वन्दना करने के हेतु जाने की इच्छा करते हैं।'

स्थविर ने अनुज्ञा दी-'देवानुप्रियो! जैसे सुख हो, वैसा करो।'

तए णं ते जहुट्ठिल्लपामोक्खा पंच अणगारा थेरेहिं अब्भणुन्नाया समाणा थेरे भगवंते वंदंति, णमंसंति, वंदित्ता णमंसित्ता थेराणं अंतियाओ पडिणिक्खमंति, पडिणिक्खमित्ता मासंमासेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं गामाणुगामं दूइज्जमाणा जाव जेणेव हत्थिकप्पे नयरे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता हत्थिकप्पस्स बहिया सहसंबवणे उज्जाणे जाव विहरंति।

तत्पश्चात् उन युधिष्ठिर आदि पाँचों अनगारों ने स्थविर भगवान् की अनुज्ञा पाकर उन्हें वन्दन-नमस्कार किया। वन्दन-नमस्कार करके वे स्थविर के पास से निकले। निकल कर निरन्तर मासखमण का तपश्चरण करते हुए, एक ग्राम से दूसरे ग्राम जाते हुए, यावत् जहाँ हस्तीकल्प नगर था, वहाँ पहुँचे। पहुँच कर हस्तीकल्प नगर के बाहर सहस्राम्रवन नामक उद्यान में यावत् ठहरे।

तए णं ते जुहिट्ठिल्लवज्जा चत्तारि अणगारा मासक्खमणपारणए पढमाए पोरिसीए सज्झायं करेंति, बीयाए एवं जहा गोयमसामी, नवरं जुहिट्ठिलं आपुच्छंति, जाव अडमाणा बहुजणसद्दं निसामेंति-एवं खलु देवाणुप्पिया! अरहा अरिट्ठनेमी उज्जिंतसेलसिहरे मासिएणं भत्तेणं ... पंचहिं छत्तीसेहिं अणगारसएहिं सद्धिं कालगए जाव पहीणे।

तत्पश्चात् युधिष्ठिर के सिवाय शेष चार अनगारों ने मासखमण के पारणक के दिन, पहले प्रहर में स्वाध्याय किया, दूसरे प्रहर में ध्यान किया। शेष गौतम स्वामी के समान वर्णन जानना चाहिए, विशेष यह कि उन्होंने युधिष्ठिर अनगार से पूछा-भिक्षा की अनुमति मांगी। फिर वे भिक्षा के लिए जब अटन कर रहे थे, तब उन्होंने बहुत जनों से सुना कि-'हे देवानुप्रियो! तीर्थंकर अरिष्टनेमि गिरिनार पर्वत के शिखर पर, एक मास का निर्जल उपवास करके, पांच सौ छत्तीस साधुओं के साथ, काल-धर्म को प्राप्त हो गये हैं, यावत् सिद्ध बुद्ध होकर समस्त दुःखों से मुक्त हो गये हैं।'

तए णं ते जुहिट्ठिल्लवज्जा चत्तारि अणगारा बहुजणस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा हत्थिकप्पाओ पडिणिक्खमंति, पडिणिक्खमित्ता जेणेव सहसंबवणे उज्जाणे, जेणेव जुहिट्ठिल्ले अणगारे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता भत्तपाणं पच्चुवेक्खंति, पच्चुवेक्खित्ता गमणागमणस्स पडिक्कमंति, पडिक्कमित्ता एसणमणेसणं आलोएंति, आलोइत्ता भत्त-पाणं पडिदंसेंति, पडिदंसित्ता एवं वयासी-

तब युधिष्ठिर के सिवाय वे चारों अनगार बहुत जनों के पास से य
अर्थ सुन कर हस्तीकल्प नगर से बाहर निकले। बाहर निकल कर जहां सहस्राम्र
वन था और जहां युधिष्ठिर अनगार थे, वहां पहुँचे। पहुँच कर आहार-पान
की प्रत्युपेक्षणा की। प्रत्युपेक्षणा करके गमनागमन का प्रतिक्रमण किया। फि
एषणा-अनेषणा की आलोचना की। आलोचना करके आहार-पानी दि
खाया। दिखला कर युधिष्ठिर अनगार से कहा—

'एवं खलु देवाणुप्पिया! जाव कालगए, तं सेयं खलु अ
देवाणुप्पिया! इमं पुव्वगहियं भत्तपाणं परिट्ठवेत्ता सेत्तुंजं पव्वयं दु
सणियं दुरूहित्तए, संलेहणाए झूसणाझूसियाणं (कालं अणवकंखमाणाणं
कालं अणवकंखमाणाणं विहरित्तए,' त्ति कट्टु अण्णमण्णस्स एय
पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता तं पुव्वगहियं भत्तपाणं एगंते परिट्ठवेंति, परि
विसा जेणेव सेत्तुंजे पव्वए तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता से
पव्वयं दुरूहंति, दुरूहित्ता जाव कालं अणवकंखमाणा विहरंति।

'हे देवानुप्रिय! (हम आपकी अनुमति लेकर भिक्षा के लिए नग
गये थे। वहां हमने सुना है कि तीर्थंकर अरिष्टनेमि) बाहर कल्पवन

ब्रह्मलोक नामक पाँचवें देवलोक में कितनेक देवों की दस सागरोपम की स्थिति कही गई है। उनमें द्रौपदी देव की भी दस सागरोपम की स्थिति कही गई है।

से णं भंते ! दुवए देवे तओ जाव महाविदेहे वासे जाव अंतं काहिइ।

गौतम स्वामी ने श्रमण भगवान् महावीर से प्रश्न किया-'भगवन्! द्रौपदी देव वहाँ से चय कर कहाँ जन्म लेगा ?' तब भगवान् ने उत्तर दिया-वहाँ से चय कर यावत् महाविदेह वर्ष में उत्पन्न हो कर यावत् कर्मों का अन्त करेगा।'

एवं खलु जंबू ! समणेणं भगवया महावीरेणं सोलसमस्स णायज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते त्ति बेमि।

प्रकृत अध्ययन का उपसंहार करते हुए श्रीसुधर्मा स्वामी ने जम्बू स्वामी से कहा-इस प्रकार निश्चय ही, हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर ने सोलहवें ज्ञात-अध्ययन का यह अर्थ प्रतिपादन किया है। जैसा सुना वैसा मैं ने तुम्हें कहा है।

उपनय

अत्यन्त क्लेश सहन करके कितना ही कठिन तप क्यों न किया हो, पर उसे निदान के दोष से दूषित बना लिया जाय तो वह मोक्ष का कारण नहीं होता। जैसे सुकुमालिका के भव में द्रौपदी के जीव ने किया।

इसके अतिरिक्त, भक्तिभाव से रहित होकर सुपात्र को भी यदि अमनोज्ञ-अयोग्य दान दिया जाय, तो वह भी अनर्थ का हेतु होता है। इस विषय में नागश्री का दान ज्वलंत उदाहरण है।

सोलहवाँ अध्ययन समाप्त

यावत् पोतवहन किस दिशा या विदिशा में जा रहा है, यह भी मुझे नहीं जान पड़ता। अतएव मैं भग्नमनोरथ होकर चिन्ता कर रहा हूँ।

तए णं ते कण्णधारा तस्स णिज्जामयस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म भीया ५, ण्हाया कयबलिकम्मा करयल बहूणं इंदाण य खंदाण य जहा मल्लिनाए जाव उवायमाणा उवायमाणा चिट्ठंति।

तब वे कर्णधार, उस निर्यामक से यह बात सुन कर और समझ कर भयभीत हुए। उन्होंने स्नान किया, बलिकर्म किया और हाथ जोड़ कर बहुत से इन्द्र, स्कंद (कार्तिकेय) आदि देवों को, मल्लि-अध्ययन में कहे अनुसार मनौती मनाने लगे।

तए णं से णिज्जामए तओ मुहुत्तंतरस्स लद्धमईए, लद्धसुईए, लद्धसण्णे अमूढदिसाभाए जाए यावि होत्था। तए णं से णिज्जामए ते बहवे कुच्छिधारा य कण्णधारा य गब्भिल्लगा य संजुत्ताणावावाणियगा य एवं वयासी—'एवं खलु अहं देवाणुप्पिया! लद्धमईए जाव अमूढदिसाभाए जाए। अम्हे णं देवाणुप्पिया! कालियदीवंतेणं संवूढा, एस णं कालियदीवे आलोक्कइ।

थोड़ी देर बाद वह निर्यामक लब्धमति, लब्धश्रुति, लब्धसंज्ञ और अदिङ्मूढ हो गया। अर्थात् उसकी बुद्धि लौट आई, शास्त्रज्ञान जाग गया, होश [illegible]

तए णं ते कुच्छिधारा य कण्णधारा य गब्भिल्लगा य संजुत्ताणावावाणियगा य तस्स निज्जामयस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठ तुट्ठा पयक्खिणाणुकूलेणं वाएणं जेणेव कालियदीवे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता पोयवहणं लंबेंति, लंबित्ता एगट्ठियाहिं कालियदीवं उत्तरंति।

उस समय वे कुक्षिधार, कर्णधार, गर्भिल्लक तथा सांयात्रिक नौकावणिक् उस निर्यामक (खलासी) की यह बात सुन कर और समझ कर हृष्ट-तुष्ट हुए।

दक्षिण दिशा के अनुकूल वायु से वहाँ पहुँचे जहाँ कालिक द्वीप था। वहाँ पहुँच कर लंगर डाला। लंगर डाल कर छोटी नौकाओं द्वारा कालिक द्वीप में उतरे।

तत्थ णं बहवे हिरण्णागरे य सुवण्णागरे य रयणागरे य वइरागरे ... हरिरेणुसोणिसुत्तगा आईणवेढो।

... ंति, पासित्ता तेसिं गंधं अग्घा- ... , अग्घाइत्ता भीया तत्था ... उव्विग्गमणा तओ अणेगाइं ... उब्भमंति, ते णं तत्थ पउरगोयरा पउरतणपाणिया निब्भया निरुव्विग्गा सुहंसुहेणं विहरंति।

उस कालिक द्वीप में उन्होंने बहुत-सी चाँदी की खानें, सोने की खानें, ... की खानें, हीरे की खानें और बहुत-से अश्व देखे। वे अश्व कैसे थे? वे ... अर्थात् उत्तम जाति के थे। उनका वेढ अर्थात् वर्णन जातिमान् अश्वों के वर्णन के समान यहाँ समझ लेना चाहिए। वे अश्व नील वर्ण वाली रेणु के ... वर्ण वाले और श्रोणिसूत्रक अर्थात् बालकों को कमर में बांधने के काले ... जैसे वर्ण वाले थे। (इसी प्रकार कोई श्वेत तथा कोई लाल वर्ण के थे।)

उन अश्वों ने उन वणिकों को देखा। देख कर उन की गंध सूंघी। गंध सूंघ कर वे अश्व भयभीत हुए, त्रास को प्राप्त हुए, उद्विग्न हुए, उनके मन में ... उत्पन्न हुआ, अतएव वे कई योजन दूर भाग गये। वहाँ उन्हें बहुत-से ... (चरने के खेत–चरागाह) प्राप्त हुए। खूब घास और पानी मिलने से वे निर्भय एवं निरुद्वेग होकर सुखपूर्वक वहाँ विचरने लगे।

तए णं ते संजुत्तणावावाणियगा अण्णमण्णं एवं वयासी–'किण्हं अम्हे देवाणुप्पिया! आसेहिं? इमे णं बहवे हिरण्णागरा य, सुवण्णागरा य रयणागरा य, वइरागरा य, तं सेयं खलु अम्हं हिरण्णस्स य, सुवण्णस्स य, रयणस्स य, वइरस्स य पोयवहणं भरित्तए' त्ति कट्टु अन्नमन्नस्स एयमट्ठं पडिसुणंति, पडिसुणित्ता हिरण्णस्स य, सुवण्णस्स य, रयणस्स य, वइरस्स य, तणस्स य, अण्णस्स य, कट्ठस्स य, पाणियस्स य पोयवहणं भरेंति, भरित्ता पयक्खिणाणुकूलेणं वाएणं जेणेव गंभीरपोयवहणपट्टणे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता पोयवहणं लंबेंति, लंबित्ता सगडीसागडं सज्जेंति, सज्जित्ता तं हिरण्णं जाव वइरं

एवं खलु अम्हे देवाणुप्पिया ! इहेव हत्थिसीसे नयरे परिवसामो, तं चेव जाव कालियदीवंतेणं संवूढा, तत्थ णं बहवे हिरण्णागरा य जाव बहवे तत्थ आसे, किं ते हरिरेणुसोणिसुत्तगा जाव अणेगाइं जोयणाइं उब्भमंति । तए णं सामी ! अम्हेहिं कालियदीवे ते आसा अच्छेरए दिट्ठा ।

फिर राजा ने उन सांयात्रिक नौकावणिकों से इस प्रकार कहा-'देवानुप्रियो ! तुम लोग ग्रामों में यावत् आकरों में घूमते हो और बार-बार पोतवहन द्वारा लवणसमुद्र में अवगाहन करते हो, तुमने कहीं कोई आश्चर्य जनक-अद्भुत-अनोखी वस्तु देखी है ?

तब सांयात्रिक नौकावणिकों ने राजा कनककेतु से कहा-'हे देवानुप्रिय ! हम लोग इसी हस्तिशीर्ष नगर में निवास करते हैं, इत्यादि पूर्ववत् कहना चाहिए, ... की खानें, ... के समान ... री गंध ... कई योजन दूर चले गये । अतएव हे स्वामिन् ! हमने कालिक द्वीप में उन अश्वों को आश्चर्यभूत (विस्मय की वस्तु) देखा है ।'

तए णं से कणगकेऊ तेसिं संजुत्तगाणं अंतिए एयमट्ठं सोच्चा ते संजुत्तए एवं वयासी-'गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया ! मम कोडुंबियपुरिसेहिं सद्धिं कालियदीवाओ ते आसे आणेह ।'

तए णं ते संजुत्ता कणगकेउं रायं एवं वयासी-'एवं सामी !' त्ति कट्टु आणाए विणएणं वयणं पडिसुणेंति ।

तत्पश्चात् कनककेतु राजा ने उन सांयात्रिकों के पास से यह अर्थ सुन कर उन सांयात्रिकों से कहा-'देवानुप्रियो ! तुम मेरे कौटुम्बिक पुरुषों के साथ जाओ और कालिक द्वीप से उन अश्वों को यहाँ ले आओ ।'

तब सांयात्रिक वणिकों ने कनककेतु राजा से इस प्रकार कहा-'स्वामिन् ! बहुत अच्छा ।' ऐसा कह कर उन्होंने राजा का वचन आज्ञा के रूप में विनय पूर्वक स्वीकार किया ।

तए णं कणगकेऊ राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ,

-विशेष) आदि अन्य अनेक जिह्वा-इन्द्रिय के योग्य द्रव्य गाड़ी-गाड़ों
वह भर कर बहुत-से कोयवक-रुई के बने वस्त्र, कंबल-रत्नकंबल,
ओढ़ने के वस्त्र, नवत-जीन, मलय-आसन विशेष अथवा मलय देश
स्त्र, मसूरक-आसनविशेष, शिलापट्टक (कोमल शिलाएँ) यावत्
वेत वस्त्र तथा दूसरे स्पर्शनेन्द्रिय के योग्य द्रव्य यावत् गाड़ी-गाड़ों

त्ता सगडीसागडं जोएंति, जोइत्ता जेणेव गंभीरपोयट्ठाणे
गागच्छंति, उवागच्छित्ता सगडीसागडं मोएंति, मोइत्ता पोय-
ज्जेंति, सज्जित्ता तेसिं उक्किट्ठाणं सद्दफरिसरसरूवगंधाणं कट्ठस्स
य पाणियस्स य तंदुलाण य समियस्स य गोरसस्स य जाव
य बहूणं पोयवहणपाउग्गाणं पोयवहणं भरेंति।

त सब द्रव्य भर कर उन्होंने गाड़ी-गाड़े जोते। जोत कर जहाँ गंभीर
था, वहाँ पहुँचे। पहुँच कर गाड़ी-गाड़े खोले। खोल कर पोतवहन
। तैयार करके उन उत्कृष्ट शब्द, स्पर्श, रस, रूप और गंध के द्रव्य
, तृण, जल चावल, आटा, गोरस, यावत् अन्य बहुत-से पोतवहन
दार्थ पोतवहन में भरे।

त्ता दक्खिणाणुकूलेणं वाएणं जेणेव कालियदीवे तेणेव उवा-
उवागच्छित्ता पोयवहणं लंबेंति, लंबित्ता ताइं उक्किट्ठाइं
रसरूवगंधाइं एगट्ठियाहिं कालियदीवं उत्तारेंति, उत्तारित्ता
हिं च णं ते आसा आसयंति वा, सयंति वा, चिट्ठंति वा, तुय-
तहिं तहिं च णं ते कोडुंबियपुरिसा ताओ वीणाओ य जाव
यपाउग्गाणि य दव्वाणि
ठवेंति, ठवित्ता णिच्चला

उपर्युक्त सब सामान पोतवहन में भर कर दक्षिण दिशा के अनुकूल
हाँ कालिक द्वीप था, वहाँ आये। आकर लंगर डाला।
कृष्ट शब्द, स्पर्श, रस, रूप और गंध के पदार्थों को
रा कालिक द्वीप में उतारा। उतार कर वे घोड़े
र लौटते थे, वहाँ वहाँ वे कौटुम्बिक पुरुष वह वीणा,

वयासी–'गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया! संजुत्तएहिं सद्धिं कालियदीवाओ मम आसे आणेह।' ते वि पडिसुणेंति। तए णं ते कोडुंबियपुरिसा सगडीसागडं सज्जेंति, सज्जित्ता तत्थ णं बहूणं वीणाण य, वल्लकीण य, भामरीण य, कच्छभीण य, भंभाण य, छब्भामरीण य, विचित्तवीणाण य, अन्नेसिं च बहूणं सोइंदियपाउग्गाणं दव्वाणं सगडीसागडं भरेंति।

तत्पश्चात् कनककेतु राजा ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया और उनसे कहा–'देवानुप्रियो! तुम सांयात्रिक वणिकों के साथ जाओ और कालिक द्वीप से मेरे लिए अश्व ले आओ।' उन्होंने भी राजा का आदेश अंगीकार किया। तत्पश्चात् कौटुम्बिक पुरुषों ने गाड़ी-गाड़े सजाये। सजा कर उनमें बहुत-सी वीणाएँ, वल्लकी, भ्रामरी, कच्छभी, भंभा, षट्भ्रमरी आदि विविध प्रकार की वीणाओं तथा विचित्र वीणाओं से और श्रोत्रेन्द्रिय के योग्य अन्य बहुत-सी वस्तुओं से गाड़ी-गाड़े भर लिये।

भरित्ता बहूणं किण्हाण य जाव सुक्किलाण य कट्ठकम्माण य ४ गंथिमाण य ४ जाव संघाइमाण य अन्नेसिं च बहूणं चक्खिंदियपाउग्गाणं दव्वाणं सगडीसागडं भरेंति। भरित्ता बहूणं कोट्ठपुडाण य केयइपुडाण य जाव अन्नेसिं च बहूणं घाणिंदियपाउग्गाणं दव्वाणं सगडीसागडं भरेंति। भरित्ता बहुस्स खंडस्स य गुलस्स य सक्कराए य मच्छंडियाए य पुप्फुत्तरपउमुत्तर अन्नेसिं च जिब्भिंदियपाउग्गाणं दव्वाणं सगडीसागडं भरेंति। भरित्ता बहूणं कोयवयाण य कंबलाण य पावरणाण य नवतयाण य मलयाण य मसूराण य सिलावट्टाण य जाव हंसगब्भाण य अन्नेसिं च फासिंदियपाउग्गाणं दव्वाणं जाव भरेंति।

श्रोत्रेन्द्रिय के योग्य (प्रिय) वस्तुएँ भर कर बहुत-से कृष्ण वर्ण वाले यावत् शुक्ल वर्ण वाले काष्ठ कर्म ४ (लकड़ी के पाटिये पर चित्रित चित्र), ग्रंथिम ४ (गूंथी हुई माला आदि), यावत् संघातिम (समूह रूप करके तैयार किये गये पदार्थ) तथा अन्य चक्षु इन्द्रिय के योग्य द्रव्य गाड़ी-गाड़ों में भरे। यह भर कर बहुत-से कोष्ठपुट तथा केतकीपुट आदि यावत् अन्य बहुतेरे घ्राणेन्द्रिय के योग्य पदार्थों से गाड़ी-गाड़े भरे। वह भर कर बहुत-से खांड, शक्कर, मत्संडिका, पुष्पोत्तर (एक प्रकार की शक्कर) तथा पद्मोत्तर

(शस्त्र-विशेष) आदि अन्य अनेक जिह्वा-इन्द्रिय के योग्य द्रव्य गाड़ी-गाड़े में भरे। वह भर कर बहुत-से कोयवक-रुई के बने पट, कंबल-रल्लकंबल, प्रावरण-ओढ़ने के वस्त्र, नवत-जीन, मलय-आसन विशेष अथवा मलय देश के बने वस्त्र, मसूरक-आसनविशेष, शिलापट्टक (कोमल शिलाएँ) यावत् हंसगर्भ-श्वेत वस्त्र तथा दूसरे स्पर्शनेन्द्रिय के योग्य द्रव्य यावत् गाड़ी-गाड़े में भरे।

भरित्ता सगडीसागडं जोएंति, जोइत्ता जेणेव गंभीरपोयट्ठाणे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता सगडीसागडं मोएंति, मोइत्ता पोयवहणं सज्जेंति, सज्जित्ता तेसिं उक्किट्ठाणं सद्दफरिसरसरूवगंधाणं कट्ठस्स य तणस्स य पाणियस्स य तंदुलाण य समियस्स य गोरसस्स य जाव अन्नेसिं च बहूणं पोयवहणपाउग्गाणं पोयवहणं भरेंति।

उक्त सब द्रव्य भर कर उन्होंने गाड़ी-गाड़े जोते। जोत कर जहाँ गंभीर पोतपट्टन था, वहाँ पहुँचे। पहुँच कर गाड़ी-गाड़े खोले। खोल कर पोतवहन तैयार किया। तैयार करके उन उत्कृष्ट शब्द, स्पर्श, रस, रूप और गंध के द्रव्य तथा काष्ठ, तृण, जल चावल, आटा, गोरस, यावत् अन्य बहुत-से पोतवहन के योग्य पदार्थ पोतवहन में भरे।

भरित्ता दक्खिणाणुकूलेणं वाएणं जेणेव कालियदीवे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता पोयवहणं लंबेंति, लंबित्ता ताइं उक्किट्ठाइं सद्दफरिसरसरूवगंधाइं एगट्ठियाहिं कालियदीवं उत्तारेंति, उत्तारित्ता जहिं जहिं च णं ते आसा आसयंति वा, सयंति वा, चिट्ठंति वा, तुयट्टंति वा, तहिं तहिं च णं ते कोडुंबियपुरिसा ताओ वीणाओ य जाव विचित्तवीणाओ य अन्नाणि बहूणि सोइंदियपाउग्गाणि य दव्वाणि उदीरेमाणा चिट्ठंति, तेसिं परिपेरंतेणं पासए ठवेंति, ठवित्ता णिच्चला णिप्फंदा तुसिणीया चिट्ठंति।

वे उपर्युक्त सब सामान पोतवहन में भर कर दक्षिण दिशा के अनुकूल पवन से जहाँ कालिक द्वीप था, वहाँ आये। आकर लंगर डाला। लंगर डाल कर उन उत्कृष्ट शब्द, स्पर्श, रस, रूप और गंध के पदार्थों को छोटी-छोटी नौकाओं द्वारा कालिक द्वीप में उतारा। उतार कर वे घोड़े जहाँ-जहाँ बैठते थे, सोते थे और लोटते थे, वहाँ वहाँ वे कौटुम्बिक पुरुष वह वीणा, विचित्र

यादि श्रोत्रेन्द्रिय को प्रिय बाजा बजाने रहने लगे तथा उनके पास चारों ओर जाल स्थापित कर दी। स्थापित करके वे निश्चल, निस्पंद और मूक होकर रहे।

जत्थ जत्थ ते आसा आसयंति वा जाव तुयट्टंति वा, तत्थ तत्थ णं ते कोडुंबियपुरिसा बहूणि किण्हाणि य ५ कट्ठकम्माणि य जाव संघाइमाणि य अन्नाणि य बहूणि चक्खिदियपाउग्गाणि य दव्वाणि ठवेंति, तेसिं परिपेरंतेणं पासए ठवेंति, ठवित्ता णिच्चला णिप्फंदा० चिट्ठंति।

जहाँ-जहाँ वे अश्व बैठते थे, यावत लोटते थे, वहाँ-वहाँ उन कौटुम्बिक पुरुषों ने बहुतेरे कृष्ण वर्ण वाले यावत् शुक्ल वर्ण वाले काष्ठकर्म यावत संघातिम तथा अन्य बहुत-से चक्षु-इन्द्रिय के योग्य पदार्थ रख दिये। तथा उन अश्वों के पास चारों ओर जाल रख दीं। रख कर वे निश्चल, निस्पंद और मूक होकर रह गये।

जत्थ जत्थ ते आसा आसयंति वा, सयंति वा, चिट्ठंति वा, तुयट्टंति वा, तत्थ-तत्थ णं ते कोडुंबियपुरिसा तेसिं बहूणं कोट्ठपुडाण य अन्नेसिं च घाणिंदियपाउग्गाणं दव्वाणं पुंजे य णियरे य करेंति, करित्ता तेसिं परिपेरंते जाव चिट्ठंति।

जहाँ-जहाँ वे अश्व बैठते थे, सोते थे, खड़े होते थे अथवा लोटते थे, वहाँ-वहाँ उन कौटुम्बिक पुरुषों ने बहुत-से कोष्ठपुट यावत दूसरे घ्राणेन्द्रिय के प्रिय पदार्थों का पुञ्ज (ढेर) और निकर (बिखरा हुआ समूह) कर दिया। करके उनके पास चारों ओर पुञ्ज करके यावत वे मूक रह गये।

जत्थ जत्थ णं ते आसा आसयंति वा, सयंति वा, चिट्ठंति वा, तुयट्टंति वा, तत्थ तत्थ गुलस्स जाव अन्नेसिं च बहूणं जिब्भिंदियपाउग्गाणं दव्वाणं पुंजे य णियरे य करेंति, करित्ता वियरए खणंति, खणित्ता गुलपाणगस्स खंडपाणगस्स पोरपाणगस्स अन्नेसिं च बहूणं पाणगाणं वियरे भरेंति, भरित्ता तेसिं परिपेरंतेणं पासए ठवेंति जाव चिट्ठंति।

जहाँ-जहाँ वे अश्व बैठते थे, सोते थे, खड़े होते थे अथवा लोटते थे, वहाँ-वहाँ कौटुम्बिक पुरुषों ने गुड़ के यावत् अन्य बहुत-से जिह्वेन्द्रिय के योग्य

के पुञ्ज और निकर कर दिये। करके उन जगहों पर गड्ढे खोदे। खोद गुड़ का पानी, खांड का पानी, पोर (ईख) का पानी तथा दूसरा का पानी उन गड्ढों में भर दिया। भर कर उनके पास चारों ओर करके यावत् मूक हो रहे।

जहिं जहिं च णं ते आसा आसयंति वा, सयंति वा, चिट्ठंति वा, वा, तहिं तहिं च णं ते बहवे कोयवया य जाव सिलावट्टया य फासिंदियपाउग्गाइं अत्थुयपच्चत्थुयाइं ठवेंति, ठवित्ता परिपेरंतेणं जाव चिट्ठंति।

जहां-जहां वे घोड़े बैठते थे, सोते थे, खड़े होते थे यावत् लोटते थे, वहां कोयवक (रूई के वस्त्र) यावत् शिलापट्टक (कोमल शिला) तथा स्पर्शनेन्द्रिय के योग्य आस्तरण-प्रत्यास्तरण (एक दूसरे के ऊपर बिछाये वस्त्र) रख दिये। रख कर उनके पास चारों ओर यावत् मूक होकर रह गए।

तए णं ते आसा जेणेव एए उक्किट्ठा सद्दफरिसरसरूवगंधा तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता तत्थ णं अत्थेगइया आसा 'अपुव्वा णं इमे सद्दफरिसरसरूवगंधा' इति कट्टु तेसु उक्किट्ठेसु सद्दफरिसरसरूवगंधेसु मुच्छिया ४, तेसिं उक्किट्ठाणं सद्द जाव गंधाणं दूरंदूरेणं अवक्कमंति, ते णं तत्थ पउरगोयरा पउरतणपाणिया णिब्भया णिरुव्विग्गा सुहं-सुहेणं विहरंति।

तत्पश्चात् वे अश्व वहां आये, जहां यह उत्कृष्ट शब्द, स्पर्श, रस, रूप और गंध रक्खे थे। वहां आकर उनमें से कोई-कोई अश्व 'यह शब्द, स्पर्श रस, रूप और गंध अपूर्व है अर्थात् पहले कभी इसका अनुभव नहीं किया है,' ऐसा विचार कर, उस उत्कृष्ट शब्द स्पर्श, रस, रूप और गंध में मूर्छित (आसक्त) न होकर उस उत्कृष्ट शब्द यावत् गंध से दूर-ही दूर चले गये। वे अश्व वहां जाकर बहुत गोचर (चरागाह) प्राप्त करके तथा प्रचुर घास-पानी पाकर निर्भय हुए, उद्वेगरहित हुए और सुखे-सुखे विचरने लगे।

एवामेव समणाउसो ! जो अम्हं निग्गंथो वा निग्गंथी वा सद्द-फरिसरसरूवगंधेसु णो सज्जइ, से ... समणाणं ... सावयाणं सावियाणं अच्चणिज्जे जाव

तह धम्मपरिब्भट्ठा अधम्मपत्ता इहं जीवा ॥ ५ ॥
पावेति कम्मनरवइवसया संसारवाहयालीए ।
आसप्पमद्दएहिं व नेरइयाइहिं दुक्खाइं ॥ ६ ॥"

अ० १८
भा० पृ०
५७०

"जह सो चिलाइपुत्तो सुसुमगिद्धो अकज्जपडिबद्धो ।
धणपारद्धो पत्तो महाडविं वसणसयकलियं ॥ १ ॥
तह जीवो विसयसुहे लुद्धो काऊण पावकिरियाओ ।
कम्मवसेणं पावइ भवाडवीए महादुक्खं ॥ २ ॥
धणसेट्ठीविव गुरुणो पुत्ता इव साहवो भवो अडवी ।
सुयमसमिवाहारो रायगिहं इह सिवं नेयं ॥ ३ ॥
जह अडविनयरनित्थरणपावणत्थं तएहिं सुयमंसं ।
भुत्तं तहेह साहू गुरुण आणाए आहारं ॥ ४ ॥
भवलंघणसिवपावणहेउं भुञ्जंति ण उण गेहीए ।
वण्णबलरूवहेउं च भावियप्पा महासत्ता ॥५॥"

अ० १९
भा० पृ०
५८३

"वाससहस्संपि जई काऊणं संजमं सुविउलंपि ।
अंते किलिट्ठभावो न विसुज्झइ कंडरीउव्व ॥१॥
तथा–अप्पेणवि कालेणं केइ जहा गहियसीलसामण्णा ।
साहिंति निययकज्जं पुंडरीयमहारिसिव्व जहा ॥२॥"

उपनयगाथाएँ सम्पूर्ण